॥ श्रीः ॥

पञ्चदशी-भाषा.

स्वामिश्रीआत्मस्वरूपजी विरचित.

श्रीमदुदासीनपरमहंसमहंतश्री आत्मारामप्रेरितश्री-
पंडितगङ्गारामाज्ञानुसार,

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासने
अपने "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापेखानेमें
छापकर प्रकाशित किया ।

संवत् १९८१, शके १८४६.

कल्याण-मुंबई.

अथ पंचदशीप्रकरणानुक्रमः ।

इति पंचदशीप्रकरणानुक्रमः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण—मुंबई.

॥ ॐ श्रीसद्गुरवे नमः ॥

पञ्चदशी भाषा.

(आत्मस्वरूपजीकृत.)

प्रत्यक्तत्त्वविवेकप्रकरणम् १.

॥ ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीमद्गंगाराम गुरु, चरणकमलकी सेव ॥
संशयतिमिर मिटाइकै, दरश्यो आतमदेव ॥ १ ॥
श्रीगुरुनानकचरणरज, भज मन वारंवार ॥
जासु भजनकर जानिये, अद्वय ब्रह्म अपार ॥ २ ॥

इस पंचदशीके पंद्रह प्रकरण हैं—पंच विवेक, पंच दीप, पंच आनंद, तिन पंच विवेकोंमें पहिले विवेकका नाम प्रत्यक्तत्त्वविवेक है; तिसके आदि विषे टीकाकारका मंगलाचरण है। श्रीभारतीतीर्थमुनीश्वर और विद्यारण्य मुनीश्वर इन दोनोंको नमस्कार करके प्रत्यक्तत्त्वविवेकनाम प्रथमप्रकरणका अर्थ प्रकाश करते हैं। यह जो पंचदशिनाम ग्रंथ है तिसकी निर्विघ्न समाप्ति और आदरसैं तिसका सब देशोंविषे जिज्ञासुओंनैं विचार करणा। इन दोनों फलोंवास्तै गुरुको नमस्काररूप मंगलाचरण विद्यारण्य मुनीश्वर करते हैं, यह उत्तमोंकी मर्यादा है, जो ग्रंथके आरंभविषे मंगलाचरण करणा. तातैं इष्टदेवता जो हैं गुरु तिनको नमस्काररूप मंगलाचरण और वेदांतके अनुबंध वर्णन करते

हैं। श्रीशंकरानंद नाम जो गुरु हैं तिनके चरणकमलोंको नमस्कार है कैसे तिनके चरणकमल हैं । अज्ञान और अज्ञानका कार्य जो जन्म मरण है सोई भया एक ग्राह,जैसे ग्राह आपने वश जो प्राणीहै तिसको अतिशय करके दुःखका कारण होता है तैसे अज्ञान और अज्ञानका कार्य जो जन्म मरण है सोभी आपने वश जो प्राणी है तिसको अतिशय करके दुःखका कारण होता है । ग्राहका अर्थ तंदूआ तिसके दूर करणेको जो समर्थ है श्रीशंकरानंदगुरुके चरणकमल तिनको नमस्कार है। सो श्रीशंकरानंदगुरु कैसे हैं आपणे भक्तजनोंको चार पदार्थ देणेको समर्थ हैं। चार पदार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। फिर गुरु कैसे हैं अणिमा महिमा आदिक शक्तियों करके संपन्न हैं ॥ अथ अनुबंधचतुष्टयस्वरूपवर्णनम् ॥ अधिकारी १ विषय २ संबंध ३ प्रयोजन४। साधन चतुष्टयसंपन्न जीव अधिकारी। साधनचतुष्टयस्वरूपवर्णनम् । विवेक १ वैराग्य २ षट्संपति ३ मोक्षेच्छा ४ विवेक कहिये नित्य क्या है और अनित्य क्या है। जो कर्मउपासनाका फल है, धन, पुत्र,स्त्री, स्वर्ग ब्रह्मलोकपर्यंत सो संपूर्ण अनित्य हैं अर्थात् ये नाशवंत हैं और जो कर्म और उपासनाका फल नहीं सो नित्य है १ और वैराग्य कहिये जो नाशवान् वस्तु हैं, धन पुत्र स्त्री आदिक तिनका त्याग करणा २ और षट्संपत्ति कहिये, शम १ दम २ उपरति ३ तितिक्षा ४ श्रद्धा ५ समाधानता ६मनकी वासनाओंको दूर करणा इसका नाम शम है१और इंद्रियोंको जीतना इसका नाम दम है २ और सार्वलौकिक कर्म और वैदिक अग्निहोत्रादि कर्म तिनका त्याग करणा इसका नाम उपरति है३ और शीत उष्ण मानअपमान आदिक दुःखोंका धैर्यकरके सहना इसका नाम तितिक्षा है ४ और गुरुवचनोंविषे और वेदान्त वचनोंविषे विश्वास करणा अर्थात् यह जो गुरु वेदांत कहते हैं सो यथार्थ है, इसका नाम श्रद्धा है ५ गुरु वेदांतवाक्यके श्रवणविषे आलस्यतें

रहित होकर चित्तको एकाग्र करणा इसका नाम समाधानता है ६ और परमेश्वरके आगे यह प्रार्थना करणी कि, मेरा जन्ममरणदुःख कब दूर होवेगा ? यह जो इच्छा है इसका नाम मोक्षेच्छा है ४ यह जो साधनचतुष्टय है तिस करके संपन्न जो मनुष्य है सो अधिकारी है यह प्रथम अनुबंध है ॥ और दूसरा अनुबंध विषयहै, सो वेदांतका विषय जीवब्रह्मकी एकता है। जो जिस करके जाणिये सो तिसका विषय है जैसे नेत्रोंकरके रूप जाण्याजाता है सो रूप नेत्रोंका विषय है । और जैसे कर्णोंकरके शब्द जाण्या जाता है सो कर्णोंका विषय है तैसे जीव और ब्रह्मकी एकता वेदांत करके जाणीजाता है सो वेदांतका विषय है यह दूसरा अनुबंध है ॥ और प्रतिपाद्य प्रतिपादक भावसंबंध तीसरा अनुबंध है, वेदांत प्रतिपादक है और जीवब्रह्मकी एकता प्रतिपाद्य है ॥ और चौथा अनुबंध प्रयोजन है सो प्रयोजन वेदांतका दो प्रकारका है। एक परमानंदकी प्राप्ति और दूसरा सर्वदुःखोंका नाश ॥१॥ गुरुके चरणकमलोंकी सेवा करके शुद्ध भया है चित्त जिन्होंका अर्थात् राग द्वेष ईर्षा दंभ रूप मलतें रहित भया है चित्त जिन्होंका उन पुरुषोंकोसुखपूर्वक ब्रह्मज्ञानकी प्राप्तिवासतै प्रत्यक्तत्त्वका विचार करते हैं प्रत्यक् कहिये साक्षी चैतन्य जो संपूर्ण अतःकरणकी आवृत्तियोंको प्रकाशताहै अथवा असत् जड दुःख रूप जो जगत् है तिसतें विपरीत सच्चिदानंद रूप करके जो प्रकाशै सो कहिये प्रत्यक् तिसका जो तत्त्व है वास्तव शुद्ध अद्वैतरूप तिसका जो विवेक है मिथ्याभूत पंचकोशोंतें भिन्न करणा तिसको निरूपणकरतेहैं।इहांपर्यंत मंगलाचरण और प्रत्यक्तत्त्वविवेकके करणकी प्रतिज्ञा पूर्ण भयी॥२॥ अथ जीवब्रह्मकी एकतारूप जो वेदांतका विषय है तिसकी संभावनावासतै जीवकी सच्चिदानंदरूपता वर्णन करते हैं ॥ जीवकी जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिरूप तीन अवस्था हैं । तिन तीनोंविषे चैतन्यकी एकता

वर्णन करते हैं। चैतन्य कहिये जो घट पट आदिक पदार्थोंकी प्रकाशनेवाली अनुभवसत्ता है, सो अनुभवसत्ता एक रूप है । जैसे जाग्रत् अवस्था विषे घट पट आदिकोंका भेद है परस्पर विलक्षण धर्मोंसे संयुक्त होणेतैं घट जलधारण धर्मवालाहै और पट शीत उष्ण निवारण करणे मेंवाला है तातैं दोनों भिन्न भिन्न हैं। और तिनका अनुभव जो है सो एकरूप है भिन्न नहीं और अनुभवविषे जो भेदप्रतीति होती है यह घट अनुभव है यह पट अनुभव है सो अनुभव विषे भेदप्रतीति उपाधि घट पटके भेदसैं होती है । जैसे घटाकाश मठाकाश यह जो आकाश विषे भेदप्रतीति होती है सो उपाधि घट मठके भेदकर होती है, वास्तव आकाशविषे भेद नहीं । घटमठरूप उपाधिके त्यागेतैं आकाश आकाश ऐसे एकरूप आकाशकी प्रतीति होती है, तैसे घट पटरूप उपाधिके त्यागेतैं अनुभव अनुभव ऐसे एकरूप अनुभवकी प्रतीति होती है, तातैं जो अनुभव घटका है सो अनुभव पटका है। इसप्रकार जाग्रत्विषे अनुभव एकरूप है ॥ ३ ॥ तैसे स्वप्नविषे जो अनुभव होता है सोभी एक रूप है और स्वप्नविषे पदार्थोंका भेद है परस्पर और अनुभवका भेद नहीं ।

शंका–जैसे जाग्रत्विषे पदार्थोंका भेद है और अनुभवकी एकता है तैसेही तुम कहतेहो, स्वप्नविषे पदार्थोंका भेद है और अनुभवकी एकता है तौ जाग्रत् और स्वप्नका भेद नहीं भया ।

उत्तर–स्वप्नके पदार्थ स्थित नहीं उनको संकल्पमात्ररूप होणेतैं और जाग्रत्विषे जो पदार्थ हैं सो स्थित हैं । काहेतें, जो वर्षोंपर्यंत वेही पदार्थ देखिये हैं इसीकरके जाग्रत् और स्वप्नका भेद है और जाग्रत् और स्वप्नका जो अनुभव है तिसका भेद नहीं ॥ ४ ॥ तैसे सुषुप्तिविषे जो अनुभव है तिस अनुभवका जाग्रत् और स्वप्नके अनुभवसे भेद नहीं ।

शंका-सुषुप्तिविषे तौ अनुभव नहीं होता। जिसतैं सभी लोक कहते हैं जो ऐसा, मैं सोया मुझको कुछ खबर न रही; तातैं जाग्रत् और स्वप्नके अनुभव साथि सुषुप्तिके अनुभवका अभेद कैसे कहते हो।

उत्तर-जिसतैं सभी लोक कहते हैं ऐसा, मैं सोया जो मेरेको कुछ खबर न रही यह जो कहणा है सो सुषुप्तिविषे अज्ञानके अनुभवतैं विना नहीं बनता। जैसे गंगाजीके बडे गंभीर जल विषे कोई डुबकी मारकरके तिसके नाच बडी शीतलताका अनुभव करके जलतैं बाहर निकसकरके यह कहता है जो मैंने जलविषे बडी शीतलताका अनुभव किया है। जो वोह शीतलताका अनुभव न करता तो जलतैं बाहर निकसकर कैसे कहता? जो, मैंनैं शीतलताका अनुभव किया है। तैसे जो सुषुप्तिविषे न जाणनेका अनुभव न करता तौ उठकर ऐसे न कहता जो, मैं सुषुप्तिविषे कुछ न जानता भया। तातैं यह जानाजाताहै सुषुप्ति अवस्था विषे इसने जो बेखबरीका अनुभव किया है सो बेखबरी नाम अज्ञानका है।

शंका-सुषुप्तिविषे तौ इसनैं बेखबरीका अनुभव कुछ नहीं किया उठकरके इसनैं बेखबरकिा अनुभव किया है तातैं बेखबरीका जो कहणा है सो स्मृतिज्ञान करके नहीं।

उत्तर-सुषुप्तितैं उठकर बेखबरीका अनुभव नहीं बनता। काहेतैं जो प्रत्यक्षकर जिस वस्तुका अनुभव कऱ्या है उस वस्तु के साथि इंद्रियोंका संबंध तिस वस्तुके अनुभवका कारण है। जैसे घटके साथ नेत्रआदिकोंका संबंध घटकी प्रत्यक्षताका कारण है तैसे सुषुप्तिकालके अज्ञानके साथ जो इंद्रियोंका संबंध होवै तो सुषुप्तिकालके अज्ञानका अनुभव होवै। सो तौ जागेतैं सुषुप्तिकालका अज्ञान नाश होजाता है तातैं तिसके साथ संबंध कैसे होवै? और नष्टके साथभी जो इंद्रियोंका

संबंध होवै, तौ मृतहुये पिताकाभी पाँच दश बरसोंतैं पीछेभी नेत्रोंके साथ संबंधकर तिसकी प्रत्यक्षता होवै सो तौ मृतहुये पिताकी प्रत्यक्षता नहीं होती तातैं प्रत्यक्षअनुभवका विषय अज्ञान नहीं होता और अनुमितिरूप अनुभवकाभी विषय सुषुप्तिकालका अज्ञान नहीं होता। काहेतैं जो अनुमिति व्याप्ति और लिंगके अधीन होती है। लिंगनाम हेतुका है। जैसे कोई कहै जो, पर्वत अग्निवाला है धूएंरूप लिंगतैं भोजनवाले स्थानकी न्याई। इहां जो अग्निकी अनुमिति है सो धूम और अग्निकी व्याप्तिके अधीन है जहां धूम है वहां अग्नि है यह जो धूम और अग्निका नियमकर इकट्ठा रहना है तिसका नाम व्याप्ति है। सो धूमरूप लिंगके अधीन है अग्निकी अनुमिति, अनुमानतैं जो अनुभव होवै सो अनुमिति कहिये। तैसे जो इहां सुषुप्ति कालके अज्ञानकी अनुमिति होती तौ कोई हेतुभी होता और तिस हेतुकी व्याप्ति भी होती। सो तौ इहां कोई हेतुभी है नहीं और व्याप्तिभी है नहीं तातैं उठकरके सुषुप्तिके अज्ञानका अनुमिति रूप अनुभव नहीं होता। इसतैं जाण्याजाता है जो उठकरके अज्ञानका स्मरण करता है तिस स्मरणका कारण जो अनुभव है सो सुषुप्तिविषे सिद्ध भया ॥५॥ सो अनुभव आप विषे जो है अज्ञान, तिसतैं भिन्न है। और जाग्रत् और स्वप्नके अनुभवतैं भिन्न नहीं। इसप्रकार एक दिनविषे जो होती हैं तीन अवस्था जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तिन अवस्थाओंविषे अनुभव एक है जैसे, तैसे दूसरे दिनविषे जो अनुभव होता है सो प्रथमदिनाविषे जो अनुभव हुआ था तिस अनुभवतैं अभिन्न है॥६॥ इसतिरह पहिले महीने विषे जो अनुभव हुआथा सो अगले महीनेके अनुभवतैं भिन्न नहीं। इसीतरां प्रथम बरसविषे जो अनुभव हुआ था उस अनुभवका दूसरे बरसके अनुभवतैं भेद नहीं। इसीतरां जो सत्ययुगविषे अनुभव हुआ था सोई त्रेता द्वापर कलियुगविषे अनु-

भवहै । इसीतरां ब्रह्मकल्पविषे जो अनुभव था सोई वराह आदिक कल्पोंविषे अनुभव है। तातैं अनुभव न उत्पन्न होता है न नाश होता है तातैं अनुभव नित्य है ॥

शंका-यह सभी लोक कहते हैं जो घटका अनुभव नाश भया और पटका अनुभव उत्पन्न भया तातैं कैसे कहते हो जो अनुभव नित्य है ॥

उत्तर-हम पूंछते हैं अनुभवकी उत्पत्ति और विनाशका कोई साक्षी है कि नहीं। जो कहो साक्षी कोई नहीं तौ साक्षीसे विना अनुभवकी उत्पत्ति और विनाश कैसे सिद्ध होवे ? और जो कहैं अनुभवकी उत्पत्ति और विनाशका साक्षी है तौ वह साक्षी कौन है ? जो कहै साक्षी है वा अनुभवका विषय घट पट आदिक ही साक्षी है ? जो कहै अनुभव साक्षी है तौ जिस अनुभवकी उत्पत्ति विनाश ग्रहण करणा है सोई अनुभव साक्षी है वा उस अनुभवतैं भिन्न जो अनुभव है सो साक्षी है ? जो कहो सोई अनुभव साक्षी है सो तौ बात नहीं बनती। तिस अनुभवका नाश होजाणेतैं आपणे नाशका आप साक्षी कोई नहीं होता। नाशका साक्षी कौन होता है कि, जो नाशतैं पीछे रहता है। और दूसरा अनुभव तौ है नहीं। तातैं वह प्रथम अनुभवके नाशका साक्षी कैसे होवै। और अनुभवका विषय जो घट पट आदिक हैं सो अनुभवके नाश और उत्पत्तिके साक्षी नहीं जड होणेतैं। तातैं अनुभव उत्पत्ति और विनाशतैं रहित है और स्वयंप्रकाश है। आपणे प्रकाशणे विषे औरकी इच्छा नहीं करता। जैसे सूर्य आपणे प्रकाशणेविषे दीपकोंकी इच्छा नहीं करता। तातैं अनुभव स्वयप्रकाश है और नित्य है। नित्य कहिये सत्य है और अनुभव कहिये चैतन्यहै ॥ ७ ॥ सो सत्य अनुभव आत्मरूप है सो आत्मा परमानंदस्वरूप है। जिसतैं आत्माविषे परम प्रेम है, अर्थात् कभी भी मेरा असत्य मत होवै, सदा

ही मेरा सत्य होवै इसप्रकार आत्माविषे प्रेम देखाजाता है इसतैं आत्मा परमानंदस्वरूप है ॥ ८ ॥ और पदार्थोंविषे जो प्रेम होता है । सो आत्माके संबंधकरके होता है । जैसे चावल जो मीठे होते हैं सो मीठा जो है गुड तिसके संबंध करके होते हैं स्वरूपसे तौ चावल मीठे नहीं । तैसे पुत्र आदिकों विषे जो प्रेम होता है सो आत्माके संबंध करके होता है स्वरूपतैं पुत्र आदिकों विषे प्रेम नहीं तातैं जिस आत्माके संबंधकरके पुत्र आदिकों विषे प्रेम है सो आत्मा परम प्रेमका आश्रय है तातैं परमानंदरूप है ॥९॥ इसप्रकार आत्माकी सच्चिदानंदरूपता युक्तियों करके निर्णय करी है और ब्रह्मकी सच्चिदानंदरूपता उपनिषदों विषे वर्णन करी है और ब्रह्म और जीवकी एकताभी उपनिषदों विषे वर्णन करी है ॥ १० ॥

शंका-जो तुम कहते हो आत्मा परमानंदरूप है सो तौ नहीं बनता । काहेतैं जो हम पूंछते हैं आत्माकी परमानंदरूपता भासती है अथवा नहीं भासती । जो कहो भासती है तौ विषयोंविषे इच्छा न होणी चाहिये । क्योंकि जो परमानंदको प्राप्त हुआ तिसकी तुच्छ विषयोंविषे प्रीति नहीं बणती । जैसे अमृत करके जो तृप्त भया है तिसको कुत्तेकी जूंठी खल खाणेकी इच्छा नहीं होती । और जो कहो आत्माकी परमानंदरूपता नहीं भासती इस करके विषयोंकी इच्छा होती है । जैसे किसीके घरमें बहुत धन दबा हुआ होवै और तिसकी तिसको खबर न होवै तब वह कौडी कौडी वासतै दीन होता है । तैसे आत्माकी परमानंदरूपता तौ है, पर इसको भासती नहीं तातैं तुच्छ विषयोंविषें दीन होता है तौ आत्माविषे प्रेम न होना चाहिये ।क्योंकि जो वस्तुकी सुंदरता प्रथम जानिलेवै तौ पीछे तिसविषे प्रेम होता है । सो तौ आत्माकी परमानंदरूपता जानी नहीं तौ आत्माविषे प्रेम कैसे होवै ? आत्माविषे जो प्रेमही न भया तौ परमप्रेम कैसे होवै ? तातैं आत्मा परमानंदरूप नहीं ॥

उत्तर–आत्माकी परमानंदरूपता सामान्यते भासती है और विशेषते नहीं भासती। जिसते विशेषते नहीं भासती, इसते विषयोंविषे इच्छा होती है। और जिसते सामान्यकरिकै आत्माकी परमानंदरूपता भासती है तिसते आत्माविषे परम प्रेम है। तातैं आत्माकी परमानंदरूपता भासतभी है और नहींभी भासती। यह दोनों वार्ता बनगई ॥ ११ ॥

शंका–एक वस्तुका भासना और न भासना ये तौ दोनों एक कालविषे नहीं बनते।

उत्तर--जैसे शालाविषे, बहुत बालकोंके साथ मिलकरके किसीका पुत्र वेद पढता है और तिस शालाते बाहिर तिसका पिता खडा है जो तिसको पुत्रके पढनेका शब्द सामान्यते सुनता है जिसकालविषे, तिसी काल विषे विशेष करके पुत्रका शब्द नहीं सुनता। तैसे आत्माकी आनंदरूपता सामान्यते भासती है और विशेषते नहीं भासती। तातैं सामान्यते भासती भी प्रतिबंधकरकै विशेषते भान नहीं होती ॥ १२ ॥ सो प्रतिबंध किसको कहते हैं ऐसे पूँछे तो श्रवण कर। जो वस्तु देखनेके लायक होवै और देखी न जाय तौ तिसवस्तुके न देखनेका जो कारण है सो प्रतिबंध कहाता है ॥ १३ ॥ जैसे पुत्रके शब्दके विशेषकरके न सुननेविषे प्रतिबंधका कारण अन्य बालकोंके साथ मिल करके पढना है। जो वह बालक अकेला पढता होवे तो उसके पिताको तिसके पढनेका शब्द विशेषकरके सुण्या जाय, तैसे आत्माकी आनंदरूपताके विशेष करके न जाणनेविषे प्रतिबंधका कारण अविद्याहै। तिस अविद्यानें विपरीत ज्ञान करछोडया है। विपरीत ज्ञान कहिये दुःखरूप विषयोंकी सुखरूपता प्रतीत होणी और सुखरूप आत्माकी प्रतीति न होणी ॥ १४ ॥ प्रतिबंधका कारण जो अविद्या है तिसका क्या रूप है, ऐसे पूंछै तौ श्रवण कर। सच्चिदानं-

दरूप जो ब्रह्म है तिसके प्रतिबिंब करके सहित जो प्रकृति है सो सत्त्व रज तम इन तीनगुणोंवाली है। सो प्रकृति माया और अविद्या दो रूपोंको प्राप्त होती है। जैसे कणक (गेहूं) एकही आटा और छाण दो रूपोंको प्राप्त होती है। सारप्रधान कणक आटा होती है और असार प्रधान छाण होतीहै॥१५॥तैसे सत्त्वप्रधान प्रकृति मायारूप होती है और रज तम प्रधान प्रकृति अविद्यारूप होती है। मायाविषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है सो सर्वज्ञ ईश्वर है काहेतें जो माया ईश्वरके अधीन है॥ १६ ॥ और अविद्याविषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है सो जीव अल्पज्ञ है। काहेतें जो अविद्याके अधीन है सो अविद्या कारण शरीर है और तिस कारण शरीर अविद्याविषे अभिमान करके प्राज्ञनामको जीव प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ दूसरा सूक्ष्मशरीर है, सो सूक्ष्म शरीर सतरह तत्त्वोंका है। सतरह तत्त्व कहिये पंच ज्ञानेंद्रियां और पंच कर्मेन्द्रियां, पंच प्राण, एक मन, एक बुद्धि। ज्ञानेंद्रियां पंच कहिये श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, रसना, घ्राण। कर्मेंद्रियां,वाणी,हाथ, चरण,उपस्थ, गुदा। प्राण पंच कहिये प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान। इन सतरह तत्त्वोंकी उत्पत्ति अपंचीकृत पंचमहाभूतोंते होती है। सो पंचमहाभूत कहिये आकाश, पवन, तेज, जल, पृथिवी इन पंच महाभूतोंकी उत्पत्ति ईश्वरकी आज्ञा करके तमोगुणप्रधान प्रकृतिते होती है। जीवोंको सुखदुःखके अनुभववास्ते पांच भूतोंके सत्त्वगुणअंशते पंच ज्ञानइंद्रियां उत्पन्न होती हैं। आकाशके सत्त्वगुण अंशते श्रोत्र इंद्रिय उत्पन्न होती हैं। पवनके सत्त्वगुण अंशते त्वचा इंद्रिय उत्पन्न होती है। तेजके सत्त्वगुणअंशते नेत्र इंद्रिय उत्पन्न होती है। जलके सत्त्वगुण अंशते रसना इंद्रिय उत्पन्न होती है। पृथिवीके सत्त्वगुण अंशतें घ्राण इंद्रिय उत्पन्न होती है। और पंच भूतोंके मिलेहुए सत्त्व गुणअंशते अंतःकरण उत्पन्न होता है। सो अंतःकरण संकलपविकलप रूप वृत्ति करके मन कहाता है। और निश्चयरूप वृत्तिकरके बुद्धि

कहातीहै और पंचभूतोंके रजोगुण अंशते पंच कर्मइंद्रियां उत्पन्न होती हैं। आकाशके रजोगुण अंशते वाणी इंद्रिय उत्पन्न होती है। और पवनके रजोगुण अंशते हाथ इंद्रिय उत्पन्न होती है तेजके रजो गुणअंशते चरण इंद्रिय उत्पन्न होती है। और जलके रजोगुण अंशते शिश्न इंद्रिय उत्पन्न होती है और पृथिवीके रजोगुणअंशते गुदा इंद्रिय उत्पन्न होती है और पंचभूतोंके मिलेहुए रजोगुण अंशते पंचप्राण होते हैं ॥१८॥२३॥जो यह सतरह तत्त्वोंका सूक्ष्म शरीर वर्णन किया है सो दो प्रकारका है। एक समष्टि है और दूसरा व्यष्टि है। समष्टि सूक्ष्म शरीरविषे अभिमान करके ईश्वर हिरण्यगर्भरूपताको प्राप्त होता है। और व्यष्टि सूक्ष्मशरीरविषे अभिमान करके प्राज्ञनामा जीव तैजस नामको प्राप्त होता है ॥ २४ ॥ समष्टि जो है तिसको सर्वविषे आत्मतादात्म्य अभिमान होताहै। और व्यष्टि जो है तिसको सर्व विषे आत्मतादात्म्य अभिमान नहीं होता। इसी कारणते व्यष्टि और समष्टिका भेदहै ॥ २५ ॥ इस प्रकार लिंगशरीरके उत्पन्न हुये हुये भी जीवोंको सुखदुःखका अनुभवरूप जो भोग है सो स्थूलशरीर और स्थूलपदार्थों विना सिद्ध न होता भया। इसवास्ते परमेश्वर अपंचीकृतभूतोंका पंचीकरण करता भया ॥ २६ ॥ पंचीकरण कहिये एक एक भूतको पंच पंच भूतोंकरके सहित करता भया। सो किसप्रकार करता भया ऐसा पूंछै तो श्रवण कर। एक पृथिवीको प्रथम दो भाग करता भया। उन दोनोंमेंसे बिचले एक भागको चार भाग करता भया। इसी तरह जलकोभी दो भाग करता भया। और उन दोनों भागोंमेंसे एक भागके चार भाग करता भया। इसी तरह तेज और पवन और आकाशके दो दो भाग करता भया। और उनके दो दो भागोंमेंसे एकएक भागके चार चार भाग करता भया। पीछे पृथ्वीअर्धके जो चार भाग हैं उन चारों भागोंमेंसे एक एक भागको जलआदिक चारोंका जो आधा

आधा भाग है तिसविषे मिला देता भया । इसी तरह जलआदिकोंके जो अर्ध अर्धके चार चार भाग हैं तिनकोभी पृथिवीआदिकोंके अर्धअर्ध भागविषे मिला देता भया । तब पृथिवी विषे जलादिक चार भूतोंका भाग प्राप्त भया उसके प्राप्त होणेते पृथिवी पंचीकरणताको प्राप्त भई । इसी प्रकार जलआदिकभी चारों भूत पंचीकरणताको प्राप्त भये ॥ २७ ॥ पीछे उन पंचीकृत पंचभूतोंते ब्रह्मांड उत्पन्न होता भया । और तिस ब्रह्मांड विषे चौदह लोक उत्पन्न होते भये । अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल, पाताल, भूः, भुवः,स्वः, महः, जनः, तपः, सत्य । और तिन लोकों विषे तिस तिस लोक विषे जो जो उचित शरीर थे सो सो परमेश्वरकी आज्ञा करके पंचीकृतभूतोंते उत्पन्न होते भये । और तिन लोकों विषे निवास करणेवाले जो जीव थे तिनके भोगने योग्य अन्न आदिक उत्पन्न होते भये । इस प्रकार उत्पन्न भया जो शरीर है सो समष्टि व्याष्टि भेद करके दो प्रकारका है । समष्टि स्थूलशरीर विषे तादात्म्याभिमान करके हिरण्य गर्भ विराट्रूपताको प्राप्त होता भया ॥ २८ ॥ और व्याष्टिरूप स्थूलशरीर विषे तादात्म्याभिमान करके तैजस नाम जो जीव था सो विश्वनामको प्राप्त भया । सो विश्वनाम जीव देवता, मनुष्य, पशु, पक्षीआदिक अनेकरूपताको प्राप्त भया । सो विश्वनाम जीव शरीर विषे तादात्म्याभिमान करके आत्मज्ञानते रहित होते भये । और बाहिर जो शब्दादिक पंच विषय हैं तिनविषे परच जाते भये॥२९॥सो सुखके वास्ते बहुत प्रकारके कर्मोंको करुरते भये । और कर्मोंके करणेवास्ते सुखोंको भोगते भये । इस प्रकार कर्म करते हुये जीव जन्मोंते जन्मांतरोंको प्राप्त होते भये । और सुखको न प्राप्त होते हुये जैसे नदीके प्रवाहविषे प्राप्त हुये कीडे लहरोंविषे वारंवार गोते खाते हैं । एक लहरतें निकसकर दूसरी लहरविषे गोते खाते हैं ।दूसरी लहरते निकसकर तीसरी

लहर विषे गोते खाते हैं। इसी तरह उनके दुःखोंका अंत नहीं आवता तैसे जीवोंके चौरासी लक्ष योनियोंविषे दुःख प्राप्त होते हैं तिनका अंत नहीं आवता॥२०॥इस प्रकार अविद्या करके आत्माकी जो परमानंद रूपता है तिसके विशेषकरके न भासणेते जन्मोंकी और दुःखोंकी प्राप्ति वर्णन करी। अब आगे जन्मों और दुःखोंके दूर करणेका उपाय वर्णन करते हैं। जैसे नदीके प्रवाहविषे गोते खाते जो जीव हैं, तिनके उत्तम कर्मोंके प्राप्त हुये किसी दयावान्की दृष्टिविषे वे आवते हैं त उनके दुःखको देखकर उसका मन द्रवीभूत होता है। तब वह दयावान् प्रवाहसों निकास लेता है। तब वह नदीके प्रवाहते बाहिर निकासे हुये नदीके किनारे जो वृक्ष हैं तिसकी छायाको प्राप्त होयकरके सुखको प्राप्त होते हैं॥ २१॥तैसे जन्मोंते जन्मांतरोंविषे दुःखी जो ये जीव हैं। जब इनके पुण्यकर्म प्रकट होते हैं तब ज्ञानवान् जो गुरु है परम दयावान्, तिसकी दृष्टिविषे प्राप्त होते हैं। तब गुरु कृपाकरके इसको उपदेश करते हैं कि, तू पंच कोशोंते भिन्न है। तब यह जीव पंचकोशोंते विवेक करके परमानंदको प्राप्त होता है॥ २२॥ सो पंचकोश कौन हैं ऐसे पूंछें तो श्रवण कर। अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनंदम ये पंचकोश हैं। तिन करके आच्छादित हुआ परमानंदरूप आत्मा आपणे परमानंदरूपको भुलायकरके जन्म मरणरूप दुःखोंको प्राप्त होता है। जब पंचकोशोंका विवेक करता है तब परमानंदस्वरूप आत्माको जानकरके जन्म मरण आदिक दुखोंते रहित होजाता है॥ २३॥ सो पंचकोश तिन शरीरोंके अंतर्गत हैं। अन्नमयकोशरूप स्थूलशरीर है। सो स्थूलशरीर पंचीकृतपंचभूतोंते उत्पन्न भयाहै। और सूक्ष्म शरीर तिन कोशोंका नाम है। प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, प्राणमयकोश पंचप्राण और पंच कर्मइंद्रियां हैं सो यह प्राणमय कोश अपंचकृत पंचभूतोंके रजो-

गुण अंशते उत्पन्न हुआहै॥३४॥पंचज्ञान इन्द्रिय और मन इसका नाम मनोमय कोश है सो अपंचीकृत पंचभूतोंके सात्त्विक अंशते उत्पन्न भया है। और पंच ज्ञानइंद्रियां और बुद्धि ये विज्ञानमय कोश है। सो विज्ञानमय कोशभी पंच भूतोंके सात्त्विक अंशते उत्पन्न भया है ॥३५॥और कारणशरीरका नाम आनंदमय कोश है। सो आनंदमय कोश प्रिय, मोद, प्रमोद वृत्तियोंसहित मलिन सत्त्वप्रधान अविद्याका नाम है। प्रिय वृत्ति कहिये इष्टपदार्थके दर्शनते हुआ जो है सुख। और मोदवृत्ति कहिये इष्ट पदार्थके प्राप्त भया जो है सुख। प्रमोदवृत्ति कहिये इष्ट पदार्थके खानेपहिरनेते भया जो है सुख। इन पंच, कोशोंके साथ मिलकरके आत्मा पंचकोशरूप होजाता है। जैसे जल लाल और काले सफेद हरे पीले पदार्थके साथ मिलकरके काला सफेद हरया पीला होजाता है ॥ ३६ ॥

प्रश्न-पंचकोशोंके साथ मिलकरके पंचकोशरूप हुआ जो आत्मा है तिसका पंच कोशोंते न्यारा करना कैसे होवे। जैसे जल, कसूंभा, सुरमा दूध हरेक हलदीके साथ मिलकरके लाला काल सफेद हरा पीला हुआहुवा तिनते न्यारा करणा कठिनहै ॥

उत्तर-जैसे गेरू आदिकोंके साथ मिलकरके लाल हुयाहुया जो है जल तिसको निर्मली बूटीके संबंधकरके शुद्ध करते हैं, तैसे पंच कोशोंके साथ मिलकरके पंचकोशरूपताको प्राप्त हुयाहुया जो आत्मा है सो विवेक करके शुद्धब्रह्मरूपताको प्राप्त होता हैं ॥ ३७ ॥ सो वह विवेक कौन है ? ऐसे पूंछे तो श्रवण कर जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति इन तीन अवस्थाओं विषे आत्माका अन्वय है और इन तीन अवस्थाओंका परस्पर व्यतिरेक है यह जो विचार है तिसका नाम विवेक है। यह जो स्थूल शरीर अन्नमय कोश जाग्रत् अवस्था विषे भासताहै तिसकी स्वप्न अवस्थाविषे प्रतीति नहीं होती। काहेते जो स्थूलशरीर पर्यंक-

पर पडा रहता है । और जाग्रत् अवस्थाविषे जो और पुरुष तिसके पास हैं सो तिसके शरीरको देखते हैं और आत्मा सोई स्वप्नविषे है। जो जाग्रत् अवस्थाविषे था ताते आत्माका स्वप्नविषे अन्वय भया और स्थूलशरीरका स्वप्नविषे व्यतिरेक भया ॥ ३८ ॥ इसीतरह स्वप्नविषे जो है लिंग शरीर तिसका सुषुप्तिविषे स्वभाव होता है और स्वप्नविषे जो आत्मा स्वप्नको प्रकाशता था सोई सुषुप्तिविषे सुषुप्तिको प्रकाशता है। और जो सुषुप्तिको आत्मा न प्रकाशै तो सुषुप्तिका नाम जाग्रत्विषे कैसे प्रसिद्ध होवे ? ताते सुषुप्तिविषे आत्माका अन्वय है और सूक्ष्मशरीरका सुषुप्तिमें व्यतिरेक है ॥

शंका-पंच कोशोंके विवेककी तुमने प्रतिज्ञा करीथी तिसको छोडकरके तिन शरीरोंका विवेक करणा प्रसंगमें असंगत है ॥

उत्तर-प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय इन तीन कोशोंका नाम सूक्ष्मशरीर है, तिस सूक्ष्मशरीरके विवेक करणेसे तिन कोशोंका विवेक सिद्ध होता है, तिसते सूक्ष्मशरीरका विवेक करणा प्रसंगमें असंगत नहीं गुणोंकी सात्त्विकी राजसी अवस्थाभेदकरके एक सूक्ष्मशरीरविषे तिन कोशोंका वर्णन कियाहै। भेदकरके वास्तवते तीन कोश सूक्ष्मशरीररूप हैं॥ ३९॥ ४०॥ जैसे सुषुप्तिविषे आत्माका अन्वय है और सूक्ष्मशरीरका व्यतिरेकहै तैसेही समाधि अवस्था विषे आत्माका अन्वयहै और कारण शरीर जो है आनंदमय कोश, तिसका समाधिअवस्थाविषे व्यतिरेक है। इसप्रकार अन्नमयआदि पंचकोशरूप जो शरीर तीन हैं तिनते आत्मा भिन्न है पंचकोशोंके मध्यविषे अनुस्यूत होणेते जैसे अनेक मणियोंके मध्य विषे अनुस्यूत जो है धागा, सो मणियोंते भिन्न है और पंच कोश मिथ्या हैं एक अधिष्ठान विषे कदाचित् प्रतीत होणेते और कदाचित् न प्रतीत होणेते, जैसे एक अधिष्ठान रस्सीविषे कदाचित् प्रतीत होणेवाले और कदाचित् प्रतीत न होणेवाले सर्पमाला धाराआदिक

मिथ्या हैं। और आत्मा सत्य है कल्पितोंकी प्रतीति समय विषेभी एकरसता करके प्रतीत होणेते। जैसे सर्प माला धाराआदिकोंकी प्रतीति समय विषे एकरस होकरके प्रतीत होती रस्सीकी इदंता सत्य है ॥४१॥ इस प्रकार अन्वय व्यतिरेक करके पंच कोशोंसे भिन्न कियाहुवा आत्मा परब्रह्मरूपताको प्राप्त होता है। जैसे मुंजते युक्तकरके तीली न्यारी करलईजाती है तैसे धैर्यवान् ब्रह्मचर्य्यादिक साधनोंकरके संपन्न जो जिज्ञासु जन हैं तिनने पंचकोशोंसे आत्माको भिन्न किया पंचकोशोंते भिन्न जो आत्मा है सो ब्रह्मरूप है काहेते जो ब्रह्मका लक्षण सच्चिदानंदरूप है सोई सच्चिदानंद लक्षण आत्माका है ताते आत्मा और ब्रह्मकी एकता है भेद नहीं॥ ४१ ॥ इसप्रकार जिज्ञासुजनोंके ताईं गुरोंने जीवब्रह्मकी एकताभी युक्तियाँ करके संभावना करवाई सो जीवब्रह्मकी एकता तत्त्वमस्यादि वाक्योंने भागत्यागलक्षणाकरके जणाई है जैसे काशीमें प्रथम देख्या जो है पुरुष तब माघका महीना था, और पीछे तिसको कुरुक्षेत्रविषे देख्या तब वैशाखका महीना था तब तिसको देखकर कहताहै "सोयं पुरुषः" इस वाक्यविषे सःशब्दका अर्थ जो है काशदेश और माघके महीनेविशिष्ट और अयंशब्दका अर्थ जो है कुरुक्षेत्र देश और वैशाखके महीनेविशिष्ट पुरुष तिसके बीचसे एक भाग जो है काशीदेश और माघका महीना और कुरुक्षेत्रदेश और वैशाखका महीना तिसका त्यागकरके एक भाग जो है पुरुष तिसकी एकता भागत्यागलक्षणाकरके जाणीजाती है।।४२।।४३।।तैसे ततूपदका अर्थ जो है जगत्का अभिन्ननिमित्त उपादानकारण ब्रह्म सो किसप्रकार अभिन्ननिमित्त उपादान कारण है ऐसे पूछे तो श्रवणकर तमोगुणप्रधान जो माया है तिसके साथ मिलकरके ब्रह्म जगत्‌रूपताको प्राप्त होताहै और शुद्धसत्त्वरूप मायाके साथ मिलकरके जगत्का कर्ता होता है अर्थ यह--जो निमित्तकारण होता है जैसे एकही ऊर्ण-

नाभिनाम जीव आपणे मुखसे निकासी जो तंतु है तिसका आपही उपादानकारण और निमित्तकारण होताहै सो तत्पदका वाच्य अर्थ है ॥ ४४ ॥ और जब काम्यकर्म आदिकोंकरके दूषित मलिन सत्त्वप्रधान जो माया है, अविद्या जिसका दूसरा नाम है, तिस अविद्यारूप उपाधिको ग्रहण करता है, तब परब्रह्म जीवनामको प्राप्त होताहै. अर्थ यह जो त्वंपदका वाच्यअर्थ होता है ॥ ४५ ॥ यह जो उपाधि है, परस्पर विलक्षण और परस्पर विरोधवाली तीन प्रकारकी माया, तमोगुण प्रधान १ और शुद्धसत्त्वप्रधान २ और मलिनसत्त्वप्रधान ३ तिसको त्यागकर अखंड सच्चिदानंदपरब्रह्म एक तिस उपाधिका आश्रय लिखा गया है ॥ ४६ ॥ जैसे " सोयं पुरुषः " इस वाक्यविषे उपाधि जो है देशकाल तिसको त्यागकरके तिस उपाधिका आश्रय एक पुरुष लखागयाहै ॥ ४७ ॥ तैसे जीवईश्वरकी उपाधि जो है माया और अविद्या तिसको त्यागकरके अखंडसच्चिदानंद लखागयाहै ॥ ४८ ॥

शंका—महावाक्यकरके लखागया जो है अखंडसच्चिदानंद ब्रह्म सो सविकल्प है कि, निर्विकल्प है ? आदिका पक्ष नहीं बनता. काहेते जो सविकल्पवस्तु होती है सो मिथ्या होती है और निर्विकल्पकोभी लक्ष्यता नहीं बनती काहेते जो लक्ष्यताधर्मवाला है तिसको निर्विकल्पता नहीं और जो कहो तिसविषे लक्ष्यतारूप धर्म नहीं तो लक्ष्यतारूप धर्मते रहित जो है सो लक्ष्य लोकविषे नहीं देखागया । और युक्तिकरके भी लक्ष्यको निर्विकल्पता नहीं बनती, काहेते जो लक्ष्यता धर्मवालेको निर्विकल्प कहणा तो ऐसा है, जैसे कोई कहे मेरी माता वंध्या है, काहेते जो माता तेरी वंध्या होती तब तू जन्मको कैसे प्राप्त होता ? तेरा जन्मही ऐसे जनावता है जो तेरी माता वंध्या नहीं तैसे

लक्ष्यताधर्मवालेको तो सविकल्पता होती है और निर्विकल्पता नहीं होती ॥ ४९ ॥

उत्तर–तैंने जो यह प्रश्न किया जो लक्ष्य कौनहै सविकल्पहै अथवा निर्विकल्पहै? यह जो तेरा विकल्पहै सो निर्विकल्पाविषेहै कि सविकल्पाविषेहै. जो कहै निर्विकल्पविषे विकल्पहै तब तेरेकरके कह्या जो दोषहै. सो तेरेकोही प्राप्तहोता है, जैसे कोई कहै निर्धनके पास धन है, इस कहणेमैं जैसे वदतो व्याघात है तैसे निर्विकल्पविषे विकल्प है। इस कहणेमेंभी वदतोव्याघात है और जो कहै सविकल्पाविषे मेरा विकल्प है तब आत्म आश्रय और अन्योन्याश्रय और चक्रका और अनवस्थारूप दोषोंकी प्राप्ति होती है। कैसे जो सविकल्पनाम है विकल्पवालेका तो यह सिद्ध भया, विकल्पवाले विषे विकल्पहै जो विकल्पवालेविषे रहेगा सो विकल्पविषेभी रहेगा जैसे गलीचेवाले स्थानपर जो बैठाहै सो गलीचेपरभी बैठा है ऐसे हुएसे विकल्पाविषे रह्या जो है विकल्प सो आधाररूप विकल्पसे भिन्न है कि, आधाररूप विकल्पसे अभिन्न है जो कहो अभिन्न है तब आत्माश्रय दोष भया। काहेते जो आपही विकल्प आधार भया और आपही तिसके आश्रय रहनेवाला भया, सो तौ बात जगत्में नहीं देखीजाती । जैसे अपने स्कंधपर आप नहीं चढ सकता और जो कहो आधारभूत विकल्पसे तिसविषे रहणेवाले विकल्पका भेद है तब आधारभूत जो विकल्प है सोभी निर्विकल्पाविषे रहताहै कि सविकल्पविषे रहताहै, जो कहै निर्विकल्पाविषे रहता है तब वदतो व्याघात दोष होवेगा और जो कहो आधारभूत विकल्पभी सविकल्पविषे रहता है तब तिसके आश्रयको सविकल्प किसने किया? प्रथमविकल्पने किया अथवा तीसरे विकल्पने किया जो कहो प्रथमविकल्पने आधाररूप विकल्पके आश्रयको सविकल्प किया तब आधाररूप विकल्प प्रथमविकल्पके आश्रय भया। इसप्रकार

अन्योन्याश्रय दोष भया। और जो कहो तीसरे विकलपने दूसरे विकलपके आश्रयको सविकल्प किया तब तीसरे विकलपने भी सविकलपके आश्रय रहणा है तब तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप किसने किया ? प्रथम विकलपने तिसके आश्रयको सविकलप किया अथवा दूसरे विकलपने तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप किया अथवा चौथे विकलपने तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप किया ? जो कहै प्रथमविकलपने तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप किया तब चक्रका दोषकी प्राप्तिहुई। काहेते जो प्रथम विकलपके आश्रयको सविकलप किया था दूसरे विकलपने और दूसरे विकलपके आश्रयको सविकलप कियाथा तीसरे विकलपने और तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप किया प्रथम विकलपने इसप्रकार चक्रका प्राप्त भई और जो कहै तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप दूसरे विकलपने कियाहै तब अन्योन्याश्रयदोष होताहै। काहेते जो दूसरे विकलपके आश्रयको सविकलप किया तीसरे विकलपने और तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप किया दूसरे विकलपने और जो कहै तीसरे विकलपके आश्रयको सविकलप कियाहै चौथे विकलपने, तब चौथे विकलपनेभी सविकलपके आश्रय रहणाहै, तब चौथे विकलपके आश्रयको सविकलप करनेवाला पांचवां विकलप होवेगा। इसीतरह पांचवें विकलपके आश्रयको सविकलप करनेवाला छठा विकलप होवेगा। इसीतरह आगे आगे एक एक बढता जायगा इसका नाम अनवस्थादोष है ॥ ६० ॥

जैते दोषोंकी प्राप्ति निर्विकलपविषे विकलप है कि, सविकलपविषे विकलप है। इसविचारमें होती है तैते दोषोंकी प्राप्ति इन पांच स्थानों विषे होती है। सो पंचस्थान कौन हैं ऐसा पूंछे तो श्रवण कर-एक तो यह जो रूप रूपवालेविषे रहता है कि, रूपते रहितविषे रहता है। और

दूसरा यह जो क्रिया क्रियावाले विषे रहती है कि, अक्रियाविषे रहती है। और तीसरे यह जो गोत्वरूप जाति गोविषे रहती है कि गोते भिन्न विषे रहती है। और चौथा यह जो घट घटवालेविषे रहता है, कि,घटते रहितविषे रहताहै।पांचवां यह घटका संबंध घटके संबंधवाले विषे है कि, घटके संबंधते जो रहितहै तिसाविषे है तो इसतरहसे तर्क करणेसे किसी पदार्थकी सिद्धि नहीं होती सब पदार्थोंकी अनिर्वचनीयता सिद्ध होती है। अर्थ-यह जो सर्वव्यवहारकीनिवृत्तिरूप मौनता प्राप्त होतीहै ताते गुरुशिष्य उपदेश आदिकोंके अभावकी प्राप्ति होतीहै।ताते उपदेश आदिकोंके वासते तत्त्ववेत्ताओंन संज्ञा कल्पीहै ताते संपूर्णसंज्ञाअखण्ड सच्चिदानंद परब्रह्मविषे कल्पित हैं सो अखंड सच्चिदानंद परब्रह्म कैसाहै। विकल्पका तिसाविषे अभाव है। और तैसे तिसाविषे विकल्पके अभावकाभी अभाव है और लक्ष्यताकाभी तैसे तिसाविषे अभावहै। और लक्ष्यताके अभावकाभी तिसाविषे अभावहै।ताते जैसे तिसाविषे विकल्पआदिकोंका कल्पित व्यवहार होताहै। तैसे तिसाविषे लक्ष्य यहभी कल्पित व्यवहार होताहै। ताते अखंड सच्चिदानंद परब्रह्म तत्त्वमसि महावाक्यकरके लक्षित है यह जो ब्रह्मवेत्ता कहते हैं सो कल्पकरके कहतेहैं। जाते संपूर्ण व्यवहार तिसाविषे कल्प्या हुवाहै ताते लक्ष्यताभी तिसाविषे कल्पितहै, ताते यह शंका न करणीचाहिये जो लक्ष्य सविकल्पहै, वा निर्विकल्पहै, काहेते जो लक्ष्याविषे सविकल्पता और निर्विकल्पता दोनों कल्पितहैं॥५१॥५२॥इतने ग्रंथ करके क्या सिद्धभया। श्रवण और मनन दो सिद्धभए श्रवणनाम किसकाहैमहावाक्यका अर्थजो है जीवब्रह्मकी एकता तिसका गुरुवोंके मुखसे बुद्धिपूर्वक सुणना और मनन नाम किसका है?जो गुरुवोंके मुखते श्रवणकरी जीवब्रह्मकी एकता तिसको बुद्धिके साथ अनेक युक्तियांकरके विचार करणा। और बुद्धिविषे इसकी श्रद्धा दृढ होणी कि, जो गुरु कहतेहैं जीवब्रह्मकी एकता सो

यथार्थ है ॥ ५३ ॥ अब आगे निदिध्यासनका रूप वर्णन करते हैं-श्रवण मनन कर जो जाण्याहै अखंडसच्चिदानंद परब्रह्म, तिसविषे संशयते रहित चित्तकी वृत्ति प्रवाहाकार होजानी इसका नाम निदिध्यासनहै ॥ ५४ ॥ सो यह निदिध्यासन जब अत्यन्तही दृढताको प्राप्तहोता है तब समाधि होती है समाधि और निदिध्यासनका भेद क्या है ऐसे पूछे तो श्रवण कर। निदिध्यासनअवस्थाविषे ध्याता ध्यान ध्येय यह त्रिपुटी भासतीहै जो मैं सच्चिदानंद परब्रह्मका ध्यान करताहूं, और समाधि अवस्था विषे अभ्यासकरके त्रिपुटीते रहित होजाताहै । अर्थ-यह जो मैं अखंडसच्चिदानंदपरब्रह्महूं यह वृत्तिभी उदय नहीं होती । काहेते जो अहंभावकाभी अभाव होजाताहै । चित्त जो है सो परब्रह्मविषे लगाहुवा परब्रह्मरूप होजाताहै । चित्त जो है सो आपणे चित्तभावको त्यागकरके पवनते रहित स्थानविषे स्थित दीपककी नाई अचल प्रकाशरूप हो जाताहै ज्ञानवान् इसका नाम समाधि वर्णन करते हैं ॥ ५५ ॥

प्रश्न-तुम कहतेहो समाधिविषे त्रिपुटी नहीं होती काहेते जो सब वृत्तियांका अभाव हो जाताहै । ताते अखंड ब्रह्माकार वृत्तिभी नहीं रहती ताते यह कैसे कहा जो समाधिविषे अखंडाकार वृत्ति होतीहै । काहेते जो अखंडाकारवृत्ति भी तो वृत्ति है तो तिस अखंडाकार वृत्तिके हुयाँ हुयाँ सर्ववृत्तियांका अभाव न सिद्ध भया ॥

उत्तर-अखंडाकारवृत्ति तो समाधिविषे रहतीहै । काहेते जो समाधिते उठकरके तिस अखंडानंदको याद करता है ताते यह जो यादगीरीहै अखंडानंदकी सो समाधिकालविषे अखंडानंदके अनुभवको जनावतीहै । ताते अखंडानंदका अनुभव समाधिअवस्थाविषे भया. ताते अखंडाकार वृत्ति समाधि विषे सिद्ध भई । ताते समाधिविषे वृत्तियां नहीं इसका क्या अर्थ सिद्धभया समाधिविषे अखंडाकारवृत्ति तो रहती

है पर वृत्तिका वृत्तिभाव नहीं रहता जैसे जलविषे लूण अभेद होजाताहै तैसे वृत्ति अखंड परब्रह्मविषे अभेद हो जाती है। जैसे जलविषे नेत्रोंकरके नहीं देखाजाता पर रसनाकर केजानलियाजाता है तैसे अखंडब्रह्माकार वृत्ति भी स्थूलदृष्टि करके नहीं प्रतीत होती पर सूक्ष्म दृष्टिकरके जानी जाती है। जो अखंडाकारवृत्ति समाधिविषे रहतीहै ॥ ९६ ॥

शंका--समाधिविषे जो अखंडाकारवृत्ति रहती है, सो समाधिकालविषे उत्पन्न होती है। अथवा जाग्रत्कालविषे उत्पन्न हुई जो वृत्तिहै सो समाधिकालविषे रहतीहै। प्रथमपक्ष तो नहीं बनता काहेते जो समाधिकालविषे वृत्तिकी उत्पत्तिका कारण प्रयत्न नहीं होता और जाग्रत् काल विषे उत्पन्नहुई जो अखंडाकार वृत्ति है सो भी समाधिविषे नहीं रहती काहेते जो वृत्ति क्षणक्षणविषे नाश होजातीहै ताते दूसरा पक्ष भी नहीं बनता। दोनों प्रकारोंकरके समाधिविषे अखंडाकार वृत्ति नहीं बनती, तुम कैसे कहतेहो जो समाधिविषे अखंडाकार वृत्ति रहतीहै ॥

उत्तर–समाधिविषे अखंडाकारवृत्ति रहती है, सो वृत्ति समाधिकालमें उत्पन्न होतीहै। समाधिकालते प्रथम जो किया अखंडाकारवृत्तिका प्रयत्न तिस प्रयत्नते समाधिविषे अखंडाकारवृत्ति होताहै। सो समाधिते प्रथमकालका प्रयत्न कैसाहै। दो तिसके सहायकहैं, एक तो निष्काम पुण्य और दूसरा वारंवार समाधिके अभ्यासकरके उत्पन्न भया जो संस्कार सो है ॥ ९७ ॥ यह समाधिका उपदेश श्रीकृष्ण भगवान्जीने गीताके छठे अध्यायविषे अर्जुनके ताईं कियाहै। हे अर्जुन! जैसे पवनते रहित स्थानविषे दीपक स्थित हुया डोलता नहीं अचल होजाताहै तैसे समाधिकालविषे आत्मअभ्यासके करणेवाला जो जिज्ञासुहै तिसका चित्त ब्रह्माकार अचल होजाताहै। ताते आजकलके जो जो जिज्ञासु हैं. तिनको भी समाधिका अभ्यास करणा चाहिये ॥ ९८ ॥

प्रश्न-समाधिका क्रिया फल है । बिना फलजानेते समाधिका अभ्यास नहीं होसक्ता. ताते समाधिका फल कृपाकरके कहो जो उस फलकी प्राप्ति वास्ते मैं भी समाधिके अभ्यासका यत्न करों ॥

उत्तर-समाधिके दो फलहैं, एक अवांतर फलहै और दूसरा परम फल है । जैसे किसीने गंगास्नान करणे जाना होता है, तो तिसके चलने रूप प्रयत्नका गंगास्नान परम फल है। और कहो ये कुरुक्षेत्रका स्नान उसका अवांतरफल है। तैसे समाधिकाअवांतरफल दोप्रकारका है। एक तो अनंत जन्मोंविषे संचितकिये जो पुण्यपापरूप कर्मसे करोडों हैं सो नाश होजाते हैं। और दूसरा अविद्या और अविद्याके कार्यका नाश करनेवाला जो है ब्रह्मसाक्षात्कार तिसका साधन जो निष्काम धर्म है सो बधता जाता है ॥ ५९ ॥ इसीकारणते ब्रह्मज्ञानी इस निर्विकल्प समाधिको धर्ममेघ कहते हैं । जैसे मेघ हजारों जलकी धाराओंकरके वर्षा करता है। तैसे निर्विकल्प समाधि भी ब्रह्मसाक्षात्कारका कारण जो धर्म है, सोई भया एक अमृत तिसकी हजारों धाराओंकरके वर्षा करती है । इसते इस निर्विकल्प समाधिको धर्ममेघ कहते हैं; एक क्षण मात्रभी जो निर्विकल्प समाधि है, सो इतने पुण्यको उत्पन्न करती है । सो अश्वमेध यज्ञ करणेते जो पुण्य उत्पन्नहोवे ॥ ६० ॥ अब आगे समाधिका परम प्रयोजन वर्णन करते हैं, सो श्रवणकर इस निर्विकल्प समाधिकरके ज्ञानका प्रतिबंधक जो अहंकार और ममता तिसके संस्कार नष्ट होजातेहैं और अहंकारके नाश होणते पुण्यपापरूप कर्मोंका जो समूह है सो संचित सोभी नाश होजाताहै जैसे वृक्षके नाशहुये तिस वृक्षकी छायाभी नाशहोजाती है तैसे समाधिविषे अहंकारके नाशहोणते अहंकारके आश्रय जो संचित पुण्यपापरूप कर्म हैं सो भी नाश होजातेहैं । ताते वासना और अहंता और ममता और पुण्यपापरूप कर्म सो कभी नाश होजातेहैं । ताते वासना और अहंता और ममता

और पुण्यपापरूप कर्म यह पंच जो ब्रह्मसाक्षात्कारके प्रतिबंधक थे तिनके नाश हुयाँ हुयाँ ॥ ६१ ॥ महावाक्य प्रतिबंधतैं रहित हुआ हुआ जीवब्रह्मकी अभेदता तिसको अपरोक्षकरके दिखाय देता है। जैसे हाथके मध्य जो आमलेका फल है, तिसको नेत्र अपरोक्ष करके दिखाय देते हैं और समाधिते प्रथम महावाक्य प्रतिबद्ध हुया हुया परोक्षज्ञानको उत्पन्न करता है। प्रतिबंधका कारण अहंता आदिक पंच हैं, जैसे मणिमंत्र आदिकोंकरके प्रतिबद्ध हुईहुई अग्नि दाहको नहीं करती और स्वरूपकरके परी नजर आवतीहै। जब अग्निका प्रतिबंध दूरकियाजाता है तब अग्नि दाह करती है। तैसे अहंता और ममता और वासना और सकाम पुण्य और पाप इन पांचों करके प्रतिबद्ध हुयाँ हुयाँ महावाक्य अपरोक्षज्ञानको उत्पन्न नहीं करसक्ता। समाधिकरके अहंताआदिक प्रतिबंधके नाश हुयां हुयां महावाक्य अपरोक्षज्ञानको उत्पन्न करता है। तातै यह सिद्धभया। अपरोक्षज्ञानकी प्राप्तिवासते जिज्ञासुओंने समाधिका अभ्यास करणा ॥ ६२ ॥

प्रश्न-परोक्षज्ञानका क्या फल है, और अपरोक्षज्ञानका क्या फल है:-

उत्तर-श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरुके मुखते जिस दिन श्रवणकिया जो है महावाक्य तिस दिनते लेकरके आगे पापकर्मका स्पर्श नहीं होता। अर्थ यह जो आगे संपूर्ण पापकर्म सो नाश होजातेहैं. काहेते जो ज्ञान अभ्यासविषे लगाहुवा जिज्ञासुहै तिसकी पापकर्मोंविषे रुचि नहीं रहती। अकस्मात्‌ते जो कोई मार्गमें चलतेहुये चरणोंके तले कीट पतंग मरजाताहै तिसका पाप तिस जिज्ञासुको स्पर्श नहीं करता ज्ञानअभ्यासके बलते, जैसे किसी पुरुषने मोमजामा ओढाहै तो इस पुरुषको मंद मंद बूंदोंका स्पर्श मोमजामेके प्रभावते नहीं होता ॥ ॥ ६३ ॥ अब अपरोक्षज्ञानका फल कथन करतेहैं सो श्रवण

कर । अपरोक्षज्ञान जन्ममरणका कारण जो अज्ञानहै तिसको नाश करदेताहै । जैसे मध्याह्नका सूर्य अंधकारको नाश करदेताहै ॥६४॥ यह प्रत्यक्तत्त्वविवेक नाम जो प्रकरणहै तिसविषे प्रत्यक्तत्त्वविवेक कथन कियाहै । तिसके विचारका जो अभ्यास करताहै। अर्थ-यह जो वारंवार विचारकरता है तिस विचारकरणेवालेको जो फल प्राप्त होताहै सो श्रवणकर। इसप्रकार पंचकोशोंसे भिन्न आपने आपको जानकरके जन्ममरणरूप बंधनते रहित हुया हुया मानुष इसी जन्मविषे शीघ्रही सच्चिदानंद परब्रह्मरूप होजाताहै । ताते प्रत्यक्तत्त्वविवेकका विचार वारंवार करणा ॥ ६५ ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां प्रथमं प्रत्यक्तत्त्वविवेक प्रकरणं समाप्तम् ॥ १ ॥

अथ पञ्चमहाभूतविवेकप्रकरणम् २.

ॐ सद्गुरुप्रसाद ॥ अथ दूसरे विवेकका आरंभ करते हैं:—पंचभूतविवेक दूसरे प्रकरणका नाम है।सत्यरूप अद्वितीय एकब्रह्म जगत्का कारण है सो ब्रह्म मन वाणीते परे है इसीते मनवाणी करके जाना नहीं जाता इसते ब्रह्मके ज्ञानवासते ब्रह्मका कार्य जो पंचभूतहै,तिनका विवेक करते हैं॥१॥आकाश, पवन, तेज, जल, पृथिवी ये पंचभूतहै शब्द, स्पर्श, रूप,रस, गंध ये पंच भूतोंके गुण हैं. तिन गुणोंद्वारा पंच भूतोंका विवेक करणा । अर्थ यह जो पंचभूतोंको भिन्न भिन्न जानणा सो किसप्रकार जानणा ऐसा पूछे तो श्रवणकर । आकाशविषे एक शब्द गुणरहता है । पवनविषे शब्द स्पर्श दो गुण रहतेहैं । तेजविषे

शब्द स्पर्श रूप तीन गुण रहते हैं। जलविषे शब्द स्पर्श रूप रस चार गुण रहते हैं। पृथिवीविषे शब्द स्पर्श रूप रस गंध पंच गुण रहते हैं॥ २॥ आकाशविषे जो शब्दगुण है सो ध्वनिरूप है और वायुविषे जो शब्द है सो उसीरूप है और वायुविषे जो स्पर्श है सो अनुष्णाशीतरूप है अर्थ यह पवनाविषे जो स्पर्श है सो न उष्ण है न शीत है और पवनाविषे जो शीतलता प्रतीत होतीहै सो जलके संबंधकरके होती है और पवनाविषे जो उष्णता प्रतीत होती है सो तेजके संबंधकरके प्रतीत होती है वास्तवते पवनाविषे न शीतलता है न उष्णता है और अग्निविषे भुकभुकू शब्द है॥ ३॥ और अग्निविषे उष्णस्पर्श है, अग्निविषे शुक्लरूप है और जलविषे चुलचुल शब्द है और शीतस्पर्श है और शुक्ल रूप है जलका जो शुक्ल रूप है सो परके प्रकाशनेको समर्थ नहीं और तेजका जो शुक्ल रूप है सो परके प्रकाशनेको समर्थ है। ताते जल और तेजके शुक्ल रूपका भेद मीठा जलका रस है॥ ४॥ और पृथिवीविषे कडकड शब्द है और कठिनता स्पर्श है और लाल काला आदिक अनेक प्रकारका रूप है और खट्टा मीठा आदिक अनेक प्रकारके रस हैं॥ ५॥ और सुगंध और दुर्गंध दो प्रकारकी गंध है पवन और जलविषे जो गंधकी प्रतीति होती है सो पृथिवीके संबंध करके होती है वास्तवते जल और पवनविषे गंध नहीं, इसप्रकार पंचभूतोंविषे गुणोंका विवेक करणा अर्थ—यह जो पंच भूतोंविषे गुण भिन्न भिन्न जानने और गुणोंद्वारा पंचभूतोंको भिन्न भिन्न जानना। जैसे गुणोंद्वारा पंचभूत भिन्न भिन्न जानेजाते हैं तैसे कार्यद्वारा भी पंचभूत भिन्न भिन्न जानेजाते हैं इस वास्ते पंचभूतोंका कार्य पंचज्ञानइंद्रियां प्रथम कथन करते हैं श्रोत्रइंद्रिय आकाशते उत्पन्न होता है श्रोत्रइंद्रिय कानरूप स्थानविषे रहताहै शब्दविषयको ग्रहण करता है बाहर धावन करणा बहुत

करके इसका स्वभाव है अंतरभी धावन करता है. अर्थ-यह जो कभी शरीरके अंतर जो शब्द होता है तिसकोभी श्रोत्र ग्रहण करता है।

प्रश्न-शरीरके अंतरशब्द होता है सो कैसे जानिये और श्रोत्र इंद्रिय तिसको कैसे ग्रहण करता है:-

उत्तर-प्राणपवनकरके उदरविषे गुडगुड जो शब्द होता है सो शरीरके अंतर होता है और जठराग्निविषे जो शब्द होता है शरीरके अंतर तिसको आहित शब्द कहते हैं और तिसको योगीजन सुनतेहैं कानोंको मूदकरके सो श्रोत्रइंद्रिय इंद्रियोंकरके नहीं जानी जाती शब्दकी प्रतीति होती है तिसद्वारा श्रोत्रका अनुमान कराजाता है और त्वचा इंद्रिय पवनते उत्पन्न होता है और स्पर्शविषयको ग्रहण करता है और त्वचाइंद्रिय सारे शरीरविषे व्यापकरके रहताहै इसी कारणते सारे शरीराविषे शीत उष्णकी प्रतीति होतीहै सो त्वचा इंद्रिय बहुत करके बाहरले स्पर्शको ग्रहण करता है और कभीक अंतरभी शीतल जलके पीते हुये छाती ठिरजाती है तिस छातीकी शीतलताको त्वचा इंद्रिय ग्रहण करता है और त्वचा इंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं और शीत उष्णके स्पर्श द्वारा त्वचा इंद्रियका अनुमान कराजाता है आर तेजसे नेत्र उत्पन्न होते हैं सो नेत्रधारीके अग्रभागविषे रहते हैं और रूपको ग्रहण करते हैं और बहुत करके बाहरको धावन करते हैं कभीक पलकोंको मीच्यांहुयां अंतरके अंधकारकोभी ग्रहण करते हैं सो यह नेत्रइंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं रूपकी प्रतीतिद्वारा इसका अनुमान कराजाता है और रसनाइंद्रिय जलते उत्पन्न होता है। और जिह्वाके अग्रभागविषे रहता है सो रसको ग्रहण करता है; और बहुतकरके बाहर धावन करता है और कभीक डकारके आयाँ हुया रसनाइंद्रिय अंतरके रसको ग्रहण करता है सो रसना इंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं रसकी प्रतीतिद्वारा तिसका अनुमान कर जाता

है और घ्राणइंद्रिय पृथिवीतें उत्पन्न होताहै और गंधको ग्रहण करताहै और नासिकाके अग्रभागविषे रहताहै और बहुतकरके बाहरको धावन करताहै और कभीक डकारके आयाहुयां अंतरके गंधकोभी घ्राणइंद्रिय ग्रहण करता है सो घ्राण प्रत्यक्ष नहीं गंधकी प्रतीतिद्वारा इसका अनुमान कराजाताहै इसप्रकार पंचज्ञान इंद्रियोंकरके पंचभूत भिन्न भिन्न जानेजाते हैं ।६।७। और पच कर्म इंद्रियोंद्वाराभी पंचभूत भिन्न भिन्न जानेजातेहैं सो पंच कर्मेंद्रियाँ न हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर वाको हाथ चरण उपस्थ गुदा सो यह पांच इंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं अनुमान द्वारा जानेजाते हैं सो अनुमान करके कैसे जानजाते हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर पंच प्रकारकी क्रिया प्रत्यक्ष नजर आवती है एक शब्दका कथन करणा और दूसरा किसीतें कोइ वस्तु लेनी और किसी-को कोई वस्तु देनी और तीसरा चलना फिरना और चौथा स्त्रीका आनंद लेना और मूत्रका त्याग करणा और पाँचवाँ मलका त्यागना इन पंचक्रियाओंतें अन्य कोई भिन्न क्रिया नहीं और जितनी क्रिया हैं खेतीका करणा बाणिजका करणा युद्धका करणा स्नान करणा दानकरणा होमकरणा किसीकी सेवा करणी इनते आदि लेकरके जितनी क्रियाहैं तिनका इन पाँचोंविषे ही अंतर्भाव होता है ताते इन पाँचोद्वाराही पंच कर्मेंद्रियोंका अनुमान कराजाता है सो पाँचों कर्मेंद्रियां मुखआदिक स्थानोंविषे रहतीहैं ॥८॥११॥ और मन जो है सो दशों इंद्रियोंका प्रेरक है और हृदयरूप स्थानाविषे रहता है और तिसका नाम अंतः-करण है काहेते जो ज्ञानइंद्रियां और कर्मइंद्रियांके विना बाहरले किसी पदार्थको जानने और किसी क्रियाके करणेको समर्थ नहीं ॥ १२ ॥ और विषयोंविषे गुण और दोषके विचारको करणेवाला है अर्थ यह जो पाँच इंद्रियोंके विषयोंको अच्छा और बुरा जाननेवाला है नेत्रआदिक इंद्रियां जो हैं सो रूपआदि विषयोंको अच्छा बुरा

नहीं जनावती और आत्मा सब इंद्रियोंके विषयोंको प्रकाशता है और किसीके गुणदोषको नहीं जनावता और गुणदोषकी प्रतीति तो प्रत्यक्ष होती है ताते विषयोंसे गुणदोषोंकी प्रतीतिका कारण मन है सो मन सत्त्व, रज, तम, इन तीन गुणोंकरके अनेक प्रकारके विकारोंको प्राप्त होता है ॥ १३ ॥ जब मनविषे सत्त्वगुण प्रगट होताहै तब वैराग्य क्षमा उदारता मैत्री दया गंभिरिता परमेश्वरभजन इसते आदि लेकरके गुण प्रगट होते हैं। और जब मनविषे रजोगुण प्रगट होता है तब काम क्रोध लोभ यत्न दंभ ईर्षाते आदिलेकरके दोष प्रगट होते हैं ॥ १४ ॥ और जब मनविषे तमोगुण प्रगट होता है तब आलस्य, भ्रम, तंद्रा, निद्रा आदिक दोष प्रगट होते हैं। सत्त्वगुणके कार्य जो वैराग्यआदिक गुण हैं तिनते पुण्य उत्पन्न होताहै । रजोगुणका कार्य जो काम क्रोधआदिक हैं तिनकरके पाप उत्पन्न होताहै ॥ १५ ॥ और तमोगुणका कार्य जो आलस्य तंद्रा निद्राआदिक हैं तिनकरके न पाप उत्पन्न होता है न पुण्य उत्पन्न होता है, केवल आयु व्यर्थ चली जाती है। संपूर्ण कर्मेंद्रियां और ज्ञानेन्द्रियां मन और शरीर इनविषे अभिमान करणेवाला जो है सो अहंकार है सो कर्ता है ॥ १६ ॥ जितना यह कार्य जगत् प्रतीत होता है सो आकाशआदि पंचभूत रूप है जाते पंचभूतोंते विना आदिअंतविषे कुछ पतीति नहीं होता ताते जो वस्तु पंचगुणोंसहित प्रतीत होती है सो पृथिवीरूप है और जो वस्तु चार गुणोंसाहित प्रतीत होती है सो जलरूप है। और जो वस्तु तीन गुणोंसाहित प्रतीत होती है सो तेजरूप है। और जो वस्तु दो गुणोंसहित प्रतीत होती है सो पवनरूप है। और जो एक शब्दगुणसहित है सो आकाशरूप है । इसप्रकार जो प्रत्यक्ष पदार्थ दृष्टिमें आवते हैं सो पंचभूतरूप हैं यह सिद्ध भया। और जो दृष्टिमें नहीं आवते नेत्रआदिक तिनकोभी युक्तियोंकरके

भूतकार्यता निश्चय करी है, सो युक्तियां श्रवणकर नेत्र जो हैं सो तेजरूपहैं, काहेते जो पंचविषयोंके मध्यमें एकरूपकी प्रगटताका कारण है। जो रूपकी प्रगटताका कारण होता है सो तेजरूप होता है जैसे दीपक। ताते इस युक्तिते जानाजाताहै कि, नेत्र एक तेजभूतका कार्य है इसीतरह रसनाइंद्रियको जलका कार्य जानना। इसीतरह सर्वइंद्रियोंको भूतकार्य जानना। और मन जो है सो पंचभूतोंका कार्य है, काहेते जो पांचोंही विषयोंविषे गुणदोषकी कल्पनाको करता है। जो मन पंचभूतोंका कार्य न होता तो पंचभूतोंके जो गुण है पांच तिनके साथ संबंधवाला कैसे होता? सभीपंचभूतोंके पंचगुणोंके साथ संबंधते रहित होता। जैसे एकभूतते उत्पन्न हुये जो नेत्र हैं, सो पंचभूतोंके पंचगुणोंको नहीं ग्रहण करते, किंतु एकरूपकोही ग्रहण करते हैं। ताते नेत्र एकभूतका कार्य है जाते एक गुणको ग्रहण करते हैं। ताते मनभी जो एकभूतका कार्य होता तब एकही विषयको ग्रहण करता सो ऐसे तो नहीं अनुभवकरके जानाजाता है जो मन पाँचोंही विषयोंको कल्पता है ताते जानाजाता हैं जो मन पंचभूतोंका कार्य है। और वेदभी इंद्रियों और मनको भूतकार्यता कथन करता है ॥ १७ ॥ ताते इतनेकरके क्या सिद्ध भया, जो इंद्रियों करके प्रतीत होता है और जो मनकरके प्रतीत होता है और जो अनुमानकरके प्रतीत होता है और जो शास्त्रकरके प्रतीत होता हैं सो संपूर्ण पंचभूतात्मक जगत् है ॥ १८ ॥ सो जितना जगत् है, सो आपणी उत्पत्तिते प्रथम सत्‌रूप ब्रह्म होता भया। सो ऐसे—छांदोग्य उपनिषद्‌विषे "उद्दालक मुनीश्वर अपने पुत्र श्वेतकेतुके ताईं" कथन करता भया है सो सत् ब्रह्म कैसा है ? सजातीय विजातीय स्वगत भेदते रहित है और नामरूप उत्पत्तिते प्रथम न होते भये ॥ १९ ॥

प्रश्न-स्वगत सजातीय विजातीय भेदका क्या स्वरूप है और सो तीन प्रकारका भेद कहां रहता है और ब्रह्मविषे कैसे नहीं रहता ?

उत्तर-स्वगतभेद वह कहाता है जो अपनेविषे प्राप्त होवे भेद अर्थ यह जो वस्तुकी एकरूपताविषे प्राप्त होवे भेद सो कहाताहै। स्वगतभेद जैसे एक वृक्षविषे फल पुष्प पत्रआदिकोंकरके भेद होता है और सजातीय भेद कहिये. अपने जैसे ते भेद जैसे एकवृक्षते दूसरे वृक्षका भेद होता है। वृक्षरूपताकरके तो दोनों एकजैसे हैं ताते दोनोंवृक्ष सजातीय कहाते हैं। तिन दोनों वृक्षोंका जो आपसमें भेद है सो सजातीय भेद है और विजातीय भेद कहाता है जो अपनेते विलक्षणते भेद है, जैसे शिलाते वृक्षका भेद ॥ २० ॥ यह तीनभेद अविवेककरके मूढपुरुष ब्रह्मविषे कलपते हैं। क्या कहते हैं मूढपुरुष ? जो पदार्थ है, सो तीन भेदोंवाला है, जैसे वृक्ष घटपटआदि पदार्थ हैं ताते ब्रह्म तीन भेदोंवाला है यह जो मूढ अज्ञानियोंका कथन है सो मिथ्या है, काहेते जो भेद तीन अनात्मपदार्थोंविषे रहते हैं और ब्रह्मपदार्थविषे कोई भेद नहीं ॥ २१ ॥ सो ब्रह्मविषे किसप्रकार भेद तीन नहीं ऐसा पूछे तो श्रवण कर। ब्रह्म विषे स्वगतभेद नहीं जाते ब्रह्म निराकार है। स्वगतभेद साकारवस्तु विषे होता है, जैसे वृक्षआदिकोंविषे स्वगतभेद होता है।

शंका-नाम और रूप सत्‌रूपब्रह्मके अंश हैं, तिनकरके ब्रह्मविषे स्वगतभेद होवे। तुम कैसे कहते हो जो ब्रह्मविषे स्वगतभेद नहीं?।

उत्तर-सृष्टिकी उत्पत्तिसे पूर्व विद्यमान जो ब्रह्म है, तिसका नाम रूप अंश कैसे होवे ? काहेते जो नामरूप तो सृष्टिकी उत्पत्तिसे पूर्व है नहीं ॥ २२ ॥ जिस कारणते जो नामरूपकी प्रगटताही सृष्टि है, ताते सृष्टिकी उत्पत्तिते पूर्व नामरूप कैसे होवे ? जो सृष्टिकी उत्पत्तिते पूर्व नामरूप नहीं भया तो नामरूपको सत्‌ब्रह्मकी अवयवता

कैसे होवे ? ताते यह सिद्ध भया जो ब्रह्म स्वगतभेदते रहित है निराकार होनेते, आकाशकी न्याईं ॥ २३ ॥

शंका-जो ब्रह्मविषे स्वगतभेद नहीं बनता तो न बने, पर सजातीयभेद तो बनता है । ताते कैसे कहते हो, जो ब्रह्मसजातीय भेदते रहित है ?

उत्तर-ब्रह्मको सजातीयभेदते रहित इसते कहते हैं, जो ब्रह्म जैसा दूसरा कोई ब्रह्म नहीं । एक जैसा दूसरा जिसके पास होता हैं, तिसका सजातीयभेद होता है । जैसे एक वृक्षके पास दूसरा वृक्ष ऐसाही होता है तब एकवृक्षविषे दूसरे वृक्षका सजातीयभेद होता है, ताते एक ब्रह्मके पास दूसरा ब्रह्म जो न हुवा तो एकब्रह्मविषे सजातीयभेद कैसे बने ।

शंका-सच्चिदानंदरूप ब्रह्म तुम कहते हो सो सत्ताका तो भेद देखा जाता है, घटसत्ता पटसत्ताते भिन्न है । और ज्ञानकाभी भेद देखा जाता है, घटज्ञानते पटज्ञान भिन्न है।और आनंदकाभी भेद देखाजाता है । पुष्पके सूंघणेते जो आनंद होता है, तिसते वस्त्रका आनंद भिन्न है । ताते सत्ताका और चेतनताका और आनंदका तो भेद प्रत्यक्ष सिद्ध है और सत्ता चेतनता आनंदरूपही ब्रह्म है, ताते ब्रह्मविषे सजातीयभेद प्रत्यक्ष रह्या । तुम कैसे कहते हो जो ब्रह्मविषे सजातीयभेद नहीं ?

उत्तर-सत्ता और चेतनता और आनंद इनविषे जो भेद प्रतीत होता है । नामरूप उपाधिके भेदकरके भेद प्रतीत होता है । नामरूप उपाधिके भेदविना सत्ता चेतनता आनंदविषे भेद कोई नहीं प्रतीत होता । जिस समयका हम विचारकरते हैं तिस समयविषे नाम रूप लक्षण उपाधि तो कोई उत्पन्न नहीं भईथी । ताते जो उपाधिकरके भेद प्रतीत होताहै सो भेद वास्तवते नहीं जैसे घट मठ उपाधि

करके जो आकाशविषे घटाकाश मठाकाश यह भेद प्रतीत होताहै सो भेद वास्तवसे नहीं और घट मठ उपाधिके त्यागते आकाश आकाश ऐसे एकरूप आकाश प्रतीत होता है, तैसे सत्ता चेतनता आनंद इन विषे जो भेद प्रतीत होता है, घटसत्तातें पटसत्ता भिन्न है, और घटज्ञानते पटज्ञान भिन्न है, और पुष्पके आनंदते वस्त्रका आनंद भिन्न है सो भेद-प्रतीति उपाधिकरके होतीहै। घट पट और पुष्प वस्त्ररूप उपाधिके त्याग कियेहुये सत्ता चेतनता और आनंदविषे कोई भेद नहीं प्रतीत होता, ताते सच्चिदानंदरूप जो ब्रह्म है तिसविषे सजातीयभेद नहीं ॥२४॥ और तिस ब्रह्मविषे विजातीय भेद भी नहीं काहेते जो सत्‌रूप ब्रह्मका विजातीय असत् है, सो तो स्वरूपते कुछ है नहीं जो हुयाही नहीं तिसते भेद कैसे होवे ॥ २५ ॥ ताते यह सिद्ध भया । जगत्‌की उत्पत्तिते प्रथम स्वगत सजातीय विजातीय भेदसे रहित एक ब्रह्म है, तिस ब्रह्म-विषे स्थितिते रहित जो अज्ञानी है, सो व्याकुल होय होय जगत्‌की उत्पत्तिते प्रथम असत् होता भया, ऐसा कथन करते हैं ॥ २६ ॥ अज्ञानी तिसविषे स्थितिते रहित हुये हुये कैसे व्याकुलताको प्राप्त होते हैं. जैसे कोई पुरुष समुद्रविषे डुब्बी लगावे तो तिसके मन इंद्रियां व्याकुलताको प्राप्त होते हैं। तैसे अखंड एकरस ब्रह्मविषे समाधिअव-स्थाविषे अज्ञानियोंकी बुद्धि व्याकुलताको प्राप्त होजाती है ॥२७॥ इस वार्ताको गौडाचार्य हमारे बडे कथन करते भये हैं। साकार ब्रह्म विषे है स्थिति जिनकी ऐसे जो अज्ञानी योगीहैं तिनको निर्विकल्प समाधिविषे अत्यंत भय प्राप्त होता है ॥ २८ ॥ इसीकारणते तिनको निर्विकल्पसमाधिकी प्राप्ति नहीं होती, निर्विकल्पसमाधिते तिनको ऐसे भय प्राप्त होता है । जैसे बालकोंको निर्जन स्थानविषे भय होता है सो बालकोंकी मूर्खता है काहेते जो निर्जनस्थान तो निर्भ-यताका कारण है। काहेते जो चोरआदिक कोई है नहीं पर दूसरेके

अभावते मूर्ख बालक भयको प्राप्त होते हैं तैसे निर्विकल्पसमाधिविषे अहंकार और दृश्यप्रपंचका अभाव होताहै दृश्यप्रपञ्च और अहंकारही भयका कारण है ताते निर्विकल्पसमाधि भयते रहित है, पर मूर्ख अज्ञानी तिस निर्विकल्प समाधिविषे भयको प्राप्त होते हैं, काहेते जो तिन अज्ञानियोंका अहंकार और दृश्यप्रपंचके साथ परिचय बन्या हुया है। अहंकार और दृश्यप्रपंचत रहित निर्विकल्प जो समाधि है तिसविषे तिनकी रुचि नहीं होती ताते निर्विकल्प समाधि तिनको नहीं प्राप्त होती जिसते निर्विकल्पसमाधिकी प्राप्ति नहीं होती इसीते तिनको सच्चिदानंदरूप ब्रह्मका साक्षात्कार नहीं होता, तिसकारणते अज्ञानी कहते हैं; जगत्की उत्पत्तिते प्रथम असत् होता भया ॥ २९ ॥ और भगवान् शंकराचार्यभी ऐसे कहते भये हैं जो चित्तकी चिन्तवनीके बीच नहीं आवता सत्यरूप परमात्मा तिसविषे अपरोक्ष ज्ञानते रहित जो मूर्ख अज्ञानी हैं खोटी तर्कोंके करणवाले सो भ्रमको प्राप्त होते हैं। कैसे वे शंकराचार्य्य हैं? जिज्ञासुजनोंकरके पूजनेयोग्य हैं चरण जिनके ॥ ३० ॥ अज्ञानकरके ढके हुए बोधवाले जो हैं सो मूर्खताकरके श्रुतिको आश्रय नहीं करते और कहते हैं, सृष्टिकी उत्पत्तिसे पूर्व असत् होताभया। ऐसा तिनके कहनेका कारण कौन है ऐसा पूछे तो श्रवणकर वे जो बुधके शिष्य हैं सो अज्ञानरूप नेत्रोंकरके युक्त हैं, और श्रुतिरूप नेत्रोंते रहित हैं, इसीकरके सत्‌रूप ब्रह्मको नहीं जान सकते जैसे मोतियाबिंदवाले नेत्रोंकर युक्त जो पुरुष हैं सो पदार्थको यथार्थ नहीं जानते तैसे बुधके शिष्य भी यथार्थ जगत्‌के कारणको नहीं जानते ॥ ३१ ॥ और यह जो कहते हैं मूर्ख, जगत्की उत्पत्तिसे पूर्व असत् होता भया तिसविषे हम पूँछते हैं—असत्‌को सत्ताका संबंध है कि, असत् सत्‌रूप है, सो दोनों वार्त्ता नहीं बनती ॥ ३२ ॥ जैसे सूर्य अंधकार

युक्त और अंधकाररूप नहीं होता, काहेते जो सूर्य और अंधकारका परस्पर विरोध है; तैसे सत् और असत्का विरोध है, ताते असत् सत्तासंयुक्त कैसे होवे और असत् सत्रूप कैसे होवे ? ताते जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम असत् नहीं बनता ॥ ३३ ॥

शंका-जैसे असत्को सत्तासंबंध नहीं बनता, तैसे निर्विकल्प ब्रह्मविषे आकाशआदिक प्रपंचकाभी संबंध नहीं बनता ।

उत्तर-मायाने सत्रूप ब्रह्मविषे आकाशादिकोंके नामरूप कल्पे हैं, वास्तवते आकाशादिकोंका सत्रूप ब्रह्मविषे संबंध नहीं, कल्पितपदार्थोंका अधिष्ठानविषे संबंध नहीं, जैसे कल्पित रूपेका अधिष्ठान जो सीपी है तिसविषे कल्पित रूपेका संबंध नहीं तैसे कल्पित आकाशादिकोंका वास्तवसे सत्रूप ब्रह्मके साथ संबंध नहीं ।

शंका-जैसे आकाशादिकोंके नामरूप सत्रूप ब्रह्मविषे कल्पित हैं और अधिष्ठानब्रह्मकी सत्ताकरके आकाशादिकोंके नामरूप सत् प्रतीत होते हैं, तैसे सत्रूप ब्रह्मविषे असत्के नामरूप कल्पित हैं ताते अधिष्ठानरूप ब्रह्मकी सत्ताकरके कल्पित असत्भी सत्रूप होकरके प्रतीत होते हैं ॥

उत्तर-असत्को सत्रूप अधिष्ठानविषे कल्पित माननेसे हमारा सिद्धांत सिद्ध होता है, ताते कल्पित असत् जगत्का कारण नहीं बनता । जिस सत्विषे असत्के नामरूप कल्पित हैं सो सत्ही जगत्का कारण है, ताते सत्विषे असत्के नामरूप कल्पित है ऐसें कहनेवाला जो तू है उस तेरेको आशीर्वाद करते हैं । चिरकालपर्यंत जीवता रहे ॥ ३४ ॥

शंका-जैसे असत्के नामरूप कल्पित हैं, तैसे सत्के भी नामरूप कल्पित चाहिये । काहेते जोवास्तवतेनामरूपकातेरेमतविषेअभावहै ॥

उत्तर-सत्के नामरूप कल्पित हैं यह कहना अयुक्त है। काहेते जो हम पूछते हैं सत्के नामरूप कल्पित हैं कि, असत्विषे कल्पित हैं अथवा जगत्विषे कल्पित हैं ? जो कहो सत्के नामरूप सत्विषे कल्पित हैं, यह वार्ता तो नहीं बनती। काहेते जो आपणे नामरूप आपणेविषे कल्पित नहीं होते, औरके नामरूप औरविषे कल्पित होते हैं। जैसे रूपेके नाम रूप सीपीविषे कल्पित होते हैं, और रूपेके नाम रूप रूपेविषे कल्पित नहीं होते तैसे सत्के नामरूप सत्विषे कल्पित नहीं होते। और सत्के नाम रूप असत्विषे कल्पित हैं, यहभी वार्ता नहीं बनती। काहेते जो असत् आपही कुछ नहीं है ताते सत्के नामरूपकी कल्पनाका अधिष्ठान असत् कैसे होवे ? जैसे वंध्याका पुत्र किसीकी कल्पनाका अधिष्ठान नहीं बनता, काहेते जो स्वरूपते कुछ है नहीं और जगत्भी सत्के नामरूपकी कल्पनाका अधिष्ठान नहीं बनता, काहेते जो जगत् सत्यते उत्पन्न भया है, सो जगत् सत्के नामरूपकी कल्पनाका आधिष्ठान नहीं, जैसे पुत्र पिताके नामरूपकी कल्पनाका अधिष्ठान नहीं होता।

शंका-मत होवे कोईभी सत्के नाम रूपकी कल्पनाका अधिष्ठान, तो भी सत्के नाम रूप कल्पित क्यों न होवें ?॥

उत्तर-अधिष्ठानते विना किसीकी कल्पना नहीं बनती ताते सत्के नामरूप कल्पित नहीं ॥ ३९ ॥

शंका-जैसे असत्, जगत्की उत्पत्तिते प्रथम होताभया यह वार्ता नहीं बनती, तैसे सत् जगत्की उत्पत्तिते प्रथम होताभया यह वार्ता नहीं बनती। काहेते जो सत् और होताभया इन दोनों वचनोंका जो अर्थभेद कहो तो सत्ता दो सिद्ध भई और जो सत् और होताभया इन दोनों शब्दोंका एक अर्थ कहो, तब पुनरुक्तिदोष

होता है। काहेते जो सत्‌शब्दका अर्थ है सोई होताभया इस शब्दका अर्थ है, जैसे घटशब्द और कुंभशब्दका एक अर्थ है। तातें जगत्‌की उत्पत्तिते प्रथम सत् होता भया यह वार्ता अयथार्थ है।

उत्तर-सत् और होताभया इन दोनों शब्दोंका अर्थ एक है, ऐसे वचनोंविषे पुनरुक्तिदोष नहीं होता ॥ ३६ ॥ काहेते जो लोकोंविषे ऐसा कथन करते हैं कर्मकूं करता है इसविषे पुनरुक्तिदोष नहीं, जो अर्थ कर्मका है सोई अर्थ करणेका है। लोकोंका स्वभाव ऐसे कथनकाही है। और वचनको कथन करती है इसविषेभी जो अर्थ वचनका है सोई कथनकरणेका है, पर इसविषे पुनरुक्तिदोष नहीं. काहेते जो लोकोंका स्वभाव ही ऐसा है। और धारणके लायकको धारण करता है, इसविषेभी पुनरुक्ति नहीं धारणेलायक और धारणेका एक ही अर्थ है इसते आदिलेकरके व्यवहारविषे पुनरुक्ति नहीं होती जैसे तैसे जगत्‌की उत्पत्तिते प्रथम सत् होताभया तिसविषेभी पुनरुक्तिदोष नहीं होता, काहेते जो पुनरुक्ति दोषके अभावके संस्कार दृढ हैं ३७॥

शंका-सत्‌रूप अद्वितीय ब्रह्मविषे पूर्वकालका अभाव है, तातें प्रथम जगत्‌की उत्पत्तिसे सत् होताभया यह वार्ता नहीं बनती।

उत्तर-सत्‌रूप अद्वितीय ब्रह्मविषे पूर्वकाल तो है नहीं। और कालकी वासनावाला जो शिष्य है, तिसने जब यह प्रश्न किया, जो जगत्‌की उत्पत्तिसे प्रथम क्या होताभया ? तब तिस शिष्यके ताईं यह उत्तर दिया, जगत्‌की उत्पत्तिते प्रथम सत् होता भया।

शंका-जगत्‌की उत्पत्तिते पूर्व सत् होवे, पर तिस सत्‌की अद्वैतता नहीं बनती। काहेते जो जगत्‌की उत्पत्तिसे प्रथम जगत्‌का अभाव दूसरा है।

उत्तर-श्रोताके बोधवास्ते वेदका कथन है। और श्रोताओंको

द्वैतवासना दृढ हो रही है, ताते बहुत शंका नहीं करनी चाहिये ३८॥ कथन जो किया है सो कुछेक द्वैतको लेकरके किया है । अद्वैतदृष्टि विषे प्रश्न उत्तर नहीं बनता ॥ ३९ ॥ वास्तवते जगत्की उत्पत्तिते पूर्व द्वैत है नहीं इसीपर श्रीवसिष्ठजीने भी रामजीके ताईं कह्याहै उत्पत्ति प्रकरणविषे । हे रामजी ! जगत्की उत्पत्तिते प्रथम जो सत्रूप ब्रह्म होताभया सो ब्रह्म वाणी करके नहीं कह्याजाता, काहेते जो नामते रहित है और नेत्रोंकरकेभी नहीं देख्याजाता, काहेते जो निराकार है। और मनकरकेभी नहीं जाना जाता, काहेते जो मनते परे है न तम है न तेज है, न शून्य है, और निश्चल है अर्थ यह जो क्रियाते रहित है और व्यापक है, किसीप्रकार इदंताकरके कह्या नहीं जाता ॥ ४० ॥

शंका-जगत्की उत्पत्तिसे पूर्व सत् होताभया और अन्य कुछ न होताभया सो वार्ता नहीं बनती। काहेते जो आकाश भी जगत्की उत्पत्तिते पूर्व होताभया है, आकाशकी असत्यताको तुम्हारी बुद्धि कैसे आश्रय करती है । असत् सो होता है, जो उत्पत्तिवाला और नाशवाला होता है, जैसे पृथिवीआदिक उत्पत्ति और नाशवाले हैं। काहेते जो सावयव हैं और क्रियावाले हैं इसते उत्पत्ति और विनाशवाले हैं। और आकाश निराकार है और क्रियाते रहित है इसते उत्पत्ति और विनाशवाला नहीं ॥ ४१ ॥

उत्तर-जैसे आकाश जगत्ते रहित तेरी बुद्धि विषे निश्चय हुया है, तैस आकाशते रहित सत्वस्तुको तेरी बुद्धि क्यों नहीं निश्चय करती ॥ ४२ ॥

शंका-जगत्से रहित आकाश देखाजाता है इसीते मेरी बुद्धि निश्चय करती है। और आकाशते रहित सत् नहीं देखाजाता इसते मेरी बुद्धि आकाशते रहित सत्को निश्चय नहीं करती ।

उत्तर-जगत्‌ते रहित आकाश देखाजाता है यह कहना मिथ्या है, काहेते जो जद जद आकाश देखाजाता है, तद तद प्रकाशसहित अथवा अंधकारसहित देखाजाता है, कभी किधरभी प्रकाश अथवा अंधकारविना आकाश नहीं दीखता, और वास्तवते तेरे मत विषे आकाश देखनेविषे नहीं आवता। काहेते जो आकाश रूपते रहित है और रूपवाली वस्तु देखनेमें आवती है, ताते यह जो तेरा कहना है जगत्‌ते रहित आकाश देखाजाता है सो मिथ्या है ॥४३॥

शंका-जैसे आकाश जगत्‌से रहित नहीं देखनेमें आवता तैसे सत्‌वस्तु भी जगत्‌से रहित देखनेमें नहीं आवती।

उत्तर-निर्विकल्प समाधिविषे जगत्‌से रहित केवल शुद्ध सत्‌वस्तु हमने देखाती है।

शंका-निर्विकल्प समाधिविषे तो शून्यताही होती है, काहेते जो और किसी वस्तुका अनुभव नहीं होता।

उत्तर-यह तैंने कैसे जान्या ? जो निर्विकल्प समाधिविषे शून्यता होती है, निर्विकल्प समाधिविषे शून्यताका अनुभव तो नहीं होता। जहां शून्यताका अनुभव है तहां निर्विकल्प समाधि नहीं होती काहेते जो निर्विकल्प समाधिनाम तो सर्व वृत्तियोंके अभावका है। शून्यताका अनुभव तो होवे, जब शून्याकार वृत्तिहोवे शून्याकार वृत्तिके हुयां निर्विकल्प समाधि नहीं होती ॥ ४४ ॥

शंका-यह-जो तुम कहते हो जो समाधिविषे सत्‌वस्तुका अनुभव करीता है सो तो नहीं बनता। काहेते जो समाधिविषे सत्‌के आकारवृत्ति नहीं होती, और जो सत्‌के आकारवृत्ति कहो तो फेर समाधि न सिद्ध होवेगी, काहेते जो समाधिनाम तो सर्ववृत्तियोंके अभावका है।

उत्तर-समाधिविषे सत्वस्तु भासती है और समाधिविषे सत्वस्तुके आकारवृत्ति नहीं होती, वृत्तिसे विनाही सत्वस्तु भासती है, काहेते जो सत्वस्तु स्वप्रकाश है। जो परप्रकाश वस्तु होती है तिसीको आपणे भासणे वास्ते वृत्तिकी लोड होती है। और जो समाधिविषे आत्मा न प्रकाशे तो समाधिविषे मनके अभावको कौन जाने ? और समाधिको कौनजाने और जानीताहै मनके अभावको और समाधिको ताते समाधिविषे आत्मकारवृत्तिते विना सत्रूप आत्मा स्वप्रकाशता करके भासता है ॥४५॥ जैसे समाधिविषे मन और मनका विस्ताररूप जो हैं वृत्तियां तिनके अभाव हुयां भी आत्मा प्रकाशता है, तैसे जगतकी उत्पत्तिते प्रथम मायाके विस्तारका अभाव हुवा हुवा भी सत्रूप आत्मा विद्यमानहै ॥ ४६ ॥ मायाका क्या लक्षणहै ऐसा पूछे तो श्रवणकर। माया परमात्माते भिन्न सत्ताते रहितहै और आकाशादि कार्यद्वारा जनाती है। सो माया परमात्माकी शक्ति है जैसे अग्निकी शक्ति अग्निते भिन्न सत्ताते रहित है और छाले आदिकरूप कार्यद्वारा जानीजाती है। जैसे छालेआदिक कार्यते पहिले अग्निकी शक्ति किधरभी किसीने नहीं जानी तैसे आकाशआदिक कार्यते पहिले परमात्माकी शक्ति माया किसीने किधरभी नहीं जानीती और आकाशआदि कार्यद्वारा जानीती है ॥ ४७ ॥ सो शक्ति सत्रूपभी नहीं और असत्रूपभी नहीं। काहेते जो सत्रूप होवे तो सत्की शक्ति न होवे, जैसे अग्नि अग्निकी शक्ति नहीं होती। और जो असत् होवे तब शशके शृंगोंके तुल्य भई, तो उसको आकाशआदिक कार्यकी कारणता न हुई चाहिये ॥ ४८ ॥ और जो शून्यरूप कहे तो यह बात भी नहीं बनती । काहेते जो शून्यता मायाशक्तिका कार्य है, ताते यह सिद्धभया जो मायाशक्ति अनिर्वचनीय है अर्थ यह जो न सत् है न असत् है ॥ ४९ ॥ और वेदवाक्य भी ऐसे कहता है।

जैसे घटआदिक पदार्थोंका आवरण करणेवाला अंधकार होता है तैसे परमात्माके आवरणकरणेवाली मायाशक्ति है. सो माया न सत् है न असत् है।

शंका-जो माया सत् नहीं तो आकाश आदिप्रपंचका कारण कैसे है ?

उत्तर-स्वतंत्र मायाकी सत्ता नहीं सत्रूप परमात्माकी सत्ताको पाकरके आकाशादि प्रपंचको उत्पन्न करती है ॥ ५० ॥

शंका-यह जो तुम कहते हो जगत्की उत्पत्तिते प्रथम परमात्मा अद्वितीय है, और इसके साथही कहते हो मायाशक्ति है ताते द्वैत हुया।

उत्तर-शक्तिकरके द्वैत नहीं होता, जैसे शून्यकरके द्वैत नहीं बनता। लोकविषे पुरुषका शक्तिकरके द्वैत नहीं होता, जैसे पुरुष और पुरुषका जीवना दो नहीं होते ॥ ५१ ॥

शंका-शक्तिके अधिक हुयां जीवना अधिक होता है ताते पुरुषते शक्ति भिन्न है।

उत्तर-शक्ति नाम बलका है, सो शक्ति बहुत जीवनेका कारण नहीं जिस पुरुषके बल अधिक होता है सो अधिक युद्ध खेतीआदिक करता है। और जिसके थोडी शक्ति होती है सो थोडा युद्ध खेतीआदिक करता है और जो शक्ति बहुत जीवनेका कारण होती, तो बहुत बलवाले पुरुष शिताबी न मरते और थोडे बलवाले बहुत नहीं जीवते सो ऐसा तो जगत्विषे नहीं देखाजाता, काहेते जो बडे बडे बल वाले पुरुष पलभरमें मरजाते हैं और निर्बल बहुत जीवते रहते हैं,ताते शक्ति बहुत जीवनेका कारण नहीं ॥ ५२ ॥ सर्वप्रकार करके शक्ति शक्तिवालेते भिन्न नहीं गिनीजाती, ताते यह सिद्ध भया: जो शक्ति करके

द्वैत नहीं बनता जगत्की उत्पत्तिते प्रथम शक्तिका कार्य जगत् तो है नहीं सो इसीते जगत्की उत्पत्तिते प्रथम अद्वैत परमात्मा सिद्ध भया ॥ ५३ ॥

शंका—सत्परमात्माकी जो शक्ति है, सो परमात्माविषे सारे रहती है कि,परमात्माके एक अंशविषे रहती है ? जो सारे रहती है तब विदेहमुक्तों करके प्राप्त होनेके योग्य शुद्धब्रह्मका अभावप्रसंग भया,और एकदेशविषे शक्ति रहती है इस पक्षविषे ब्रह्मकी निराकारता न सिद्ध भई।

उत्तर—संपूर्णब्रह्मविषे मायाशक्ति नहीं रहती, ब्रह्मके एकदेशविषे रहती है। जैसे पृथिवीका एकदेश जो है चीकनी मिट्टी तिसविषे घट शक्ति रहती है ॥ ५४ ॥ इसी अर्थको वेद भी कथन करता है परमात्माके तीन पाद जो हैं सो अपने शुद्ध स्वयंप्रकाशरूपविषे स्थित हैं और परमात्माके एकपादविषे सर्वभूतरूप जगत् स्थित है ॥ ५५ ॥ और भगवान्ने भी दशवें अध्यायविषे अर्जुनके ताईं यह कथन किया है। हे अर्जुन! संपूर्ण जगत मुझकरके एकअंशमें धारचा हुया है ताते मुक्तोंकरके प्राप्त होनेयोग्य शुद्ध ब्रह्म है ॥५६॥ इसी वार्ताको व्यासजीने सूत्रोंविषे कथन किया है। ब्रह्म जगत्का आश्रयभी है और शुद्धभी है, काहेते जो ब्रह्म संपूर्णजगत्को अपनी सत्ताकरके सत्य कररहा है और फेरभी दशअंगुल बध रह्या है ॥ ५७ ॥ और निराकारताभी ब्रह्मकी ज्योंकी त्यों बनी हुई है, काहेते जो तिस ब्रह्मविषे कल्पकरके अंश कथन करीता है जिज्ञासुके बोधवास्ते सो जैसे है तैसे श्रवणकरो जब जिज्ञासुने ऐसा प्रश्न किया, संपूर्ण ब्रह्मविषे जगत् है कि, ब्रह्मके एक अंशविषे जगत् है ? तब तिस जिज्ञासुके प्रश्नके अनुसार निरंशब्रह्मविषे भी अंशको कल्पकरके यह उत्तर कह्या, जो ब्रह्मके एकदेशविषे जगत् है ॥५८॥ ताते ब्रह्मविषे अनिर्वचनीय मायाशक्ति है, सो मायाशक्ति सत्ब्रह्मविषे अनेक विकारोंको कल्पती है । जैसे

नील पीतआदिक रंग दीवारके आश्रय हो करके दीवारविषे अनेक प्रकारकी मूर्तियोंको कल्पते हैं ॥ ५९ ॥ जो मायाने विकार कल्पित किये हैं तिन विकारोंके बीचमें पहिला विकार आकाश है, तिस आकाशका स्वरूप अवकाश है और आकाशविषे ब्रह्मकी सत्ता भी प्राप्त होती है ॥ ६० ॥ ताते आकाश दोनों स्वभावोंवाला है, एक सत्ता दूसरा अवकाश। और सत्वस्तुविषे अवकाश नहीं, ताते सत्वस्तु एक सत्तास्वभावही है । ताते आकाश और सत्ता भिन्न भिन्न हैं ॥ ६१ ॥ अथवा आकाश शब्दगुणवाला है और सत्तावालाभी है, सत्वस्तुविषे शब्दगुण नहीं ताते आकाश और सत्वस्तु भिन्न भिन्न हैं ॥ ६२ ॥

शंका–आकाश जो सत्ते उत्पन्न हुया होवे तब आकाशकी सत्ता है यह प्रतीति न होवे, और सत्ताका आकाश है यह प्रतीत होवे। जैसे मृत्तिकाते उत्पन्न भया जो घट है तिसविषे मृत्तिकाका घट है यह प्रतीति होती है और घटकी मृत्तिकाहै यह प्रतीति नहीं होती।

उत्तर--जिस मायाशक्तिने सत्वस्तुविषे आकाश कल्प्या है तिस मायाशक्तिने आकाश और सत्वस्तुका अभेद करादिया है प्रथम और पीछे धर्मधर्मीभावको विपरीत करदिया है । अर्थ यह जो आकाशरूप धर्मका धर्मी करके दिखलादियाहै और सत्तारूप धर्मीको धर्मकरके दिखला दिया है इस कारणते आकाशकी सत्ता है ऐसे प्रतीति होती है और सत्ताका आकाश है यह प्रतीति नहीं होती। और वास्तवते दृष्टिकरके विचार कियेते सत्ताका आकाश है, आकाशकी सत्ता नहीं ॥ ६३ ॥ पर अज्ञानी जन और नैयायिक आदिक आकाशकी सत्ता है, यह भ्रमकरके जानते हैं ? ॥ ६४ ॥

प्रश्न–मायाने उलटा पुलटा क्यों कह दिया ? ॥

उत्तर-उलटा पुलटा कहना मायाका स्वभाव है, जसे जलका स्वभाव है नीचे स्थानको चलना और यथावत् पदार्थका दिखावना यह ज्ञानका स्वभाव है, यह युक्ति सर्व लोकोंके अनुभवसिद्ध है। जैसे मदारीके खेलविषे जो पदार्थ नहीं अग्निविषे जलते सो जलते प्रतीत होते हैं। ताते मानुषकी माया औरकी और प्रतीति करवाय देती है, जो तो परमेश्वरकी मायाने और की और प्रतीति उलटी पुलटी करवाय दई तो इसमें क्या आश्चर्य है ॥ ६५ ॥ और विचार करके असत् वस्तुकी असत्यता प्रतीत होती है, जब श्रुतियोंका विचार करता है जिज्ञासु जन, तब विचारते प्रथम जो सत्‌रूप होकरके प्रतीत होता था आकाश, सो असत्‌रूपताको प्राप्त होजाता है, ताते तूभी आकाश-का विचार कर ॥ ६६ ॥ विचारका स्वरूप क्या है ऐसे पूछे तो श्रवणकर। आकाश और सत् भिन्न भिन्न हैं। काहेते जो भिन्न भिन्न नामवाले हैं, जैसे जल और दुग्ध भिन्न भिन्न है तैसे आकाश और सत् भिन्न भिन्न हैं, काहेते जो सत् सम वस्तुवों पवनआदिकोंविषे व्यापक है और आकाश सब वस्तुओं पवनआदिकोंविषे नहीं व्यापक है इसप्रकार आकाश और सत्‌वस्तुका भेद जानना ॥ ६७॥ पाछेते यह विचार करणा सत्‌वस्तु धर्मी है, आकाश तिसका धर्म है, काहेते जो सत्‌वस्तु व्यापक है। अर्थ यह जो सत्ता सब पदार्थोंके साथ मिली हुई है और आकाश सब पदार्थके साथ मिल्या हुया नहीं काहेते जो पर्वत आकाश ऐसे प्रतीति नहीं होती। इसते आकाश सर्व पदार्थोंके साथ मिल्या हुआ नहीं और पर्वत सत् है यह प्रतीति होती है ताते सत् सब पदार्थोंकाविषे व्यापक है, जैसे सूत्र जो है सो मालाके सब मणियोंविषे व्यापक है सो सूत्र जैसे मणियोंते भिन्न होता है, तैसे सत्ता सब पदार्थोंविषे व्यापक है, सो सब पदार्थोंते भिन्न है। ताते बुद्धिकरके आकाशते सत्ताके भिन्न कियां हुयां

कहो आकाशका क्या रूप है ॥ ६८ ॥ वादी-पोलादरूप आकाशका है। सिद्धांती-होवै, पोलादरूप आकाश पर आकाश असत् है यह मनमें निश्चय कर। काहेते जो तू कहता है आकाश सतते भिन्न है और फेर तिसको असत् निश्चय नहीं करता यह तो बडा आश्चर्य है ॥ ६९ ॥

शंका-आकाश जो असत् होवे तो भासे नहीं और भासता प्रत्यक्ष है। ताते मेरी बुद्धि तिसको असत् निश्चय नहीं करती।

उत्तर-आकाश भासता है तो भासो पर सत् नहीं जैसे स्वप्नका हाथी सत् नहीं और भासता है, ताते जो वस्तु असत् होवे और भासे सो मिथ्या होती है। ताते आकाशकी स्वप्नके हाथीकी न्याई भासता गुण है दोष नहीं ॥ ७० ॥

शंका-आकाश और सत्का जो भेद होवे तो सत्ताते विना कभीभी आकाशकी प्रतीति होवे जैसे गौ और घोडेका भेद है तो गौ घोडेते विना भी प्रतीत होती है। ताते आकाश और सत्ताका भेद है नहीं।

उत्तर-जैसे नीलरूप और घट इकट्ठे प्रतीत होते हैं। काहेते जो रूपते विना कोई किसीने घट देख्या नहीं पर नीलरूप घटते भिन्न है। काहेते जो घटके विद्यमान हुयांहुयां भी नीलरूपका नाश होजाता है और लालरूप उत्पन्न हो आवता है। तैसे आकाश और सत् इकट्ठे प्रतीत होतेभी हैं पर भिन्न भिन्न हैं इसविषे तेरेताईं क्या आश्चर्य है। और जैसे जीव और शरीर इकट्ठे प्रतीत होते हैं, और भिन्न भिन्न हैं, तैसे आकाश और सत् इकट्ठे भासते हैं, पर भिन्न भिन्न हैं इसविषे तेरेको क्या आश्चर्य्य है ॥ ७१ ॥

शंका-मैंने आकाश और सत्का भेद जान्या है पर मेरे चित्त विषे दृढता नहीं होती।

उत्तर-दृढताके न होनेविषे दो कारण हैं । एक संशय दूसरा विक्षेप ॥ ७२ ॥ जो तेरेताईं संशय है तब प्रमाणों करके और युक्तियोंकरके वारंवार विचार कर । और जो चित्तके विक्षेप करके आकाश और सत्का भेद प्रतीत नहीं होता तब ध्यान कर तिसकरके तेरे चित्तविषे आकाश और सत्का भेद दृढ होजावेगा ॥७३॥ ध्यान जो है, चित्तका नदीधारावत् प्रवाहरूपता तिस करके और प्रमाणोंकरके और युक्तियों करके जब आकाश और सत्वस्तुका भेद चित्तविषे दृढताकूं प्राप्त होवेगा तब आकाश कहींभी सत् न भासेगा, सदाही आकाश मिथ्या भासेगा। और सत्वस्तु छिद्रते रहित भासती है॥७४॥ ज्ञानवान् जो पुरुष है, तिसको सदाही सत्ताते रहित आकाश भासता है और सत्वस्तु छिद्रते रहित भासती है ॥ ७५ ॥ आकाश और सत्वस्तुका भेद जब चित्तविषे अत्यंत दृढ होता है । तब आकाशकी सत्तावालेको देखकरके हँसता है । ज्ञानवान् और सत्तामात्रके अज्ञानवालेको देखकरके ज्ञानवान् बडे आश्चर्य्यको प्राप्त होता है । ताते जितना कालपर्य्यंत सतवस्तु और आकाशका भेद चित्तविषे अत्यंत दृढ न होवे, जिज्ञासुने तितना कालपर्य्यंत विचार करणा ॥ ७६ ॥ जब आकाशकी मिथ्यारूपता और सत्वस्तुकी सत्रूपता चित्तविषे अत्यंत दृढ बसजाय तब इसीप्रकार वायु और सत्वस्तुका विवेक करणा ॥ ७७ ॥

शंका-आकाशते सत्वस्तुका विवेक करणा तो यथार्थ है । काहेते जो आकाश सतवस्तुका कार्य है, और कार्य कारणका तादात्म्य होता है । और पवन सत्वस्तुका विवेक करणा अयुक्त है । काहेते जो सतवस्तु और पवनकी कार्य कारणता नहीं, इसी कारणते पवन और सत्वस्तुका तादात्म्य नहीं तादात्म्य न भया तब विवेक करणा कैसे होवे ।

उत्तर–सत्वस्तु और पवनका परंपरासंबंध है, इसते सत्वस्तु और पवनका विवेक किया चाहतेहैं पवन और सत्वस्तुका परंपरासंबंध कौन है ऐसा पूछे तो श्रवणकर–सत्वस्तुके एकदेशविषे माया स्थित है और मायाके एकदेशविषे आकाश स्थित है, और आकाशके एकदेशविषे पवन है सो पवन कल्पित है। इसप्रकार परंपराकरके सत्वस्तु और पवनका संबंध है। ताते सत्वस्तुका पवनते विवेक किया चाहते हैं ॥ ७८ ॥ सो विवेक किसप्रकार करणा पवनविषे चार धर्म आपणे हैं एक सुखावना दूसरा वेग तीसरा चलना चौथा स्पर्श, और तीन धर्म पवनविषे सत् और माया और आकाश इन तीनोंते प्राप्त भए हैं ॥ ७९ ॥ पवनविषे सत्यता सत्वस्तुते प्राप्त भई है और सत्वस्तुते पवनके भेद किया हुयाँ पवनविषे जो असार रूपता है सो मायाते प्राप्त भई है, और पवनविषे जो शब्द है सो आकाशते प्राप्त भया है ॥ ८० ॥

शंका–आकाशके विवेकप्रसंगविषे तुमने यह कथन कियाथा सत्की प्राप्ति सब पदार्थोंविषे है, और आकाशकी प्राप्ति सब पदार्थोंविषे नहीं और अब कहते हो जो आकाशकी प्राप्ति पवनविषे है। ताते पहिले वाक्यका और इस वाक्यका विरोध है ॥ ८१ ॥

उत्तर–पहिले वाक्यका और इस वाक्यका विरोध नहीं। काहेते जो पहिले वाक्यविषे हमने यह कथन कियाथा आकाशका स्वरूप जो है पोलाद सो सब पदार्थोंविषे प्राप्त नहीं होता। और अब हमने कथन किया है आकाशका धर्म जो है शब्द तिसकी प्राप्ति पवनविषे है ॥ ८२ ॥

शंका–सत्वस्तुते भिन्न होनेसे जो पवनको मायामयता है। अर्थ यह पवन मिथ्या है, तब प्रगट मायाते भिन्न होनेसे पवन सत् क्यों न होवे ॥ ८३ ॥

उत्तर--अप्रगटता जिसकी होती है सो वस्तु मिथ्या होतीहै यह वार्ता सत् नहीं जो सत्यते भिन्न है सो मिथ्या है । ताते जैसे सत्से भिन्न माया मिथ्या है तैसे सत्ते भिन्न पवन भी मिथ्या है ॥ ८४ ॥

शंका--जो पवन और माया एक जैसे होवें तो पवनका स्पर्श करके प्रगटता और मायाकी अप्रगटता क्योंकर है ।

उत्तर--सत् और असत्का विवेक तेरा हमारा चल्या हुया है। ताते तिसीका विचार किया चाहते हैं, असत्के अवांतर भेद जो हैं प्रगट और अप्रगट उनके विचारका कुछ प्रयोजन नहीं काहेते जो असत्विषे अवांतर भेद तो बहुत हैं, तिनके विचारविषे व्यर्थ आयु चली जाती है ॥ ८५ ॥ ताते सत्वस्तुते भिन्न जो पवन है सो मिथ्या है जैसे सत्ते भिन्न आकाश मिथ्या है । चिरकालपर्यंत विचार करके पवनको मिथ्या दृढ जानकरके पवन सत् है इस बुद्धिका त्याग करे जिज्ञासु ॥ ८६ ॥ आगे अग्निका विचार करे, सो अग्नि पवनके दशवें हिस्से रहती है यह जो पंचभूतोंकी न्यूनता और अधिकता है, सो ब्रह्मांडके आवरणोंविषे जाननी ॥ ८७ ॥ दशदश हिस्से पंच भूत न्यून और अधिक हैं । अर्थ यह जो आकाशते दश हिस्से पवन न्यून है और पवनते दश हिस्से अग्नि न्यून है । और अग्निते दश हिस्से जल न्यून है, और जलते दश हिस्से पृथिवी न्यून है । यह पंचभूतोंकी अधिकता और न्यूनता पुराणोंविषे कथन की है । ताते अग्नि पवनके दशवें हिस्सेविषे है ॥८८॥ सो अग्नि उष्ण है, और प्रकाशरूप है, और सत् और माया और आकाश और पवन इन चारोंके धर्म भी अग्निविषे प्राप्त होते हैं । सत्ता अग्निविषे सत् ब्रह्मते प्राप्त भई है और सत्ताते भिन्न किया हुयां अग्निविषे जो असत्ता है सो मायाते प्राप्त भई है । और अग्निविषे शब्द आकाशते प्राप्त भया है, अग्निविषे स्वर्श पवनते प्राप्त भया है ॥ ८९ ॥

और आपणा अग्निका रूप गुण है तिन संपूर्ण धर्मोंविषे सत्ताको भिन्न करलेना। अर्थ यह-जो सत्ताते रहित सभी मिथ्या हैं यह विचार कर बुद्धिसे जानना ॥ ९० ॥ इसप्रकार अग्निको मिथ्या निश्चय करके जलका विचार करणा। सो जल अग्निते दशवां हिस्सा न्यून है और जल अग्निविषे कल्पित है ॥९१॥ जलविषे सत्ता सत्‌रूप ब्रह्मते प्राप्त होती है और सत्ताके भिन्न कियाँ हुयाँ जलविषे जो असारता है सो मायाते प्राप्त होती है, और शब्द स्पर्श रूप यह तीनों धर्म आकाश और पवन और तेजते जलविषे प्राप्त होते हैं और आपणा धर्म जलका रस है ॥ ९२ ॥ सत्तासे जलके विवेक कियाँ हुयां जल मिथ्या है। अर्थ यह-जो सत्‌ते भिन्न जल असत् है,इसप्रकार जलका विचार करके मिथ्यादृष्टिके दृढ हुयां हुयां फेर पृथिवीका विचार करणा सो पृथिवी जलते दश हिस्से न्यून है, और जलविषे कल्पित है ऐसा विचार करणा ॥ ९३ ॥ पृथिवीविषे सत्ता सत्‌रूप ब्रह्मते प्राप्त भई है, और पृथिवीविषे असारता मायाते प्राप्त भई है,और पृथिवीविषे शब्द स्पर्श रूप रस यह चारों आकाश पवन तेज जल इन चारोंते प्राप्त भए हैं और गंध पृथिवीका आपणा गुण है ॥ ९४ ॥ सत्ताके भिन्न किया हुयां सब धर्मोंसहित पृथिवी मिथ्या है। पृथिवीकी असत्य दृष्टिके दृढ हुयां हुयां हृदयविषे फेर ब्रह्मांडका विचार करणा ब्रह्मांड पृथिवीते दश हिस्से न्यून है और पृथिवीके मध्यविषे स्थित है ॥ ९५ ॥ ब्रह्मांडविषे चौदह लोक हैं और चौदह लोकोंविषे प्राणी रहते हैं जैसा जैसा जिस लोकविषे शरीर चाहता है तैसे तैसे शरीर धारण करके ॥९६॥ ब्रह्मांड और चौदहलोक और संपूर्ण शरीर तिनाविषे जो ब्रह्मसत्ता है तिसके भिन्न किया हुयाँ ब्रह्मांड और लोक और शरीर असत् हुयेहुये भासते हैं। उनके भास्यांहुयां भी कुछ हानि नहीं॥९७॥जो पञ्चभूत हैं और पंचभूतोंका कार्य शरीर, लोक और ब्रह्मांड हैं और पंचभूतोंका कारण

जो माया है इन संपूर्णोंविषे मिथ्या दृष्टिके दृढ हुयां हृदयविषे सत् वस्तु अद्वैत है, यह दृष्टि कभीभी विषयोंको नहीं प्राप्त होती ॥९८॥

शंका–पृथिवीआदिक संपूर्णोंके मिथ्या हुयांहुयां ज्ञानवान्का सर्व व्यवहार लोप हुया चाहिये।

उत्तर–मिथ्या दृष्टिके हुया व्यवहार लोप नहीं होता। काहेते ज्ञानवान्ने जो पृथिवीआदिकोंका स्वरूप तो नहीं दूर कऱ्या जैसे खाँडका जो हाथी है तिसको मिथ्या जान्याँ हुयां तिसविषे हाथीव्यवहार नहीं लोप होता। ताते सत्‌रूप अद्वैतते भिन्न जो पृथिवीआदिका द्वैत है तिनविषे आपणे आपणे कार्य करणेका जो धर्म है सो तैसेही रहो ॥ ९९॥ सांख्य, नैयायिक और बौद्धआदिकोंने पदार्थोंका भेद जैसे जैसे कल्प्या है, अनेक युक्तियों करके सो तैसे तैसे होवे तिसके खंडन करणेविषे कुछ प्रयोजन नहीं। काहेते जो व्यावहारिक भेद हमभी अंगीकार करते हैं, और भेदकी सत्यताका हम खंडन करते हैं॥१०० और सांख्यआदिकोंने निःशंक होकरके सत् अद्वैतका खंडन किया है इसीतरह निःशंक होकरके सांख्यआदिकोंके द्वैतका हमभी खंडन करते हैं तिसविषे हमारी कुछ हानि नहीं ॥ १०१ ॥

शंका-सांख्यआदिकोंके द्वैत खंडन करणेविषे लाभ भी तो कुछनहीं।

उत्तर–सांख्यआदिकोंके द्वैतके खंडन करणेविषे लाभ है। काहेते जो द्वैतके वारंवार खंडन करणेकरके अद्वैतबुद्धि दृढ होजाती है। और अद्वैतबुद्धिके दृढ हुयां पुरुष जीवनमुक्त होता है और विदेह मुक्तिकीभी प्राप्ति होती है ॥ १०२॥ यही वार्ता भगवान्ने गीताके दूसरे अध्यायविषे अर्जुनके ताईं कही है। हे अर्जुन! यह जो ब्रह्मस्थिति मैंने तेरेताईं कही है तिसको प्राप्त होकरके पुरुष शोक मोहको नहीं प्राप्त होता इस ब्रह्मरूप स्थितिविषे अंतकालमें भी स्थित हुयाहुया निर्वाणरूप ब्रह्मको प्राप्त होताहै॥१०३॥ अंतकालका

अर्थ श्रवण कर. सत्‌रूप ब्रह्म जो अद्वैत है, और मिथ्यारूप जो द्वैत है इन दोनोंका जो अन्योन्य अध्यासरूप ऐक्यभ्रम है तिस भ्रमका जो अंतकाल है, सो यह है जो सत्‌वस्तुब्रह्मको अद्वैत जानना और द्वैतरूप जगत्‌को मिथ्या जानना ॥ १०४ ॥ अथवा वर्तमान शरीर और प्राणोंका जो वियोगहै तिसका नाम अंतकाल है। काहेते जो सभी लोक अंत काल शरीर और प्राणोंके वियोगको कहते हैं, मरणकालमेंभी जगत्‌विषे मिथ्याबुद्धिके प्राप्त हुयां हुयां फेर जन्मकी प्राप्ति नहीं होती, जिसकारणते ज्ञानकी उत्पत्तिमात्रते पुरुष कृतकृत्य होता है ॥ १०५ ॥ तिसी कारणते ज्ञानवान् भावे किसीप्रकार शरीरका त्याग करे तिसको जन्मकी प्राप्ति नहीं होती । भावे तो ज्ञानवान् संपूर्णरोगोंते रहित सावधान पद्मआसन लगाय करके शरीरका त्याग करे, भावे रोगोंकरके ग्रस्या हुया पृथिवीविषे लेटता लेटता शरीरका त्याग करे, भावे मूर्च्छाको प्राप्त हुयाहुया शरीरका त्याग करे किसी प्रकार करके तिसको हानिलाभ नहीं । काहेते जो संपूर्ण जगत्‌को मिथ्या जाननेते तिसका भ्रम मिटगया है ॥ १०६ ॥ प्राणोंके वियोग समय मूर्छा आदिकोंकरके ज्ञान नाश नहीं होता,इसविषे दृष्टांत श्रवण कर जैसे पहिले दिनका जो पढ्या हुया है सो सुषुप्ति और स्वप्नविषे याद नहीं होता पर अगलेदिन अनपढ्या तो नहीं होजाता । तैसे मूर्च्छा आदिकोंविषे ज्ञानकी स्मृति न हुयाँ भी अज्ञानी तो नहीं होजाता १०७ प्रमाणोंते उत्पन्न हुई जो ब्रह्मविद्या है सो प्रबल प्रमाणते विना नाश नहीं होती। और वेदांतते प्रबल प्रमाण तो कोई नहीं ॥ १०८ ॥ तिस कारणते वेदांतप्रमाणकरके जान्या जो है सत्यरूप अद्वैत ब्रह्म, तिसका अज्ञान कभी भी नहीं होता। ताते मरणसमय भी पंचभूतोंके मिथ्या जान्याँ हुयाँ मोक्षकी प्राप्ति होती है, फेर जन्मकी प्राप्ति नहीं होती १०९

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां

द्वितीयं पञ्चमहाभूतविवेकप्रकरणं समाप्तम् ॥ २ ॥

अथ पंचकोशविवेकप्रकरणम् ३.

॥ ॐ सद्गुरुप्रसाद ॥ ॥ अब पंचकोशविवेक नाम प्रकरण आरंभ करते हैं। सो यह पंचदशीका तीसरा प्रकरण है। किसवास्ते पंचकोशविवेकनाम प्रकरणका आरंभ करते हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर। पंचकोशरूप जो गुफा है तिसविषे स्थित जो सच्चिदानंद ब्रह्म है, तिसको पंचकोशोंके विवेकद्वारा जान सकते हैं इस कारणते पंचकोशोंका विवेक किया चाहते हैं। पंचकोश कौन हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर, एक स्थूलदेहरूप अन्नमय कोश है, और देहके अंतर जो प्राणहै सो प्राणमय कोश है; और प्राणके अंतर जो मन है सो मनोमय कोश है और मनके अंतर जो बुद्धि है सो विज्ञानमय कोश है और बुद्धिके अंतर आनंदमय कोश है, इन पंच कोशोंकी परंपरारूप गुफाविषे आत्मा स्थित है। प्रथम कोश जो है अन्नमय तिसका स्वरूप श्रवण कर। माता पिताने जो भक्षण किया है अन्न तिस अन्नते उत्पन्न भया जो रक्त और वीर्य तिस रक्त और वीर्यते उत्पन्न भया जो शरीर है, और उत्पत्तिते पीछे जो दुग्ध होता है माताके स्तनोंविषे तिस दुग्धपानते और अन्नके भक्षण करणेते बध्या जो शरीर है सो अन्नमय कोश है। अर्थ यह-जो शरीर अन्नका विकारहै, सो शरीर आत्मा नहीं। काहेते जो जन्मते प्रथम शरीरका अभाव है और मरणते पीछेभी शरीरका अभाव है, ताते यह सिद्ध भया शरीर आत्मा नहीं घट-आदिकोंकी न्याई कार्य होनेते और जो शरीरको आत्मा मानैं तो कियेहुए जो इस शरीरविषे पुण्य पाप हैं, तिनका फल भोगेते विना नाश हुया चाहिये और इस शरीरविषे भोगेजाते जो हैं सुखदुःख तिनका कारण कर्म इस शरीरकरके तो किया नहीं और इस शरीरकी उत्पत्तिते प्रथम आत्माकी विद्यमानता तो तू मानता नहीं और इस शरीरका जन्म प्रत्यक्ष सिद्ध है। ताते अकृताभ्यागम

दोष प्राप्त भया । अर्थ यह-जो कर्मकिये विनाही फल भोगना पडा तैसेही किये हुए कर्मोंका फल भोगे विनाही नाश भया । काहेते जो फलभोक्ता देहते विना आत्मा तू नहीं मानता । ताते यहां किये हुए पुण्यपापकर्मकी व्यर्थता प्राप्त भई, इसते आत्मा देहते भिन्न है यह अंगीकार किया चाहिये, और देह अनात्मा है यह अंगीकार किया चाहिये । अब प्राणमयकोशका स्वरूप श्रवण कर । देहविषे मस्तकते लेकर चरणोंपर्यंत पूर्ण जो पवन है और संपूर्ण इंद्रियोंको और शरीरको जो पवन सामर्थ्य देकर प्रवृत्त करावता है, ऐसा जो पवन है सो प्राणमय कोश है, सो प्राणमय कोश आत्मा नहीं काहेते जो घट आदिकोंकी न्याईं चेतनताते रहित है । अब मनोमय कोशका स्वरूप श्रवण कर । देहविषे जो अहंकार करता है, और घर आदिकोंविषे जो ममता करता है और काम क्रोध आदिकोंकरके जो भ्रमको प्राप्त होता है, सो मनोमय कोश है सो मनोमय कोश आत्मा नहीं, काहेते जो एकरस स्वभाववाला नहीं काम क्रोधआदिक अनेक विकारोंवाला है । ताते यह सिद्ध भया मनोय कोश आत्मा नहीं शरीरकी न्याईं विकारोंवाला होनेते । अब विज्ञानमय कोशका स्वरूप श्रवण कर । चैतन्यके प्रतिबिंब सहित जो बुद्धि है, सो सुषुप्तिकालके अज्ञानविषे लीन होजाती है, और जाग्रत् अवस्थाविषे सारे शरीरविषे व्याप करके रहती है, ऐसी जो बुद्धि है सो विज्ञानमय कोश है, सो विज्ञानमय कोश आत्मा नहीं आदिकोंकी न्याईं लयादिक स्वभाववाला होणेते घट ।

शंका-एकही अंतःकरण मन और बुद्धिरूपको प्राप्त होता है ताते एकही अंतःकरण विज्ञानमय कोश और मनोमय कोश दो रूपोंको कैसे प्राप्त होवे ? ।

उत्तर-एकही अंतःकरण कर्तारूप होनेकरके विज्ञानमय कोश

कहाता है। और कारणरूप होनेकरके मनोमय कोश कहाता है, सो विज्ञानमय कोश अंतर है और मनोमय कोश बाहिर है। जैसे एकही पुरुष प्रजाके अनुभवकरके हाकिम होता है, और राजाके अनुभव करके नौकर होता है, तैसे एकही अंतःकरण मनोमय कोश और विज्ञानमय कोश दो रूपोंको प्राप्त होता है। अब आनंदमय कोशका स्वरूप श्रवण कर। पुण्यरूप कर्मोंका फल जो सुख है तिस सुखके अनुभवसमय अंतर सुख हुई हुई जो मनकी कोईक वृत्ति है, सो मनकी वृत्ति आनंदरूप आत्माके प्रतिबिंबको ग्रहण करती है, सो वृत्ति भोगके समाप्त हुयां हुयां निद्रारूपकर लीन होजाती है ऐसी जो वृत्ति है सो आनंदमय कोश है, सो आनंदमय कोश आत्मा नहीं कभीक होनेते, बिजली आदिकोंकी न्याईं।

शंका–प्रतीत होते जो हैं आनंदमयादि पंचकोश तिनको आत्मरूपताके निषेध कियां हुयां शून्यवाद प्राप्त होवेगा।

उत्तर–शून्यवाद नहीं प्राप्त होता। काहेते जो सुखाकार वृत्तिविषे जिसका प्रतिबिंब पडता है सो बिंबरूप आत्मा है। काहेते जो सदा एकरस स्वभावकरके स्थित है ताते यह सिद्ध भया। अंतःकरणाविषे जिसका प्रतिबिंब पडता है, सो बिंबरूप आत्मा है नित्य होनेते, जो आत्मा नहीं होता सो नित्य भी नहीं होता। जैसे शरीरआदिक आत्मा नहीं सो नित्यभी नहीं और आकाशआदिकभी उत्पात्तिविनाशवाले होनेकरके अनित्य हैं।

शंका–शरीरतेआदि लेकरके निद्रासमय प्रतीत होता जो आनंद है, इहांपर्यंत जो प्रतीत होते हैं पंचकोश तिनको तुम्हारी कथन करी जो युक्तियां हैं तिन युक्तियोंकरके आत्मरूपता जो नहीं बनती तो मत बने पर इनते भिन्न तो आत्मा नहीं प्रतीति

होता, ताते निरात्मतावाद प्राप्त भया। काहेते जो इनते भिन्न कोई आत्मा होता तो प्रतीत होता।

उत्तर-शरीरतेआदि लेकरके निद्रा आनंदपर्य्यंत पंचकोश प्रतीत होते हैं, और इनते भिन्न आत्मा नहीं प्रतीत होता। यह जो तैंने कथन किया है सो यथार्थ है पर तोभी इन पंचकोशोंते भिन्न आत्मा है। काहेते जो आत्मा इन पंचकोशोंते भिन्न न होवे तो इन पंचकोशोंको कौन जाने, ताते जो इन पंचकोशोंको जाननेवाला है सो आत्मा है, तिसको क्यों नहीं अंगीकार करता।

शंका-इन पंचकोशोंते भिन्न जो आत्मा होवे तो प्रतीत होवे और पंचकोशोंते भिन्न आत्मा प्रतीत तो नहीं होता ताते आत्मा है नहीं।

उत्तर-आनंदमयादिक पंचकोशोंका साक्षी जो आत्मा है सो अनुभवरूप है, ताते अनुभवका विषय नहीं होता।

शंका-अनुभवरूप आत्माभी अनुभवका विषय क्यों न होवे ?।

उत्तर-अनुभवरूप आत्मा अनुभवका विषय नहीं होता। काहेते जो अनुभवका विषय होता है सो अनुभव रूप नहीं होता और जो अनुभवका विषय होता है सो अनुभव करणेवालेते भिन्न होता है, और आत्मा तो अनुभवरूप है, और सबोंके अनुभव करणे वाला है ताते अनुभवका विषय कैसे होवे।

शंका-आत्मा अनुभवका विषय नहीं होता यह बात तुम भी मानते हो और मैं भी मानता हूं इसविषे विवाद कुछ नहीं, पर आत्माके अभावकरके आत्माका अनुभव नहीं होता कि, आत्मासे भिन्न अनुभवके अभावकरके आत्माका अनुभव नहीं होता। अथवा

आत्माते भिन्न अनुभव करणेवालेके अभावते आत्माका अनुभव नहीं होता। इस विवादके दूर करणेवाली युक्ति मेरे तांई कहो।

उत्तर–आत्मा तो सदा विद्यमानहै, पर आत्माकेअनुभव करणे-वाला और कोई नहीं, आत्माते भिन्न अनुभवभी नहीं इसते आत्मा नहीं प्रतीत होता और आत्माके अभावते आत्मा नहीं प्रतीत होता यह वार्ता नहीं। काहेते जो आत्माका अभाव होवे, तो अनात्म-पदार्थोंकी सिद्धि किसतरह होवे, ताते संपूर्ण पदार्थोंकी साधकता-रूपकरके आत्मा सदा विद्यमान है। अनुभवरूप आत्माका अनुभव नहीं होता इसपर दृष्टांत सुन, जैसे मधुर स्वभाववाले जो गुड आदि हैं तिनको मधुर करणेवालेकी इच्छा नहीं जो हमको कोईक आनकर मधुर करे और ऐसा कोई पदार्थभी जगत्‌विषे है नहीं जो गुडको आनके मधुर करे, और गुड सर्व चने चावलआदिक पदार्थोंको मधुर करता है। और गुडके मधुर करनेवाला जगत्‌विषे कोई पदार्थ नहीं भी तोभी गुड मधुरस्वभाव है। तैसे अनुभवरूप आत्माको आपणे अनुभव करणेवालेकी इच्छा नहीं, और जगत्‌विषे ऐसा पदार्थ भी कोई नहीं जो आत्माको अनुभव करसके, और आत्म सबको अनुभव करता है आत्माको अनुभव करणेवालेके अभाव हुयां हुयां भी आत्माकी अनुभवरूपता सदा बनी है, इस अर्थविषे वेदवाक्य भी प्रमाण है। स्वप्नअवस्थाविषे आत्मा आपणे प्रकाश करके प्रकाशता है काहेते जो जाग्रत अवस्थाविषे सूर्यआदिक प्रकाश करणेवाले हैं स्वप्नविषे तिनका अभाव है। और आत्मा संपूर्ण जो प्रकाशक हैं तिनते आपणे प्रकाश करके प्रथम प्रकाशता है। और आत्माके प्रकाशनेते पश्चात् संपूर्ण,सूर्यादि प्रकाशते हैं सो सूर्यादिकों विषे आपणा प्रकाश नहीं सब आत्माके प्रकाशकर प्रकाशते हैं जैसे घोडाओंके चलनेकरके रथ चलता है और रथविषे चलनेकी आपणी

सामर्थ्यता नहीं और जिसकरके संपूर्णको जानाजाताहै,तिसको और अन्य किसकरके जाने। जो सबके जाननेवाला है तिसको किसकरके जाने यह वाक्य दो वेदके इसविषे प्रमाण हैं, जिस साक्षी चैतन्यरूप आत्मा करके संपूर्ण दृश्यमात्रको जानते हैं जीव। तिस साक्षीरूप आत्माका किस साक्ष्यरूप जडवस्तु करके जाने पुरुष ।

शंका–मनकरके जानेंगे तिसको ।

उत्तर–मन दृश्यवस्तु ज्ञानका साधन है। और जानता जो आत्मा है तिसके जाननेका साधन नहीं, इसी अर्थको वेद भी कथन करता है। आत्मा वाणीकरके भी नहीं जान्या जाता और मनकरकेभी नहीं जान्या जाता, और आत्मा जो मनकरके जाण्याजाय तब तिसके जाननेवाला कौन है, जो कहे आत्मा ही जाननेवाला है तब आपही द्रष्टा और आपही दृश्य भया, यह वार्ता तो विरुद्ध है। जैसे कहिये अग्नि अग्निको प्रकाशती है और अग्नि अग्निको दाह करती है, यह वार्ता विरुद्ध है । और आत्माके स्वप्रकाशताविषे दो वेदवाक्य औरभी प्रमाण हैं, एक तो यह है। आत्माके जाननेवाला कोई नहीं, और दूसरा वाक्य यह है। जो वस्तु जानी हुई है और जो नहीं जानी उन दोनोंते आत्मा भिन्न है, जो जो वस्तु जानीजाती हैं तिन संपूर्ण वस्तुओंके जाननेवाला आत्मा है, और आत्मा बोधस्वरूप है, सो आत्मा ज्ञानका जो विषय वस्तु है और अज्ञानकरके आच्छादित जो वस्तु है तिन दोनोंसे भिन्न है, जिसते बोधस्वरूप है ।

शंका–ज्ञात और अज्ञातसे भिन्न बोधका अनुभव तो नहीं होता।

उत्तर–ज्ञात और अज्ञातसे भिन्न जो बोधका अनुभव न होवे तो ज्ञातवस्तुकाभी अनुभव न होवे। काहेते जो ज्ञात नाम उसका है जो

ज्ञान विषय होवे। ताते ज्ञान जो है सो पहिले प्रकाशता है और विषय पीछे प्रकाशता है ताते प्रथम प्रकाशमान जो ज्ञान है, सोई बोध है। ताते बोधका अनुभव अवश्य अंगीकार किया चाहिये और जिस मूढको ऐसे प्रथम प्रकाशमान जो बोध है, तिसका अनुभव नहीं होता सो पुरुष मनुष्यक आकारवाला तो है पर मृत्तिकाका ढीम है, तिस जडको शास्त्र कैसे उपदेश करेगा बोध नहीं जानाजाता ऐसा जो कथन है सो हाँसिकि योग्य है । काहेते जो बोध विना यह कथनही नहीं बनता, इसाविषे दृष्टांत सुन । जैसे कोई सभाविषे आयके यह प्रश्न करे, मेरे मुखमें जिह्वा है अथवा नहीं इस प्रश्नको सुनकर बुद्धिमान् हँसते हैं। काहेते जो जिह्वा विना यह प्रश्न कहणा ही नहीं बनता । ताते यह प्रश्न मूढताक जनावणेवाला है, बुद्धिमत्ताके जनावणेवाला नहीं । अर्थ यह--जो प्रश्न करनेवालेकी बुद्धिकी स्तुतिके करावणेवाला यह प्रश्न नहीं, तैसे मैंने बोध नहीं जान्या और इसते आगे मेरेको बोध जानने योग्य है, यह जो कथन है सा हाँसीके योग्य है । काहेते जो बोधसे विना यह कथन नहीं बनता ? ।

शंका–होवे बोध सबते प्रथम प्रकाशमान, पर प्रसंग जो है ब्रह्म बोधका तिसमें क्या सिद्ध भया ।

उत्तर--ब्रह्मबोधविषे यह सिद्ध भया । जिस जिस वस्तुका बोध होता है जगत्‌कोविषे, तिस तिस संपूर्ण वस्तुके त्याग कियाँ हुयाँ सब वस्तुवोंका प्रकाशक जो बोध है, सो ब्रह्म है ऐसी जो बुद्धि है तिसका नाम ब्रह्म निश्चय है । अर्थ यह--जो बोधमात्र वस्तु है, सो ब्रह्म है । इस बुद्धिका नाम ब्रह्मज्ञान है ।

शंका--जो घटादिक पदार्थोंके त्याग करके घटादिक पदार्थोंका प्रकाशक अनुभवको ब्रह्मरूप जान्या है, तब पंचकोशोंका विवेक व्यर्थ भया काहेते जो ब्रह्मज्ञान जिज्ञासुको चाहिये था, सो तो घटादिकों-

का प्रकाशक जो अनुभव है सो ब्रह्म है ऐसे सिद्ध भया, तो पंचकोशोंके विवेककेसाथ प्रयोजन कुछ न रहा।

उत्तर–ब्रह्मकी आत्मारूपता जिसकालतक प्रतीत न होवे, तिस कालतक जन्ममरणकी निवृत्ति नहीं होती। ब्रह्मकी आत्मरूपता प्रतीतिका कारण पंचकोशोंको विवेक है ताते पंचकोशोंका विवेक व्यर्थ नहीं काहेते जो पंचकोशोंके विवेकको ब्रह्मकी आत्मरूपता प्रतीति विषे कारणता है। ताते पंचकोशोंकी अनात्मताते निश्चय किया हुया बुद्धिकरके पंचकोशोंका साक्षीरूप जो बोध है, सोई मेरा वास्तव स्वरूप ब्रह्महै।

शंका–अनुभव करके सिद्ध अन्नमयादिक जो पंचकोश हैं तिनके त्याग कियाँ हुयां शून्यता शेष बाकी रहती है।

उत्तर–पंचकोशोंका त्याग कियाँ हुयां पंचकोशोके साक्षीको शून्यता नहीं बनती। तिसविषे युक्ति श्रवण कर। पंचकोशोंके त्याग करणेवाला जो साक्षी चैतन्य है; सो कैसे शून्य होवे। काहेते जो तिस साक्षी चैतन्यसे विना शून्यकी सिद्धिभीनहींहोती। मैं हों इस प्रतीतिका विषय जो है सो आत्मा है, ऐसा सभी शास्त्रोंवाले भी मानते हैं, और लोकभी मानते हैं, इसविषे विवाद किसीका नहीं, और इसविषे जो विवाद होवे तो इसविषे विवाद करणेवाला वादी कौन है, सो तो वादी कोई नहीं। काहेते जो ऐसा जगत्‌विषे कोई नहीं कहता जो मैं नहीं, भ्रमसे विना अपनी असत्ता किसी अवस्थाविषे किसीने अंगीकार नहीं करी।काहेते जो आपणी असत्ताकी किसीको रुचिही नहीं इसकारणते श्रुति असत्‌वादीके बाधको कहती है, जो पुरुष ब्रह्मको असत् जानता है सो पुरुष आपही ब्रह्मके असत् जाननेते असत् होजाताहै। काहेते जो ब्रह्म आपणा आप है इतने करके जो सिद्ध भया सो श्रवण

कर । ब्रह्मको अनुभवविषयता मत होवे, पर ब्रह्मकी सत्ता अंगीकार करनी चाहिये ।

प्रश्न-जो आत्मा है ब्रह्म सो अनुभवका विषय नहीं, तो तिसका कैसा स्वरूप है । जो किसी प्रकारका आत्माका स्वरूप कहोगे, तो तिसी स्वरूपकर आत्माको अनुभवविषयता होजावेगी । और जो कहो किसी प्रकारका आत्माका स्वरूप है नहीं, तब शून्यता प्राप्त होवेगी ।

उत्तर-कैसा कहना और तैसा कहना आत्माविषे बनता नहीं । काहेते जो कैसा कहना और तैसा कहना तो अनात्माविषे बनता है ताते कैसा कहनेते और तैसा कहनेते जो रहित है सो आत्मा है, ऐसे निश्चय कर । कैसा कहना और तैसा कहना आत्माविषे क्यों नहीं बनता जो ऐसा पूछे तो श्रवण कर । ऐसा कहना तिसविषे होता है जो इंद्रियोंका विषय होता है, और आत्मा तो इंद्रियोंका विषय नहीं । काहेते जो सब जाको विषय करणे वाला है, और तैसा कहना उसविषे होता है जो परोक्ष होता है और आत्मा तो परोक्ष नहीं । काहेते जो आत्मा नाम आपणे आपका है अपणा आप कभी भी परोक्ष नहीं होता, और आत्मा शून्यभी नहीं जिस कारणते ज्ञानका न विषय हुयां हुयां भी सदा अपरोक्ष है, ताते यह सिद्ध भया । आत्मा स्वप्रकाश है अनुभवका न विषय होकरके अपरोक्ष होनेते, जो स्वप्रकाश नहीं होता सो अनुभवका विषय होकर अपरोक्ष होता है, जैसे घटादिक पदार्थ और आत्मा तो स्वप्रकाश है इसते अनुभवका विषय न होकरके अपरोक्ष है ।

शंका-होवे आत्माकी स्वप्रकाशता, पर तिसको ब्रह्मरूपता कैसे है काहेते जो ब्रह्मका लक्षण कोई है नहीं ।

उत्तर-ब्रह्मका लक्षण जो है, सत्यचित्‌अनंतरूप, वेदने कथन

किया, सो आत्माविषे देखाजाता है ताते आत्मा ब्रह्मरूप है। आत्माको सत्यरूपता कैसे है ऐसे पूछे तो श्रवण कर। सत्यनाम उसका है जिसका कभी भी अभाव न होवे, सो आत्माका कभीभी अभाव नहीं होता । जिसकारणते आत्मा सव जगत्के अभावका साक्षी है । स्थूल सूक्ष्म शरीरादिरूप जगत्का अभाव सुषुप्ति मूर्च्छा समाधिविषे होता है तिसका साक्षीरूपताकरके विद्यमान जो आत्मा है, तिसका अभाव कभी नहीं होता । ताते आत्मा सत्य है, और जो कोई कहै आत्माका अभाव होता है, तो ऐसे तिसते पूछते हैं आत्माके अभावका कोई साक्षी है कि, नहीं जो कहै कोई साक्षी नहीं, तो आत्माका अभाव न सिद्ध हुवा काहेते जो साक्षीते विना किसीकी सिद्धि नहीं होती और जो कहै साक्षीसेविना भी आत्माके अभावकी सिद्धि होती है तो वंध्याके पुत्र और शशके शृंग और आकाशके पुष्पभी सिद्ध होवें, सो तो नहीं सिद्ध होते । ताते साक्षीसे विना आत्माका अभावभी नहीं सिद्ध होता। और जो कहै आत्माके अभावका कोई साक्षी है, तो वह साक्षी आत्मा है कि, आनात्मा है अनात्मा तो आत्माके अभावका साक्षी नहीं होसक्ता जड होनेते, साक्षी होना तो चेतनका स्वभाव है, और आत्माभी आत्माके अभावका साक्षी नहीं बनता । काहेते अभावका साक्षी सो होता है जो अभावके पीछे रहता है । ताते आत्माका जो अभाव होवे तो आत्मा तो पीछे शेष न रह्या,इसते आत्माके अभावका साक्षी कैसे होवे । ताते सबके बाध कियां हुया जो पीछे शेष रहता है, सोई आत्मा है, जैसे घरमें संपूर्ण हाथकरके पकडने लायक पदार्थोंके बाहिर निकास्यां हुयां जो पीछे शेष रह्या हाथसे पकडके बाहिर निकासनेके लायक नहीं है सो आकाश है ।

शंका--प्रतीत होते जो जो पदार्थ हैं तिन संपूर्णोंके बाध कियां

हुयां बाकी तो कुछ नहीं शेष रहता इसते तुम कैसे कहते हो सर्वके बाध कियां हुयां पीछे जो शेष है, सो आत्माका स्वरूप है ।

उत्तर-सर्वके बाध कियाँ हुयां पीछे कुछ नहीं शेष रहता, इसका तेरेको अनुभव हुया कि, नहीं हुया, जो कहे तिसका अनुभव नहीं हुया, तो तिसका कथन करणा कैसे बने. और जो कहै तिसका अनुभव हुया है, तो जो सर्वके अभावका अनुभव करणेवाला है सो आत्मा तेरा स्वरूप है, ताते जो सर्वके अभावका साक्षी है तिसका नाम तू पीछे कुछ नहीं रखता है, और हम तिसका नाम आत्मा रखते हैं। ताते नाममात्रविषे भेद भया. वस्तुविषे भेद न भया, जैसे एकपदार्थका नाम किसीने कणक कहा किसीने गेहूँ कहा, तो नाममात्रमें भेद है वस्तुमें भेद कुछ नहीं जिसकारणते सर्वके बाधका साक्षी चैतन्य अबाधरूप विद्यमान है. इसी कारणते यह आत्मा स्थूलभी नहीं और सूक्ष्मभी नहीं । इसप्रकार स्थूल सूक्ष्म संपूर्ण अनात्मपदार्थोंके निषेध करके साक्षी चैतन्यको आत्मता प्रतिपादन करै हैं वेदकी श्रुति भी इदंता करके प्रतीत होती जो संपूर्ण वस्तु है सो त्यागनेके लायक है और जो इदंता करके नहीं प्रतीत होता सो नहीं त्यागनेके लायक काहेते जोत्याग करणेवालेके स्वरूपका त्याग नहीं बनता। सोई आत्मा है जो त्यागने लायक नहीं, ताते ब्रह्मलक्षणविषे जो सत्यता थी सो आत्माविषे सिद्ध भई और ज्ञानरूपता आत्माको प्रथमहीं कथन करी है आत्मा आपही अनुभवरूप है अनुभवका विषय नहीं होता इत्यादिक वचनोंकरके अब आत्माकी अनंतता जिसप्रकार है सो प्रकार श्रवण कर अनंत कहाता है जो अंतसे रहित होवे-सो अंत तीन प्रकारका है अंत नाम है अभावका जिस वस्तुका किसी एक देशमें अभाव होवे सो देश अंत कहाता है तिस वस्तुका सो परिच्छिन्न पदार्थोंका होता है जैसे घटादिकोंका

और ब्रह्मको सर्व देशोंविषे व्यापक होनेते तिसका देश करके अंत नहीं और कालकरके अंत तिसका होता है जो उत्पत्तिविनाश-वाला होता है जैसे घटादिकोंका, और ब्रह्म तो उत्पत्तिविनाशसे रहित है ताते तिसका कालकरके अंत नहीं और वस्तुते अंत तिसका होता है जो वस्तु दूसरी वस्तुके रूपको नहीं प्राप्तहोती जैसे घट पटरूपको नहीं प्राप्त होता तो तिसका पटसे अंत है और ब्रह्म तो सर्वरूपहै ताते ब्रह्मका वस्तुसे अंत नहीं ताते देश और काल और अन्य वस्तु इन तीनोंको माया करके कल्पित होनेते ब्रह्मका देश करके अंत और कालकरके अंत और वस्तुकरके अंत नहीं बनता ताते ब्रह्मकी अनंतता अत्यन्त प्रगट है ।

शंका-जडजगत्को ब्रह्मविषे मायाकरके कल्पित होनेते मत होवे ब्रह्मका जडजगत् करके अंत पर चेतनरूप जो हैं जीव और ईश्वर तिनको मायाकरके कल्पितता तो है नहीं ताते जीव ईश्वरकरके ब्रह्मका अंत होवे ।

उत्तर-सत्य और ज्ञान और अनंतरूप जो ब्रह्म है सोई वास्तव है दोनों उपाधियों करके ब्रह्मकोही जीवरूपता और ईश्वररूपता प्राप्त होती है कल्पित सो उपाधियां दोनों कौन हैं जो ऐसा पूछे तो श्रवण कर अनिर्वचनीय मायाशक्ति ईश्वररूपतादि उपाधि है तिस मायारूप उपाधिकरके संपूर्ण पदार्थोंकी व्यवस्था स्थापन करीहुई हैं । ताते आनंदमय कोशसे लेकर संपूर्ण पदार्थोंविषे गुप्त होकरके रहती है इसते नहीं प्रतीत होती और जो मायाशक्ति संपूर्ण पदार्थोंकी व्यवस्था करणेवाली न होवे तो संपूर्ण पदार्थोंके धर्म परस्पर मिल जावें । अर्थ यह-जलका धर्म शीतता अग्निविषे प्राप्त होजावे और अग्निका धर्म प्रकाशकता जलविषे प्राप्त होजावे । ताते जगत्विषे अव्यवस्थित व्यवहार होजावे ताते जगत्विषे व्यवस्थित व्यवहारका कारण माय शक्ति है ॥

शंका-जड मायाशक्तिको जगत्के व्यवस्थित व्यवहारमें कारणता नहीं बनती। काहेते जो व्यवस्थित व्यवहारमें कारण होना चेतनका धर्म है।

उत्तर-मायाशक्ति चेतनके प्रतिबिंबका आश्रय है इसते चेतनताको प्राप्त हुएकी न्याई होती है। ताते जगत्की व्यवस्थाका कारणहै तिस मायारूप शक्तिके संबंधते ब्रह्मही ईश्वररूपताको प्राप्त होता है और पंचकोशरूप उपाधिके संबंध करके ब्रह्मही जीव रूपताको प्राप्त होताहै ॥

शंका-एक ब्रह्म आपणी ब्रह्मरूपताको न त्याग करके परस्पर विरुद्ध जीवरूपता और ईश्वररूपताको एककालविषे कैसे प्राप्त होता है ऐसा तो जगत्विषे कोई पदार्थ नहीं देखाजाता जो आपणी एक रूपताको न त्याग करके विरुद्ध दो धर्मोंको प्राप्त हो जाते हैं ॥

उत्तर-जैसे एक मनुष्य आपणी मनुष्यरूपताको न त्याग करके एक कालविषेही पुत्र पौत्र रूपको प्राप्त होजाता है जिस कालविषे पिताकी दृष्टिविषे वह पुत्र तिसी कालविषे दादेकी दृष्टिविषे वह पौत्रहै और तिसी कालविषे वह मनुष्यका मनुष्यभी आप बन्या हैं। तैसे एक ब्रह्म आपणी ब्रह्मरूपताको न त्याग करके जीव ईश्वर परस्पर विरुद्ध रूपताको प्राप्त होता है। जैसे पिता दादेवाली दृष्टि न करिये तो पुरुष मनुष्यका मनुष्य है न पुत्र है न पौत्र है। तैसे शक्ति और कोशरूप उपाधिवल न दृष्टि करिये तो न जीव है न ईश्वर है केवल शुद्ध ब्रह्मका ब्रह्मही है इसप्रकार ब्रह्मविषे जीव ईश्वर कल्पित हैं ताते जीव ईश्वर करकेभी ब्रह्मका परिच्छेद नहीं होता ऐसा जो देश काल वस्तु परिच्छेदसे रहित ब्रह्म है सो आत्मरूप है इसप्रकार जो पुरुष ब्रह्मको जानता है सो आपही ब्रह्मरूप होजाता है और ब्रह्मका जन्म मरण नहीं। ताते वह पुरुष जन्ममरणते रहित होजाता है॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां तृतीयं पंचकोशविवेकप्रकरणं समाप्तम् ॥ ३ ॥

अथ द्वैतविवेकप्रकरणम् ४.

ॐ सद्गुरुप्रसाद ॥ ॥ अब चौथा जो विवेक द्वैतविवेकनाम प्रकरण है तिसका प्रारंभ करते हैं। तिसविषे ईश्वर करके रच्या हुया जो द्वैत है और जीवकरके रच्या हुया जो द्वैत है तिसको भिन्न भिन्न निरूपण करेंगे । काहेते जो जीव और ईश्वर करके रचे हुये द्वैतको भिन्न भिन्न करके जान्या हुयां जीवके बंधका कारण जो द्वैत है सो प्रगट प्रतीत होवेगा तिस बंधका कारण द्वैतके त्याग्यां हुयां जीवको मोक्षकी प्राप्ति होवेगी ताते काकके मुखविषे दाँतोंकी परीक्षाकी न्याई द्वैतका विवेक करणा निष्फल नहीं ॥

शंका-पुण्यपापरूप कर्मोंकरके जीवही जगत्को रचते हैं ऐसे शास्त्रोंवाले कोईक वादी कथन करते हैं ताते ईश्वरका रच्या हुया द्वैत कोई नहीं ॥

उत्तर-ईश्वरकी रचीहुई बहुत श्रुतियांविषे द्वैत कथन किया है ताते यह शंका करणी योग्य नहीं वह कौन बहुत श्रुतियां हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर। एक तो प्रथम श्वेताश्वतर उपनिषद्की श्रुति है सो कहती है मायाको जगत्का उपादान कारण जानो और मायावाला जो ईश्वर है तिसको महेश्वर जानो, सो मायावाला ईश्वर जगत्को रचता है । और दूसरी ऐतरेय उपनिषद्की श्रुति है सो कहती है यह जगत् उत्पत्तिते पूर्व आत्मरूप होता भया सो आत्मा इच्छा कर्ता भया मैं इस जगत्को रचों सो आत्मा संकल्प करके इन संपूर्ण लोकोंको रचता भया । तीसरी तैत्तिरीय उपनिषद्की श्रुति है तिसविषे तित्तिरिनाम मुनि यह कहता है तिस ब्रह्मरूप आत्माते आकाश पवन अग्नि जल पृथिवी औषधियां अन्न और प्राणधारियोंके शरीर उत्पन्न होते भये सो आत्मा इच्छा करता

भया मैं एकते बहुतरूप होवों और प्रजारूपकरके उत्पन्न होवों सो आत्मा विचारता भया इस इस प्रकारके यह यह वस्तु उत्पन्न होवेंगी ऐसे विचार कर संपूर्ण जगत्को रचता भया। जो कुछ देखनमें आवता है। और चौथी छांदोग्य उपनिषद्की श्रुति है तिसविषे यह कथन किया है यह संपूर्ण जगत् उत्पत्तिसे पूर्व सत्‌रूप होता भया। सो सत् ब्रह्म कैसा है सजातीय विजातीय स्वगत भेदते रहित है सो सत् इच्छा करता भया मैं एकते बहुतरूप होवों ताते प्रजारूपकरके उत्पन्न होवों इस प्रकार इच्छाकरके तेज जल पृथिवी तीन भूतोंको रचता भया और अंडज जरायुज उद्भिज्ज तीन प्रकारके शरीरोंको रचता भया और पांचवीं मुंडक उपनिषद्की श्रुति है तिसविषे यह कथन कियाहै जैसे प्रचंड अग्निते अनेक प्रकार चिनगारियां (पतंगें) उत्पन्न होती हैं तैसे व्यापक परमात्माते अनेक प्रकारके जड और चिदाभाससहित चेतन पदार्थ उत्पन्न होते हैं और छठी बृहदारण्यक उपनिषद्की श्रुति है सो कहती है यह जगत् संपूर्ण उत्पत्तिते पूर्व अव्याकृतरूप होता भया तिस अव्याकृत ब्रह्मते नामरूपलक्षण दृश्यप्रपंच होता भया सो नामरूप विराट् आदिकोंविषे प्रगट नजर आवते हैं विराट् और मनु और मनुष्य और गौ और गधे और घोडे और बकरी और भेड और कीडियोंसे आदि लेकरके संपूर्ण स्त्रीपुरुषलक्षण दो दो तित अव्याकृत ब्रह्मते उत्पन्न होते भए इस प्रकार अनेक श्रुतियां ईश्वरको जगत्का कारण कथन करती हैं। और ईश्वरका जीवरूपकरके शरीरोंविषे प्रवेशभी कथन करती हैं सो जीवरूप निर्विकार ब्रह्मते भिन्न है। काहेते जो विकारी है तिस परमात्माको प्राणोंके धारणते जीवरूपता प्राप्तभई है प्राणोंके धारणेका अर्थ यह—जो प्राणोंका स्वामी होके प्रणोंको प्रेरणा प्राणोंका अर्थ संपूर्ण इंद्रियां और प्राण और शरीर जीव किसको कहते हैं ऐसे पूछे तो श्रवण कर-

तीन वस्तुओंके मिलनेका नाम जीव है एक लिंगशरीरका अधिष्ठान कूटस्थ चैतन्य, दूसरा लिंगशरीर, तीसरा लिंगशरीरविषे चैतन्यका प्रतिबिंब ॥

शंका--जो ईश्वरनेही जीवरूपताकरके प्रवेश किया है तब जीवको अज्ञान और दुःखादिक न हुये चाहिये काहेते जो ईश्वरविषे अज्ञान और दुःखादिक है नहीं ॥

उत्तर-ईश्वरकी जो मायाशक्ति है तिसविषे जगत्के उत्पन्न करणेकी जैसे शक्ति है तैसे मोहशक्तिभी है सो मोहशक्ति जीवको मोह करदेती है। अर्थ यह-जो अपणे चैतन्य और आनंदस्वरूपके ज्ञानते रहित करदेती है तिस मोहते शरीरविषे तादात्म्याभिमानको प्राप्त हुया हुया आपणी ईश्वररूपताको भूल जाता है और अनीश्वररूपताको प्राप्त होजाता है। अर्थ यह जो इष्टकी प्राप्ति और अनिष्टके दूर करणेविषे असमर्थ होजाता है तिससे आपको दुःखी और अज्ञानी मानता है इसी अर्थको श्रुतिभी कथन करती है शरीर तो एक जैसा है जैसे दो पक्षियोंका स्थान वृक्ष तो एक जैसा है पर तिस शरीरविषे जिसको तादात्म्याभिमान है सो पुरुष आपणे स्वरूपसे भूला हुया हुया सुखकी प्राप्ति और दुःखके दूर करणेविषे असमर्थ होयकरके शोकको प्राप्त होता है और जिसको शरीरविषे तादात्म्याभिमान नहीं सो शोकसे रहित होता है इतनेकरके ईश्वरने रच्या हुया जो द्वैत है सो संक्षेपसे कथन किया। अब जीव करके रचेहुए द्वैतको श्रवण कर 'सप्तान्नं ब्राह्मणानाम्' जो बृहदारण्यक उपनिषद्का ग्रंथ है तिसविषे जीव करके रच्या हुया द्वैत कथन किया है विस्तारकरके आपणे कर्मोंद्वारा जगत्को उत्पन्न करके संपूर्ण लोकोंके शरीरकी पालना करणेवाला जो जीव है सो ज्ञानकरके और कर्मोंकरके सातों अन्नोंको रचता है किसवास्ते सातों अन्नोंको जीव रचता भया और वे सात अन्न कौन है पूछे तो श्रवण कर-एक अन्नको मनुष्योंवास्ते रच्या सो चावल गेहूँ आदिरूप है जो मनुष्यों-

करके भक्षण कियाजाता है और दो अन्न देवताओंकेवास्ते रचता भया सो दर्शपौर्णमास यज्ञरूप हैं।तिनकरके देवता तृप्त होते हैं और चौथा अन्न पशुओंवास्ते रचता भया सो दुग्धरूप है और तीन अन्न आपणेवास्ते रचता भया सो एक मन और दूसरी वाणी और तीसरे प्राण ॥

शंका-ये सप्तअन्न तो ईश्वरकरके रचेहुये हैं कैसे तुम कहते हो जीवकरके रचेहुये हैं ? ॥

उत्तर--स्वरूपकरके तो ये सप्त अन्न ईश्वरनेही रचे हैं तो भी जीवने इन सातोंविषे भोग्यता रची है ज्ञान और कर्मोंकरके जैसे एक स्त्री पिता करके तो उत्पन्न होती है और भर्त्ताकरके भोग्य होती है तैसे सप्त अन्न ईश्वर करके उत्पन्न होते हैं और जीवकरके वे भोगेजाते हैं ताते सप्त अन्न जीव ईश्वर दोनोंके संबंधवाले हैं जीव किस साधन करके जगत्को रचता है और ईश्वर किस साधनकरके जगत्को रचता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर--मायाकी वृत्तिरूप संकल्पकरके ईश्वर जगत्के रचता है मनकी वृत्तिरूप संकल्पकरके जीव जगत्को भोगता है ॥

शंका-ईश्वरने रचेहुए जो पदार्थ हैं तिनके स्वरूपते भिन्न जीव करके रच्या हुया कोई भोग्यका स्वरूप नहीं नजर आवता ॥

उत्तर-ईश्वरकरके रच्याहुया जो मणिआदिरूप एक पदार्थ है तिसविषे भोक्तियां जीवोंकी बुद्धिके भेदकरके अनेक प्रकारका भोग देखाजाता है सो अनेक प्रकारका भोग तब बने जो विषय भी अनेक प्रकारका होवे एक प्रकारके विषय बीच अनेक प्रकारका भोग नहीं बनता जैसे एक प्रकारकी जो अग्नि है सो किसीको शीत उपजावे किसीको उष्ण उपजावे ऐसा भोगभेद नहीं देखाजाता और मणिविषे तो भोगभेद देखाजाता है ताते भोगभेदका कारण विषयका भेद अवश्य मान्या चाहिये और जो ऐसा पूछे कि, मणिविषे भोगभेद कौन है तो श्रवण कर-एकही मणि किसी पुरुषको प्राप्त हुई हुई हर्षका कारण

होती है और वह मणि दूसरे पुरुषको शोकका कारण होती है और तीसरा जो विरक्त पुरुष है तिसको हर्ष शोक दोनोंका कारण नहीं होती ताते एकही मणिविषे तीन प्रकारका भोग देखाजाता है हर्ष और शोक और उदासीनतारूप ताते तिस ईश्वररचित मणिके स्वरूपसे भिन्न भोगका कारण तीन प्रकारका विषय अवश्य मानना चाहिये ईश्वररचित मणि तो हर्ष और शोक और उदासीनताका कारण नहीं जो ईश्वर-रचित मणि हर्षका कारण होती तो सबको हर्ष देती और जो शोकका कारण होती तो सबको शोक देती और जो उदासीनताका कारण होती तो सबको उदासीनता देती ऐसे तो नहीं देखाजाता ताते जिसको मणिविषे हर्ष भया है तिसने ईश्वररचित मणिविषे प्रेयता रची है और जिसको मणि शोक देती है तिसने तिसी मणिविषे अप्रेयता रची है और जिसको मणि उदासीनता देती है तिसने तिसी मणिविषे उपेक्षा रची है। ताते ईश्वररचित मणि हर्षका कारण नहीं मणिविषे जीव-रचितप्रेयता हर्षका कारण है और मणि शोकका भी कारण नहीं जिस पुरुषने तिसविषे अप्रेयता रचीहै तिसको मणिविषे जीवरचित अप्रेयता शोकका कारण है ईश्वररचित मणि उदासीनताका कारण भी नहीं तिस मणिविषे जिस पुरुषने उपेक्षा रची है तिस पुरुषको जीवरचित उपेक्षा उदासीनताका कारण है ईश्वररचित द्वैतते भिन्न जीवरचित द्वैतविषे और भी दृष्टांत है जैसे एक स्त्रीका शरीर ईश्वररचित है तिसविषे किसीको घरवाली प्रतीत होती है किसीको पुत्रवधू प्रतीत होती है किसीको माता प्रतीत होती है किसीको मौसी प्रतीत होती है किसीको नानी प्रतीत होती है किसीको मामी प्रतीत होती है किसीको भूवा प्रतीत होती है किसीको शाली प्रतीत होतीहै किसीको बाहिन प्रतीत होती है किसीको सास प्रतीत होती है किसीको दिवराणी प्रतीत होती है किसीको जिठानी प्रतीत होती है किसीको भौजाई

प्रतीत होती है कि सीको ननद प्रतात होती है सो यह सभी भेद जीवोंके रचेहुए हैं जिस जिस जीवने जैसा रूप रच्या है तिस तिस जीवको तैसा तैसा रूप प्रतीत होता है और शरीरमात्र तो तिसका एक जैसा है ॥

शंका—स्त्रीविषे माता ताई चाची ज्ञान ही भिन्न हैं और ज्ञानोंका विषय जो स्त्रीका स्वरूप है तिसविषे तो भेद नहीं देखाजाता ताते जीवों करके रचित ताई चाची आदिक आकारोंका भेद तुम स्त्रीके शरीर विषे कैसे कहतेहो ? ॥

उत्तर—ज्ञानका भेद तो ज्ञेयके भेदसे विना नहीं बनता जैसे घटज्ञान और पटज्ञानका भेद घटपटरूप ज्ञेयके भेदसे है और जो ज्ञेयके भेदसे विना ज्ञानका भेद होवे तो एक घटरूप ज्ञेयविषे जैसे घटज्ञानको यथार्थता है तैसे उसी घटविषे हाथी घोडा बकरी भेड इन ज्ञानोंकोभी यथार्थता हुई चाहिये सो तो यथार्थता नहीं होती और ईश्वररचित मांस अस्थि रुधिररूप स्त्रीके शरीरविषे पुत्रोंको जो माता ज्ञान होता है और भनेजको जो मासी ज्ञान होता है और भतीजोंको भूवा ज्ञान होता है इसते आदिलेके जो ज्ञान होते हैं सो सभी यथार्थ हैं काहेते जो व्यवहारदशाविषे तिनकी बाधा नहीं होती ताते ईश्वररचित एक स्त्रीके शरीरविषे जो अनेक ज्ञान हैं तिनका विषयभी भिन्न भिन्न चाहिये पुत्रको जो माता ज्ञान है तिसका विषय माता है और भनेजको जो मासीज्ञान है तिस ज्ञानका विषय मासी है सो मासी माताते भिन्न भनेजकरके रचित है और पुत्रको जो माता ज्ञान हुवा है तिस ज्ञानका विषय माता पुत्ररचित है सो माता मासीके स्वरूपते भिन्न है और भतीजेको जो भूवा ज्ञान हुवा है तिस ज्ञानका विषय भूवाका स्वरूप माता और मासीते भिन्न है सो भूवाका स्वरूप भतीजे करके रच्या हुया है ॥

शंका-भ्रम और स्वप्न और मनोराज्य और स्मृति इन चार स्थानोंविषे मनोरचित पदार्थ होते हैं काहेते जो बाहिरले पदार्थोंका अभाव है और जाग्रत्‌विषे जो पदार्थ प्रतीत होते हैं सो तो प्रमाणोंकरके प्रतीत होते हैं ताते तिन पदार्थोंको मनोरचित कैसे कहते हो ताते जाग्रत् अवस्थाविषे प्रत्यक्षआदिक प्रमाणोंकरके जो भान होते हैं माता और मासी और भुवा आदिक पदार्थ सो जीवरचित कैसे कहते हो ? ॥

उत्तर-प्रमाणस्थानाविषे विषयकी सत्ता होती है यह तेरा कथन यथार्थ है ॥

शंका-जो प्रमाणस्थानाविषे विषयकी सत्ता है तो तिस प्रमाणके विषयको मनोरचित कैसे कहते हो ?

उत्तर--प्रमाणका जब विषयके साथ संबंध होता है तब प्रमाण विषयाकार होजाता है ताते पुत्रके नेत्र जब माताके साथ संबंधको प्राप्त होते हैं, तब माताके आकारको प्राप्त होजाते हैं। ताते मातारूप विषय अवश्य मान्या चाहिये सो मातारूप विषय पुत्रकरके रच्या हुया है और साक्षीकरके भासता है और नेत्रोंकरके नहीं भासता जो नेत्रों करके मातारूप विषय भासता तो सब नेत्रोंवालोंको माता प्रतीत होती जैसे नेत्रोंका विषय अस्थि मांस रुधिररूप शरीर एक जैसा सर्व नेत्रोंवालोंको प्रतीत होता है मातारूप विषय तो सर्व नेत्रोंवालोंको एक जैसा नहीं प्रतीत होता और पुत्रके नेत्र जाके मातारूपताको प्राप्त भए हैं ताते पुत्रके नेत्र माताको ग्रहण नहीं करते जैसे घटरूपताको प्राप्त भई जो मृत्तिका है ताते मृत्तिका करके घट ग्रहण नहीं होता और नेत्रोंकरके घट ग्रहण होता है तैसे नेत्र मातारूपताको प्राप्त भये हैं सो नेत्र माताको ग्रहण नहीं करते साक्षीकरके माताका ग्रहण होता है और यह जो

पुत्र कहता है जो मैं माताको नेत्रोंकरके देखता हूं सो पुत्रकी प्रतीति भ्रमरूप है जैसे भ्रमवाला पुरुष कहता है कि; मैं इसने स्थानविषे रूपेको नेत्रोंसे देख्या है पर नेत्रोंसे रूपा तो देख्या नहीं नेत्रोंकरके तो रूपेका अधिष्ठान सीपी देखी है तैसे पुत्रने भी माता कल्पनाका अधिष्ठान ईश्वररचित शरीर नेत्रोंकरके देख्या है और माता नेत्रोंकरके नहीं देखी सो माता साक्षीकरके देखी है इसी करके माता पुत्रकरके रचित है और माताका शरीर ईश्वरकरके रचित है इसीतरह मासी आदिक भनेजों आदिकोंकरके रचित हैं प्रमाणविषयको प्राप्त होके विषयके आकारको प्राप्त होजाता है यह वार्ता उपदेशसहस्रीविषे भाष्यकारोंनेभी कथन करी है जैसे ढल्या हुया तांबा जिसतरहके साँचे विषे ढालिये सो तिसीतरहके आकारको प्राप्त होजाता है जो साँचा गणेशका होता है तो तांबा गणेशके आकारको प्राप्त होजाता है जो साँचा चतुर्भुज विष्णुका होवे तो तांबा चतुर्भुजविष्णुके आकारको प्राप्त हो जाता है तैसे रूपादिकोंको प्राप्त हुया चित्त रूपादिकोंके आकारको प्राप्त होजाता है ॥

शंका--तांबा तो साकार पदार्थ है अग्निआदिकोंकरके ढल्या हुया साँचेविषे ढाल्या हुया साँचेके आकारको प्राप्त होवे पर बुद्धि तो निराकार है और किसीकरके ढलतीभी नहीं सो कैसे रूपादिकोंके आकारको प्राप्त होवे ॥

उत्तर--जैसे निराकार सूर्यका प्रकाश घटादिकोंका प्रकाशक घटादिक पदार्थोंको प्राप्त होयके घटादिकोंके आकारको प्राप्त होजाता है तैसे सर्वपदार्थोंका प्रकाशक निराकार बुद्धिभी सर्वपदार्थोंके आकारको प्राप्त होजाती है और वार्तिककार सुरेश्वराचार्य्यजीनेभी यह अर्थ कथन किया है प्रमाता जो है अधिष्ठान कूटस्थ चैतन्यसहित अंतःकरणविषे चिदाभासरूप तिससे चिदाभाससहित

बुद्धिकी वृत्तिरूप प्रमाणकी उत्पत्ति होती है प्रमातातें उत्पन्न हुया हुया जो प्रमाण है सो घटादिक विषयरूप प्रमेयको प्राप्त होता है और प्रमेयको प्राप्त हुयाहुया सो प्रमेयके आकारको प्राप्त होजाता है ॥

शंका-होवे भाष्यकार और वार्तिककारका ऐसा कथन, पर प्रसंगविषे क्या आया ?

उत्तर-प्रसंगविषे यह विषय आया कि, घटादिपदार्थ दो प्रकारके हैं, एक मृत्तिकाकरके रच्याहुया घट है दूसरा मनकरके रच्याहुया घट है जो मृत्तिकाकरके रच्या हुया घट है सो नेत्रोंकरके नजर आवता है सो ईश्वरकी सृष्टि है और जो मन करके रच्याहुया घट है सो साक्षीकरके नजर आवता है और जीवकी सृष्टि है ॥

शंका-होवे जीवकरके रची हुई और ईश्वरकरके रची हुई दो प्रकारकी सृष्टिपर जीवको बंधनका कारण कौन सृष्टि है जीवसृष्टि है कि, ईश्वरसृष्टिहै यह निर्णय जैसे होवे सो प्रगट करके कहो ॥

उत्तर-जीवकरके रची हुई सृष्टि अन्वयव्यतिरेक प्रमाण करके जीवको बंधनका कारण है अन्वय वह कहता है जिसके हुयां हुयां जो होवे जैसे मृत्तिकाके हुयां हुयां घट होता है तैसे जीवसृष्टिके हुयां हुयां जीवको सुख दुःख होता है । और व्यतिरेक तिसको कहते हैं जिसके न हुयां हुयां जो न होवे, जैसे मृत्तिकाके न हुयां हुयां घट नहीं होता तैसे जीवसृष्टद्वैतके न हुयां हुयां जीवको सुख दुःख नहीं होता तातें यह सिद्ध भया जैसे अन्वयव्यतिरेककरके मृत्तिका घटका कारण है तैसे अन्वयव्यतिरेककरके जीव सृष्टद्वैत जीवको बंधनका कारण है ॥

शंका-यह जो अन्वयव्यतिरेक हैसो ईश्वरसृष्टिकेही जीवको बंधनका कारण क्यों न होवें ? ॥

उत्तर-स्वप्नविषे ईश्वरसृष्टिके अभाव हुयां हुयांभी जीवको सुख दुःखकी प्राप्ति स्वप्नविषे देखीजाती है, सो सुखदुःख जीवद्वैतसेही जीवको प्राप्त भये हैं और समाधि और सुषुप्ति और मूर्च्छा इनविषे ईश्वर द्वैत तो बन्या रहता है पर जीवको सुखदुःखकी प्राप्ति नहीं होती काहेते जो समाधिआदिक अवस्थाओंविषे जीवके द्वैतका अभाव है, ताते अन्वय व्यतिरेककरके जीवद्वैतही सुखदुःखका कारण है ईश्वरद्वैत अन्वयव्यतिरेककरके सुखदुःखका कारण नहीं जीवद्वैतही सुखदुःखका कारण है । इसविषे और दृष्टांतभी श्रवण कर किसीका पुत्र दूरदेशविषे गया हुया सुखसाथ बसता है और किसी झूठ बोलनेवाले पुरुषने तिसके पिताको तिसके घरविषे कहा जो तेरा पुत्र परदेशविषे मरगया है तो तिसका वाक्य सुनकर बडे शोकको प्राप्त होता है तिस शोकका कारण ईश्वररचित पुत्रका मरण तो हैं नहीं काहेते जो ईश्वररचित पुत्र तो मऱ्या नहीं सुखसाथ परदेशविषे बैठ्या है और परदेशविषे पुत्रके मऱ्यां हुयाँ भी घरविषे पिता आदिक हर्षसहित हँसते हैं, ताते यह सिद्ध भया । सब जीवोंको आपोआप रच्या हुया जगत् बंधनका कारण है ॥

शंका-मनकरके रचे हुये जगत्को बंधनका कारण मान्या हुयां हुयां बाहिरले ईश्वररचित जगत्के निषेध करणेते विज्ञानवादकी प्राप्ति होवेगी ॥

उत्तर-मनोरचित जगत्को बंधनकारणताके हुयां हुयां भी ईश्वररचित जगत् तिसका अधिष्ठान अंगीकार करणेते विज्ञानवादकी प्राप्ति नहीं होती जैसे मनोरचित रूपेकी कल्पनाका अधिष्ठान ईश्वररचित सीपी होती है तैसे मनोरचित जगत्की कल्पनाका अधिष्ठान ईश्वररचित शरीर है ॥

शंका–जैसे ईश्वररचित जगत् बंधनका कारण नहीं जीवको तैसे ईश्वररचित जगत् जीवरचित जगत्की कल्पनाका अधिष्ठानभी मत होवे जीवरचित प्रथम प्रथम जगत् उत्तर उत्तर जीवरचित जगत्की कल्पनाका अधिष्ठान क्यों न होवे ताते ईश्वररचित जगत् व्यर्थ भया ॥

उत्तर–ईश्वररचित जगत् व्यर्थ होता है तो व्यर्थ होवे ॥

शंका–जो ईश्वररचित जगत् व्यर्थ भया तो विज्ञानवादीके मत विषे और तुम्हारे मतविषे क्या भेद हुया ? ॥

उत्तर–विज्ञानवादी बाहिरले पदार्थोंका अभाव कहता है सो हम बाहिरले पदार्थोंका अभाव नहीं कहते पर बाहिरले पदार्थोंकी व्यर्थता कहते हैं ताते विज्ञानवादीके मतका और हमारे मतका तो बडा भेद है ॥

शंका–जो ईश्वररचित जगत् सुखदुःखका कारण नहीं व्यर्थ है तो ईश्वररचित जगत् काहेको अंगीकार करणा ॥

उत्तर–प्रमाण वस्तुकी सिद्धिका कारण होते हैं और प्रमाण वस्तुकी सफलता और निष्फलताका कारण नहीं होते यह सर्वशास्त्रकारोंका सिद्धांत है ॥

शंका–मनकरके रचित जगत्ही जो बंधका कारण है तो मनका निरोधरूप योगकरके मनोरचित जगत्का अभाव होजायगा। ताते योगाभ्यासही मेरेताईं किया चाहिये ब्रह्मज्ञानसे मेरा प्रयोजन कुछ नहीं इस प्रश्नका उत्तर कहो ? ॥

उत्तर–योगकरके जगत्का अभाव तितना काल होता है जितना काल योगाभ्यासविषे मन स्थित रहता है और जब योगाभ्याससे उत्थान होता है तब जगत् ज्योंका त्यों प्रतीत होता है ताते भावी

जन्मका अभाव ब्रह्मज्ञानसे विना नहीं होता इसते ब्रह्मज्ञान अवश्य चाहता है ऐसे अनेक श्रुतियां भी कथन करती हैं, एक श्रुति तो यह कहती है । देव जो है स्वप्रकाश परमात्मा तिसके जाननेकरके अविद्यासे आदिलेकर संपूर्ण क्लेशोंका अभाव होजाता है और दूसरी श्रुति यह कहती है शिव परमात्माके जान्या हुयां अत्यंत शांतिकी प्राप्ति होती है । अर्थ यह—जो जन्ममरणआदिक सम्पूर्ण दुःखोंकी निवृत्ति होती है । और तीसरी श्रुति यह कहती है जब कोई पुरुष मृगचर्मकी न्याई आकाशको लपेट लेगा तब ब्रह्मका जानेसे विना भी दुःख निवृत्त हो जावेंगे तात्पर्य यह जैसे मृगचर्मकी न्याई आकाशका लपेटना कभी भी नहीं होता तैसे ब्रह्मज्ञानसे विना दुःखोंकी निवृत्ति भी कभी नहीं होती है ताते अन्वयव्यतिरेक करके ब्रह्मज्ञानते दुःखोंकी निवृत्ति होती है यह वेदांतोंका ढँढोरा है ॥

शंका—बाहिरले द्वैतके न निवारण कियां हुयां अद्वैतब्रह्मज्ञान नहीं उदय होता ताते बाहिरला द्वैत भी निवृत्त किया चाहिये ॥

उत्तर—स्वरूपकरके बाहिरले द्वैतके न निवारण कियां हुयां भी तिस बाहरले द्वैतके मिथ्यारूपताके जाननेकरके अद्वैत ब्रह्मज्ञान होजाता है ताते बाहिरले द्वैतका निवारण निष्प्रयोजन है काहेते महाप्रलयविषे बाहिरले द्वैतके अभाव हुयां हुयांभी अद्वैतब्रह्म नहीं जानाजासकता गुरुशास्त्रआदिकोंके अभाव हुयां हुयां ताते बाहिरले द्वैतका निवारण निष्प्रयोजन है ॥

शंका—बाहिरले द्वैतके विद्यमान हुयां हुयां अद्वैतज्ञान नहीं होता जैसे रात्रिके विद्यमान हुयाँ हुयाँ सूर्य नहीं होता ॥

उत्तर—ईश्वररचित द्वैत ब्रह्मज्ञानका बाधक नहीं तिसकी मिथ्यारूपताके जाननेते ब्रह्मज्ञान हो जाता है वही ईश्वररचित

द्वैत गुरु शास्त्रादिरूप ब्रह्मज्ञानका सहायक है ब्रह्मज्ञानका साधन होनेते और जीवकरके निवारणभी नहीं होय सकता ईश्वरकरके रच्या हुया द्वैत ताते जैसे ईश्वरकरके रच्या हुया है द्वैत तैसा बन्या रहो स्वरूपकरके तिस मिथ्या जाननेकरके और जीवद्वैतके निवारण-करके बंधकी निवृत्ति होती है सो जीवद्वैत दोप्रकारका है एक शास्त्रीय है एक अशास्त्रीय है शास्त्रीयद्वैतको ब्रह्मज्ञानपर्यंत जिज्ञासुने ग्रहण करणा अशास्त्रीयद्वैतके त्यागवास्ते जैसे चरणविषे जो लग्या हुया काँटा है तिसके निकासने वास्ते दूजा काँटा ग्रहण करिये है और तत्त्वज्ञानके हुयाँहुयाँ शास्त्रीयद्वैतकाभी त्याग करणा जैसे चरणके काँटेके निकास्यां हुयाँ हुयाँ दूसरा काँटाभी त्यागदियाजाता है सो शास्त्रीय द्वैत कौन है ऐसा पूछे तो श्रवण कर और आत्मा ब्रह्मका विचार जो है सो शास्त्रीय द्वैत है ॥

शंका-यह जो तुमने कथन किया जो शास्त्रीयद्वैतका त्याग करणा ब्रह्मज्ञानसे पीछे सो वार्ता अयुक्त है काहेते जो श्रुति कहती है मरणपर्यंत और सोनेपर्यन्त वेदांतोंका विचार करे ॥

उत्तर-तत्त्वज्ञानके हुयाँ हुयाँ वेदांतशास्त्रके त्यागको श्रुतियां कथन करती हैं जितना कालपर्यंत रतीभरभी काम क्रोधादिक उदय होते हैं तितना कालपर्यंत वेदांतोंका विचार करणा काम क्रोधादिकोंके दूर करणे वास्ते सो काम क्रोधादिकोंके दूर करणा ब्रह्मज्ञानका साधन है । ताते जिज्ञासुने सोनेपर्यंत और मरणपर्यंत वेदांतोंका विचार करणा और तत्त्ववेत्ताने ब्रह्मतत्त्वको ज्ञानकरके शास्त्रोंका त्याग करदेना ऐसे अनेक श्रुतियां उपदेश करती हैं एक श्रुति ऐसे कथन करती है शास्त्रोंको पढकरके धारणावाली बुद्धिवाला जिज्ञासु तिन शास्त्रोंका वारंवार अभ्यास करे तिस करके परब्रह्मको

जानकरके तिन शास्त्रोंका त्याग कर देवे जैसे भोजनअर्थी भोजनकरके जूंआतियाका त्याग करदेता है और श्रुति कहती है धारणावाली बुद्धिवाला जो जिज्ञासु है सो ग्रंथोंके अभ्यासको करके ज्ञान और विज्ञानके तत्त्वको यथावत् जानकरके धान्योंके परालकी न्याईं ग्रंथोंका त्याग कर देवे जैसे खेतीवाला पकेहुए धान्योंको ग्रहण करके परालको त्यागदेता है और श्रुति कहती है ब्रह्मचर्यआदिक साधनोंकरके संपन्न धैर्यवान् जो जिज्ञासु है सो तिस परब्रह्म आत्माको जानकरके ब्रह्म होनेकी कामनावाला ब्रह्माकार चित्तवृत्तिको करे और बहुत शब्दांत ध्यान न करे और उच्चारणभी न करे काहेते जो बहुत शब्दोंके ध्यानकर मन थकता है और बहुत शब्दोंके उच्चारण करके वाणी थकती है जो मन थक्या तो मनको शांति नहीं प्राप्त होती और जो वाणी थकी तो इंद्रियोंका दमन नहीं होता और जो मन शांत भया और इंद्रियोंका दमन न भया तो सुख कहां है और श्रुति कहती है तिस एक आत्माको जानों और अन्य वाणियोंका त्याग करो एक आत्माका ज्ञानही मोक्षकी प्राप्तिका कारण है जैसे बडे वेगवाली नदीके पारका कारण पुल होता है और श्रुति कहती है वाणीको मनविषे लय करे और मनको बुद्धिविषे लय करे और बुद्धिको सामान्य अहंकारविषे लयकरे और सामान्य अहंकारको शान्तआत्माविषे लयकरे इसते आदिले करके अनेक श्रुतियां ब्रह्मज्ञानते उपरांत शास्त्रोंका त्याग स्पष्ट कहती हैं ताते ब्रह्मज्ञानसे उपरांत शास्त्रीय द्वैतका त्याग करणा और अशास्त्रीय जो द्वैत है सो वह भी दोप्रकारका है तीव्र और मंद, काम क्रोधादिक तीव्र अशास्त्रीय द्वैत है और मनोराज्यरूप मंद अशास्त्रीय द्वैतहै सो दो प्रकारका अशास्त्रीय द्वैत तत्त्वज्ञानसे प्रथम त्यागना काहेते जो तत्त्वज्ञानके साधनोंविषे शम और समाहितता श्रवण करीजाती सो कामक्रोधादिकोंकरके और मनोराज्यकरके शम और समाहि-

तता सिद्ध नहीं होती इसते काम क्रोधादिक और मनोराज्यरूप अशास्त्रीय द्वैत तत्त्वज्ञानसे प्रथम त्यागना और तत्त्वज्ञानसे पश्चात्भी त्यागना जीवन्मुक्तिकी प्राप्तिवास्ते काहेते जो कामक्रोधरूप द्वैत करके बँधे हुएको जीवन्मुक्तिकी प्राप्ति नहीं होती ॥

शंका–जन्ममरणरूप संसारदुःखसे दुखियेको जन्ममरणदुःख दूर करणेवाले ब्रह्मज्ञानकरकेही कृतार्थता है जीवन्मुक्ति न भई तो न होवे ॥

उत्तर–इस लोकके भोगत्यागनेके भयकरके जो तू जीवन्मुक्तिवास्ते कामक्रोधादिकोंका त्याग न करेगा तब स्वर्ग ब्रह्मलोकादिकोंके सुखोंको सुनकरके तू चाहेगा मेरा जन्म भी होवे स्वर्गब्रह्मलोकादिकोंविषे विदेहमुक्तिसे मैंने क्या लेना है ॥

शंका–स्वर्गब्रह्मलोकादिकोंके सुखोंकी मेरेको इच्छा नहीं काहेते जो नाश और अतिशायित दोषोंवाला होनेते ॥

उत्तर–दोषयुक्त होनेते जो स्वर्गादिक त्यागने योग्य हैं तब सम्पूर्ण सुखोंका नाश करणेवाले जो कामक्रोधादिकहैं और सम्पूर्ण दुःखोंके देनेवाले तिनका त्याग तो अवश्य तुझको चाहिये है ब्रह्मतत्त्वको जानकरकेभी ब्रह्मज्ञानके अभिमान करके विधि निषेध शास्त्रका उल्लंघन करके काम क्रोधादिकोंके अधीन होकरके जो तू वर्तेगा तब तेरेको यथेष्टाचरण प्राप्त होवेगा तो यथेष्टाचरणके हुयां हुयां कुत्तोंकी तुल्यता तेरेको प्राप्त होवेगी जैसे कुत्ते काम क्रोधआदिकों करके युक्त हुए हुए अपवित्रपदार्थोंका भक्षण करते हैं तैसे तूभी अपवित्र पदार्थोंको भक्षण करेगा ताते अद्वैत ब्रह्मज्ञानी जो तू है तुझको क्या बडाई प्राप्त भई ॥

शंका–(मूर्खकी) जो काम क्रोधादिकोंके न त्याग कियाँ हुयां

मेरेको कुत्तोंकी तुल्यता होवेगी तो होवे क्या दोष है कुत्तेभी मेरे आत्मा हैं ॥

उत्तर-(मूर्खको हाँसीसहित) तेरे ज्ञानका बडा प्रताप है तिसकी महिमा कुछ कही नहीं जाती काहेते जो संपूर्ण लोक तेरी निंदा पडे करते हैं ज्ञानकी प्राप्तिते पहिले तो तेरेको काम क्रोधादिकोंकाही दुःख था और अब एक लोकोंकी निंदाका दुःख और तुझको अधिक भया ताते तेरे ज्ञानका माहात्म्य बडा है कुछ कह्या नहीं जाता जैसे कोई धनकी प्राप्तिवास्ते धनियोंके पास नौकर जा रहे और तिनका धन चुराके उलटा वहाँसे नाक कान भी कटायके घर आवे सो अवस्था तेरे साथ भई ताते जैसे तिसकी बुद्धिकी चतुराईका अंत नहीं तैसे तेरे ज्ञानका भी अंत नहीं ॥

प्रश्न-(नम्रतासहित) ब्रह्मज्ञानको प्राप्त होके मेरेको क्या किया चाहिये ॥

उत्तर-विष्ठाके भक्षण करणेवाले सूकरादिकोंकी तुल्यता न करनी चाहिये काम क्रोधादिकोंकरके सर्वते उत्तमताका कारण जो ज्ञान है तिस ज्ञानको प्राप्त होयके तू संपूर्ण मनके दोष काम क्रोधादिक त्यागके नारायणकी न्याईं लोकोंकरके पूज्यहो यह तुझको किया चाहिये ॥

प्रश्न-काम क्रोधादिकोंके त्यागका साधन कहो कृपा करके ॥

उत्तर-रागद्वेषका आश्रय जो विषय हैं तिन विषयोंविषे दोषोंके देखणेकरके राग द्वेष दूर होजाते हैं । अर्थ यह-जो काम क्रोधादिक दूर होजाते हैं राग नाम कामका है और द्वेष नाम क्रोधका है सो जिन दोषोंके देखणेकरके रागद्वेष दूर होजाते हैं सो दोष दोप्रकारके हैं एक दोष तो सब विषयोंविषे नाशरूपहै ताते जो विषय नाशरूप है

तिसके विषे राग कियाँ हुयाँ और तिसके नाश हुयां हुयां एक दिन दुःख अवश्य प्राप्त होवेगा ताते सुखकी इच्छावाले पुरुषको विषयों-की कामना न करी चाहिये और दूसरा दोष विषयोंविषे अतिशयता है। अर्थ यह--जो एकते एक विषय अतिसुंदर है ताते विषयोंकी चाहवाले पुरुषको आपणे विषयोंके साथ और पुरुषका अधिक सुंदर विषय देखकरके चित्तविषे ताप उपजता है यह दोष मोक्षशास्त्रोंविषे प्रसिद्ध हैं तिन दोषोंको सूक्ष्मबुद्धिके साथ विचार करके कामक्रोधको त्याग करके सुखी हो ॥

शंका—यदा कारण होनेते काम क्रोधादिकोंका त्याग बनो पर मनोराज्यके करणेविषे तो दोष कोई नहीं ताते मनोराज्यका त्याग करणा क्यों कहते हो ।

उत्तर—मनोराज्य साक्षात् अनर्थका हेतु नहींभी पर परंपरा करके अनर्थोंका हेतु है इसते त्याग्या चाहिये संपूर्ण अनर्थोंका कारण मनोराज्यही है ताते मनोराज्यके करणेसे परमार्थका नाश होजाता है इसी अर्थको गीताके दूसरे अध्यायविषे भगवान् अर्जुनको कहते भये हैं हे अर्जुन ! मनोराज्य विषयोंका करणेवाला जो पुरुष है तिसको विषयोंविषे राग उत्पन्न होता है रागसे कामना उत्पन्न होती है कामना विषे विघ्न उत्पन्न हुयाँ हुयाँ क्रोध उत्पन्न होता है इस प्रकार संपूर्ण अनर्थोंका कारण मनोराज्य है सो मनोराज्य निर्विकल्प समाधि करके जत्या जाता है और निर्विकल्प समाधि हौले हौले सविकल्प समाधिके अभ्यासकरके सिद्ध होती है ।

शंका—अष्टांगयोगवाले पुरुषको सविकल्प समाधिके अभ्यासद्वारा निर्विकल्प समाधि करके मनोराज्यका जीतना होवे पर अष्टांगयोग रहित पुरुषको मनोराज्योंके जीतनेके जो उपाय हैं सो कहो ? ॥

उत्तर–अष्टांगयोगसे रहित जो पुरुष है ज्ञानवान् और संपूर्ण कामक्रोधादिकोंसे रहित है बुद्धि जिसकी सो एकांत देशविषे बैठकरके दीर्घ प्रणवको उच्चारण करता हुयाँ हुयाँ मनोराज्यको जीत लेता है दीर्घ प्रणव कहिये षट्मात्रा द्वादशमात्रा सहित प्रणव और मनोराज्यके जीत्यां हुयां हुयां संपूर्ण वृत्तियोंसे रहित मन गूँगे पुरुषकी न्याईं स्थिररूप होजाता है यह अर्थ वासिष्ठजीने रामजीके ताईं बहुत प्रकार करके कथन किया है हे रामजी! यह जो दृश्य जगत् है सो कदाचित् भी उत्पन्न नहीं भया वंध्याके पुत्रकी न्याईं ऐसे जान करके मनते जब दृश्यकी सत्तारूप मैलका मांजीना सिद्ध होवेगा तब परम निर्वाण रूप सुखकी प्राप्ति होवेगी हे रामजी! चिरकालपर्यंत शास्त्र मैंने विचारे हैं और गुरु जो ब्रह्मा आदिक हैं तिनके पासते भी मैंने श्रवण किये हैं और शिष्योंको अनेक प्रकारों करके शास्त्रोंका उपदेश भी किया है तिस करके यह निश्चय किया है भलीप्रकार वासनाके त्यागरूप मौनते विना उत्तमपदकी प्राप्ति नहीं होती ॥

प्रश्न–सर्ववृत्तियोंसे रहित जो चित्त है तिसको प्रारब्धकर्म करके किसी प्रकार विक्षेपके हुयां हुयां तिस विक्षेपके दूर करणेका उपाय मुझको कृपा करके कहो ॥

उत्तर–तिसका उपाय अभ्यासकी दृढता है अभ्यासकी दृढता करके शीघ्र ही चित्त विक्षेपते रहित होजाता है जिसका चित्त कदाचित् भी विक्षेपको नहीं प्राप्त होता तिसको ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मवेत्ता नहीं कहते किंतु वोह आप ब्रह्मस्वरूप है ऐसे वेदांतवेत्ता मुनीश्वर कथन करते हैं इस अर्थविषे भी वासिष्ठजीके ताईं शिवजीका वाक्य प्रमाण है देवअर्चनाके प्रसंगविषे वसिष्ठजीके ताईं शिवजीने कथन किया है हे ब्राह्मण! जो पुरुष मुझ ब्रह्मको जानता है और मैं ब्रह्मको नहीं जानता इन दोनों व्यवहारोंको त्याग करके आप अद्वय चैतन्यमात्र–

रूप होकरके स्थित होता है सो ब्रह्मज्ञानी नहीं किंतु आप ब्रह्मस्वरूप है इसप्रकार इस ग्रंथविषे ईश्वरद्वैतते भिन्न जीवद्वैत वर्णन किया तिस जीवद्वैतके त्यागनेते जीवन्मुक्तिकी जो परमऔषधि है ज्ञानकी सप्तमभूमिका तिसकी प्राप्ति होती है।

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां चतुर्थं द्वैतविवेकप्रकरणं समाप्तम् ॥ ४ ॥

अथ महावाक्यविवेकप्रकरणम् ५.

॥ ॐ सद्गुरुप्रसाद ॥ ॥ अब पंचमविवेकका प्रारंभ करते हैं तिस पंचम विवेकका नाम "महावाक्यविवेक" है तिसविषे प्रसिद्ध जो हैं चार महावाक्य तिनका अर्थ वर्णन करेंगे. मुमुक्षुको जो मोक्षका साधन जीवब्रह्मका अभेदज्ञान है तिसकी प्राप्तिवासते तिन चारों महावाक्यों-विषे प्रथम महावाक्य ऋग्वेदकी ऐतरेय उपनिषद्विषे कथन किया है तिसके अर्थको श्रवण कर जिस चैतन्यकरके शब्द,स्पर्श,रूप,रस,गंध इन पंच विषयोंको श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, रसना, घ्राणद्वारा जानता है और जिस चैतन्यकरके अनेक प्रकारके शब्दोंको कथन करता है और जिस चैतन्य करके ग्रहण त्याग गमनआदि संपूर्ण व्यापारोंको करता है और जिस चैतन्यकरके अंतःकरणकी जो वृत्तियां हैं संकल्प निश्चय-आदि तिनको जानता है तिस चैतन्यका नाम ब्रह्मवेत्ता प्रज्ञान कहते हैं सोई चैतन्य ब्रह्माके रूपको धारकरके स्थित हुया है सोई चैतन्य इंद्रादिक देवताओंके रूपको धारकरके स्थित हुया है सोई चैतन्य मनुष्यरूपको धारकरके स्थित हुया है सोई चैतन्य घोडेसे आदि लेकर रूपोंको धारकरके स्थित हुया है सोई चैतन्यको आकाशआदिक पंचभूतोंकी कारणरूपताकरके आकाशादि-कोंविषे स्थित है ऐसा जो एकरूप चैतन्य है सर्वविषे सो ब्रह्म

है जिस कारणते सब विषे चैतन्य ब्रह्म स्थित है तिस कारणते मेरेविषेभी चैतन्य ब्रह्म स्थित है अब दूसरा महावाक्य जो है यजुर्वेदका बृहदारण्यक उपनिषद्विषे स्थित तिसका अर्थ श्रवण कर जो परमात्मा परिपूर्णस्वभावकहियेदेशकालवस्तुके परिच्छेदसे रहित है सोई परमात्मा ब्रह्मविद्याका अधिकारी शमदमआदि साधनसंपन्न जो जिज्ञासु है तिसके शरीरविषे स्थित है मन बुद्धिआदिक संपूर्णोंका साक्षी विकारको न प्राप्त होयके संपूर्णोंका प्रकाशक सो अहंशब्दका अर्थ है जो स्वभावकरके देशकालवस्तुपरिच्छेदसे रहित है सो इस महावाक्यविषे ब्रह्मशब्दका अर्थ है अहंशब्द और ब्रह्मशब्द इन्होंकी समानाधिकरणता करके जो बोध है जीवब्रह्मके एकताका तिसको अस्मि यह शब्द जनावता है जिस कारणते ब्रह्म देशकालवस्तुपरिच्छेदसे रहित है तिस कारण करके मैं ब्रह्मको अब तीसरा महावाक्य जो है सामवेदका छांदोग्योपनिषद्विषे स्थित तिसका अर्थ श्रवण कर जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम नामरूपसे रहित जो एक अद्वितीय ब्रह्म होता भया सो ब्रह्म जैसेका तैसा सजातीय विजातीय स्वगतभेदसे रहित स्थित है आजपर्यंत एकरस सो तत्शब्दका अर्थ है जो जिज्ञासु ब्रह्मविद्याके उपदेश वास्ते गुरुके पास आया है तिस जिज्ञासुको गुरु कहते हैं जो तेरास्वरूप है जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति इन तीन अवस्थाओंका प्रकाशक और इन तीन अवस्थाओंसे विलक्षण सो ब्रह्म है जगत्की उत्पत्ति स्थिति लयका कारण और सजातीय विजातीय स्वगतभेदसे रहित सदा निर्विकार एकरस ताते तिस ब्रह्मके साथ आपणी अभेदता अनुभव कर । अब चौथा महावाक्य जो है अथर्ववेदक मांडूक्योपनिषद्विषे स्थित तिसका अर्थ श्रवण कर स्वप्रकाशक अपरोक्ष है यह आत्मा अहंकारसे आदि लेकरके देहपर्यंत संपूर्णोंका साक्षी और अहंकारादिक संपूर्णोंते भिन्न और अहंकारादिक संपूर्णोंते परे सो आत्मा मिथ्यारूप आकाशादि संपूर्ण

जगत्की कल्पनाका अधिष्ठान है सो आकाशादि संपूर्ण जगत्के बाध हुयां हुयां पाछे शेष रहता है तात्पर्य्य अर्थ यह जो हृदय विषे साक्षी प्रकाशमान है स्वप्रकाशताकरके और अपरोक्षरूपताकरके सोई साक्षी संपूर्ण जगत्की कल्पनाका अधिष्ठानरूपता करके स्थितहै और संपूर्ण जगत्के बाध हुयां हुयां बाकी रहता है।

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां पञ्चमं महावाक्यविवेकप्रकरणं समाप्तम् ॥ ५ ॥

अथ चित्रदीपप्रकरणम् ६.

॥ ॐसद्गुरुप्रसाद ॥ दोहा ॥ श्रीमद्गंगारामगुरु, चरणकमलकी भक्ति ॥ जगको चित्रदिखाइके, मेटिदई संशक्ति ॥ अब चित्रदीपका प्रारंभ करते हैं सो चित्रदीप पंचदशीका छठा प्रकरण है तिसविषे जगत्को चित्ररूपकरके वर्णन करेंगे जिस प्रकार चित्रपटविषे चार अवस्था देखीजाती हैं तैसे परमात्माविषेभी चार अवस्था जाननी सो श्रवण कर वस्त्रकी एक अवस्था धौत दूसरी घटित तीसरी लांछित चौथी रंजित तैसे परमात्माकी एक अवस्था चित् दूसरी अंतर्यामी तीसरी सूत्रात्मा चौथी विराट् वस्त्र स्वभावते जो शुद्ध है मायासे रहित सो धौत है और जिसको अन्नलेपनरूप माया लगी है सो घटित है और सूक्ष्म सूक्ष्म आकार जिसको लगे हैं सो लांछित है और जिसविषे काले पीलेआदिक रंगोंकरके मूर्तियें प्रगट कर दीजाती हैं सो रंजित हैं तैसे वास्तव शुद्ध जो परमात्माका स्वरूप है मायाके संबंधसे रहित सो चित् है और मायाके संबंधवाला अंतर्यामी है और अपंचीकृतपंचमहाभूतों-सहित और समष्टि सूक्ष्मशरीरों सहित जो है चिदात्मा सो सूत्रात्मा है और स्थूलप्रपंचसहित जो परमात्मा है सो विराट् है जैसे चित्रपटविषे देवता मनुष्य गौ घोडे आदिक मूर्तियाँ लिखीजाती हैं तैसे ब्रह्मासे

आदिलेकर स्तंबपर्यंत प्राणधारी और पर्वत वृक्षआदि जड यह संपूर्ण चित्रपटविषे चित्रकी न्याईं तिस परमात्माविषे स्थित हैं ब्रह्मासे आदि लेकर जगत् चेतनरूपता करके स्थित है और पर्वतआदिक जडरूपताकरके स्थित हैं। काहेते जो ब्रह्माआदिकोंविषे चिदाभास है और पर्वतादिकोंविषे चिदाभास नहीं जसे चित्रविषे लिखे जो मनुष्य हैं तिन वस्त्राभास भिन्नभिन्न लिखेजातेहैं सो वस्त्राभास आधारभूत वस्त्रके सदृश कल्पिताकिये हैं तैसे परमात्माविषे कल्पे जो प्राणी हैं तिनके भिन्न भिन्न जीवनाम चिदाभास कल्पितकियेहैं सो चिदाभास नामजीव देवता तिर्यक् मनुष्यआदि शरीरोंको धारकरके जन्ममरणको प्राप्त होते हैं और परमात्मा निर्विकार जन्म मरणको प्राप्त नहीं होता और जो वादी और लोक कहते हैं जो परमात्माही जन्ममरणको प्राप्त होता है सो परमात्माके अज्ञानकरके कहते हैं इस विषे दृष्टांत श्रवण कर-जैसे चित्रके देवतामनुष्यआदिकोंके वस्त्रोंविषे रक्तपीतादि जो रंग हैं तिनको मूढ आधाररूप वस्त्रविषे कहते हैं पर वह आधाररूप वस्त्रविषे नहीं किंतु वस्त्राभासोंविषे हैं तैसे जन्ममरणरूप संसार चिदाभासोंविषे है परमात्मा विषे नहीं और मूर्ख अज्ञानी परमात्माविषे कल्पित करते हैं इस प्रकार परमात्माविषे जो आरोपित संसार है सो ब्रह्मज्ञान करके दूर होता है काहेते जो अज्ञानकरके उत्पन्न हुयां हुयां है संसार सत्यरूप है और परमात्माविषे लग्याहुया है यह जो भ्रम है इसका नाम अविद्या है और अज्ञानभी है तिस अज्ञानकी ज्ञानकरके निवृत्ति होती है सो ज्ञान कौन है जो ऐसा पूछे तो श्रवण कर चिदाभासविषे जन्ममरण हैं और रागद्वेष हैं असंगकूटस्थ निर्विकार परमात्माविषे जन्ममरण और रागद्वेषादि नहीं इस दृष्टिका नाम बोध है और इसीका नाम ब्रह्मविद्या है सो ब्रह्मविद्या विचारसे प्राप्त होती है ताते मुमुक्षु सदा जीव और जगत् और परमात्माका विचार करे ॥

शंका-परमात्माका विचार तो किया चाहिये है काहेते जो परमात्मा फलरूपताकरके मोक्षअवस्थाविषेभी विद्यमान है और मिथ्यारूप जीव और जगत्का विचार करणा व्यर्थ है ॥

उत्तर-जीव और जगत्का निषेधकरके परमात्माकी अद्वैतरूपताकी सिद्धिके वास्ते जगत् और जीवकाभी विचार किया चाहिये ॥ जगत् और जीवके विचार कियेते बिना जगत् और जीवकी मिथ्यारूपता निश्चय नहीं होती और जगत् और जीवकी मिथ्यारूपताके निश्चय कियेते विना परमात्माकी अद्वैतरूपताका निश्चय नहीं होता। ताते जगत् और जीवके बाधके वास्ते और परमात्माकी शेषरूपताके वास्ते सदा ही जीव और जगत् और परमात्मा इन तीनोंका विचार करणा ॥

शंका--विचार करके जीव और जगत्के बाध हुयां हुयां जीव और जगत्की प्रतीति न होवेगी जीव और जगत्की प्रतीति न हुई तो तत्त्ववेत्ताका सर्व व्यवहार लोप हुआ चाहिये।

उत्तर--बाधशब्दका यह अर्थ नहीं जो जीव और जगत्की प्रतीति न होनी किंतु बाध शब्दका अर्थ यह है जगत् और जीवको मिथ्या जानना और जो ऐसा तू हठ करे, जगत् और जीवकी जो न प्रतीति होनी इसीका नाम बाध है. तब सुषुप्ति और मूर्छाआदिक अवस्थाओं विषे जीव और जगत्की प्रतीति तो नहीं होती ताते विनाही ब्रह्मज्ञानते सुषुप्तिवाले और मूर्च्छावाले पुरुषकी मोक्ष हुई चाहिये ब्रह्मज्ञानके वास्ते यत्न किसीने काहेको करणा है सो तो यह वार्त्ता नहीं होती काहेते जो ब्रह्मज्ञानसेही मोक्ष होती है ॥ और परमात्माकी सत्यरूपताका जो निश्चय है सोई परमात्माकी शेषता है ॥ और जगत्को भूलजाना यह परमात्माकी शेषता नहीं. जो जगत्का भूलजाना ही

परमात्माकी शेषता होवे तो जीवन्मुक्ति न सिद्ध होवेगी काहेते जो जगत्का सर्वथा भूलजाना तो विदेहमुक्तिमेंही सिद्ध होता है ॥

शंका-सदा विचार करणा। इस तुम्हारे कहनेते यह प्रतीत होता है जो मरणपर्यंत विचार करणा ॥

उत्तर-यह हम नहीं कहते जो मरणपर्यंत विचार करणा किंतु क्या कहते हाँ अपरोक्षब्रह्मज्ञानकी प्राप्तिपर्यंत विचार करणा, जैसे तृप्तिपर्यंत भोजन कियाजाता है सो ब्रह्मज्ञान विचारजन्य दो प्रकारका है एक परोक्ष दूसरा अपरोक्ष अपरोक्षब्रह्मज्ञानकी प्राप्ति हुयां विचार समाप्त होजाता है। अर्थ यह--जो आगे फेर विचार करणा नहीं रहता है ब्रह्म जगत्का कारण ऐसा जो ज्ञान है सो परोक्ष ज्ञान है। और सर्व जगत्का कारण मैं हौं ऐसा जो ज्ञान है सो अपरोक्षज्ञान है तिस अपरोक्ष आत्मज्ञानकी सिद्धिके वास्ते विचार किया चाहिये है जिस ज्ञानकरके यह पुरुष ज्ञानकी प्राप्ति समकालही सर्वसंसारसे मोक्षको प्राप्त होजाता है सो विचारका स्वरूप श्रवणकर-यह कह परमात्मा व्यवहारदशाविषे चार रूपको प्राप्त होता है एक कूटस्थ दूसरा ब्रह्म तीसरा जीव चौथा ईश्वर जैसे एक आकाश चार रूपोंको प्राप्त होता है। एक घटाकाश दूसरा महाकाश तीसरा जलाकाश चौथा मेघाकाश घटावच्छिन्न जो आकाश है सो घटाकाश है। अर्थ यह-जो घटके अंतर आकाश है सो घटाकाश है। और जो घटके बाहिर आकाश है। सर्व पदार्थोंको अवकाश देनेवाला सो महाकाश है और घटके अंतर्गत जो घटावच्छिन्न आकाश है तिसके विषे जो जल है तिस जलविषे जो प्रतिबिंब भावना प्राप्त भया है बद्दल और तारों सहित आकाश सो जलाकाश है ॥ और महाकाशके बीच जो नजर आवता है मेघमंडल तिस मेघमण्डल विषे जो जल है तिस जलविषे जो आकाशका प्रतिबिंब है सो मेघाकाश है ॥

शंका–मेघमंडलविषे जल तो प्रतीत नहीं होता ताते तिसविषे आकाशका प्रतिबिंब कैसे कहते हो ॥

उत्तर–मेघमंडलविषे जो जल है सो यद्यपि प्रत्यक्षकरके प्रतीत नहीं होता तोभी मेघमंडलसे वर्षा प्रत्यक्ष प्रतीत होती है ॥ ताते तिस वर्षाका कारणरूप जल बर्फकी न्याई जम्या हुयां मेघमंडलविषे स्थित है जिस कारणते जल स्थित है तिस कारणते तिसविषे आकाशका प्रतिबिंबभी पडता है ताते यह सिद्ध भया ॥ मेघमंडलमें जो जल है सो आकाशके प्रतिबिंबवाला है जल होनेते जैसे घटविषे जल आकाशके प्रतिबिंबवाला है ताते मेघाकाश सिद्ध भया. इस प्रकार दृष्टांतरूप आकाशके चार भेद सिद्ध किये ॥ अब दार्ष्टांतविषे जो चैतन्यके चार भेद हैं तिनाविषे प्रथम कूटस्थका स्वरूप श्रवण कर ॥ पंचीकृत जो महाभूत हैं तिनका कार्य जो स्थूलशरीर है और अपंचीकृत महाभूतोंका कार्य जो सूक्ष्म शरीर है अविद्याकल्पित तिन दोनों शरीरोंका अधिष्ठानता करके दोनों शरीरोंकरके जो अवच्छिन्न चैतन्य है कूटस्थकी न्याईं निर्विकार स्थित सो कूटस्थ है कूटनाम अहिरणका है ॥ कूटस्थविषे कल्पित बुद्धिमें जो चैतन्यका प्रतिबिंब है सो जीव है प्राणोंके धारणेते सो जीव जन्म मरण रागद्वेषरूप संसारको प्राप्त होता है ॥

शंका–प्राणोंके धारणेवाला जीव तो प्रतीत होता है । और तिस जीवते भिन्न कूटस्थ नहीं प्रतीत होता ताते कूटस्थ है नहीं ॥

उत्तर–जीवने कूटस्थको आच्छादितकर रक्खा है इसते कूटस्थ नहीं प्रतीत होता जैसे जलाकाश करके आच्छादित किया हुया घटाकाश नहीं प्रतीत होता ॥

शंका-यह जो जीवकरके आच्छादन कूटस्थका तुम कथन करते हो सो शास्त्रोंविषे तो कहीं कथन नहीं किया इसते स्वकपोलकल्पित प्रमाण नहीं ॥

उत्तर-चिदाभास करके जो कूटस्थका आच्छादित होना है इसको शारीरकभाष्यादिकोंविषे अन्योन्याध्यास नाम करके कथन किया है ताते स्वकपोलकल्पित नहीं ॥

शंका-जो इसीका नाम अन्योन्याध्यास है तो इस अध्यासका कारणरूप अविद्या कथन करी चाहिये ॥

उत्तर-संसारदशाविषे यह जीव आपणेसे भिन्न कूटस्थको कदाचित् नहीं जानता ॥ ऐसा जो अनादि अविवेक है सो मूलविद्या कथन करी है ॥ १ ॥ सो अविद्या दो प्रकारकी है ॥ विक्षेपरूप और आवरणरूप कूटस्थ है नहीं और प्रतीत भी नहीं होता इस व्यवहारका कारण आवरण है ॥

शंका--अविद्या और अविद्याका कार्यरूप आवरणविषे क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर-विद्या और अविद्याके कार्य आवरणविषे अज्ञानी जीवका अनुभव प्रमाण है सो जिसप्रकार है सो प्रकार श्रवण कर किसी एक स्थानविषे ज्ञानवान्‌ने अज्ञानीको पूछ्या जो तू कूटस्थकूं जानता है तब अज्ञानी कहता भया मैं कूटस्थको नहीं जानता तब यह अज्ञानीका अनुभव अज्ञानको जनावता है कूटस्थविषे ऐसे अज्ञानके अनुभवको जनायके अज्ञानी चुप नहीं करता क्या कहता है कूटस्थ है नहीं जिसते मेरेको नजर नहीं आवता यह जो अज्ञानीका कथन है सो कूटस्थविषे असत्तापादक और अभानापादक आवरणको जनावता है इस कारणते अविद्या और तिसका कार्य आवरण इन दोनोंविषे अज्ञानीका अनुभव प्रमाण है ॥

शंका–तेरे मतविषे आत्माको स्वप्रकाश होनेते तिसविषे अविद्या नहीं बनती काहेते जो स्वप्रकाश और अविद्याका संबंधही परस्पर विरुद्ध स्वभाव होणेते सूर्य और अंधकारकी न्याईं नहीं बनता अविद्याके अभाव हुयां हुयां अविद्याका कार्य आवरणभी नहीं बनता आवरणके अभाव हुयां हुयां आवरण है मूल जिसका ऐसा जो है विक्षेप सो भी नहीं बनता ॥ और विक्षेपके अभाव हुयां हुयां ज्ञान करके निवृत्ति होणेके योग्य अनर्थ कोई न भया ताते ज्ञानको व्यर्थता प्राप्त भई ज्ञानको व्यर्थ हुयां हुयां ज्ञानप्रतिपादक वेदान्तशास्त्रकी व्यर्थता प्राप्त भई ॥

उत्तर–इन सम्पूर्ण तेरी तर्कोंकी समृद्धिको अज्ञानीका अनुभव भक्षण करजाता है काहेते जो अज्ञानी आपणे अनुभव करके अविद्या और आवरण दोनों कूटस्थविषे देख लिये हैं ताते अनुभव सिद्ध अर्थ विषे तेरे तर्कोंकी व्यर्थता है ॥

शंका–अनुभवमात्रकरके तो किसी अर्थकी सिद्धि नहीं होती जो अनुभवमात्रसे कोई वस्तु सिद्ध होवे तो सूर्यभी गिठमात्र सिद्ध हुआ चाहिए किंतु अबाधित अनुभव करके वस्तुकी सिद्धि होती है और सूर्यका जो गिठमात्र अनुभव है सो बाधित है काहेते जो गिठमात्र होता तो ब्रह्मांडको कैसे प्रकाशता तैसे अज्ञानीका जो अनुभव है अविद्या और आवरणका जनावनेवाला सो भी बाधित है मैंने जो कथन कर्या है पीछे तर्क तिनके साथ विरोध होनेते ताते तिस अनुभव आभास करके तत्त्वनिश्चय नहीं होता ॥

उत्तर–जो अनुभवकी प्रमाणता न अंगीकार करेगा तो केवल तर्क तो निश्चयका कारण नहीं होता यह वार्ता तो तू आपही अंगीकार करता है ताते कहींभी तेरेको तत्त्वका निश्चय न होवेगा काहेते जो

अनुभव विषे तो तेरेको विश्वास है नहीं और तर्कविषे अनवस्था होती है सो तिस अनवस्थाका यह रूप है एक तर्कविषे दूसरी तर्क दूसरी तर्कविषे तीसरी तर्क तीसरी तर्कविषे चौथी तर्क इसीतरह आगे आगे तर्ककी प्रवृत्ति होती है ॥

शंका--यद्यपि अनुभव तत्त्वनिश्चयका कारण है तोभी अनुभवका विषय जो पदार्थ है बुद्धिविषे तिसकी संभावनाकी दृढताके वास्ते तर्कभी चाहती है।

उत्तर-जो इसप्रकार तर्ककी इच्छा है तब आपणे अनुभवके अनुसार तर्क करी चाहिये आपणे अनुभवसे विरुद्ध तर्क न करी चाहिये ताते जो पीछे अज्ञानाक अनुभव करके साध्या है अविद्या और आवरण तिस अनुभवके अनुसार तर्क वर्णन करी चाहिये सो तर्क कौन है ऐसा पूछे तो श्रवण कर कूटस्थ चैतन्य और अविद्याका परस्पर विरोध नहीं जैसे काष्ठोंविषे सामान्यरूप जो अग्नि है तिसका अंधकारके साथ विरोध नहीं और जो कूटस्थ चैतन्य भा अज्ञानी और आवरणका विरोधी होवे तो अज्ञान आवरणकी स्थिति किसके आसरे होवे और प्रतीति किसकरके होवे काहेते जो कूटस्थभिन्न न कोई अधिष्ठान होय सकता है न प्रकाशक होय सकता है ताते अविद्या और आवरणका अधिष्ठान और प्रकाशक जो कूटस्थ चैतन्य है सो अविद्या और आवरणका विरोधी नहीं यह जो तर्क है सो अनुभवके अनुसार है जो कूटस्थ चैतन्य अविद्या और आवरणका विरोधी नहीं यह जो तर्क है सो अनुभवके अनुसार है जो कूटस्थ चैतन्य अविद्या और आवरणका विरोधी नहीं तो कौन अविद्या और आवरणका विरोधी है जो ऐसा पूछे तो श्रवण कर अविद्या और आवरणका विरोधी विवेक है जो ऐसा पूछे तो श्रवण कर अविद्या और आवरणका विरोधी विवेक है जहाँ जहाँ विवेक है तहाँ तहाँ अविद्या और आवरण

नहीं रहता जैसे ज्ञानी विषे अविद्या करके आवरण हुआ जो कूटस्थ है उस विषे देह दोनों सहित चिदाभास अध्यस्त है सो विक्षेपाध्यास है जैसे सीपीविषे रूपेका अध्यास है जैसे इदंता और सन्मुख देशके साथ संबंध है तो सीपीका और भासता है सीपीविषे कल्पित संबंध रूपेका और अबाधरूप सत्ता है तो सीपीमें और भासती है कल्पित रूपेमें तैसे स्वयंता और वस्तुता है तो अधिष्ठान कूटस्थ विषे और भासते हैं कल्पित चिदाभासविषे और जैसे सीपीकी नील पृष्ठता और त्रिकोणता आच्छादितकीगई है तैसे कूटस्थकी असंगता और आनंदता आच्छादित कीगई है और जैसे सीपीविषे कल्पित पदार्थका नाम रूप है तैसे कूटस्थ चिदात्मा विषे कल्पित चिदाभासका नाम अहं है।

शंका-दृष्टांत जो सीपी है तिसके साथ नेत्रोंके संबंध हुयां हुयां रूपेका अभिमान जीवोंको उत्पन्न होता है और दार्ष्टांतविषे तो आत्मासे भिन्नवस्तुका अभिमान नहीं होता ताते दृष्टांत दार्ष्टांतते विषम है॥

उत्तर-स्वप्रकाशता करके आत्माके प्रकाशमान हुयां हुयां भी जिसको स्वप्रकाश आत्मरूप नहीं मानता अहं ऐसे मानता है इसते दृष्टांत दार्ष्टांतकी विषमता नहीं काहेते जो सीपीरूप दृष्टांतविषे देखता है इदम अंशको और मानता है रूपेको तैसे दार्ष्टांतविषे स्वयंको देखता है और अहंको मानता है जैसे इदं समान है और रूपा विशेष है रूपे और इदंताकी एकता नहीं तैसे स्वयं और अहंकी एकता नहीं स्वयं सामान्यरूप है और अहं विशेषरूप है जो बहुव्यापक होता है सो सामान्य है और जो अल्पव्यापक है सो विशेष है सो स्वयं बहुव्यापक है काहेते जो लोक ऐसा कथन

करते हैं देवदत्त स्वयं कुरुक्षेत्रको जाता है और तू स्वयं देख अहं स्वयं समर्थ नहीं इस प्रकार देवदत्त और तू और अहं इन संपूर्णों विषे स्वयंव्यापक सिद्ध भया ताते स्वयं सामान्य है और अहं देवदत्त और त्वंविषे व्यापक नहीं इसते विशेष है जैसे इदं रजतं इदं वस्त्रं इदं जलं इन संपूर्णोंविषे इदं व्यापक है ताते सामान्य है और रजत व्यापक नहीं इसते विशेष है जैसे इदं और सामान्य विशेष रूपता करके रजतका भेद है तैसे स्वयं और अहंकारकाभी सामान्य विशेष रूपता करके भेद है ॥

शंका-लोकविषे स्वयं और अहंका भेद होवे पर तिस करके कूटस्थ आत्माविषे क्या आया।

उत्तर--जो सामान्य रूप स्वयं है सोई कूटस्थ यह वार्ता सिद्ध भई॥

शंका-स्वयंस्वरूप धर्म अन्यताका निवारण करनेवाला है और कूटस्थताका बोध नहीं करावणेवाला है ॥

उत्तर-स्वयं स्वरूप धर्म करके अन्यताका निवारण जो होता है सो यथार्थ है काहेते जो अन्यताका निवारण आत्माविषे होता है सो आत्मा कूटस्थ है ताते स्वयं कूटस्थ है यह सिद्धभया ॥

शंका-स्वयं शब्दकी प्रवृत्तिका निमित्त भिन्न है और आत्मशब्दकी प्रवृत्तिका निमित्त भिन्न है इसते स्वयंशब्द और आत्मशब्द एक अर्थको कथन नहीं करते जैसे गौशब्द और घोडा शब्द ताते स्वयं शब्दके अर्थ कूटस्थको आत्मता कैसे कहते हो ॥

उत्तर-स्वयंशब्द और आत्मशब्दकी प्रवृत्तिका निमित्त भिन्न नहीं हस्त और कर आदिक शब्दोंकी न्याईं पर्यायता है इसी कारणते लोकविषे स्वयं और आत्म शब्दका उच्चारण इकट्ठा नहीं करते ताते यह सिद्ध भया जैसे आत्मशब्द अन्यताका निवारण करता है तैसे

स्वयं शब्दकी अन्यताका निवारण करत है ताते स्वयंशब्द और आत्मशब्द एक अर्थको कथन करते हैं इन दोनोंके अर्थका भेद नहीं।

शंका-घट जो है सो स्वयं नहीं जानता ऐसा लोक कथन करते हैं ताते अचेतन घटादिकोंविषे स्वयं शब्द देखनेते स्वयं और आत्मा इन दोनोंकी एकता नहीं बनती॥

उत्तर-अचेतन घटादिकों विषे भी स्फुरणरूपता करके आत्माकी चेतनका विद्यमान है ताते घटादिकोंविषे स्वयं शब्दका कथन विरुद्ध नहीं॥

शंका-घटादिकों विषे भी आत्माकी चेतनताके विद्यमान हुयां हुयां घटादिकों विषे अचेतन व्यवहार न हुया चाहिये और जीवके पुरुष विषे घटादिकोंकी न्याईं अचेतन व्यवहार हुया चाहिये॥ ऐसे तो लोकों विषे व्यवहार नहीं देखाजाता किंतु घटविषे चेतन व्यवहार देखाजाता है। और जीवके पुरुषविषे चेतनव्यवहार देखाजाता है सो व्यवहार निर्निमित्तक तुम्हारे मतविषे होवेगा॥

उत्तर-चेतन अचेतन यह जो विभाग है, सो निर्निमित्तक नहीं किंतु बुद्धिसहित चिदाभास जहाँ है तहाँ चेतन व्यवहार होता है और जहाँ बुद्धि सहित चिदाभास नहीं तहाँ अचेतन व्यवहार होता है और कूटस्थ आत्मा जो है सो चेतन और अचेतन दोनोंविषे समवस्थित है ताते कूटस्थ आत्मा चेतन और अचेतन विभागका निमित्त नहीं॥

शंका-जो कूटस्थ आत्मा चेतन और अचेतन विभागका कारण नहीं और बुद्धि सहित चिदाभास होना और न होना चेतन और अचेतन विभागका कारण है तो अचेतनोंविषे कूटस्थका अंगीकार करणा व्यर्थ है॥

उत्तर-अचेतनोंविषे जो कूटस्थ आत्माको हम मानते हैं सो चेतन अचेतन विभागकी कारणरूपता करके नहीं मानते किंतु अचेतनोंकी कल्पनाका अधिष्ठानरूपताकरके कूटस्थ आत्माको अचेतनोंविषे हम मानते हैं जैसे चेतनरूपकरके प्रतीत होता जो है चिदाभास सो कूटस्थविषे भ्रमकरके कल्पित है तैसे चेतन घटादि भी कूटस्थविषे भ्रमकरके कल्पित हैं ॥

शंका-जैसे स्वयं शब्दको त्वं अहं घटादिकोंविषे सर्वत्र व्यापक होनेते तिसके अर्थको आत्मता है तैसे तत्शब्द और इदं शब्दके अर्थको भी आत्मता सर्वत्र व्यापक होणेते हुई चाहिये ॥

उत्तर-तत् शब्द और इदं शब्दका अर्थ स्वयं शब्दके अर्थकी न्याई यद्यपि त्वं और अहं आदिकोंविषे व्यापक है तो भी तिनविषे वर्त्तमान जो है आत्मता तिसविषे भी तत् शब्द और इदं शब्द वर्त्तता है ताते आत्मत्वकी अपेक्षा करके अधिकविषे वर्तनेवाला भया काहेते जो आत्मत्व आत्मत्वविषे नहीं वर्तता और तत् शब्द आत्मत्वमें वर्त्तता है और इदं शब्दभी आत्मत्वमें वर्त्तता है तत् आत्मत्वं इदं आत्मत्वं ऐसे व्यवहारके देखनेते ताते तत् शब्दके अर्थको और इदं शब्दके अर्थको आत्मता नहीं बनती जैसे सम्यक्त्व और असम्यक्त्वको सर्वत्र व्यापकताके हुयां हुयां भी आत्मता नहीं बनती काहेते जो आत्मतामेंभी सम्यक्त्व और असम्यक्त्वकी प्राप्ति है देह आदिकोंकी आत्मता जो है सो असम्यक् है और प्रत्येककी आत्मता जो है सो सम्यक् है ताते लोकविषे तत् और इदं जैसे परस्पर विरुद्ध प्रसिद्ध हैं जो तत् होता है सो इदं नहीं होता और जो इदं होता है सो तत् नहीं होता तत् नाम है परोक्षका और इदं नाम है अपरोक्षका और जैसे त्वं और अहं एक लोक विषे परस्पर विरुद्ध प्रसिद्ध हैं त्वं अहं नहीं होता और अहं त्वं नहीं

होता तैसे स्वयं और अन्य परस्पर विरुद्ध हैं इसविषे संशय नहीं स्वयं नाम है आपणे आपका सो कदाचितभी अन्य नहीं होता और जो अन्य है अर्थ यह--जो आपणे आपते भिन्न है सो आपणा आप कदाचित् नहीं होता ताते यह सिद्ध भया अन्यताका विरोधी जो है स्वयं सो कूटस्थ है तिस कूटस्थाविषे त्वंताका विरोधी अहं कल्पितहै इसप्रकार अहं शब्दका अर्थ जो है जीव और स्वयं शब्दका अर्थ जो है कूटस्थ तिन दोनोंका भेद अत्यंत प्रत्यक्ष है और अज्ञानी मूर्ख तिन दोनोंकी एकताको जानते हैं जिसकारणते बुद्धिके साक्षी कूटस्थको बुद्धि करके प्रत्यक्ष करणेको कोई भी समर्थ नहीं होता इसीकारणते अहं और स्वयं ऐसे प्रतीत होते जो हैं जीव और कूटस्थ तिन दोनोंकी अज्ञानी एकताको मानते हैं भ्रमकरके जैसे रूपे और इदंता भेद प्रगट है पर अज्ञानी इन दोनोंकी एकताका भ्रम करके मानते हैं ॥

प्रश्न-जीव और कूटस्थकी एकतारूप भ्रमका कारण कौन है? ॥

उत्तर-इस भ्रमका कारण तादात्म्याध्यास है सो वह अध्यास अविद्याका किया हुया है सो अविद्या अविवेकरूप है और विवेक करके अविद्याकी निवृत्ति होणेते अध्यासकी निवृत्ति होती है ॥

शंका-अविद्याकी निवृत्ति करके अविद्याका कार्य होणेते तादात्म्याध्यास निवृत्त होता है यह तुम्हारा कहना अयुक्त है काहेते जो ब्रह्म और आत्माकी एकताके ज्ञानकरके अविद्याके नाश हुयां हुयां भी ज्ञानवान्का शरीरआदिक अविद्याका कार्य देखाजाता है और जो अविद्याके नाश हुयां हुयां अविद्याका कार्य नाश होवे तो ज्ञानवान्का शरीरभी नाश होवे, ताते शरीरके नाश हुयां हुयां जीवनमुक्ति सिद्ध न होवेगी, ताते जैसे ज्ञानवान्के शरीरका नाश ज्ञानकरके नहीं होता तैसे तादात्म्याध्यासका भी ज्ञान करके नाश नहीं होता ॥

उत्तर–आवरण और तादात्म्याध्यासका ज्ञान करके नाश होजाता है काहेते जो यह दोनों अविद्या एक करके ही उत्पन्न हुई हैं और विक्षेपरूप जो चिदाभास है और कर्मसहित यह शरीर विद्याका कार्य है ताते जितने काल कर्म है तितने काल अविद्याके नाश हुयां हुयां भी शरीरका नाश नहीं होता. और प्रारब्धके क्षय हुयाँ हुयाँ शरीरका नाश होता है ताते जितना काल कर्म है तितना कालपर्यंत ज्ञानकी प्राप्तिसे अनंतर अविद्याके नाश हुयां हुयां जीवनमुक्ति सिद्ध होती है ॥

शंका–प्रारब्ध तो शरीर आदिकोंविषे निमित्त कारण है उपादान कारण नहीं उपादान कारण तो अविद्या है जैसे घटका उपादान कारण मृत्तिका है और निमित्त कारण कुलाल है और कुलालके विद्यमान हुयाँ हुयाँ जैसे घट स्थित नहीं रहता तैसे प्रारब्धकर्मके विद्यमान हुयाँ हुयाँ और अविद्याके नाश हुयाँ हुयाँ शरीरकी स्थिति नहीं हुई चाहिये ॥

उत्तर–जैसे नैयायिकोंके मत विषे उपादानके नाश हुयाँ हुयाँ भी क्षणमात्र कार्यकी स्थिति होती है तैसे अविद्याके नाश हुयाँ हुयाँ शरीर आदिकोंकी स्थिति होती है ॥

शंका–नैयायिक उपादानके नाश हुयाँ हुयाँ क्षणमात्र कार्यकी स्थिति मानते हैं बहुत काल नहीं मानते और तुम तो बहुत काल शरीर आदिकोंकी स्थिति मानते हो सो नहीं बनती ॥

उत्तर–वस्त्रका उपादान जो तंतु हैं सो थोडे कालके लिये हैं ताते तिनके नाश हुयाँ हुयाँ कार्य जो है वस्त्र सो क्षणमात्र ही स्थित रहता है और संसारभ्रमता अनंत कल्पोंका अनादि चल्या आवता है ताते तिसके योग्य क्षणही मानना चाहिये ॥

शंका-नैयायिकोंने यों उपादानके नाश हुयाँ हुयाँ क्षण स्थिति कार्यकी मानी है सो अयुक्त है तैसे तुमभी उपादान अविद्याके नाश हुयाँ हुयाँ जो स्थिति देहआदिकोंकी मानते हो सो भी अयुक्त है ॥

उत्तर-नैयायिक जो मानते हैं उपादानके नाश हुयाँ हुयाँ कार्यकी स्थिति क्षणमात्र सो अयुक्त है काहेते जो विचार देशहारणवाले प्रमाणते विनाही आपणी मूर्खता करके मानरक्खी है और हम तो श्रुतियां और युक्तियां और अनुभवरूप प्रमाणोंको लेकरके कथन करते हैं ताते हमारा कथन यथार्थ है सो श्रुति छांदोग्य उपनिषद्की है सो यह कहती है ज्ञानवान्को तितने कालही विदेहमुक्तिविषे देर है जितने काल प्रारब्धकर्म क्षय नहीं होता प्रारब्ध कर्मके क्षय हुयाँ हुयाँ ज्ञानवान् विदेहमुक्तिको प्राप्त होता है ताते इस श्रुति करके यह सिद्ध भया जो ज्ञान करके अज्ञानके नाश हुयाँ हुयाँ भी प्रारब्ध कर्म करके शरीरकी स्थिति होती है और युक्ति नाम दृष्टांतका है सो जैसे कुलालके चक्रके भ्रमणका कारण कुलालका यत्न है सो तिस यत्नके नाश हुयाँ हुयाँ भी कुलालका चक्र भ्रमता है तैसे अविद्याके नाश हुयाँ हुयाँ भी शरीरकी स्थिति होती है और ज्ञानवानोंके अनुभव करकेभी शरीरकी स्थिति प्रसिद्ध है ताते खोटी तर्कोंके करणेवाले जो नैयायिक हैं तिनके साथ बहुत विवाद करणेकी इच्छा नहीं ताते वह विवाद यहांका यहांही स्थित रहो. अब जो प्रसंग है तिसको कथन करते हैं स्वयं शब्दका अर्थ जो है निर्विकार कूटस्थ और अहंशब्दका अर्थ जो है विकारी चिदाभास तिनकी एकता भ्रम करके सिद्ध है ॥

शंका-जो कूटस्थ और जीवकी एकता भ्रमसिद्ध है तो इसको संपूर्ण शास्त्रोंवाले और लोक भ्रमसिद्ध क्यों नहीं जानते इसमें कारण क्या है ? ॥

उत्तर-संपूर्ण शास्त्रोंवाले और संपूर्ण लोक तो मूर्ख हैं पर आपणे

आपको पंडित मान रहे हैं तिस कारणते श्रुतियोंके तात्पर्यसे रहित हुए केवल युक्तिको आश्रयकरके मूर्खता करके परे भ्रमते हैं ॥

शंका–श्रुतियोंके अर्थके कथन करणेवालेभी कोई एक इसप्रकार करके किस कारणते नहीं जानते ॥

उत्तर–जो पुरुष कूटस्थ और चिदाभासकी एकताको भ्रम सिद्ध नहीं जानते तिनको आदिसे लेकर अंतपर्यंत श्रुतियोंके अर्थका ज्ञान नहीं ताते लज्जासे रहित हुए हुए वाक्याभासोंको आपआपणे मतोंके अर्थ विषे जोडते हैं सो तिन अज्ञानियोंके मत अनेक हैं तिनमें अतिस्थूल बुद्धिवाले जो देहआत्मवादी हैं एक प्रत्यक्षप्रमाणके अंगाकार करणेवाले तिनके मतको प्रथम कथन करते हैं सो श्रवण कर–देहआत्मवादी और पामर, कूटस्थसे आदि लेकरके स्थूल शरीरपर्यंत जो संघात है तिसीको आत्मा मानते हैं प्रत्यक्षाभासको आश्रय करके विचार करके देखिये तो प्रत्यक्ष प्रमाण देहको अनात्मरूपता जनावता है सो देह आत्मवादी जिज्ञासुओंको मोह न करणे वास्ते वेदविषे श्रद्धा करणेवाले जो जिज्ञासु हैं तिनको यह कहते हैं जो हमारे मतकोही वेद कथन करता है हमारे मतविषे वेदवाक्य बहुत प्रमाण हैं एक तैत्तिरीय उपनिषद्का वाक्य प्रमाण है सो कहता है अन्नमयकोश स्थूलदेह आत्मा है और छांदोग्य उपनिषद्विषे यह कथन कियाहै ॥ ब्रह्माजीते सुन करके विरोचनने स्थूल शरीरही पूजने योग्य है स्थूल शरीरही आत्मा है और कोई एकवादी ऐसा कथन करते हैं स्थूल शरीर आत्मा नहीं काहेते जो जीव आत्माके निकस्याँ हुयां देहका मरणा देखा जाता है ताते आत्मा स्थूल देहते भिन्न है ॥

प्रश्न–देहसे भिन्न आत्माका स्वरूप क्या है और किस प्रमाण करके देहसे आत्मा भिन्न जानाजाता है ? ॥

उत्तर-मैं देखता हूं मैं सुनता हूं इस प्रतीतिते भिन्न इंद्रियां आत्मा हैं काहेते जो अहंता करके जानाजाता है सो आत्मा है और अहंता करके इंद्रियां जानीजाती हैं ताते इंद्रियां प्रत्यक्ष प्रमाण करके आत्मा हैं ॥

शंका-इंद्रियां तो अचेतन हैं और आत्मा चेतन है ताते इन्द्रियां आत्मा नहीं ॥

उत्तर-इंद्रियां अचेतन नहीं किंतु चेतन हैं काहेते जो उपनिषद्विषे ऐसी कथा है जो इंद्रियां किसी समय आपसमें मिलकर झगडा करती भई वाणी कहे मैं श्रेष्ठहूं नेत्र कहैं हम श्रेष्ठहैं श्रोत्र कहैं हम श्रेष्ठहैं इसी तरह और भी इंद्रियां कहती भई हम श्रेष्ठ हैं हम श्रेष्ठ हैं सभी इंद्रियाँ मिलकर ब्रह्माजीके पास झगडा निबटाने वास्ते गईं ताते इंद्रियां अचेतन नहीं काहेते जो चेतन घटादि लोकविषे झगडते देखे नहीं और सुना नहीं ताते इंद्रियां चेतन हैं चेतन होनेतेही इंद्रियां आत्मा हैं काहेते जो चेतनता आत्माका लक्षण है और जो हिरण्यगर्भके उपासक हैं प्राणात्मवादी सो ऐसा कथन करते हैं इंद्रियां आत्मा नहीं किंतु प्राण आत्मा है काहेते जो नेत्र आदिक इंद्रियोंके अभाव हुयाहुया भी प्राणोंके हुयांहुयां जीवना होताहै और सुषुप्ति अवस्थाविषे इंद्रियोंके लीन हुयांहुयां भी प्राण जागता है और प्राणोंकी श्रेष्ठता श्रवण करी है उपनिषदोंविषे एक एक इंद्रियके निकसगयाँ भी क्रम करके शरीर न गिरता भया और यदि प्राण निकसने लगा तब शरीर गिरणे लगा तब प्राण इंद्रियोंको कहने लगा तुम शरीरको सावधान करो ॥ तब सभी इंद्रियां आप आपणा यत्न कर थकीं पर शरीर सावधान न हुया तब संपूर्ण इंद्रियोंने प्राणको कहा तू शरीरको सावधान कर

तब प्राणने कहा अच्छी बात मैं शरीरको सावधान करता हूं तो जब प्राणने गमनागमनरूप प्रयत्न किया तब शरीर सावधान होजाता भया तब संपूर्ण इंद्रियां प्राणको कहती भई तू श्रेष्ठ है ताते तेरा नाम उक्थ भया काहेते जो शरीरको उत्थान करावणेकी शक्ति तेरे बीच है और प्राणमय कोशका भली प्रकार विस्तार करके निरूपण किया है ताते यह सिद्ध भया जो प्राण आत्मा है और कोई एकवादी जो हैं उपासक सो ऐसा कथन करते हैं प्राण आत्मा नहीं काहेते जो प्राण जड हैं इसी कारणते भोक्ता नहीं सुषुप्ति अवस्थाविषे प्राण विद्यमानभी हैं पर गृहके पदार्थोंकी चोरोंते प्राणोंकी रक्षा करणेकी सामर्थ्य नहीं ताते प्राण घटादिकोंकी न्याईं भोक्ता हैं और जड हैं ताते भोक्ता जो मन है सो आत्मा है और बंध तथा मोक्षका कारण मनुष्यका मनही है और मनोमय कोशको आत्मरूपता उपनिषद्‌विषे श्रवण करी है ताते इह सिद्ध भया जो मनही आत्मा है और विज्ञानवादी कहते हैं विज्ञान आत्मा है मन आत्मा नहीं, जिस कारणते मन विज्ञानते उत्पन्न होता है मन विज्ञानते कैसे उत्पन्न होता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर–अंतःकरणकी दो वृत्ति हैं एक अहं वृत्ति एक इदं वृत्ति अहंवृत्ति जो है सो विज्ञान है और इदं वृत्ति मन है इदं वृतिरूप मन अहंवृत्तिरूप विज्ञानते उत्पन्न होता है यह वार्ता अत्यन्त प्रगट है जिसकारणते आपणे आपके जानेसे विना बाहिरली वस्तुको कोई भी कहूं कभी भी नहीं जानता सो विज्ञान क्षणिक है इस वार्ताविषे अनुभवही प्रमाण है जिस कारणते अहं वृत्तिका क्षणक्षण विषे उत्पत्ति अविनाश अनुभवकरया है तिसकारणते विज्ञान क्षणिकहै और सो विज्ञानस्वप्रकाश है जिसतेविज्ञान आपणेआपकरके प्रकाशता है और विज्ञानमयकोश आत्मा है ऐसे वेदभी कथन करता है संपूर्ण संसार जन्म मरण सुखदुःखरूप इस विज्ञानमयकोशको है विज्ञा-

नहीं संपूर्ण यज्ञदानादि और खेती वणिजआदि कर्मोंके करणेवाला है ताते यह सिद्ध भया क्षणिक विज्ञान आत्मा है और शून्यवादी माध्यमिक ऐसा कहते हैं बिजली और बद्दलोंकी न्याई क्षणिक विज्ञान आत्मा नहीं । और नेत्रोंकी पलकें लगावणेकी न्याई विज्ञानते भिन्न और कोई वस्तु प्रतीत नहीं होती ताते शून्य आत्मा है और वेदभी कहता है जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम शून्य होता भया और ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयरूप जगत् भ्रम कल्पित है सिद्धांती कहता है भ्रम जो है सो अधिष्ठान विना नहीं सिद्ध होता और शून्यको अधिष्ठानता नहीं बनती काहेते जो शून्य नाम उसका है जिसका स्वरूप कुछ न होवे ताते जो जगत् भ्रमका अधिष्ठान है सो सत्यरूप आत्मा है और शून्यवादी जो कहता है सो शून्य साक्षीसे विना सिद्ध नहीं होता ताते शून्यका साधक साक्षी सत्यरूप आत्मा मानना चाहिये और जो सत्यरूप साक्षी आत्माको तू न मानेगा तब शून्य यह तेरा कहना कैसे सिद्ध होवेगा और वेदभी कहता है विज्ञानमयते भिन्न आनंदमयकोश आत्मा है सो विज्ञानमय कोशते परे है सो सत्तारूप जानने योग्य है यह वेदका सिद्धांत है इस प्रकार आत्माके स्वरूपविषे अनेक प्रकारके विवाद वादी करते हैं सो वर्णन किये ॥ अब आत्माके परिमाण विषे वादियोंके जो विवाद हैं तिनकोभी श्रवण कर कोई वादी आत्माको अणुपरिमाण कहते हैं ॥ अर्थ यह–जो जितना अणु होता है तितना आत्मा है अणु अणु किसको कहते हैं जो ऐसा पूछे तो श्रवण कर–झरोखेंद्वारा सूर्यकी किरण जब किसी स्थानविषे प्राप्त होती हैं तिन विषे जो नजर आवते हैं सूक्ष्म सूक्ष्म रजके कणके तिनका नाम त्रसरेणु है तिस त्रसरेणुके छठएँ हिस्सेका नाम अणु है ॥ और कोई एक वादी कहते हैं आत्मा मध्यम परिमाणवाला है ॥ अर्थ–यह जो

जितनी देह है तितना आत्मा है और कोई वादी कहते हैं आत्मा महान् है अर्थ यह—जो व्यापक है, इस तरह बहुत तरहके विवादको करते हैं श्रुतियों और युक्तियोंको आश्रय करके कौन वादी आत्माको अणु कहते हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर—जो न तो अत्यंत आस्तिक है न अत्यंत नास्तिक है ऐसे जो आस्तिक और नास्तिकोंके मध्यविषे वर्तनेवाले हैं [आंतराल] सो आत्माको अणुपरिमाण कहते हैं जो आत्मा अणुपरिमाण न होवे तब सूक्ष्म नाडियोंविषे कैसे विचरे रोमको हजारों हिस्सोंके तुल्य जो सूक्ष्म नाडियां हैं तिनाविषे आत्मा विचारता है काहेते जो मच्छर आदिकोंके ढंगका अनुभव होता है और आत्माकी अणुरूपताको श्रुतियां सैकडों और हजारों कथन करतीहैं कठवल्ली उपनिषद्विषे यह कथन किया हैआत्मा अणुते अति अणु है, और मुंडक उपनिषद्विषे कथन किया है यह आत्मा अणुरूप है सो चित्तकरके जानने योग्य है और कैवल्य उपनिषद्विषे कहाहै आत्मा सूक्ष्मतेभी अति सूक्ष्म है ॥ और श्रुति कहती है बालके अग्र भागको सौ भाग करिये तिसके बीचके एक भागको लेकर फिर सौ भाग करिये वह जितना होता है तितना आत्मा जानने योग्य है. इस प्रकार आत्माकी अणुरूपताको श्रुतियां और युक्तियां करके आंतराल कथन करते हैं ॥ अब आत्माको मध्यमपरिमाण कथन करणेवालोंके मतको श्रवण कर—मुख आगे पट्टीबाँधनेवाले जो सरावगी हैं सो कहते हैं आत्मा अणुपरिमाण नहीं किंतु मध्यम परिमाण है काहेते जो चरणोंसे लेकर मस्तकपर्यंत चेतनताकी व्यापकता शरीर विषे देखीजाती है जो आत्मा शरीर जितना न होवे तो संपूर्ण शरीरविषे चेतनताकी प्रतीति न होवे और होती तो है सर्व शरीरमें चेतनतादिकी प्रतीति ताते आत्मा अणुपरिमाण नहीं किंतु शरी-

रके प्रमाण है। और बृहदारण्यक उपनिषद्विषे भी कथन किया है नखोंके अग्रभागसे लेकर शिरपर्यंत आत्माने शरीरविषे प्रवेश किया है ॥

शंका-जो आत्मा मध्यमपरिमाणवाला होवेगा तो श्रुतियों करके सिद्ध सूक्ष्म आत्माका नाडियों विषे विचरणा न बनेगा ॥

उत्तर-आत्माके जितने सूक्ष्म अंश हैं तिन करके सूक्ष्म नाडियों विषे आत्मा विचरता है जैसे शरीरके अंश जो हैं भुजा तिनका जा विषे प्रवेशके हुयां हुयां शरीरका जा विषे प्रवेश कथन किया जाता है तैसे आत्माके सूक्ष्म अंशोंका नाडियोंविषे प्रवेश करके आत्माका नाडियोंविषे प्रवेश कथन कियाजाता है ॥

शंका-आत्माको मध्यमपरिमाणवाला नियम करके मान्यां हुया कर्मोंके वशते हस्तीके शरीरको त्यागकरके मच्छरके शरीर प्राप्त हुयां हुयां तिस मच्छरके शरीरविषे हस्ती जितना आत्मा कैसे समावेगा और मच्छरके शरीरका त्याग करके हस्तीके शरीर प्राप्त हुयाँ हुयाँ मच्छरके शरीर जितना आत्मा हस्तीके शरीरके किसीएक जगह रहेगा सारे तो नहीं रहसक्ता ताते कैसे कहते हो आत्मा शरीर जितना है ॥

उत्तर-कर्मोंके वशते हस्तीके शरीरकी प्राप्ति हुयाँ हुयाँ आत्माके अवयव बढ जाते हैं जैसे जन्मसे अनंतर शरीर बडा होता जाता है तैसे आत्माभी बडा होता जाता है ॥ और जैसे रोगके प्राप्त हुयाँ शरीर कृश होता जाता है तैसे आत्माभी कृश होता जाता है ॥ और कर्मोंके वशते मच्छरके शरीरके प्राप्त हुयाँ हुयाँ आत्माके अवयवोंकी क्षीणता करके आत्मा मच्छरके शरीर जितना होजाता है ताते आत्मा मध्यमपरिमाणवाला है यह वार्ता सिद्ध भई ॥ अब

आत्माको महान् कथन करणेवालोंका मत श्रवण कर-आत्मा मध्यमपरिमाणवाला नहीं बनता काहेते जो मध्यम परिमाणके हुयाँ हुयाँ सावयवता अवश्य होती है अर्थ यह-जो साकारता अवश्य होती है जो वस्तु साकार होती है तिसका नाश अवश्य होता है जैसे घट साकार है तो दूसरा नाश अवश्य होता है तैसे आत्मा जो साकार होवेगा तो तिसका नाश अवश्य होवेगा तो आत्माके नाश हुयाँ हुयाँ पुण्य पापका फल कौन भोगेगा तो ऐसे हुयाँ हुयाँ पुण्यका करणा और पापोंका न करणा यह जो तुम कथन करते हो सो यह तुम्हारा कहना व्यर्थताको प्राप्त होवेगा और इस शरीर विषे जो सुखदुःख भोगेजाते हैं सो कर्मोंके किये विना प्राप्त होवेंगे इसका नाम शास्त्रोंविषे कृतनाश और अकृताभ्यागम नाम दोष कहते हैं तिसकी प्राप्ति होवेगी आत्माको मध्यम परिमाण मान्याँ हुयाँ इस दोषकी निवृत्ति कदापि न होवेगी ताते आत्मा महान् है न अणु है न मध्यम है तिसविषे श्रुति प्रमाण है आत्मा आकाशकी न्याई सर्वव्यापक है और नित्य है और आत्मा निष्कल है अर्थ यह जो निराकार है और आत्मा क्रियासे रहित है इस प्रकार आत्माके परिमाणके विचार कियाँ हुयां आत्माकी व्यापकता निश्चय होती है और आत्माके स्वभाव निर्णयविषे भी वादियोंके अनेक विवाद होते हैं कोई वादी कहते हैं आत्मा चैतन्यस्वरूप है कोई वादी कहते हैं आत्मा जड है कोई कहते हैं आत्मा जड चैतन्य उभयस्वरूप है कौन वादी कहते हैं आत्मा जड है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-प्रभाकर जो मीमांसक हैं और नैनायिक जो हैं सो आत्माको जड कहते हैं आत्मा द्रव्य है और चैतन्य उसका अण्ड है जैसे आकाश द्रव्य है और शब्द तिसका गुण है आत्माविषे जो विशेषगुण रहते हैं इच्छा १ द्वेष २ प्रयत्न ३ धर्म ४ अधर्म ५ सुख ६ दुःख ७ और तिनक संस्कार ८ और चेत

नता ९ इन नव गुणोंद्वारा आत्माका पृथिवी आदिकोंते भेद निश्चय किया है काहेते जो पृथिवी आदिकोंविषे यह नौ गुण नहीं रहते और यह नौ गुण उत्पात्ति विनाशवाले हैं धर्म अधर्म दोनोंका नाम अदृष्ट है ॥ आपआपणे अदृष्टते आत्माका मनके साथ संयोग होता है तिस आत्मा मन संयोगते यह सभी नौ गुण उत्पन्न होते हैं और सुषुप्तिअवस्थाविषे अदृष्टके नाश होणेते सभी नाश होजाते हैं ॥ और चेतनता रूप गुणवाला होणेते आत्मा चेतन है और जो जड होते हैं तिनविषे चेतनता गुण नहीं पायाजाता जैसे घटादिकोंविषे चेतनता गुण नहीं पायाजाता और आत्मा इच्छा और द्वेष और प्रयत्न इन गुणोंवाला है इसतेभी चेतन है काहेते जो अचेतनाविषे ये छः और द्वेष प्रयत्न आदिक गुण नहीं देखे हैं और आत्मा ईश्वरसे भिन्न है जिसते धर्म अधर्मका कर्ता है और धर्म अधर्मका फल सुख दुःखका भोक्ताहै॥

शंका–जो आत्मा विभु है तो तिसका लोकांतराविषे जाना नहीं बनता काहेते जो जाना आवना;क्रियावालेका होता है और विभु विषे क्रिया नहीं बनता ॥

उत्तर–जैसे विभुका लोकांतरोंविषे जाना आवना नहीं बनतातैसे विभुकी इस शरीरविषे स्थिति भी नहीं बनती और जैसे इस शरीर विषे कर्मोंके वशते इच्छादिकोंके उत्पत्तिके हुयाँहुयाँ इस आत्माका इस शरीरविषे स्थिति व्यवहार होता है तैसे कर्मोंके वास्ते लोकांतर विषे शरीरांतरकी उत्पत्तिके हुयाँ हुयाँ तिस शरीरावच्छिन्न आत्माविषे सुख दुःखकी उत्पत्ति होती है तिस कारणते आत्माका लोकांतराविषे गमन कथन किया है वास्तवसे आत्माका लोकांतरावषे गमन नहीं उपाधिरूप मनकाही लोकांतराविषे गमन है ॥ जैसे घटके गमन करके घटाकाशका गमन कथन किया है इस प्रकार मनरूप

उपाधिके गमन करके उपाधिअवच्छिन्न आत्माका गमन कथन किया है आत्मा कर्ता है और भोक्ता है इसविषे सर्व कर्मकांड प्रमाण हैं॥

शंका-पीछे यह तुमने कथन किया था विज्ञानमयते परे आनंदमय आत्मा है और अब कहतेहो इच्छादि धर्मवाला आत्मा है इसते तुम्हारे पिछले कथनका तो इस कथनसे विरोध है॥

उत्तर-आनंदमयही आत्मा है जो सुषुप्ति अवस्थाविषे सबके लय हुयां बाकी शेष रहता है तिस सुषुप्ति अवस्थाविषे चेतनता स्पष्ट नहीं रहती॥ और जाग्रत् अवस्था विषे इच्छाआदि नौगुण तिस विषे उत्पन्न होआवते हैं ताते आत्मा इच्छावाला कहाता है और इच्छाआदिकोंते परेभी है काहेते जो इच्छा आदिकोंका आश्रय है ताते पिछले कथनका और इस कथनका विरोध नहीं ताते यह सिद्ध भया आत्मा विज्ञानगुणवाला है और चैतन्यस्वरूप नहीं॥ अब जो वादी आत्माको चैतन्यरूप और जडरूप मानते हैं तिनका मत श्रवण कर-भाट्टनाम करके जो मीमांसक हैं सो ऐसा कथन करते हैं आत्मा केवल चैतन्यरूप नहीं और केवल जडरूपभी नहीं काहेते जो जब पुरुष सुषुप्तिसे उठता है तब यह कहता है जो मैं इतना काल जडरूप होकर सोता भया यह जो उसका कहना है सो स्मरणरूप ज्ञान करै है और स्मरणरूप ज्ञान अनुभवसे विना नहीं बनता ताते सुषुप्ति अवस्था विषे जडताका स्मरण विना सुषुप्ति अवस्थाविषे अनुभवसे नहीं बनता ताते सुषुप्तीविषे चेतनताकी सिद्धि हुई पर जैसे जाग्रत् अवस्थाविषे चेतनताकी स्पष्ट प्रतीति होती है तैसे सुषुप्ति अवस्था विषे स्पष्ट चेतनताकी प्रतीति नहीं होती ताते यह सिद्ध भया सोके उठे पुरुषका जो यह कथन है मैं जड होकर सोता भया कुछ न जानता भया सोई जनावता है, आत्माकी जडरूपताको और चेतन-

रूपताको सुषुप्तिविषे तिसको अविनाशी होनेते चतन्यका नाश नहीं होता और जो आत्माके विनाशको मानों तो तिस विनाशका कोई साक्षी कहा चाहिये सो तो साक्षी कोई है नहीं ताते आत्माका स्वरूप जो चैतन्य है तिसका नाश नहीं होता एस श्रुति कथन करती है तिस कारणतेभी आत्मा जडरूपभी है और चेतनरूपभी है जस खद्योत प्रकाशरूपभी है और अप्रकाशरूपभी है और सांख्य शास्त्रवाले कहते हैं आत्मा चैतन्य और जड उभयरूप नहीं बनसक्ता ताते आत्मा चैतन्यरूप है जो पूछे आत्मा जड और चेतन उभयरूप कैसे नहीं बनता तो श्रवण कर-जिसते आत्मा निरवयव है इसते उभयरूप नहीं बनता ताते यह अर्थ विवेक करके देखणे योग्य है अर्थ यह-जो अंतमुख वृत्ति कियाँ हुयाँ सूक्ष्म विचार करके जानन योग्य है ॥

शंका-(मीमांसक चैतन्य जड आत्मवादीकी,) हमने तो अंतर्मुख वृत्ति करके विचार किया है तो सूते उठे पुरुषका यह जो कथन है सो आत्माकी जडता और चेतनताते विना नहीं बनता जो केवल आत्मा चैतन्यरूपही होवे तो सर्व लोकोंके अनुभव साथ विरोध आवेगा ॥

उत्तर-(विवेकी सांख्य शास्त्रवालेका) सुषुप्ति अवस्था विषे जो जडता है सो प्रकृतिका रूप है प्रकृति नाम मायाका है सो जडता आत्माका रूप नहीं सो प्रकृति विकारी है । अर्थ यह-जो अनेक प्रकारके कार्योंको उत्पन्न करती है जिसते सत्त्व, रज, तम इन तीन गुणावाली है सो तिस प्रकृतिका जगत्के उत्पन्न करणेविषे आपणा कुछ प्रयाजन नहीं पुरुषके भोग और मोक्षवास्ते जगत्को उत्पन्न करता है ॥

शंका-प्रकृतिकी जगत्के उत्पन्न कारणरूप प्रवृत्ति करके पुरुषको असंग होनेते पुरुषमें भोग मोक्ष नहीं बनता. जाते असंगविषे भोग मोक्ष नहीं बनता और जो कहो प्रकृतिविषे भोगमोक्ष हैं और पुरुषविषे प्रतीत होते हैं सो यह भी कहना नहीं बनता काहेते जो प्रकृति और पुरुष अत्यंत विलक्षण हैं जो अत्यंत विलक्षण नहीं होते उनके धर्म परस्पर औरकेविषे और विषय भास आवते हैं जैसे वस्त्रविषे लाली है और वस्त्रके साथ जो मिल्या हुया स्फटिकहै तिसविषे भासती है ताते वस्त्रका धर्म जो लाली है तिसका स्फटिकविषे भासनेका कारण वस्त्र और स्फटिकका संयोग है तैसे प्रधान और आत्माका जो संयोग होवे तो प्रधानके धर्म भोग मोक्ष आत्मामें भासें सो तो प्रधानका और आत्माका संयोगही है नहीं ताते प्रधानके धर्म बंध मोक्ष पुरुषविषे भासते हैं यह वार्ता अयोग्य है ॥

उत्तर-वास्तवसे आत्मा विषे भोगमोक्ष कोई नहीं प्रकृतिविषेही भोग मोक्ष हैं पर जितना काल प्रकृति और पुरुषका भेद यथावत् नहीं जानाजाता तितना कालपर्यंत भोग मोक्ष पुरुष विषे भ्रम करके प्रतीत होते हैं और आत्मा जो है चैतन्यरूप सो नाना है एक नहीं जो आत्मा एक होवे तो एकके मोक्ष करके सबका मोक्ष हुया चाहिये और एकके बंध हुयां सबका बंध हुया चाहिये ताते जो बद्ध है सोई बद्ध है जो मुक्त है सोई मुक्त है इस व्यवहारकी सिद्धि वास्ते हम आत्माका भेद मानते हैं जैसे नैयायिक और मीमांसक आत्माका भेद मानते हैं और प्रकृतिको श्रुतिभी कथन करती है. महत्तत्त्वते परे प्रकृति है और आत्माकी असंगताको श्रुति कथन करती है ताते चैतन्य स्वरूप हैं ऐसे सांख्य शास्त्रवाले कथन करते हैं इस प्रकार अनेक वादियोंके विवाद जीवविषे हैं सो तेरे ताईं श्रवण करवाये ॥ अब ईश्वरके स्वरूपविषे जो वादियोंके विवाद है तिनकोभी श्रवण कर-चैतन्यकी निक-

टताके हुयां हुयां प्रपंचके उत्पन्न करणेवाली जो प्रकृति है तिस प्रकृतिका जो प्रेरक है सो ईश्वर है ऐसे योगशास्त्रवाले ईश्वरका लक्षण करते हैं सो ईश्वर जीवोंते परे है इसी अर्थको उपनिषद्विषे कथन किया है ईश्वर कैसा है प्रधान और क्षेत्रज्ञ इन दोनोंका स्वामी है प्रधान नाम है जिसका सो तिन गुणोंका साम्यावस्था है और क्षेत्रज्ञनाम जीवका है क्षेत्र जो है शरीर तिसके जाननेवाला है इसते जीवको क्षेत्रज्ञ कहते हैं और ईश्वर सत्त्व, रज, तम इन तीन गुणोंका प्रेरक है। अर्थ यह-जो ईश्वरकी इच्छा करके जीवोंको सत्त्वादि गुण प्राप्त होते हैं और अंतर्यामिब्राह्मणविषेभी अंतर्यामी नाम करके ईश्वर बहुत विस्तार करके कथन कियाहै अंतर्यामिब्राह्मण बृहदारण्यक उपनिषद्विषे है यह तेरे ताईं ईश्वरका ऐसा स्वरूप कथन किया ऐसा जो ईश्वरका स्वरूप है तिसविषे वादियोंके अनेक प्रकारके विवाद हैं तिनको श्रवण कर योगशास्त्रवाले कहते हैं क्लेश जो हैं अविद्या १ अस्मिता २ राग ३ द्वेष ४ अभिनिवेश ५ ये पांच और कर्म जो हैं चार प्रकारके पुण्यरूप १ पापरूप २ और पुण्यपापमिश्रितरूप ३ यह तीन प्रकारके अयोगियोंके कर्म हैं और योगीके कर्म पुण्य पाप दोनोंसे रहित हैं ४ योगाभ्यास करके उत्पन्न हुयां हुयां शुद्ध धर्मरूप ॥ और तिन कर्मोंका जो फल है अविद्याके हुयां हुयां जाति और आयु और भोग और भोगके जो मनविषे संस्कार हैं इन संपूर्णोंके साथ जिसका संबंध नहीं ऐसा जो पुरुषविशेष है सो ईश्वर है ईश्वर जीवोंकी न्याईं असंग चैतन्यरूप है. यद्यपि असंगरूपको प्रेरकता नहीं बनती तो भी पुरुषविशेष होनेते तिसको मायाकी प्रेरकता बनती है ॥ और जो ईश्वर मायाका प्रेरक न होवे तो बंध मोक्षकी व्यवस्था नष्ट हो जाय। अर्थ यह-जो बंधके योग्यको मोक्ष हो जाय और मोक्षके योग्यको

बंध हो जाय, असंग ईश्वर मायाका प्रेरक है इस अर्थविषे तैत्तिरीय-उपनिषद्का वचन प्रमाण है सो कहाजाता है परमात्माके भय करके पवन चलता है और सूर्य तपता है सो ईश्वरको मायाकी प्रेरकता यथार्थ है जिस कारणते ईश्वर क्लेशकर्म और कर्मोंका फल और फलके संस्कार इन चारोंसे रहित है यह क्लेशादि चार जीवोंके धर्म हैं ईश्वर तिनसे रहित है ॥

शंका-(योगीके ताईं नैयायिककी) तुम्हारे मतविषे जीवभी असंग हैं ताते जीवोंसे ईश्वरकी अधिकता न भई ॥

उत्तर-जीवोंको यद्यपि वास्तवते क्लेशादि नहीं पर तोभी जीवोंको बुद्धिके साथ भेदज्ञान नहीं होता इसते क्लेशादि आपणे आप-विषे मानते हैं जीव और ईश्वर आपणे आपविषे क्लेशा-दिक नहीं मानता इसी कारणते ईश्वर प्रकृतिका प्रेरक होता है॥ और जीव प्रकृतिके प्रेरक नहीं होते इतनी जीवोंसे ईश्वरविषे अधिकता है ऐसा योगशास्त्रवाले मानते हैं ॥ और नैयायिक कहते हैं असंगको प्रेरकता नहीं बनती ताते ईश्वर नित्य ज्ञानवाला है और नित्य इच्छावाला है और नित्य प्रयत्नवाला है प्रयत्ननाम है उत्साहका ॥ जीवोंको जो ज्ञान इच्छा प्रयत्न हैं सो अनित्य हैं और ईश्व-रके नित्य हैं इसी कारणते ईश्वर जीवोंसे भिन्न है और प्रेरक है और श्रुतिभी कथन करती है ईश्वर सत्यसंकल्प है और ईश्वर सत्यकाम है ऐसा नैयायिक कहते हैं ॥ और हिरण्यगर्भकी उपासना करणेवाले ऐसा कहते हैं ईश्वर नित्य ज्ञान इच्छा प्रयत्नवाला नहीं जो ईश्वर नित्यज्ञान इच्छाप्रयत्नवाला होवे तो जगत्की उत्पत्ति सदाही हुई चाहिये ताते लिंगशरीरसहित जो हिरण्यगर्भ है सो ईश्वर है परमात्मा मायोपाधिक जो है सो समष्टि शरीरके अभिमान करके

हिरण्यगर्भरूपताको प्राप्त होता है सो हिरण्यगर्भ ईश्वर है ॥ उद्गीथब्राह्मणनाम ग्रंथविषे हिरण्यगर्भका माहात्म्य बहुत विस्तार करके कथन किया है ॥

शंका-लिंगशरीरके संबंध हुयांहुयां हिरण्यगर्भको ईश्वरता नहीं बनता ॥

उत्तर-लिंगशरीरके संबंध हुयांहुयां भी हिरण्यगर्भ जाव नहीं काहेते जो जीव भावाविषे अविद्या काम्यकर्म कारण है सो अविद्या काम्यकर्म हिरण्यगर्भविषे है नहीं ताते हिरण्यगर्भ ईश्वर है और विराट्के उपासक कहते हैं विराट्ही ईश्वर है संपूर्ण तिसके मस्तक हैं और सबके पास तिसके नेत्र हैं जाते स्थूलशरीरसे विना लिंगशरीर कहूं देखनेमें नहीं आवता ताते ब्रह्माण्डरूप स्थूलशरीरवाला विराट्ही ईश्वर है और सहस्रशीर्षा उपनिषद्विषे कहा है सहस्रों तिसके शिर हैं और सहस्रों तिसके नेत्र हैं और सहस्रों तिसके चरण हैं और कोई एक वादी कहते हैं चतुर्मुख ब्रह्माही ईश्वर है और कोई ईश्वर नहीं जो सहस्र चरणोंवाला ईश्वर होवे तो बहुत चरणोंवाले कीडे भी ईश्वर हुये चाहियें प्रजापति संपूर्ण प्रजाको रचता भया इसते आदिलेकर और श्रुति भी तिसविषे प्रमाण है इसप्रकार पुत्रकी प्राप्तिवास्ते ब्रह्माकी उपासना करणेवाले कहते हैं ॥ और भागवत इस प्रकार कहता है चतुर्मुख ब्रह्मा विष्णुके नाभिकमलते उत्पन्न भया है ताते चतुर्मुख ब्रह्मा ईश्वर नहीं जिसते चतुर्मुख ब्रह्मा उत्पन्न भया है सो विष्णु भगवान् ईश्वर है और शिवके उपासक ऐसा कहते हैं शिवजीके चरणोंकी प्राप्ति वास्ते विष्णुजीने बडा यत्न किया पर शिवजीके चरणोंको विष्णुजी न प्राप्त होते भये ताते विष्णु ईश्वर नहीं शिव ईश्वर है ॥ और गणेशजीके उपासक ऐसा कहते हैं गणेशजीके चरण पूजके शिवजी त्रिपुरदैत्यके मारणेको

समर्थ भये ताते गणेशजी ईश्वर हैं. इसी प्रकार और भी वादी आपणे आपणे पक्षके अभिमान करके और और प्रकारके ईश्वरको कथन करते हैं कोई आपणे मतविषे मंत्रको प्रमाण कथन करता है कोई अर्थवादको प्रमाण कथन करता है कोई ऋषीश्वरोंके वाक्यको प्रमाण कथन करता है ॥

प्रश्न—ऐसे हुयां हुयां ईश्वरविषे वादियोंके कितने मत हैं सो कहो ? ॥

उत्तर--वादियोंके मतोंकी कुछ गिणती नहीं अनंत हैं अंतर्यामीसे लेकर स्थावरपर्यंत ईश्वरके माननेवालेके मत हैं ताते तिनकी गिणती कुछ नहीं ॥

शंका--स्थावरोंको ईश्वर माननेवाले तो कोईभी जगत्में प्रसिद्ध नहीं ॥

उत्तर--कोई पीपलको कुलका देवता मानते हैं ताते पीपलकी पूजा करते हैं ऐसे जो हैं सो पीपलको ईश्वर मानते हैं सो पीपल स्थावर प्रसिद्ध है. इसी प्रकार कोई आकको कुलदेवता मानते हैं कोई बांसों-को कुलदेवता मानते हैं कोई तखडीको ईश्वर मानते हैं कोई सूईको ईश्वर मानते हैं इसीतरह आपोआपणे मतके अनुसार स्थावरोंको ईश्वर माननेवाले बहुत हैं ॥

शंका--इसी प्रकार बहुत मतोंके हुयां हुयां जिज्ञासुने किस मतका ग्रहण करणा और किस मतका त्याग करणा यह कहो ? ॥

उत्तर—तत्त्वके निश्चयकी कामना करके युक्तियोंके विचार करणेवाले और वेदके विचार करणेवाले जो जिज्ञासु हैं तिनको एक रूपही निश्चय प्राप्त होता है सो प्रकट करके कहते हैं श्रवण कर—माया जगत्का उपादान कारण है और मायाका प्रेरक ईश्वर है

तिस ईश्वरके अवयवों करके संपूर्ण जगत् पूर्ण हुयां हुयां है ऐसा श्रुति कहती है ताते इस श्रुतिके अनुसार ईश्वरका निर्णय करणा जिज्ञासुको युक्त है इस श्रुतिके अनुसार निर्णय कऱ्याँ हुयां किसीके साथ विरोध नहीं आवता काहेते जो स्थावरपर्यंत संपूर्णोंको ईश्वरका अवयवरूपताकरके जिज्ञासु जन ईश्वररूपता मानतेहैं ॥

प्रश्न-जगत्का उपादानरूप जो माया है तिसका क्या रूप है ?

उत्तर-यह माया तमोरूप है ऐसा नृसिंहतापिनी उपनिषद्विषे कथन किया है. मायाकी तमोरूपताविषे अनुभव प्रमाण है ऐसे श्रुति आप कथन करती है सो यह मायाका रूप जड है और मोहात्मक है ऐसे जिज्ञासुओंको श्रुति अनुभव करावती है और बालकोंसे लेकर गोपालोंपर्यंत स्पष्ट होणेते माया अनंत है ऐसे श्रुति कथन करती है ॥ चैतन्यसे भिन्न घटादिकपार्थोंका जो स्वरूप है सो जड है और जिसविषे पुरुषोंकी बुद्धि नहीं पहुँच सकती सो मोह है ऐसा सभी लोक कहते हैं इस प्रकार जडरूप करके और मोहरूपता करके मायाकी तमोरूपता सब लोकोंने अनुभव करीहै ताते माया अनंत है ॥ और चैतन्यरूप आत्माते भिन्न जो घटादिकोंका स्वरूप है सो जड है ॥ और जिसविषे बुद्धि कुंठित होजाती है तिसको सभीलोक मोह कहते हैं इस प्रकार जडरूपता करके और मोहरूपता करके संपूर्ण लोकोंको मायाका स्वरूप अनुभव सिद्ध है ताते मायाका स्वरूप अनंतहै और युक्ति करके देखिये तो माया अनिर्वचनीय है न सत्य है न असत्य है ऐसे श्रुतिभी कथन करती है ॥ असत्य क्यों नहीं जो प्रतीत होती है सत्य क्यों नहीं जो ब्रह्मज्ञानते नाश होजाती है और इन दोनोंरूपोंको विरुद्ध होणेते सत्य असत्य दोनों रूपभी नहीं. इसतरह युक्तिरूपी नेत्रोंसे देख्याँ हुयां मायाका स्वरूप अनिर्वचनीय है ॥ और ज्ञानवानोंकी दृष्टिसे देख्याँ

हुयां मायाका स्वरूप तुच्छ है॥ शशके शृंगोंकी न्याई तिसको सदाही अविद्यमान होणेते ताते तीन दृष्टियों करके मायाका स्वरूप तीन प्रकारका है श्रौतदृष्टि जो है ज्ञानवानोंका अनुभवरूप तिस करके मायाका स्वरूप तुच्छ है और युक्तिदृष्टि करके मायाका स्वरूप अनिर्वचनीय है और अज्ञानियोंकी दृष्टि करके मायाका स्वरूप सत्य है माया पसारेको प्राप्त हुई हुई जगत्‌की सत्ताको दिखावती है जैसे चित्रित हुया वस्त्र पहरया हुयां हुयाँ हस्ती घोडे आदिक मूर्तोंकी सत्ताको दिखावते हैं॥ और माया संकोचको प्राप्त हुयां हुयां जगत्‌की असत्ताको दिखावती है जैसे चित्रित हुया वस्त्र संकोचको प्राप्त हुया हुया हस्ती घोडे आदिक सूरतोंकी असत्ताको दिखावते हैं॥ और यह माया अस्वतंत्र है जिसकारणते चैतन्यसे विना नहीं प्रतीत होती॥ और माया स्वतंत्रभी है जिसते असंगको संगवाला करदेती है॥ अर्थ यह–असंग कूटस्थ आत्माको जगत्‌रूप करदेती है और चिदाभास रूपता करके जीव ईश्वरकोभी रचती है॥

शंका–जो माया आत्माको जगत्‌रूप और जीव ईश्वररूप कर देती है तब आत्मादि कूटस्थताका नाश भया॥

उत्तर–आत्माकी कूटस्थताका नाश न करके आत्माको जगत् और जीव और ईश्वररूप करदेती है॥

शंका–आत्माकी कूटस्थताका न नाशकरके आत्माको जगत् आदिरूप करणा तो असंभव है॥

उत्तर–मायाका स्वभावही ऐसा है जो वार्ता न बने तिसको बनादेना ताते आत्माकी कूटस्थताको न दूरकरके आत्माको जगत् आदिरूप करदेना यह मायाविषे कुछ आश्चर्य नहीं॥ जैसे सीपीका अज्ञान सीपीकी सीपीरूपताको न दूरकरके सीपीको रूपारूप करदेता है॥ जैसे जलोंविषे द्रवता स्वभावसिद्ध है॥ और जैसे अग्निविषे

उष्णता स्वभावसिद्ध है ॥ जैसे पत्थरविषे कठिनता स्वभावसिद्ध है तैसे मायाविषे जो बात न बने तिसको बनायदेना यह भी स्वभावसिद्ध है लोक जितना कालपर्यंत मायाके रचनेवालेको नहीं जानते तितना काल माया लोकोंके मनविषे अनेक प्रकारके चमत्कार दिखावती है और जब मायाके रचनेवालेको जान लिया है तो माया आपही नष्ट होजाती है और अनेक शंका जो हैं सो जगत्को सत्य माननेवाले नैयायिक आदिकोंको प्राप्त होती हैं और मायाविषे शंका कोई नहीं बनती काहेते जो माया आपही शंकारूप है ॥ जैसे कोयलेको काला करणा नहीं बनता काहेते जो काला तो तिसका स्वरूपही है शंकारूप मायाविषेभी जो शंका करेगा तो तेरी शंकाविषे मैं आगे शंका करूंगा ताते वस्तुका निर्णय कुछ न होवेगा ताते जिस प्रकार माया निवृत्त होवे सो उपाय किया चाहिये और तिसाविषे बहुत शंका नहीं करी चाहिये आश्चर्य है स्वरूप जिसका ऐसी जो माया है तिसको विकलपरूप होणेते बुद्धिमान् पुरुषने यत्न करके तिसके दूर होणेका उपाय लब्ध किया चाहिये ॥

शंका—मायाके स्वरूपके निश्चय हुयाँ हुयाँ तिसके दूर करणेका उपाय करना बनता है सो तो मायाके स्वरूपका आजताईं निश्चय नहीं भया ॥

उत्तर—मायाके स्वरूपको निश्चय कर क्या मायाका स्वरूप है ऐसा पूछे तो श्रवण कर—सर्व लोकोंको प्रसिद्ध जो मदारीकी मायाहै उसका जो लक्षण है तिस लक्षणको प्रथम देख ॥ लोकप्रसिद्ध मायाका क्या लक्षण है ऐसा पूछे तो श्रवण कर—लोकप्रसिद्ध जो मदारीकी माया है सो निरूपण करणेमें कुछ नहीं आवती और स्पष्ट नजर आवती है कैसे नहीं निरूपण करी जाती जो ऐसा पूछे तो श्रवण कर मदारी जो मोहराँ आदिक रच लेता है सो मोहराँ स्पष्ट नजर आवतीहैं ॥

और जो वे मोहराँ सच्ची होवें तो मदारी कौडी कौडी काहेको मांगे और जो कहो वह मदारी लोकोंकी नजर बंद करलेता है तो शाहुकारोंकी हाटोंसे थैलियां उठाय लेवे कंगाल काहेको रहे ताते वे मोहराँ मायामात्र हैं ऐसे यह जगत्भी स्पष्ट नजर आवता है पर इसके स्वरूपका निर्णय कुछ नहीं हो सकता ताते जगत् मायामात्र है इस वार्त्ताको हठ त्याग करके देख॥

शंका-जगत्के निरूपण अशक्य कैसे हैं ॥

उत्तर-जगत्के निरूपण करणेको कोईभी समर्थ नहीं॥ एक समय संपूर्ण बुद्धिमान् इकट्ठे होकरके जगत्को निरूपण करणे लगे तिन्होंको दूसरे तीसरे प्रश्नविषे अज्ञानही नजर आया सो अज्ञान कैसे नजर आया ऐसे पूछे तो श्रवण कर-शरीर इंद्रियां और प्राणादिक वीर्यसे कैसे उत्पन्न भये और शरीरविषे चेतनताकी प्रतीति कैसे होती है यह जो हमारा प्रश्न है तिसका उत्तर कोई कहो, तो स्वभाववादी बोलता भया कि, वीर्यका स्वभावही देह इंद्रियां आदिकोंको उत्पन्न करणा॥ प्राणों सहित शरीरका स्वभावही है जो तिसविषे चेतनता होणी ॥

प्रश्न-(सिद्धांतीका फेर स्वभाववादीके ताई) तैंने इस वार्त्ताको क्योंकर जाना जो वीर्यका स्वभावही है देह आदिकोंको उत्पन्न करणा॥

(स्वभाववादी फेर बोलता भया) मैंने अन्वय व्यतिरेक करके जान्या है जो वीर्यके हुयां हुयां शरीर इंद्रियां होते हैं और वीर्य न होवे तो शरीर इंद्रियां आदिक नहीं होते ॥

(सिद्धांती) अन्वय व्यतिरेक तो नहीं बनते काहेते जो वीर्यके हुयां हुयांभी शरीर इंद्रियां आदिक बहुत स्थानोंमें नहीं होते सो बहुत स्थान कौन हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर-सूते हुये पुरुषका कभी वीर्य शरीरते निकस जाता है पर वहां देह इंद्रियां आदिक नहीं होते ॥

और गर्भवती स्त्रीविषे दूसरी बार वीर्य पडे वहां देह इंद्रियां आदिक नहीं होते और वंध्यास्त्रीविषे वीर्यके प्राप्त हुयां हुयांभी देह इंद्रियां आदिक उत्पन्न नहीं होते और कामी पुरुषोंके हजारों बार वीर्य पडे निकसे है पर देह इंद्रियां आदिक उत्पन्न नहीं होते ताते अन्वय न भया और व्यतिरेक भी नहीं बनता काहेते जो वीर्यके अभाव हुयां हुयां जूँवाँ आदिक अनेक जीव उत्पन्न नहीं होते हैं ताते यह जो प्रश्न है वीर्यने शरीर आदिक कैसे उत्पन्न किये इसका उत्तर कहो, स्वभाववादी बोल्या इसका उत्तर मैं कुछ नहीं जानता ताते जैसे शरीरकी उत्पत्तिका निर्णय कुछ नहीं होसक्ता तैसे संपूर्ण पदार्थोंका निर्णय कुछ नहीं होसक्ता इसी कारणते महान् पुरुष इस जगत्को मदारीके खेलके सदृश कहते हैं ताते इससे अधिक मदारीका खेल और अधिक क्या होता है जो गर्भवासके स्थानविषे स्थित हुयां हुयां पुरुषका वीर्य चेतनताको प्राप्त होजाता है॥ और तिस वीर्यबीच हस्त और मस्तक और चरणोंते आदि लेकरके अनेक प्रकारके अंकुर निकस आवते हैं और वह वीर्य बालअवस्थाको प्राप्त होजाता है और यौवनावस्थाको प्राप्त होजाता है और वृद्धावस्थाको प्राप्त होजाता है और देखनेवाला होजाता है और भोजन करणेवाला होजाता है और सुननेवाला हो जाता है और सूंघनेवाला होजाता है और देश देशांतरोंविषे जानेवाला होजाता है और आवनेवाला होजाता है ताते जैसे शरीरका निरूपण नहीं होसक्ता ॥ तैसे वटबीज आदिकोंविषे भली प्रकार विचारकरके देखो कि, कहाँ तो वटका बीज, जिसको छोटी चिडीभी खासक्ती है और कहाँ वटका वृक्ष जिसके नीचे हस्तीभी आन करके पडे खुरकते हैं ताते जगत् माया मात्र है निरूपण कुछ नहीं होसक्ता। अर्थ यह--जो जगत् मिथ्या है ऐसेही नजर आवता है और मदारीके खेलकी न्याईं वास्तवते कुछ है नहीं ऐसे निश्चय कर ॥

शंका--(नैयायिककी) हमारेसे यद्यपि जगत्का निरूपण नहीं होसक्ता पर तोभी हमारे बडे जो उदयनाचार्यसे आदि लेकरके हैं सो जगत्का निरूपण करेंगे ॥

उत्तर-जो अभिमान करते हैं उदयनाचार्यसे आदि लेकरके कि, हम जगत्का निरूपण करेंगे तिनको हमारे बडे जो हैं श्री हर्षमिश्रसे आदि लकरके तिन्होंने भली प्रकार करके निरुत्तर किया है ताते यह जगत्की रचना किसीके चिंतन करणे योग्य नहीं ताते बुद्धिमान् इसको तर्कों करके चिंतन करे काहेते जो इसकी रचना चिंतन करणेविषे नहीं आवता ताते जगत्की रचनाके चिंतन करणेका उद्यम व्यर्थ है जैसे कोयलेको सफेद्करणेका उद्यम व्यर्थ है ॥

शंका--होवो जगत्को अचिंत्यरचनारूपता पर मायाविषे क्या आया ॥

उत्तर-अचिंत्यरचनाकी शक्तिवाला जो कारण है सो माया है ऐसे निश्चय कर, सो मायारूप कारण एक सुषुप्ति अवस्थाविषे अनुभव किया है तिसको कैसे जगत् कारणता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-जाग्रत्का जगत् और स्वप्नका जगत् सुषुप्ति अवस्थाविषे प्रतीत होता जो मायारूप बीज है तिसविषे लीन हुयां हुयां है और तिसतेही उत्पन्न होआवता है ॥ जैसे वटके बीजविषे वट लीन होता है तिसतेही वट उत्पन्न हो आवता है ताते जगत्का कारण माया है तिस विषे संपूर्ण जगत् वासनास्थित है और जो बुद्धिकी बुद्धिकारणरूपा जो वासना हैं तिनविषे चैतन्यका प्रतिबिंब पडता है तिसका नाम चिदाभास है सो स्पष्ट नहीं प्रतीत होता ॥ जैसे मेघाकाश स्पष्ट प्रतीत नहीं होता और अनुमान करके जानाजाता है ॥ तैसे बुद्धिकी वासना विषे जो चिदाभास है सोभी अनुमान करके जानाजाता है ॥

शंका-बद्दलोंविषे जो जल है तिसके अस्पष्ट आकाशके प्रतिबिंबवाला हुयां हुयां भी पर घटविषे जो जल है तिसविषे स्पष्ट आकाशका प्रतिबिंब प्रतीत होता है इसते मेघाकाशका अनुमान बनजाता है और बुद्धिकी वासनाविषे चैतन्यका प्रतिबिंब है इसविषे दृष्टांत कोई नहीं ताते बुद्धिकी वासनाओंविषे चैतन्यके प्रतिबिंबका अनुमान नहीं बनता ॥

उत्तर-बुद्धिकी वासनाओंविषे चैतन्यके प्रतिबिंबके अनुमानका दृष्टांत है सो श्रवण कर-बुद्धिविषे स्पष्ट चिदाभास प्रतीत होता है ताते बुद्धिका जो कारण है सो चैतन्यके प्रतिबिंबवाला है जो बुद्धिके कारणविषे चैतन्यका प्रतिबिंब न होवे तो बुद्धिकी वृत्तियोंविषे चैतन्यका प्रतिबिंब कैसे प्रतीत होवे ताते यह सिद्ध भया बुद्धिकी वासनाएँ बुद्धिकी अवस्था विशेषरूप होणेते बुद्धिकी वृत्तियोंकी न्याईं चैतन्यके प्रतिबिंबवाली होती हैं श्रुतिने जो कथन किया था जीव और ईश्वरको प्रतिबिंबरूपता सो सिद्ध भई- जो बुद्धिकी वासनाओंविषे चैतन्यका प्रतिबिंब है सो ईश्वर है ॥ और जो बुद्धिविषे चैतन्यका प्रतिबिंब है सो जीव है, सो जीव और ईश्वर मेघाकाश और जलाकाशकी न्याईं स्थित है ॥ जैसे मेघाकाशको और जलाकाशको प्रतिबिंबरूपताके तुल्य हुयां हुयां भी मेघाकाशकी उपाधि जो मेघोंविषे जल है सो अस्पष्ट है इसते मेघाकाशभी अस्पष्ट है और जलाकाशकी उपाधि जो घटविषे जल है सो स्पष्ट है इसते जलाकाशभी स्पष्ट है ॥ तैसे ईश्वरकी उपाधि जो बुद्धिकी वासनाएँ हैं सो अस्पष्ट हैं इसते ईश्वर स्पष्ट नहीं प्रतीत होता और जीवकी उपाधि अंतःकरण स्पष्ट है इसते जीव स्पष्ट प्रतीत होता है ॥ मेघके न्याईं माया है और मेघविषे जलकी न्याईं बुद्धिकी वासनाएँ हैं और

तिस जलविषे आकाशके प्रतिबिंबकी न्याईं बुद्धिकी वासनाविषे चैतन्यका प्रतिबिंब है बुद्धिकी वासनाका नाम माया है तिस मायाविषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है सो ईश्वर है ऐसे श्वेताश्वतर उपनिषद्की श्रुति कथन करती है ॥ महेश्वर जो है सो मायाके अधीन चिदाभासका नाम है और सो ईश्वर अंतर्यामी है और सर्वज्ञ है और जगत्का कारण है ॥

शंका—बुद्धिकी वासनाओंविषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है सो ईश्वर है और सर्वज्ञ है इसते आदि लेकरके जो अर्थ है सो श्रुतिसिद्ध कैसे है ?॥

उत्तर—मांडूक्य उपनिषद्की श्रुति और नृसिंहतापिनी उपनिषद्की श्रुति बुद्धिकी वासनाओंविषे चैतन्यका प्रतिबिंबरूप जो आनंदमय है तिसको ईश्वर और सर्वज्ञादि रूप कथन करती हैं ॥ सुषुप्ति है स्थान जिसका और ब्रह्मके साथ एकताको जो प्राप्त होता है ऐसा चैतन्य घन आनंदमय है सो सुषुप्ति अवस्थाविषे आनंदको भोगता है ॥ अज्ञानकी वृत्तियोंविषे चैतन्यका प्रतिबिंबरूप मुखकरके ऐसा जो प्राज्ञ है सो आत्माका तीसरा पाद है. सो सुषुप्ति कैसी है जिस विषे स्थित हुयाहुया जाग्रत्के पदार्थोंकी कामनाते रहित होजाता है और स्वप्नके पदार्थ किसीकोभी नहीं देखता सो यह प्राज्ञ सर्वका ईश्वर है और सर्वदा है और सर्वज्ञ कारण है जिसते प्राज्ञते ही संपूर्ण भूतोंकी उत्पत्ति होती है और प्राज्ञविषेही संपूर्ण भूतोंका लय होता है ॥

शंका—आनंदमय जो है प्राज्ञ तिसकी सर्वज्ञता आदिक अनुभवसे तो नहीं प्रतीत होती ॥

उत्तर--आनंदमय प्राज्ञकी सर्वज्ञता आदिकोंविषे विवाद नहीं किया चाहिये काहेते जो श्रुतिके अर्थविषे विवाद अच्छा नहीं और मायाविषे सब कुछ बनजाता है ॥

शंका--आनंदमय प्राज्ञको जो श्रुति सर्वज्ञ सर्वेश्वरादिरूप कथन करती हैं सो श्रुति अर्थवादरूप हैं जिसते युक्तिसे रहित हैं ॥ जैसे पत्थर तर जाते हैं, यह श्रुति अर्थवादरूप है. युक्तिसे रहित होणेते अर्थवादका अर्थ स्तुति है ॥

उत्तर--आनंदमय प्राज्ञको जो श्रुति सर्वज्ञ सर्वेश्वरादिरूप कथन करती हैं सो श्रुति अर्थवादरूप नहीं यथार्थ अर्थको कथन करती हैं सो जिस प्रकार है सो प्रकार श्रवण कर--सुषुप्ति अवस्थाविषे विद्यमान जो आनंदमय प्राज्ञ है तिस करके रच्या हुया जो स्वप्नका जगत् है तिसको स्वप्नावस्थाविषे अन्यथा करणेको कोईभी समर्थ नहीं ॥ तैसे जाग्रत् अवस्थाविषे तिस आनंदमय प्राज्ञने रच्या जो है जगत् तिसकोभी अन्यथा करणेका कोईभी समर्थ नहीं तिस कारणते श्रुतिभी आनंदमय प्राज्ञको ईश्वर कथन करती है काहेते जो ईश्वरका लक्षण यही है जो जिसके कियेको कोई अन्यथा न करसके सो लक्षण प्राज्ञविषे आवता है ताते प्राज्ञ ईश्वर है ॥ अब जिस प्रकार प्राज्ञ सर्वज्ञ है सोभी श्रवण कर सुषुप्ति अवस्थाविषे जो अज्ञान है तिस अज्ञानते संपूर्ण प्राणियोंकी बुद्धियां उत्पन्न होती हैं और तिस अज्ञानविषेही संपूर्ण प्राणियोंकी बुद्धियां लय होजाती हैं और तिन प्राणियोंकी बुद्धियोंने संपूर्ण जगत्को जान्या है तिस कारण करके प्राज्ञ सर्वज्ञ है सर्व अर्थोंके जाननेवाली जो सर्व बुद्धियां हैं तिनका वासनारूप करके जिस अज्ञानविषे लीनता है और अज्ञान उपाधिवाला प्राज्ञ है ताते प्राज्ञ सर्वज्ञ है क्योंकि जो सर्वज्ञका अर्थ यही होता है जो सर्वको जाने. प्राज्ञकी उपाधिविषे लीन हुई जो संपूर्ण बुद्धियां हैं तिन द्वारा प्राज्ञ सर्वको जानता है और सुषुप्ति अवस्थाविषे नहीं जानता ऐसा जो कहै इसका उत्तर श्रवण कर--सुषुप्ति अवस्थाविषे सर्वका लय

होजाता है इसते सर्वको नहीं जानता ॥ जैसे तेरे मतविषेभी प्रलयावस्थामें ईश्वर सर्वको नहीं जानता पर तिसकी सर्वज्ञताका अभाव नहीं होता काहेते जो सर्वकी स्थितिदशामें सर्वको जानता है ॥ तैसे प्राज्ञ सुषुप्ति अवस्थाविषे सर्वको नहीं जानता तो भी तिसकी सर्वज्ञता नहीं दूर होती ॥

शंका–जो प्राज्ञ सर्वज्ञ है तो सर्वज्ञ क्यों नहीं प्रतीत होता ? ॥

उत्तर–प्राज्ञकी उपाधिरूप जो बुद्धिकी वासनाएँ हैं तिनको परोक्ष होणेते प्राज्ञकी सर्वज्ञता प्रत्यक्ष नहीं अनुभव होती प्राज्ञकी सर्वज्ञता अनुमानसे जानीजाती है सर्व बुद्धियोंविषे सर्वज्ञताको देखकरके सर्व बुद्धियोंविषे सर्वज्ञता अनुभवसिद्ध है काहेते जो दश पदार्थ किसीकी बुद्धि जानती है और दश पदार्थ किसीकी बुद्धि जानती है ताते सर्व बुद्धियोंविषे जो सर्वज्ञता है सो आपणी कारणरूप जो वासना हैं तिनविषे सर्वज्ञता करके उत्पन्न हुई है काहेते जो कार्यविषे धर्म है सो कारणविषे धर्म करके उत्पन्न होता है॥ जैसे वस्त्रविषे रूप तंतुओंविषे रूपते उत्पन्न भया है इस प्रकार आनंदमय प्राज्ञकी सर्वज्ञता सिद्ध भई ॥ अब जैसे तिसको अंतर्यामीरूपता है सोभी श्रवण कर–विज्ञानमयसे आदिलेकरके जो कोश हैं और पृथिवीसे आदि लेकरके जो पदार्थ हैं तिनके अंतर स्थित हुयाहुया तिन संपूर्णोंको प्रेरता है तिस कारण करके अंतर्यामी है ॥ इस अर्थविषे संपूर्ण अंतर्यामिब्राह्मण प्रमाण है तिसके सारे अर्थ कथन करणेविषे ग्रंथ बहुत विस्तारको प्राप्त होता है ताते तिसके एक वाक्यका अर्थ कथन करते हैं सो यह अंतर्यामिब्राह्मणविषे कथन किया है जो बुद्धिके अंतर स्थित है और बुद्धि जिसको नहीं देखसक्ती और बुद्धि जिसका शरीर है और बुद्धिको जो अंतरसे प्रेरता है सो अंतर्यामी है ऐसा जो अंतर्यामीका लक्षण है सो आनंदमय प्राज्ञ-

मय बनता है ताते आनंदमय प्राज्ञ अंतर्यामी है ॥ जैसे वस्त्रविषे उपादानरूपता करके तंतु स्थित हैं तैसे सर्व जगत्का उपादान होणेते अंतर्यामी सर्व जगत्विषे स्थित है ॥

शंका-जो अंतर्यामी सब पदार्थोंविषे स्थित है तो उपादानरूपता करके सर्वत्र क्यों नहीं प्रतीत होता ॥

उत्तर-सर्वके अंतर होणेतेही सर्वत्र नहीं प्रतीत होता ताते अनुमानते जानाजाता है सो अनुमान किस प्रकार करणा पटके अंतर तो तंतु हैं और तंतुओंके अंतर तंतुओंके अवयव हैं और तंतुओंके अवयवोंके अंतर उनते सूक्ष्म अवयव हैं इसी प्रकार जहां अंतरता समाप्त होजाय सो अंतर्यामी है ॥

शंका-अंतर्यामीको सर्वके अंतर हुयां हुयां भी अंतर्यामीकी प्रतीति क्यों न होवे ॥ जैसे तंतुओंके अवयव तंतुओंके अंतर होते हैं सो प्रतीत होते हैं ॥

उत्तर-तंतुओंके अवयव यद्यपि तंतुओंके अंतर हैं पर तो भी आपणे अवयवोंते बाह्य हैं इसते प्रतीत होते हैं और अंतर्यामी किसीते बाह्य नहीं सर्वके अंतर है इसते नहीं प्रतीत होता ताते श्रुतियाँ करके और युक्तियों करके अंतर्यामीका निर्णय होता है सो श्रुतियां कौन हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर-जड पदार्थोंकी प्रवृत्ति चेतन आधिष्ठानसे विना नहीं बनती जैसे रथादिकोंकी घोडों करके प्रवृत्ति होती है ॥ तैसे जडोंकी प्रवृत्ति अंतर्यामीसे होती है यह युक्ति है ॥ और श्रुति तो पीछे कथन कर आये हैं जो बुद्धिविषे स्थित है इसते आदि लेकरके यह संपूर्ण अंतर्यामीका शरीर है काहेते जो सर्वरूप करके अंतर्यामी स्थित भया है जैसे पटरूप करके तंतुओंके स्थित होणेते तंतुओंका शरीर वस्त्र है ॥ जैसे तंतुओंके संकोच करके पटका

संकोच होता है और तंतुओंके विस्तारते पटका विस्तार होता है तंतुओंके संकोच और विस्तारते विना स्वतंत्र पटका संकोच और विस्तार रतीभरभी नहीं ॥ तैसै यह अंतर्यामी जहां जहां जिस जिस घटादिरूपताकरके विस्तारको प्राप्त भया है तैसे तैसे घटादि पदार्थ अवश्य होते हैं भगवान्‌नेभी गीताके अठारहवें अध्यायविषे अंतर्यामी कथन किया है ॥ हे अर्जुन ! ईश्वर संपूर्ण प्राणियोंके हृदयविषे स्थित है शरीररूपी यंत्रविषे बैठे हुये जो प्राणी हैं तिनको मायाकरके भ्रमावता हुयांहुयां सर्व प्राणी कहते हैं सो हृदयविषे स्थित है उनका विज्ञानमयका उपादान रूपता करके अंतर्यामी परिमाणको प्राप्त होता है और शरीरादि पिंजरा यंत्र है ॥ और शरीरका जो अभिमान है सोई शरीरविषे बैठना है और पुण्यपापविषे जो प्रवृत्ति है सो विज्ञानमयरूपताकरके भ्रमण है और विज्ञानमयकी पुण्यपापविषे प्रवृत्तिरूपता करके आपणी माया शक्ति करके ईश्वर विकारको प्राप्त होता है जो ईश्वरका विकारको प्राप्त होना है सोई भ्रमावणा है॥ गीताविषे जो भ्रमावणा कहा है तिसका जो अर्थ है सोई अर्थ श्रुतिने कथन किया है. अन्तरसे प्रेरता है इस शब्द करके जिस प्रकारकरके बुद्धिको प्रेरता है तिसी प्रकार पृथिवी आदिक संपूर्ण पदार्थोंको अंतर्यामी प्रेरता है ऐसा बुद्धि करके जानना जो प्रवृत्ति हैं सो संपूर्ण अंतर्यामीके अधीन हैं इसविषे महाभारतका वाक्यभी प्रमाण है दुर्योधन कहता है मैं धर्मको जानताहूं पर धर्मविषे मेरी प्रवृत्ति नहीं होती और मैं अधर्मको जानताहूं पर अधर्मते मेरा मन हटता नहीं ताते कोईक देव हृदयविषे स्थित हुयां हुयां जैसे मेरेको प्रेरता है तैसे मैं करता हूं इस महाभारतके वाक्यद्वारा क्या सिद्धभया सर्व प्रवृत्ति अंतर्यामीके अधीन हैं ॥

शंका–जो जीवोंकी पुण्यपापविषे प्रवृत्ति ईश्वरके अधीन हैं तब पुरुषार्थकी व्यर्थता भई ॥

उत्तर-पुरुषार्थकोभी ईश्वरका रूप होणेते पुरुषार्थकी व्यर्थता नहीं ॥

शंका-जो पुरुषार्थ ईश्वररूप है तो ईश्वर प्रेरता है ईश्वर भ्रमावता है यह कथन व्यर्थताको प्राप्त होजावेगा ॥

उत्तर-ईश्वर प्रेरता है भ्रमावता है. रसज्ञान करके आत्माकी असंगता निश्चय होती है ताते अंतर्यामी रूपता करके ईश्वर प्रेरता ईश्वर भ्रमावता है यह शास्त्रका कथन व्यर्थ नहीं ईश्वर पुरुषार्थरूपता करके स्थित भया है इस ज्ञानकरके अंतर्यामीरूपता करके ईश्वरकी प्रेरकता दूर नहीं होती ईश्वर प्रेरक है आत्मा असंग है इस ज्ञानकरके मोक्षकी प्राप्ति होती है ऐसे श्रुतियां और स्मृतियां कथन करती हैं सो श्रुतियां स्मृतियां ईश्वरकी आज्ञारूप हैं ऐसा ईश्वरने कथन किया है ताते ईश्वरकी आज्ञारूप श्रुतिस्मृतिके अनुसार निश्चय किया चाहिये सो श्रुति ईश्वरको भयका कारण कहती हैं इस परमात्माके भयकरके पवन चलता है और परमात्माके भयकरके सूर्य उदय होता है ॥

शंका-श्रुतियां ईश्वरको भेदका कारण किसवास्ते कहती हैं ? ॥

उत्तर-ईश्वर और अंतर्यामी इनके अर्थभेदके वास्ते कहती हैं जो भयका कारण है सो तो ईश्वर है और जो प्रेरक है सो अंतर्यामी ईश्वरही बाह्यप्रेरक है और ईश्वरही अंतरप्रेरक है ऐसे श्रुतियां कथन करती हैं यह जो परमात्मा है तिसकी आज्ञाविषे सूर्य चंद्रमा आदिक स्थित हैं और यह परमात्मा अंतःकरणविषे स्थित होयकरके संपूर्ण जीवोंका प्रेरक है; इस प्रकार प्राज्ञ ईश्वर अंतर्यामी है. और यह आनंदमय प्राज्ञ जो है ईश्वर सो संपूर्ण जगत्‌का कारण है काहेते जो

संपूर्ण जगत्‌को उत्पन्नकरता है और नाशकरता है जो जगत्‌का प्रगट होना है सो जगत्‌की उत्पत्ति है और जो जगत्‌का तिरोधान होजाना है सो जगत्‌का प्रलय है यह प्राज्ञ ईश्वर आपणेविषे लीन हुये हुये संपूर्ण जगत्‌को प्रकट करदेता है ॥ प्राणियोंके कर्मोंकरके जैसे एकट्ठा किया हुया चित्रवस्त्र आपणेविषे लिखी हुई जो हस्ती घोडोंकी जो मूर्ति हैं तिनको लीन करलेता है ॥ और जो लीन हुई हुई हस्ती घोडे आदिकोंकी जो मूर्तियां हैं तिनको खुल्याँ हुयां प्रकट करदेता है ॥ तैसे प्राज्ञ ईश्वरभी प्राणियोंके कर्मोंके अभाव हुयां हुयां आपणेविषे संपूर्ण जगत्‌को लयकरलेता है ॥ जैसे तह किया हुया चित्रित-हुया वस्त्र आपणेविषे हस्ती घोडे आदिक मूर्तियोंको लयकरलेता है ॥ और जैसे रात्रि और दिन होते हैं ॥ जैसे सुषुप्ति और जाग्रत् होती हैं ॥ और जैसे नेत्रोंका खोलना और मींचना होता है ॥ और जैसे समाधि और मनोराज्य होते हैं ॥ तैसे जगत्‌की उत्पत्ति और विनाश है ॥

शंका—यह जो तुम कहते हो ईश्वर जगत्‌का कारण है सो तो नहीं बनता काहेते जो कारण दो प्रकारका होता है एक आरंभक कारण है एक परिणामी कारण है ॥ आरंभक कारण जैसे बहुत तंतु मिलकरके पटका कारण है और परमात्मा तो ऐसे आरंभक कारण नहीं काहेते जो अद्वितीय है और परिणामी कारण जैसे दुग्ध दधिका कारण है ऐसे परमात्मा कारण नहीं जो निरवयव है ॥

उत्तर—विवर्तवादको हम अंगीकार करते हैं, विवर्त कहता है ॥ जैसे सीपी आपणी सीपीरूपताको न त्यागकरके रूपारूप होजाती है ॥ तैसे ईश्वर आपणी ईश्वररूपताको न त्यागकरके जगत्‌रूप होकर भासता है ॥ जगत्‌का प्रकट करदेना मायाका स्वभाव है ॥

और जगत्को फेर अंतर्धानभी करलेना मायाका स्वभाव है तिस मायाशक्तिवाला ईश्वर है ताते आरंभवादविषे और परिणामवादविषे जो तैंने दोष कहे हैं तिन दोषोंकी प्राप्ति नहीं होती ॥

शंका-मायाशक्तिवाले ईश्वरको जो तुम जगत्का कारण कथन करतेहो सो सुरेश्वराचार्यके वचनसाथ विरोधको प्राप्त होता है काहेते जो सुरेश्वराचार्य ऐसा कथन करता है अज्ञानप्रधान परमात्मा अचेतन पदार्थोंका कारण है ॥ और संस्कार और ज्ञान और कर्म इन करके युक्त हुयां हुयां चैतन्यप्रधान परमात्मा जीवोंका कारण है इस प्रकार परमात्माको कारणता है और ईश्वरको कारणता नहीं ॥

उत्तर-जैसे त्वंपदार्थविषे कूटस्थ और चिदाभासका अन्योन्याध्यास है तैसे तत्पदार्थविषे ब्रह्मका और ईश्वरका अन्योन्याध्यास है तिसते ईश्वरविषे जो जगत्की कारणता है सो ब्रह्मविषे प्रतीत होती है यह सुरेश्वराचार्यका तात्पर्य है इसते सुरेश्वराचार्यके वचनसाथ विरोध नहीं आवता ॥

शंका-सुरेश्वराचार्यका यह तात्पर्य है यह वार्ता तुमने कैसे जानी॥

उत्तर-श्रुतिके अर्थको विचारकरके हमने सुरेश्वराचार्यका तात्पर्य ऐसा जाना है सो श्रुति कौन है ऐसे पूछे तो श्रवण कर यह श्रुति है ब्रह्म सत्य है और चैतन्य है और अनंत है तिसते आकाश पवन अग्नि जल धरती अन्न औषधियां शरीर उत्पन्न होता भया सामान्यदृष्टिकरके तिस श्रुतिविषे निर्गुण ब्रह्मको जगत्कारणता प्रतीत होती है.और जगत्का कारण जो है मायाधीन चिदाभासरूप ईश्वर तिसको सत्यता प्रतीत होती है सो अन्योन्याध्यासते विना नहीं बनती ताते ईश्वर और ब्रह्मका अन्योन्याध्यास है ॥ जैसे शुद्धवस्त्रका और अन्नलिप्तवस्त्रका अन्योन्याध्यास है ॥ जैसे शुद्धवस्त्र अन्नलिप्त वस्त्रके

साथ एकताको प्राप्त हुयां हुयां भ्रांति करके प्रतीत होता है तैसे शुद्ध निर्गुण ब्रह्मभी ईश्वरके साथ एकताको प्राप्त हुयां हुयां भ्रांतिकरके प्रतीत होता है ताते ईश्वरविषे जो जगत्‌की कारणता है सो शुद्ध ब्रह्मविषे भ्रांतिसे प्रतीत होती है ॥ जैसे मेघाकाश और महाकाशको पामर भिन्न भिन्न नहीं जानसक्के तैसे सूक्ष्म विचारसे रहित जो पुरुष हैं सो ब्रह्म और ईश्वरके भेदको नहीं जानसक्के ॥

प्रश्न-वह कौन सूक्ष्म विचार है जिसकरके ब्रह्म और ईश्वरका भेद प्रतीत होता है ॥

उत्तर-उपक्रम उपसंहार १ अभ्यास २ अपूर्वता ३ फल ४ अर्थवाद ५ उपपत्ति ६ यह तात्पर्यके निश्चय करावणेवाले षट्‌लिंग हैं इन षट्‌लिंगोंकरके श्रुतियोंके अर्थके तात्पर्यको निश्चय कियां हुयां ब्रह्म असंग प्रतीत होता है और मायाधीन ईश्वर जगत्‌का कारण प्रतीत होता है ताते श्रुतिविषे उपक्रम उपसंहारकी एकरूपताके देखणेकरके ब्रह्मकी असंगता स्पष्ट भासती है सो श्रवण कर सत्य चैतन्य अनंत ब्रह्म है ऐसे उपक्रम करके जिसते मनसहित वाणी निवृत्त होजाती है यह उपसंहार किया है इसते ब्रह्मकी असंगता निश्चय होती है और मायावाला जो ईश्वर है तिसको जगत्‌कारणता श्रुति कहती है ईश्वरने जो उत्पन्न किया है जगत् तिस जगत् विषे ईश्वरकी माया करके जीव बंधनको प्राप्त होता है ऐसे श्वेताश्वतर उपनिषद्‌की श्रुति कथन करती है इस करके यह जानाजाता है जो ईश्वर जगत्‌का कारण है जो आनंदमय ईश्वर जगत्‌का कारण कथन किया है तिसते जिसप्रकार जगत्‌की उत्पत्ति होती है सो श्रवण कर-आनंदमय जो ईश्वर है सो इच्छा करता भया जो मैं बहुत रूप होवौं ऐसी इच्छाकरके ईश्वर हिरण्यगर्भरूपताको प्राप्त भया ॥ जैसे सुषुप्ति स्वप्नरूपताको प्राप्त होजाती है ॥

शंका-तिस इस आत्माते आकाश उत्पन्न होता भया. और आकाशते पवन उत्पन्न होता भया इसते आदिलेकरके श्रुतिविषे क्रमकरके जगत्की उत्पत्ति कथन की है और अन्य श्रुतिविषे इकट्ठी जगत्की उत्पत्ति कथन की है इस सम्पूर्ण जगत्को रचता भया ताते इन दोनों प्रकारोंकी उत्पत्तिके मध्य किसको ग्रहण करणा और किसको त्यागना ॥

उत्तर-दोनोंप्रकारकी जगत्की उत्पत्तिको श्रुतियां कथन करती हैं और दोनों प्रकार युक्तिकरके सिद्ध होते हैं जिसके दो प्रकारकाही स्वप्न देखाजाता है क्रमकरकेभी स्वप्नके पदार्थ उत्पन्न होते हैं और इकट्ठेभी स्वप्नके पदार्थ उत्पन्न होते हैं ताते दोनों उत्पत्तिके प्रकार ग्रहण करणे योग्य हैं कोई भी त्यागने योग्य नहीं. जिस ईश्वरते हिरण्यगर्भकी उत्पत्ति हुई है तिस हिरण्यगर्भके स्वरूपको श्रवण कर-हिरण्यगर्भको सूत्रात्मा कहते हैं जैसे वस्त्रोंविषे सूत्र व्यापक होता है तैसे संपूर्ण जगत्विषे हिरण्यगर्भ व्याप रहा है ताते हिरण्यगर्भको सूत्रात्मा कथन किया है और सूक्ष्मशरीर भी तिसका नाम है सो हिरण्यगर्भ सूक्ष्मशरीर उपाधिवाले सम्पूर्ण जीवोंका समष्टिरूप है जिसते संपूर्ण व्यष्टि सूक्ष्म शरीरोंविषे अहं अभिमानवाला है हिरण्यगर्भ इच्छाशक्ति क्रियाशक्ति ज्ञानशक्तिवाला है. हिरण्यगर्भरूपअवस्थाविषे जगत् स्पष्ट नहीं नजर आवता ॥ जैसे प्रातःकाल विषे और संध्याकालविषे मंद अंधकारविषे लीन हुये पदार्थ स्पष्ट नहीं नजर आवते और जैसे अन्नकी माया लगी हुई है जिस वस्त्रको तिस वस्त्रविषे जो सूक्ष्म स्याहीकी लीकों करके रचे हुये हाथी घोडे आदिक होते हैं सो स्पष्ट नहीं नजर आवते काहेते जो उनविषे लाल पीले आदिक रंग पूर्ण नहीं भये तैसे मायावाले ईश्वरका स्वरूप अपंचीकृत भूतोंका कार्य सूक्ष्म शरीरों करके युक्त स्पष्ट नहीं भासता ॥ जैसे गेहूँ चने आदि-

कोंके नये उत्पन्न हुये हुये अंकुर और मेथी पालक आदिक सागोंके उत्पन्न हुये हुये अंकुर कोमल होते हैं तैसे हिरण्यगर्भअवस्थाविषे जगत्‌रूपी अंकुर कोमल होता है सो सूत्रात्मा पंचीकृतभूतोंका कार्य स्थूलउपाधिसहित हुया हुया विराट्‌ रूपताको प्राप्त होता है तिस विराट् अवस्थाविषे जगत् स्पष्ट प्रतीत होता है ॥ जैसे सूर्य उदय होनेसे धूपाविषे स्पष्ट पदार्थ प्रतीत होते हैं ॥ और जैसे लाल पीले आदिक रंगोंके प्राप्त हुयां हुयां चित्राविषे हाथी घोडे आदिक स्पष्ट प्रतीत होते हैं ओर जैसे खेतीको फल प्राप्त हुयां हुयां गेहूँ चने आदिक स्पष्ट प्रतीत होते हैं सो यह विराट्‌का स्वरूप विश्वरूपाध्याय विषे और सहस्रशीर्षाविषे कथन किया है ब्रह्मासे आदि लेकरके स्तंबपर्यंत संपूर्ण विराट्‌के अवयव जानने ऐसा कथन किया है ताते यह सिद्ध भया ईश्वर और सूत्रात्मा और विराट् और ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इंद्र, अग्नि, गणेश, भैरव, मैराल, मरिका; यक्ष, राक्षस, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, गौ, घोडे, मृग, पक्षी, पीपल, वट, आम्र, जौ, धान, तृण, जल, पाषाण, मृत्तिका, काष्ठ, बसोला, खुदाल इसते आदि लेकरके संपूर्ण ईश्वर हैं इन संपूर्णोंकी पूजा कियाँ हुयां फलकी प्राप्ति होती है तिस ईश्वरकी जिस जिस प्रकार करके जो उपासना करता है तिसको तिस तिसकी पूजाते तिस तिस फलकी प्राप्ति होती है ऐसे श्रुति कथन करती है ॥

शंका-संपूर्णको ईश्वररूपताके हुयां हुयां फलकी विषमता क्यों होती है ? ॥

उत्तर-पूजाके अधिष्ठान जो व्यक्तियां हैं और पूजा जो हैं इनके सात्त्विक राजस तामस भेदकरके फलकी न्यूनता और अधिकता होती है ॥

शंका-संसारके फल इसप्रकार प्राप्त होवें, पर मुक्ति किसकी उपासनासे होती है यह कहो ? ॥

उत्तर-मुक्तिकी प्राप्ति तो ब्रह्मज्ञानते होती है और किसीकरके नहीं होती ॥ जैसे अपना स्वप्न आपणे जागेसे विना नहीं दूर होता तैसे ब्रह्मके अज्ञानकर कल्पा जो जगत् है सो ब्रह्मज्ञानसे विना और किसी उपाय करके दूर नहीं होता ॥

शंका-स्वप्नके दृष्टांत करके द्वैतप्रपंचकी निवृत्तिरूप मोक्षकी ब्रह्मज्ञान करके प्राप्ति जो तुम कथन करतेहो सो तो नहीं बनती जिसेत ज्ञानकरके दूर होनेवाला जो जाग्रत् प्रपंच है तिसको स्वप्न तुल्यता नहीं ॥

उत्तर-द्वैतप्रपंचको स्वप्नतुल्यता नहीं है ॥ जैसे स्वप्नके पदार्थ निद्रादोषकरके प्रतीत होते हैं तैसे जाग्रत् जगत्भी अज्ञानरूप दोषकरके भासता है वास्तवसे है नहीं श्रुतिभी कथन करती है जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति ये तीनों मिथ्या हैं ताते अद्वितीयब्रह्मतत्त्वविषे ईश्वर जीवादिरूपताकरके जड चेतन जगत् संपूर्ण स्वप्न है ॥

शंका-ईश्वर जीव तो ब्रह्मसे अभिन्न है उनको जगत्के अंतर कैसे कथन करते हो ? ॥

उत्तर-आनंदमय जो ईश्वर है और विज्ञानमय जो जीव है सो यह दोनों मायाकरके कल्पित हैं इन दोनोंने आगे संपूर्ण जगत् कल्पित किया है ताते मायाकल्पित जीव ईश्वरको जगत्के अंतर्गतता है इच्छासे आदि लेकरके शरीरविषे प्रवेशपर्यंत जगत् ईश्वरने कल्प्या है और जाग्रत् अवस्थाते लेकर मोक्षपर्यंत जगत् जीवने कल्प्या है ॥

शंका-जो जीव ईश्वररूपताकरके वर्तमान जडचेतनरूप जगत्

मिथ्या है और ब्रह्महो एक वास्तव सत्य है तो वादियोंका जीव ईश्वर विषे विवाद क्यों है ? ॥

उत्तर—श्रुतिसिद्ध असंग अद्वितीय ब्रह्मतत्त्वको वादी नहीं जानते ताते मिथ्याभूत जीव ईश्वरविषे व्यर्थही वादी विवाद करते हैं ॥

शंका—जो अज्ञान करके जीव ईश्वरविषे वादियोंका विवाद है तो वादियोंको ऐसा उपदेश किया चाहिये तुम अज्ञान करके करते हो ॥

उत्तर—वादियोंको ऐसा उपदेश करणेमें लाभ कुछ नहीं व्यर्थ श्रम है ताते हम वादियोंको ऐसा उपदेश नहीं करते किंतु तत्त्वनिष्ठावालोंको देखकरके सदाही आनंदको प्राप्त होते हैं और तत्त्वनिष्ठासे रहित जो अज्ञानी हैं तिनको देखकरके शोक करते हैं पर भ्रमको जो प्राप्त हुयाँ हुयाँ अज्ञानी हैं तिनके साथ विवाद नहीं करते तृणादि पूजाकरणेवालोंसे लेकरके और योगशास्त्रवालोंपर्यंत जो वादी हैं सो ईश्वरविषे भ्रमको प्राप्त हुयाँ हुयाँ हैं और देहात्मवादीसे आदिलेकरके सांख्यशास्त्रवालोंपर्यंत जो वादी हैं सो जीवविषे भ्रमको प्राप्त हुयाँ हुयाँ हैं जिसते अद्वितीय ब्रह्मतत्त्वको नहीं जानते इसते संपूर्णवादी भ्रमको प्राप्त हुयाँ हुयाँ हैं और तिनको मोक्षकी प्राप्तिकी वार्ता क्या कहिये संसारका सुखभी तिनको नहीं होता काहेते जो आपणे आपणे पक्षके सिद्ध करणेवास्ते तिनका चित्त सदाही तप्त रहता है ॥

शंका—यद्यपि तिन वादियोंको ब्रह्मविद्याकी प्राप्ति नहीं पर और विद्या तो उनको अनेक प्राप्त हुयाँ हुयाँ हैं तिन विद्याओं करके तिन वादियोंकी उत्तमता और अधमता देखीजाती है तिस उत्तमता करके तिनको सुख होवो तुम कैसे कहतेहो उनको संसारका सुखभी नहीं ॥

उत्तर–ऐसा जो उन वादियोंको संसारका सुख है सो होवो, पर मुमुक्षुकी दृष्टिकरके तिस सुखको सुख नहीं कहाजाता ॥ जैसे स्वप्नके राज्यकरके और भिक्षाकरके जागेहुए पुरुषको सुख और दरिद्रता नहीं होती ताते मुमुक्षुने जीव ईश्वरवादविषे आपणी बुद्धि न लगाई चाहिये जिसते जीव ईश्वरवाद मोक्षका कारण नहीं ताते मोक्षका कारण जो है ब्रह्मज्ञान तिसको ब्रह्मविचार करके प्राप्त हुया चाहिये ॥

शंका–ब्रह्मज्ञानकेवास्ते जीव ईश्वरका स्वरूप त्यागने योग्य है विना जानेसे जीव ईश्वरका त्याग बनता नहीं ताते जीव ईश्वरका स्वरूप जानना चाहिये ॥

उत्तर–जो जीव ईश्वरके त्यागनेवास्तेही जीव ईश्वरका स्वरूप जान्या चाहिये है तो जीव ईश्वरवादविषेही बुद्धि नहीं खरच करदेनी जिस ते पूर्वपक्षरूपता करके जीव ईश्वर निर्णय ब्रह्मनिर्णयविषे कारण हैं तिसते जीव ईश्वर निर्णयविषेही नहीं डूब जाना किन्तु जीव ईश्वर निर्णयके आगे ब्रह्मनिर्णय करणा ॥

शंका–सांख्यशास्त्रकरके कथन किया जो जीव और योगशास्त्र करके कथन किया जो ईश्वर तिन दोनोंको शुद्ध चैतन्यरूपता करके तुम भी अंगीकार करते हो ताते सांख्यशास्त्रकरके कथन किया जो जीव तिसको पूर्वपक्षरूपता नहीं और योगशास्त्रकरके कथन किया जो ईश्वर तिसको पूर्वपक्षरूपता नहीं काहेते जो सांख्यशास्त्रवाले असंग चैतन्यरूप जीवको कथन करते हैं और योगशास्त्रवाले असंग चैतन्यरूप ईश्वरको कथन करते हैं ताते शुद्धचैतन्यरूप जो जीव ईश्वर हैं तिनको पूर्वपक्षरूपता नहीं बनती ॥

उत्तर–यद्यपि सांख्य योगशास्त्रकरके कथन किये जीव ईश्वरको

शुद्ध चैतन्यरूपता है पर तोभी सांख्यशास्त्रवाले जीवोंका भेद वास्तव मानते हैं और योगशास्त्रवाले जीव ईश्वरका भेद वास्तव मानते हैं इसते सांख्यशास्त्रकरके और योगशास्त्रकरके कथन किया जो जीव ईश्वरका स्वरूप है सो हमारे सिद्धांतमें अंगीकार नहीं ॥

शंका-कूटस्थ शब्दकरके शुद्ध चैतन्यरूप त्वं पदार्थ और ब्रह्मशब्द करके शुद्ध चैतन्यरूप तत्पदार्थ भिन्न तुमभी कथन करतेहो ? ॥

उत्तर-लोकप्रसिद्ध जीव ईश्वरके भेद दूरकरणेद्वारा जीव ईश्वरकी एकताके कथन करणेक वास्ते जीव ईश्वरका भेद हमने जनाया है नहीं, वास्तव हम जाव ईश्वरका भेद कथन करते तो फिर जीव ईश्वरका शोधन किसवास्ते करते, जो जीव ईश्वरका भेद नहीं ऐसा पूछे तो श्रवण कर-अनादि अविद्याकरके भ्रमको प्राप्त हुये हुये जो लोक हैं सो जीव ईश्वरको भिन्न भिन्न मानते हैं भ्रमको प्राप्त हुयेहुये लोक क्या कहते हैं कि कर्ता भोक्ता जीव है और सर्वज्ञतादिक गुणोंवाला ईश्वर है ताते जीव ईश्वरका वास्तव भेद है इस भ्रमके दूरकरणेके वास्ते जीव ईश्वरका शोधन हमभी करते हैं जिसते जीव ईश्वरका शोधन अवश्य करणे योग्य है इसीसे पीछे हम शोधनके अनुकूल दृष्टांत कथन करआये हैं घटाकाश महाकाश जलाकाश, मेघाकाशरूप, जलरूप उपाधिके अधीन जलाकाश है और मेघरूप उपाधिके अधीन मेघाकाश है ताते जलाकाश और मेघाकाश दोनों मिथ्याभूत हैं और जलाकाश और मेघाकाशका अधिष्ठान घटाकाश और महाकाश और महाकाश सत्य है जैसे जलरूप और मेघरूप उपाधिसे रहित आकाशमात्र रूप होणेते तैसे आनंदमय जो ईश्वर है सो मायाउपाधिके अधीन है और विज्ञानमय जो जीव है सो अंतःकरणरूप उपाधिके अधीन है और आनंद-

मयका अधिष्ठान जो ब्रह्म है और विज्ञानमयका अधिष्ठान जो कूटस्थ है सो सत्य है और आनंदमय और विज्ञानमय कल्पित हैं ॥

शंका–त्वंपदार्थके शोधनवास्ते सांख्यशास्त्रका अंगीकार किया चाहिये है जिसकारणते त्वंपदार्थके शोधनविषे जो अनेक प्रकार हैं उनके मध्य एक प्रकार सांख्यशास्त्रवालोंनेभी कथन किया है और तत्पदार्थके शोधनविषे जो अनेक प्रकार हैं उनके मध्य एकप्रकार योगशास्त्रवालोंने भी कथन किया है ताते योगशास्त्र भी अंगीकार किया चाहिये ॥

उत्तर–इसप्रकार जो सांख्यशास्त्र और योगशास्त्रका अंगीकार है तो बाकी शास्त्रोंका भी अंगीकार किया चाहिये ताते देहकोभी आत्मरूपता अंगीकार करी चाहिये जैसे देहको आत्मरूपता हम नहीं अंगीकार करते जैसे सांख्य योगके मतकोभी हम अंगीकार नहीं करते ॥

शंका–जैसे देहात्मवादियोंका वेदांतियोंके साथ विरोध है ऐसे सांख्य और योगशास्त्रवालोंका तो विरोध नहीं प्रतीत होता जिसते सांख्य योगवाले जीव ईश्वरको शुद्ध चैतन्यरूप मानते हैं ॥

उत्तर–तिन बातोंका सांख्य और योगशास्त्रवालोंका वेदांतोंके साथ विरोध है एक तो आत्माका भेद दूसरा जगत् सत्य तीसरा जीव ईश्वरका भेद जो इन तीन बातोंको सांख्य योगवाले त्याग देवें तब वेदांतियोंके साथ विरोध कुछ नहीं ॥

शंका–जीव असंग है इस ज्ञानकरकेही मोक्षकी प्राप्ति हो जाती है अद्वैतज्ञानकी कुछ इच्छा नहीं ॥

उत्तर–हृदयविषे गुह्य तात्पर्यको रखकरके पुष्पमाला और चंदनादि जो विषय हैं इनकी नित्यता ज्ञानकरकेही मोक्षकी प्राप्ति होजायगी जीवकी असंगता ज्ञानकी भी कुछ इच्छा नहीं ॥

शंका–पुष्पमाला चंदनआदि विषयोंकी नित्यता तो बनती नहीं जिसकारणते प्रत्यक्ष उत्पत्तिविनाशवाले नजर आवते हैं ॥

उत्तर–गुह्य तात्पर्यको प्रकट करते हुये कथन करते हैं ॥ जैसे पुष्पमाला और चंदनआदिक विषयोंकी नित्यता नहीं बनती तैसे अद्वैतज्ञानते विना आत्माकी असंगताभी नहीं बनती ताते अद्वैतज्ञान अवश्य चाहिये जो आत्माका भेद बना रहैगा तब रागद्वेष आदिक अवश्य प्राप्त होवेंगे और जो ईश्वर आत्मासे भिन्न होवेगा तो परतंत्रता आत्माकी दूर न होवेगी और जगत् जो सत्य होवेगा तब आत्माकी असंगता न सिद्ध होवेगी और प्रकृति जो सत्य होवेगी तो प्रथमकी न्याईं फेर संगको करवाय देवेगी और जीवको फेर पुण्यपापविषे प्रेर देवेगी ऐसे हुयां हुयां इस जीवका मोक्ष क्या सिद्धभया ॥

शंका–संग और प्रेरणा अविवेककरके किये हुये हैं विवेककरके अविवेकके नाश हुयां फेर संग और प्रेरणाकी उत्पत्ति नहीं होती ॥

उत्तर–ऐसे मान्यां हुयां दुष्टबुद्धि सांख्यको आपणे सिद्धांतकी हानि होवेगी और वेदांतसिद्धांत जो है ब्रह्मसे भिन्न सर्वकी मिथ्यारूपता तिसकी जोरा जोरी प्राप्ति होवेगी तात्पर्य यह तू जो कहता है अविवेक करके संगादिक हैं सो अविवेक किसका नाम है जो कहैं विवेकके अभावका नाम अविवेक है तब अभावमात्रको भावरूप संगादिकोंकी कारणता नहीं बनती और जो कहैं विवेकते अन्य अविवेक है तब विवेकते अन्य जो घटपटआदिक पदार्थ हैं तिनकोभी संगआदिकोंकी

कारणता हुई चाहिये सो तो कभीभी नहीं देखीजाती और जो कहैं विवेकका विरोधी अविवेक है तब विवेकका विरोधी अज्ञान सिद्धभया ताते अज्ञानकृत संगआदिक हैं यह सांख्य शास्त्रवालेको प्राप्त भया ॥

शंका--अद्वैतके अंगीकार कियाँ हुयां बंधमोक्षकी व्यवस्था नहीं बनती ताते आत्माका भेद अंगीकार किया चाहिये ॥

उत्तर--आत्माकी एकताके अंगीकार कियाँ हुयाँ भी माया करके बंधमोक्षव्यवस्था बनजाती है जाते माया जो बात न बने तिसके बनावनेको भी समर्थ है ॥

शंका--मायाभी एक आत्माविषे बंध मोक्ष कैसे करदेवेगी ?

उत्तर--मायाका स्वभावही ऐसा है जो बात न बने तिसको बनाय देना ऐसा विरुद्ध स्वभाव मायाका तू नहीं देखता ॥

शंका--बंधको अविद्याका कार्य हुयां हुयां भी मोक्षको सत्य मान्या चाहिये ॥

उत्तर--मोक्षनाम बंधकी निवृत्तिका है ताते जैसे बंध मिथ्या है तैसे मोक्षभी मिथ्या है वास्तव बंध और मोक्ष दोनों श्रुति नहीं मानती सो श्रुति यह है नाश और उत्पत्ति और बंध और साधक और मुमुक्षु और मुक्त इसते आदिलेकरके सत्य कुछ नहीं जैसे कोई आपणे घरविषे बैठा है और उसको भ्रम करके यह प्रतीत भया मेरेको सिपाही पकडने आये हैं और मेरी वहां किसीने चुगली करी है और मेरेको राजसभाविषे उत्तर कुछ नहीं आया और मेरे पैरों बेडियां पडगई हैं और अमुकने सिफारस करके छुडाया है और पांच सात रुपैया तिसने बेडीका दिया और मेरे ऊपर बहुत उपकार किया है इसते आदिलेकरके वास्तव कुछ नहीं ताते जीव ईश्वरआदि-

भेद संपूर्ण मिथ्या हैं मायारूप कामधेनु गौके जीव ईश्वर दोनों बच्छे हैं सो द्वैतरूप दूधको आपणी इच्छासे पीते हैं और तथ्य तो वास्तव अद्वैत है ॥

शंका-जीव ईश्वर दोनोंको मिथ्या होने करके तिनका भेद भी मिथ्या होवो पर कूटस्थ और ब्रह्म तो वास्तव हैं ताते तिनका भेदभी वास्तव होवे ॥

उत्तर-कूटस्थ और ब्रह्मका भेद वास्तव नहीं कथनमात्र भेद है जिसते स्वरूपका भेद नहीं जैसे सच्चिदानंदरूप कूटस्थ है तैसे सच्चिदानंदरूप ब्रह्म है. जैसे घटाकाश और महाकाशका भेद नहीं तैसे कूटस्थ और ब्रह्मका भेद नहीं जो अद्वैत जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम श्रवण किया है सजातीय विजातीय स्वगतभेदसे रहित सो ज्योंका त्यों आजपर्यंत स्थित है तैसाही आगे मोक्ष अवस्थाविषे होवेगा व्यर्थ माया संपूर्ण लोकोंको भ्रमाय रही है मूर्खता करके अज्ञानी भेदविषे हठकरते हैं ॥

शंका-जो पुरुष इस प्रकार प्रपंच मिथ्यारूपताको कथन करते हैं और आत्माकी अद्वैतरूपताको कथन करते हैं सोभी संसारको प्राप्त हुयेहुये देखते हैं इसते तत्त्वज्ञानके साथ कुछ प्रयोजन नहीं जिसते तत्त्वज्ञानीको भी राग द्वेषरूप संसार भ्रमावता है ॥

उत्तर-कर्मोंके वास्ते कइ ज्ञानवानोंको व्यवहारविषे स्थित हुयां हुयां भी प्रथमकी न्याईं रागद्वेष नहीं होते ताते ब्रह्मज्ञानके साथ प्रयोजन है जिसते ब्रह्मज्ञान करके भ्रम अभाव हो जाता है और अज्ञानीको भ्रम होजाता है अज्ञानीके निश्चय अनुसार जाना जाता है जो अज्ञानीको भ्रम है और ज्ञानीके निश्चय अनुसार जाना जाता है ज्ञानीको भ्रम नहीं सो अज्ञानी और ज्ञानीका निश्चय श्रवण कर-अज्ञानीका निश्चय

तो यह है इसलोकविषे स्त्री पुत्र आदिकोंका पालना और परलोकविषे स्वर्गसुख आदिकोंका अनुभव करणा यह है रूप जिसका ऐसा जो संसार है सो सत्य है और अद्वैत न है न भासता है. और ज्ञानवान्का निश्चय यह है अद्वैत वास्तव है और अपरोक्ष भासता है और पुत्र स्त्री आदिक और स्वर्गसुखादि सर्व मिथ्या हैं आपणे निश्चय करके अज्ञानी बंधको प्राप्त होता है और आपणे निश्चय करके ज्ञानवान् मोक्षको प्राप्त होता है ॥

शंका-यह जो ज्ञानवान् कहते हैं अद्वैत अपरोक्ष भासता है सो कहना शास्त्रके बलते है अनुभव करके नहीं ॥

उत्तर-चैतन्यरूपताकरके अद्वैत अनुभव सिद्ध है ॥

शंका-चैतन्यरूपताकरके अद्वैतप्रतीतिके हुयां हुयांभी सर्वरूपकरके अद्वैतप्रतीति नहीं होती ॥

उत्तर-सर्वरूपकरके द्वैतभी नहीं भासता. जैसे किसीके रूप करके द्वैतभासता है तैसे अद्वैतभी किसीके रूप करके भासता है ताते द्वैत भासता है ताते द्वैत निश्चयकी न्याईं अद्वैत निश्चय किसकर तेरेको नहीं होता ॥

शंका-अद्वैतनाम है द्वैतसे रहितका सो द्वैतके ज्ञान हुयां हुयां अद्वैत निश्चय कैसे बने जिसते द्वैत अद्वैत परस्पर विरोधवाले हैं ॥

शंका-(सिद्धांतीकी) जैसे द्वैत अद्वैतका विरोधी है तैसे अद्वैतभी द्वैतका विरोधी है ताते चैतन्यरूपकरके अद्वैतकी प्रतीतिके हुयां हुयां द्वैत निश्चय नहीं चाहता ताते यह शंका तेरेको और मेरेको एक जैसी है ॥

उत्तर-(पूर्वपक्षीका) यह शंका समान नहीं जिसते चैतन्य

रूपताकरके अद्वैतकी जो प्रतीति है सो द्वैत प्रतीतिको नाश नहीं करती जिसते चैतन्यप्रतीति द्वैतप्रतीतिका कारण है और द्वैतप्रतीति अद्वैतप्रतीतिका कारण नहीं ॥

उत्तर-(सिद्धांतीका) प्रतीत होताहुवा जो द्वैत है तिसको मिथ्या होणेते सो अद्वैतके नाशको नहीं करता ताते सर्वरूपताकरके अद्वैत भासता है जितना यह जगत् है सो मिथ्या है जिसते इसकी रचना चिंतन नहीं की जाती यही मिथ्याका लक्षण है जो प्रतीत होना और अचिंत्यरचनारूप होना ॥

शंका-इसप्रकार अद्वैत निश्चय कियाँ हुयाँ भी वारंवार पूर्वली वासनाओंकरके द्वैतकी सत्ता प्रतीत होती है ॥

उत्तर-द्वैतसत्ताके दूर करणेवास्ते वारंवार द्वैतकी मिथ्यारूपताका विचार किया चाहिये अद्वैतके विचारविषे तेरेको भार है कितनाकाल तो द्वैतकी मिथ्यारूपताका विचार करणा ऐसा पूछे तो श्रवण कर-अद्वैतदीप अपरोक्ष प्रतीतिपर्यंत द्वैतकी मिथ्यारूपताका विचार करणा ताते अद्वैत विचारविषे खेद नहीं मानना और द्वैतप्रतीतिविषेही खेद मानना जिसते द्वैतकी प्रतीतिके हुयां हुयां ही सर्व अनर्थोंकी प्राप्ति होती है और अद्वैतकी प्रतीति हुयां हुयां सर्व अनर्थोंका अभाव हो जाता है ॥

शंका-इसप्रकार अद्वैत आत्मतत्त्वके अपरोक्ष ज्ञानवान् जो मैं हूं उसके क्षुधा तृषाआदिक अनर्थ तो दूर हुये हुये नजर नहीं आवते ताते अद्वैतज्ञान अनर्थके अभावका कारण है यह कहना अयुक्त है ॥

उत्तर-अहंकारविषे क्षुधा तृषादिक नजर आवते हैं तो नजर आवें, हम नहीं यह वार्ता अंगीकार करते जो अहंकारविषे क्षुधा

तृषाआदिक दूर होजाते हैं तो हम क्या कहते हैं साक्षी असगरूप जो आत्मा है तिसविषे क्षुधा तृषाआदिक जो क्लेश भ्रमकरके प्रतीत होते थे सो ज्ञानकरके दूर होजाते हैं ॥

शंका-वास्तव चैतन्यरूप आत्माविषे क्षुधा पिपासा आदिक नहीं, पर अहंकारके साथ तादात्म्याध्यासकरके चैतन्यरूप आत्माविषे क्षुधा पिपासा आदिक प्रतीत होते हैं ॥

उत्तर-जो अध्यासकरके प्रतीत होते हैं क्षुधा पिपासा आत्माविषे तो अनर्थोंका कारण जो अध्यास है तिसके दूरकरणेकेवास्ते सदा विवेकको कर ॥

शंका-अनादिकालकी वासना करके वारंवार अध्यासकी प्राप्ति होती है ॥

उत्तर-अध्यासके दूर करणेवास्ते वारंवार विवेकही करणा चाहिये और उपाय कोई नहीं किया चाहिये जैसे वारंवार क्षुधाके प्राप्त हुयां हुयां तिसके दूर करणेवास्ते अन्न भक्षण किया है जितना कालपर्यंत विवेक दृढचित्तविषे न बस जाय उतना कालपर्यंत विवेकका अभ्यास किया चाहिये ॥

शंका-विवेककरके द्वैतकी मिथ्यारूपता युक्तिकरके सिद्ध होती है अनुभव करके तो द्वैतकी मिथ्यारूपता सिद्ध नहीं होती ॥

उत्तर-द्वैतकी अचिंत्यरचनारूपता तो तेरे अनुभव करके सिद्ध है अचिंत्यरचनारूपता मिथ्या वस्तुका लक्षण है ताते द्वैतकी मिथ्यारूपता तेरे अनुभव करके सिद्ध भई ॥

शंका-अचिंत्यरचनारूपता तो मिथ्या पदार्थका लक्षण नहीं बनता जिसते आत्माभी अचिंत्यरचनारूप है, कोईभी आत्माकी रचनारूपताको नहीं जानसक्ता जिसते आत्माको नित्य होणेते आत्माकी रचना नहीं है ॥

उत्तर-जो पदार्थ उत्पत्तिवाला होवे और उसकी उत्पत्तिका प्रकार न चिंतन किया जाय सो पदार्थ मिथ्या होता है आत्मा तो उत्पत्तिसे रहित है ताते तिसकी उत्पत्तिके प्रकारकी चिंताके अभाव हुयांहुयां भी आत्मा सत्यरूप है ॥

शंका-यह जो तुमने मिथ्या वस्तुका लक्षण किया है सो अविद्या विषे नहीं संभव होता जिसते अविद्या उत्पत्तिसे रहित अनादि है ॥

उत्तर-जो उत्पत्तिवाला होवे और भावे विनाशवाला होवे और फेर अचिंत्यरचनारूप होवे सो मिथ्या कहिये है अविद्या यद्यपि उत्पत्तिवाली नहीं तथापि विनाशवाली है ताते अविद्याभी मिथ्या है और चैतन्य उत्पत्ति विनाश दोनोंसे रहित है इसते अचिंत्यरचनारूपताके हुयां हुयां भी सत्य है उत्पत्ति किसकी होती है जिसका प्राक् अभाव होता है चैतन्यका तो प्राक् अभाव है नहीं और चैतन्यका नाशभी नहीं और जो कोई कहै चैतन्यकी उत्पत्ति और विनाश होता है तब हम उसको ऐसे पूछतेहैं चैतन्यकी उत्पत्ति और विनाशका अनुभव होता है कि, नहीं होता जो कहै नहीं अनुभव होता तब चैतन्यका उत्पत्ति विनाश न सिद्ध भया और जो कहै अनुभव होता है तब जडकरके अनुभव होता है कि, चैतन्य करके अनुभव होता है जड करके अनुभव होता है यह तो कहना नहीं बनता जिसते जडोंको अनुभव करणेका सामर्थ्य नहीं और जो चैतन्यके उत्पत्ति विनाशको अनुभव करता है तब जिस चैतन्यका उत्पत्ति विनाश होता है तिसी चैतन्यने तिसका अनुभव किया है कि और चैतन्यने अनुभव किया है जो कहै तिसी चैतन्यने अनुभव किया है तो यह वार्ता नहीं बनती जिसते उत्पत्ति विनाशका सो अनुभव करता है जो उत्पत्तिसे प्रथम होता है और विनाशके पाछे शेष रहता है

जिस चैतन्यकी उत्पत्ति भई सो उत्पत्तिसे प्रथम नहीं और जिस चैतन्यका विनाश भया सो विनाशके पीछे नहीं और अन्य चैतन्यने उत्पात्ति विनाश अनुभव किया है यहभी कहना नहीं बनता जिसते चैतन्य दूसरा अद्वैतवादविषे है नहीं और चैतन्यके उत्पत्ति विनाशका अनुभव तो तब बने जो चैतन्यकाभी अनुभव होवे जिसते ऐसा जगत् विषे नियम है जिस पदार्थका अनुभव होवे तिसके उत्पत्ति विनाशभा होवें अनुभव नहीं होता ताते चैतन्यकी उत्पत्ति और विनाशके अनुभव वास्ते चैतन्यका अनुभव अवश्य मान्यां चाहिये ऐसे हुयां हुयां जिसका अनुभव भया सो चैतन्य नहीं किंतु जड है ताते यह सिद्ध भया चैतन्यके उत्पात्ति विनाशका अनुभव नहीं होता ताते चैतन्य नित्य है ॥

शंका–जैसे आत्माका उत्पत्ति विनाश ग्रहण नहीं होता तैसे अनात्माकाभी उत्पत्ति विनाश ग्रहण नहीं होता जाते अनात्मा नाम प्रमाता प्रमाण प्रमेयका है. ग्रहण जो वस्तु होती है सो प्रमाताने प्रमाण करके ग्रहण करी है ताते प्रमाता आपणे अभावको आप कैसे ग्रहण करे जिसते प्रमाताकी विद्यमान अवस्थाविषे और अविद्यमान अवस्थाविषे प्रमाताने प्रमाताका अभाव नहीं ग्रहण करसकता. प्रमाताकी विद्यमान अवस्थाविषे प्रमाताका अभाव विद्यमान है और प्रमाताकी अभावदशाविषे ग्राहकका अभाव है इसतिरह प्रमाणका अभाव प्रमाणकी विद्यमान और अविद्यमान अवस्थाविषे प्रमाणकरके नहीं ग्रहण होसक्ता इसतिरह प्रमेयकी विद्यमान और अविद्यमान दशाविषे प्रमेयका अभाव नहीं ग्रहण होता और प्रमातासे भिन्न अन्य कोई प्रमाताआदिरूप द्वैतके अभावको ग्रहण नहीं करसक्ता।

उत्तर–द्वैतके अभावको चैतन्यने ग्रहण किया है, सुषुप्ति अवस्था-

विषे जाग्रत् स्वप्नरूप द्वैतका अभाव साक्षीने अनुभव किया है सुषुप्तिविषे प्रमाता नहीं होता जाते प्रमाता नाम अंतःकरणविशिष्ट चैतन्यका है और प्रमाण नाम अंतःकरणवृत्तिविशिष्ट चैतन्यका है और प्रमेय नाम तिसका है जो पदार्थ जाग्रत् स्वप्नविषे प्रतीत होते हैं तिन संपूर्णोंके अभावको सुषुप्ति अवस्थाविषे साक्षीने ग्रहण किया है श्रुतिभी कथन करती है आत्मा अज्ञानका साक्षी है सर्वका साक्षी है ताते द्वैतप्रपंचको उत्पत्तिवाला हुयांहुयांभी अचिंत्यरचनारूप होणेते मिथ्यारूपता सिद्ध भई जैसे घटादिक उत्पत्तिवाले हैं तैसे द्वैतभी उत्पत्तिवाला है पर तोभी तिसकी रचना चिंतन नहीं होसक्ती ताते ऐंद्रजालिककरके रचेहुये मंदिरकी न्यांई द्वैत मिथ्या है चैतन्य तो स्वप्रकाशता करके नित्य और अपरोक्ष प्रतीत होता है और चैतन्यसे भिन्न जो वस्तु है तिसकी मिथ्यारूपता चैतन्यने अनुभव करी है ऐसे हुयांहुयां चैतन्य अद्वैत अपरोक्ष नहीं यह कहना अयुक्त है ॥ जैसे कोई कहे मेरे मुखमें जीभ नहीं यह कहना अयुक्त है ॥

प्रश्न–इसप्रकार वेदांतोंके अर्थको जाननेवाले जो पुरुष हैं उनके मध्य कई पुरुषोंको इस अर्थविषे विश्वास क्यों नहीं होता इस वार्ताका उत्तर कहो ॥

प्रश्न–(सिद्धांतीका प्रतिबंधीरूप) विचारविषे चतुर देहात्मवादी है उसको देहकी अनात्मता क्यों नहीं ग्रहण होती इस प्रश्नका उत्तर कहो. पूर्वपक्षी प्रतिबंधीरूप प्रश्नका उत्तर कहता है देहात्मवादीको आपणी बुद्धिके दोष करके यथार्थ विचारकी प्राप्ति नहीं भई ॥

उत्तर–(सिद्धांतीका) जो वेदांतअर्थविषे संतोषसे रहित हैं तिनको आपणी बुद्धिके दोषते वेदांतअर्थका विचार यथावत् नहीं भया यहांपर्यंत वस्तुके तत्त्वका विचार किया उस करके क्या जान्या द्वैत

मिथ्या है और आत्मा अद्वितीय है. अब आगे विचारजन्य तत्त्वज्ञानका जो फल है तिसको श्रवण कर–श्रुति तत्त्वज्ञानका फल कथन करती है पुरुषके हृदयविषे स्थित जो कामना हैं तादात्म्याध्यासते उत्पन्न भई इच्छादिक सो दूर होजाती हैं तब तत्त्वज्ञानकरके अध्यासकी निवृत्तिके हुयांहुयां तिसी कालविषे यह पुरुष मोक्षको प्राप्त होता है जिसते ब्रह्मरूप होजाता है यह जो फल है सो श्रुति कथन करती है पर अनुभवसिद्ध नहीं ऐसे कहें तो नहीं कहणा जिसते अगली श्रुतिके विचार कियां हुयां इस तत्त्वज्ञानके फलको अनुभवसिद्धता नजर आवती है सो अगला श्रुतिवाक्य कौन है ऐसा पूछे तो श्रवण कर–यह श्रुति है जब इस पुरुषके हृदयविषे स्थित संपूर्ण हृदयग्रंथियां दूर हो जाती हैं तब पुरुषको मोक्षकी प्राप्ति होती है इस वाक्यने क्या कथन किया है ज्ञानकरके कामकी निवृत्ति जो है सो ग्रंथिकी निवृत्ति जाननी. ग्रंथिनाम है अहंकार और चिदात्माके अध्यासका सो अध्यासकी निवृत्ति अनुभवसिद्ध है ताते तिसको अप्रत्यक्षता नहीं ॥

शंका–लोकविषे काम नाम इच्छाका है तुम कामका नाम ग्रंथि कैसे कथन करते हो ? ॥

उत्तर–अध्याससहित इच्छाका नाम काम है इच्छामात्रका नाम नहीं अहंकार और चिदात्मा इन दोनोंको अविवेकते इकट्ठे करके यह पदार्थ मेरेको प्राप्त होवे यह पदार्थ मेरेको प्राप्त होवे ऐसी जो इच्छा है इसका नाम काम है ॥

शंका–अध्याससहित जो इच्छा है इसीको त्यागयोग्य हुयांहुयां अध्यासते रहित इच्छाका अंगीकार करणा आया ॥

उत्तर–अध्यासते रहित इच्छाके अंगीकार करणेविषे कोई दोष नहीं. तत्त्ववेत्ता जो पुरुष है सो अहंकारते चिदात्माको भिन्नकरके

देखता हुया हुया अहंकारके अंतर चिदात्माका न प्रवेश करके करोडों वस्तुओंकी भावें इच्छा करो तिसकरके तत्त्वज्ञानकी हानि कुछ नहीं होती जिसते तत्त्ववेत्ताकी अहंकार और चिदात्माका तादात्म्याध्यास-रूप गांठ नाश होगई है ॥

शंका-अध्यासके अभाव हुयां हुयां कामनाका उदय नहीं बनता ॥

उत्तर-तादात्म्याध्यासरूप ग्रंथिके खुल्याँ हुयां भी प्रारब्धरूप कर्मदोषते तत्त्ववेत्ताको इच्छाभी उत्पन्न होतीहैं जैसे पापोंकी बाहुल्यता करके तत्त्वके जान्याँ हुयांहुयां भी तेरेको संतोष नहीं अध्यासके अभाव हुयांहुयां भी अहंकारकेविषे इच्छाआदिकों करके साक्षी चैतन्यरूप आत्माविषे कुछ दोष प्राप्त नहीं होता जैसे देहविषे रोगा-दिकों करके और वृक्ष आदिकोंको उत्पत्ति और विनाशकरके साक्षी-रूप आत्माविषे कुछ दोष नहीं प्राप्त होता ॥

शंका-चिदात्माकी असंग एकरूपता सदा एकरस है ॥ जैसे तादा-त्म्याध्यासके नाश होणते पहिले थी तैसे तादात्म्याध्यासके नाश समय हुई ताते तादात्म्याध्यासका नाश होणेते फल कुछ न सिद्ध भया ॥

उत्तर-इसीको तादात्म्याध्यासका नाश कहते हैं जो आत्माकी सदा असंग एकरसता जाननी इसका फल कृतकृत्यता है ताते इस वार्ताको कभी नहीं भूलना और जो आत्माकी सदा असंग एकर-सताकी न प्रतीति होती है तिसीका नाम तादात्म्याध्यासरूप चिज्ज-डग्रंथि है सो अज्ञानीके हृदयविषे रहती है और ज्ञानीके हृदयते नष्ट होजाती है इतनामात्रही ज्ञानी और अज्ञानीका भेद है और भेद किसी बातका नहीं शरीर और इंद्रियां और मन बुद्धि इन चारोंकी प्रवृत्ति और निवृत्तिविषे भेद किंचित्‌मात्रभी नहीं ॥जैसे ज्ञानवान्‌का

शरीर अन्न जलकरके स्थिरताको प्राप्त होता है और अन्न जलके न प्राप्त हुयांहुयां व्याकुल होजाता है तैसेही अज्ञानीका शरीर अन्न जलके न प्राप्त हुयां स्थिरताको प्राप्त होता है और अन्न जलके न प्राप्त हुयां हुयां व्याकुल होजाता है और जैसे ज्ञानीके नेत्रादिक रूपादिकोंको देखते हैं तैसे अज्ञानीकेभी नेत्रादिक रूपादिकोंको देखते हैं इसीप्रकार जैसे अज्ञानीका मन अनुकूल पदार्थोंकी इच्छा करता है तैसे ज्ञानीका मनभी अनुकूल पदार्थोंकी इच्छा करता है इसीतरह जैसे अज्ञानीकी बुद्धि बर्फको शीतल और अग्निको उष्ण निश्चय करती है तैसेही ज्ञानीकी बुद्धि निश्चय करती है जैसे संस्कारसे रहित तो ब्राह्मण है और वेदवेत्ता जो ब्राह्मण है तिसका इतनामात्रही भेद होता है जो संस्कारसे रहित है तिसने वेद नहीं पढ्या और वेदवेत्ताने वेद पढ्या है भोजन आदिकोंविषे भेद नहीं तैसे ज्ञानी और अज्ञानीका इतनामात्र भेद है ज्ञानीकी चिज्जडग्रंथि नष्ट होगई है और अज्ञानीकी नहीं नष्ट हुई ज्ञानीकी चिज्जडग्रंथि नष्ट होजाती है इस वार्ताको भगवान् गीताके चौदहवें अध्यायविषे कथन करते भये हैं हे अर्जुन ! दुःखोंके प्राप्तहुयां ज्ञानवान् द्वेष नहीं कर्ता और सुखोंके दूर हुयांहुयां तिनकी इच्छा नहीं करता उदासीनकी न्याईं वर्तता है इस वाक्य करके भगवान्ने ज्ञानवान्को चिज्जडग्रंथिका अभाव कथन किया है ॥

शंका–इस वाक्यकरके भगवान्ने उदासीनता विधान करी है अर्थ यह–ज्ञानवान् सर्वव्यवहारसे उपराम होजायँ ग्रंथिभेद तो भगवान्ने कथन किया नहीं ॥

उत्तर–इस वाक्य करके उदासीनताका विधान नहीं किया जिसते इस वाक्य विषे वत्शब्द है. मीमांसक कहते हैं वत्शब्दवाला वाक्य विधिपर नहीं होता ताते इसवाक्यको विधिपर मान्यां हुयां वत्शब्दकी व्यर्थता होजायगी ॥

शंका-ज्ञानीके शरीर इंद्रियोंविषे कार्यकरणेकी समर्थता नहीं रहती इसते ज्ञानवान्की सुखप्राप्ति और दुःखनिवृत्ति वास्ते प्रवृत्ति नहीं होती. और यह जो तुम गीतावाक्यके व्याख्यानविषे कहा ज्ञानवान्की चिज्जडग्रंथि नाश होजाती है इसते ज्ञानवान्की प्रवृत्ति नहीं होती सो व्याख्यान अयुक्त है ॥

उत्तर-(हास्यसहित) जो ज्ञानवान्के शरीर इंद्रियोंविषे सामर्थ्य नहीं रहती तो ज्ञान एक क्षयीरोग भया जैसे क्षयीरोगवालेके शरीर इंद्रियोंविषे सामर्थ्य नहीं रहती तैसे ज्ञानीके शरीर इंद्रियोंविषे सामर्थ्य नहीं रहती ॥

शंका-होवे तत्त्वज्ञान क्षयीरोग इसमें भी कोई दोष नहीं ॥

उत्तर-जो बडीबुद्धिवाले तेरे जैसे तत्त्वज्ञानको क्षयीरोग मानते हैं तिनकी बुद्धि अतिनिर्मल है तिनको दुःसाध्य कुछ नहीं ॥ अर्थ यह-जो वे चाहें सो सिद्ध करलेवें ॥

शंका-तत्त्वनिर्णयके स्थानविषे यह जो तुम हाँसी करते हो सो तुम्हारी बुद्धिकी निर्मलताको जनावती है और हम तो पुराणोंकरके प्रसिद्ध ज्ञानवानोंकी प्रवृत्तिके अभावको कथन करते हैं जिसते पुराणोंविषे जडभरत आदिकोंकी प्रवृत्तिका अभाव कथन किया है ॥

उत्तर-श्रुतियोंका ज्ञान तेरेको नहीं है इसते तू अयुक्त शंका वृथा करता है ताते तू हाँसीके योग्य था इसते हमने तेरे साथ हाँसी करी है श्रुति कहती है आपणे तुल्य अवस्थावालोंके साथ हँसता हुयाहुया भी ज्ञानवान् और आपणी जाति संबंधवालोंके साथ हँसता हुयां भी ज्ञानवान् और [हाथी घोडेआदिक सवारियोंपर आरूढ हुयाहुया भी ज्ञानवान् यह जो सर्वलोकोंके निकट शरीर है इसको अहंबुद्धिकरके ग्रहण नहीं करता ॥

शंका-श्रुतिके अनुसार तत्त्ववेत्ताकी प्रवृत्ति मान्यां हुयांहुयां पुराणोंकी क्या अवस्था है ? ॥

उत्तर-पुराण, ज्ञानवान्की उदासीनताको कथन करते हैं ॥ अर्थ यह-जो ज्ञानवान् सर्वव्यवहारोंको करता हुयाहुया भी शरीरविषे अहं-भावको नहीं प्राप्त होता और पुराण ज्ञानवान्की प्रवृत्तिके अभावको नहीं कथन करते जिसते पुराणोंविषे यह कहीं नहीं कथन किया जो जडभरत आदिक भोजनआदिकोंका त्याग करके काष्ठ पत्थरोंकी न्याईं स्थित होगये हैं किंतु क्या कह्या है पुराणोंविषे जडभरत आदिक संगदोषते डरे हुए हुए सर्वके संगको त्याग करते भये हैं ॥

शंका-संगदोषते दूर हुयेहुये संगदोषका त्याग जडभरत आदिक क्यों करते भये ? ॥

उत्तर-सदाही जो सुखकी इच्छाको करणेवाला हैं तिसने सर्वदा संग त्याग करणा जिसकारणते संगकरणेवाले पुरुषको लोक दुःख देते हैं और संगसे रहित जो पुरुष है सो सुखको प्राप्त होता है ॥

शंका-पुराणोंके अनुसार संगत्याग प्रतीत होता है और श्रुतिके अनुसार संगवालेकोभी शरीरविषे अभिमान नहीं प्रतीत होता ताते दोना करके क्या अर्थ सिद्ध भया मनकरके संग दुःखोंका कारण है और बाहिरला संग दुःखोंका कारण नहीं ऐसे हुयांहुयां अंतरसंगसे रहित जो पुरुष हैं बाहिर व्यवहारवाले तिनको अज्ञानीलोक संगी क्यों कथन करते हैं ? ॥

उत्तर-शास्त्रके तात्पर्यको न जाननेवाले जो मूर्ख हैं सो अन्यथा अन्यथा बकवाद करते हैं ताते मूर्खोंके बकवाद करके तत्त्ववेत्ताका निर्णय नहीं होता तो फेर किस प्रकार करके निर्णय है ऐसा पूछे तो

श्रवण कर-शास्त्रका तात्पर्यरूप जो हमारा सिद्धांत है तिसका वैराग्य और ज्ञान और उपरामता यह तीनों परस्पर सहायक हैं और बाहुल्यता करके इकट्ठे रहते हैं और कहूं कहूं नियोगको भी प्राप्त होजाते हैं ॥

शंका-वैराग्यसे विना उपरामता कहीं नहीं देखीजाती और उपरामतासे विना वैराग्य नहीं देखाजाता. वैराग्य और उपरामतासे विना ज्ञान नहीं देखाजाता और ज्ञानसे विना वैराग्य उपरामता नहीं देखीजाती ताते ये तीनों एकरूप हैं।

उत्तर-वैराग्यका कारण और स्वरूप और फल और अवधि भिन्न हैं और ज्ञानका कारण और स्वरूप और फल और अवधि भिन्न हैं और उपरामताका कारण और स्वरूप और फल और अवधि भिन्न हैं ताते इनका अभेद नहीं किंतु इनका भेद है सो शास्त्रके विचार करणेवालेने यथावत् जानना. प्रथम वैराग्यके कारणआदिकोंको श्रवण कर-विषयोंविषे दोषदृष्टि वैराग्यका कारण है और विषयोंके त्यागकी जो इच्छा है सो वैराग्यका स्वरूप है और विषयोंको त्याग करके पीछे किसी विषय बीच मनकी दीनता अधीनता न होनी यह वैराग्यका फल है और गालियोंके करवोंकी न्याईं ब्रह्मलोक आदिक संपूर्ण पदार्थोंविषे चित्तकी उपेक्षा होजानी यह वैराग्यकी अवधि है अब तत्त्वज्ञानके कारण आदिकोंको श्रवण कर-श्रवण मनन निदिध्यासन तत्त्वज्ञानका कारण है. तत्त्व और मिथ्याको भिन्न भिन्न जानना यह तत्त्वज्ञानका स्वरूप है. और फेर तादात्म्याध्यासरूप चिज्जडग्रंथिका उदय न होना यह तत्त्वज्ञानका फल है. देहविषे अहम् बुद्धिकी न्याईं ब्रह्मविषे अहं बुद्धि होनी यह तत्त्वज्ञानकी अवधि है अब उपरामताके कारण आदिकोंको श्रवण कर-यम नियम आसन

प्राणायाम प्रत्याहार धारण ध्यान समाधि ये अष्ट उपरामताके कारण हैं. और चित्तका निरोधरूप निर्विकल्प समाधि उपरामताका स्वरूप है. और व्यवहारोंका अभाव उपरामताका फल है. और जैसे सुषुप्तिविषे संपूर्ण पदार्थोंकी विस्मृति होती है तैसे संपूर्ण पदार्थोंकी विस्मृति होजाती है यह उपरामताकी अवधि है ॥

शंका-इन तीनोंकी समप्रधानता हैं जैसे पालकीके उठावणेविषे कहारोंकी अथवा एककी प्रधानता है और दोकी गौणता है जैसे जनेताविषे वरकी प्रधानता है और अन्योंकी गौणता है ॥

उत्तर-तत्त्वज्ञानकी प्रधानता है जिसते साक्षात् मोक्षके देनेवाला तत्त्वज्ञान है. और वैराग्य और उपरामता बोधके सहायक हैं जिसते श्रुति कथन करती है परमात्माके ज्ञानकरके पुरुष जन्म मरणसे रहित होता है ज्ञानसे विना और किसी मार्गकरके मोक्षकी प्राप्ति नहीं होती॥

शंका-किस कारणकरके इन तीनोंका परस्पर वियोग होजाता है और किस कारणकरके यह तीनों संयोगको प्राप्त होते हैं ? ॥

उत्तर-महत् तपरूप पुण्योंकरके यह तीनों इकट्ठे होते हैं और पापोंकरके कहीं कहीं इन तीनोंका वियोग होजाता है तिसविषे भी तत्त्वज्ञानके प्रतिबंध हुयांहुयां और वैराग्य और उपरामताके पूर्ण हुयां हुयां भी पुरुषको मोक्षकी प्राप्ति नहीं होती ॥

शंका-तो वैराग्य और उपरामता निष्फल भये ? ॥

उत्तर-वैराग्य और उपरामता निष्फल नहीं तिन्हों करके ब्रह्मलोकादिकोंकी प्राप्ति होतीहैब्रह्मलोकादिकोंविषे बहुत काल वासकरता है ब्रह्मलोकविषे निष्काम पुरुषको ज्ञानद्वारा मोक्षकी प्राप्ति होती है और जो मनविषे भोगोंकी कामना होवे तब शुचि और धनवालोंके घरविषे योगभ्रष्ट पुरुष जन्मको प्राप्त होता है ऐसे भगवान्ने गीताके छठी अध्यायविषे कथन किया है ताते वैराग्य और उपरामता निष्फल

नहीं और जिस पुरुषकी वैराग्य और उपरामता प्रतिबंधको प्राप्त होगई है और बोध पूर्ण है तिस पुरुषको मोक्ष तो अवश्य होता है इसविषे संशय कोई नहीं परंतु जीवनमुक्तिसुख सिद्ध नहीं होता और इसीप्रकार आपणी बुद्धिकरके वैराग्य और उपरामता और ज्ञान इनकी न्यूनताको और अधिकताको निश्चय करणा ॥

शंका–कितनेक तत्त्वज्ञानवालोंकोभी रागद्वेष आदिक नहीं देखा जाता और कितनेकको देखाजाता है ताते ज्ञानवानोंकी एकरूपता न भई इसते ज्ञान मोक्षका कारण है यह निश्चय नहीं होता ? ॥

उत्तर–रागद्वेषआदिक रोगोंकी न्याईं प्रारब्धकर्मके फल हैं ताते रागद्वेष मोक्षके प्रतिबंधक नहीं होते इसते शास्त्रके अर्थविषे विवाद नहीं किया चाहिये. तत्त्ववेत्ताओंके प्रारब्ध कर्म अनेक प्रकारके हैं तिसकरके तत्त्ववेत्ताओंकी भिन्न भिन्न प्रवृत्ति होती है और संपूर्ण तत्त्ववेत्ताओंका 'अहं ब्रह्मास्मि' यह निश्चय एकरूप होता है और निर्दोष ब्रह्मरूपताकरके स्थिति भी सबको एकरूप होती है अब संपूर्णचित्रदीपके अर्थको संक्षेपकरके वर्णन करते हैं–चैतन्यात्मा विषे जगत् इस प्रकार स्थित है जैसे वस्त्रविषे हाथी घोडे आदिकोंकी मूर्तियाँ होती हैं सो जगत्रूप चित्र आत्माविषे मायाने कल्प्या है तिस जगत्रूप चित्रकी उपेक्षा करके बाकी जो चैतन्य है तिसको ग्रहण करणा जैसे हाथी घोडे आदिक चित्रकी उपेक्षा करके वस्त्रग्रहण कियाजाता है. जो पुरुष इस चित्रदीपप्रकरणके अर्थको जानतेनित्यही विचारते हैं सो पुरुष जगत्रूप चित्रको देखते हुये हुये भी तिस जगत् करके मोहको नहीं प्राप्त होते जैसे अज्ञानकालमें मोहको प्राप्त होनेसे. तात्पर्य यह चित्रदीपके विचारणेकरके जगत् मिथ्या प्रतीत होता है ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां षष्ठं चित्रदीपविवेकप्रकरणं समाप्तम् ॥ ६ ॥

अथ तृप्तिदीपविवेकप्रकरणम् ७.

॥ ॐसद्गुरुप्रसाद ॥ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ तृप्तिदीप नाम जो दूसरा दीप है आदिसे पंचदशीका सातवां प्रकरण तिसका आरंभ करते हैं इसविषे बृहदारण्यक उपनिषद्की श्रुतिका व्याख्यान करेंगे सो तिस श्रुतिका अर्थ यह है अनेक जन्मोंविषे संचित जो पुण्य तिनके प्रतापकरके जो पुरुष आत्माको जाने जो स्वप्रकाश अपरोक्ष कूटस्थ आत्मा है सो मैं हूँ तब किसकी इच्छा करता हुयाहुया और किसकी कामनाके वास्ते शरीरके तापोंको प्राप्त हुयाहुया तापको प्राप्त होवे। अर्थ यह-जो शरीरके तापोंकरके तापका प्राप्त नहीं होता॥ इस श्रुतिका जो तात्पर्य है सो इस तृप्तिदीपनाम प्रकरणविषे भली-प्रकार विचार करेंगे तिस विचारकरके जीवनमुक्तकी श्रुतियोंकरके सिद्ध जो तृप्ति सो प्रगट होवेगी. पुरुष दो प्रकारका है जीव ईश्वरभेदते. अविद्याविषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है सो जीव है और माया विषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है सो ईश्वर है ऐसे श्वेताश्वतर उपनिषद्की श्रुति कथन करती है ताते यह जानाजाता है सो जीव ईश्वर दोनों कल्पित हैं तिन दोनोंने आगे संपूर्ण जगत् कल्प्या है मैं एकसे बहुतरूप होवौं प्रजारूप करके उत्पन्न होवौं ऐसी जो ईश्वरकी इच्छा इससे आदि लेकरके संघातविषे जीवरूपताकरके प्रवेशपर्यंत जगत् ईश्वरने कल्प्या है जाग्रत् अवस्थासे आदि लेकरके मोक्षपर्यंत संसार जीवने कल्प्या है. अब पुरुष शब्दका अर्थ श्रवण कर-देह इंद्रियाँ आदिकोंविषे तादात्म्याध्यासरूप भ्रमका अधिष्ठान जो असंग निर्विकार कूटस्थ चैतन्य है सो परमात्मरूप असंग हुयाहुयाही तादात्म्याध्यास करके आपणे साथ वास्तव संगसे रहित जो बुद्धि तिसविषे

स्थित हुयाहुया जीवरूपताको प्राप्त होजाता है सो इस श्रुतिविषे पुरुष नाम करके कथन किया है ॥

शंका–पुरुष नाम करके इस श्रुतिविषे चिदाभासरूप जीवकाही कथन होवे अधिष्ठानरूप कूटस्थ चैतन्यसहित चिदाभासरूप जीवका पुरुष नामकरके कथन क्यों करतेहो ?

उत्तर–पुरुषने मोक्षको प्राप्त होना है मोक्षको सो प्राप्त होवे जिसकी मोक्ष अवस्थाविषे स्थिति होवे, चिदाभासकी तो मोक्षअवस्थाविषे स्थिति नहीं होती जिसते चिदाभास कल्पित है इसते केवल चिदाभासरूप जीवका पुरुष नाम नहीं बनता अधिष्ठानरूप कूटस्थ चैतन्य मोक्ष अवस्थाविषे स्थित होता है जिसते कूटस्थ चैतन्य शुद्ध परब्रह्मरूप है ताते अधिष्ठान कूटस्थ चैतन्यसहित चिदाभास पुरुष नाम करके कह्या है जिसते अधिष्ठान कूटस्थ चैतन्यसहित चिदाभासरूप जीव स्वर्गमोक्षआदिकोंके साधनोंका अधिकारी है केवल चिदाभासरूप जीव अधिकारी नहीं जिसते अधिष्ठानसे रहित भ्रम लोकविषे कहूं नहीं देखाजाता चिदाभास भी भ्रमरूप है ताते चिदाभासरूप जीवभी अधिष्ठान कूटस्थसहित है ताते यह सिद्ध भया जो अधिष्ठान चैतन्य कूटस्थसहित चिदाभासका नाम पुरुष है चिदाभास सहित जो शरीरद्वय हैं तिनको प्रधानताकरके और अधिष्ठानचैतन्यको गौणता करके जब जीव आपणा स्वरूप मानताहै तब मैं संसारी हूं ऐसे जीव मानता है और जब चिदाभाससहित शरीर दोनोंको मिथ्या जानकरके तिसविषे अहंबुद्धिका त्याग करदेता है और तिसके अधिष्ठान कूटस्थ चैतन्यको आपणा स्वरूप मानता है तब जीव यह जानता है मैं चैतन्यरूप आत्मा हूँ मैं असंग हूँ ॥

शंका–मैं असंग हूँ मैं चैतन्यहूँ यह जानना कूटस्थविषे कूटस्थको असंग होणेते नहीं बनता ॥

उत्तर–अहंकार तीन प्रकारका है एक मुख्य है दो गौण हैं कौन मुख्य है ऐसे पूछे तो श्रवण कर–परस्पर अध्यास करके कूटस्थ और चिदाभासकी जो एकरूपता है सो अहंशब्दका वाच्य अर्थ है सो अहंशब्दका मुख्य अर्थ है तिसते मूर्ख जो हैं विवेक ज्ञानते रहित संपूर्ण प्राणी तिन्होंने इकट्ठे हुयाँ हुयाँ चिदाभास और कूटस्थको अहं ऐसे कथन किया है. अब गौण जो अहं शब्द तिसके दो अर्थ हैं तिनको श्रवण कर–चिदाभासते भिन्न केवल कूटस्थ और कूटस्थते भिन्न केवल चिदाभास यह दोनों गौण अहंकार हैं जिसते सभी लोक इन दोनोंको नहीं जानते और तत्त्ववेत्ता क्रम करके लौकिक व्यवहारविषे और शास्त्रीयव्यवहारविषे अहंशब्दको कथन करता है तब तत्त्ववेत्ता मैं गमन करता हूँ मैं स्नान करता हूं मैं भोजन करता हूं इसते आदि लेकरके लौकिक व्यवहारविषे स्थित होता है तब कूटस्थते भिन्न चिदाभासको अहंशब्दकरके कथन करता है तात्पर्य यह जो स्नान गमन भोजनआदि व्यवहारोंके करणेवाला स्थूल सूक्ष्म दो शरीर सहित चिदाभास है कूटस्थ नहीं ऐसे संपूर्ण व्यवहारोंको करता हुया तत्त्ववेत्ता जानता है और यही तत्त्ववेत्ता जब ज्ञानदृष्टिविषे स्थित होता है जब मैं असंग हूं मैं चिदात्मा हूँ ऐसे कथन करता है सो चिदाभासते भिन्न केवल कूटस्थको अहं शब्दका अर्थ मानकरके कथन करता है ताते यह सिद्ध भया लक्षणाकरके अहंशब्द कूटस्थको जानता है ताते मैं असंग हूँ यह ज्ञान बनसकता है ॥

शंका--भिन्न भिन्न चिदाभास और कूटस्थ अहंशब्दके गौण अर्थ हैं यह तुमने जो कथन किया है तिसविषे हम पूछते हैं मैं असंग हूँ मैं

चिदात्मा हूँ यह ज्ञान कूटस्थको होता है कि, चिदाभासको होता है जिसको यह ज्ञान होता है तिसका अज्ञान निवृत्त होता है ऐसे अवश्य कह्या चाहिये. कूटस्थविषे तो यह जानना नहीं बनसकता जिसते कूटस्थविषे अज्ञान प्रथम है नहीं इसीते कूटस्थविषे ज्ञान भी नहीं है जैसे सूर्यविषे अंधकार और प्रकाश नहीं होता और जो कूटस्थविषे ज्ञान अज्ञान मानोंगे तब कूटस्थकी असंगता न रहेगी इसते मैं असंग हूँ मैं चिदात्मा हूँ यह ज्ञान चिदाभासको होता है तिस ज्ञानकरके चिदाभासका अज्ञान नाश होजाता है ऐसे कहा चाहिये ऐसे हुयांहुयां यह वार्ता प्राप्त भई कूटस्थते भिन्न जो चिदाभास है सो जानता है जो मैं कूटस्थ हूँ ऐसा जो जानता है सो परम भ्रमरूप है जैसे कोई कंगाल यह जाने जो मैं राजा हूँ सो जानना परम भ्रमरूप होता है ॥

उत्तर--जो चिदाभास कूटस्थते भिन्न होवे तो यह जानना भ्रमरूप होवे पर चिदाभास तो कूटस्थते भिन्न नहीं किंतु कूटस्थ एक स्वभाववाला है जिसते आभासरूपता मिथ्या है और कूटस्थरूपता सत्य है जो कल्पितके बाध हुयांहुयां पीछे शेष रहती है ॥ जैसे दर्पण विषे प्रतीत होता जो मुखाभास है तिसका स्वरूप वास्तवसे ग्रीवाविषे स्थित जो मुख है सोई है ॥

शंका--तुम चिदाभासको मिथ्या कहते हो ताते चिदाभासके आश्रय जो 'कूटस्थोऽस्मि' यह ज्ञान है सो भी मिथ्या हुया चाहिये॥

उत्तर--तैंने यथार्थ कह्या है कूटस्थते भिन्न चिदाभास मिथ्या है जिसते कूटस्थते भिन्न संपूर्ण वस्तु मिथ्या हम मानते हैं ताते कूटस्थोऽस्मि, इस ज्ञानको जो तैंने मिथ्या कह्या है सो हमारेको इष्टही है जैसे रस्सीविषे सर्प कल्पित है तो तिस सर्पका फुंकार और चलना भी कल्पित है तैसे चिदाभास कल्पित है तो चिदाभासके आश्रय 'असंगोऽस्मि' ज्ञान भी कल्पित है ॥

शंका–ज्ञान करके मिथ्या है तो ज्ञानकरके संसार निवृत्त न हुया चाहिये ॥

उत्तर–ज्ञानकरके निवृत्त होनेवाला जो संसार है सोभी मिथ्या है ताते मिथ्या ज्ञानकरके मिथ्या संसारकी निवृति होजाती है ॥ जैसे स्वप्नके शेर देखणे करके निद्राकी निवृत्ति होजाती है और जैसे स्वप्नकी तल्वार लेकरके स्वप्नके शेरको मारलेता है तैसे मिथ्यारूप ज्ञान करके मिथ्यारूप संसार दूर करदेता है लोक भी कहते हैं जैसा देव तैसी पूजा. जिस कारणते कूटस्थही चिदाभासका वास्तव स्वरूप है तिस कारणते पुरुष शब्दका अर्थ कूटस्थसहित चिदाभास है सो मिथ्यारूप चिदाभासते कूटस्थको भिन्न जान करके लक्षणाकरके मैं कूटस्थ हूँ ऐसे जाननेको समर्थ होता है ऐसे श्रुति कहती भई मैं कूटस्थ हूँ यह ज्ञान अत्यंत दृढ हुयाहुया मोक्षका कारण होता है ज्ञानकी दृढता यह है जो संशय विपर्यय उदय न होने जैसा अज्ञानियोंको देहविषे संशय विपर्ययते रहित ज्ञान होता है तैसा कूटस्थ आत्माविषे संशय विपर्ययते रहित ज्ञान जो है सो मोक्षका साधन है इस अर्थके निर्णय करणेके वास्ते श्रुति अर्थ कथन करती है संशय विपर्ययते रहित ज्ञान मोक्षका साधन है इसी अर्थको उपदेशसहस्री विषे भगवान् शंकराचार्य कथन करते भये हैं अज्ञानियोंको जैसे देहविषे आत्मज्ञान मैं मनुष्य हूँ यह संशय विपर्ययते रहित दृढ होता है इसीतरह कूटस्थ आत्माविषे संशय विपर्ययसे रहित जो दृढ ज्ञानहै सो देहविषे आत्मज्ञानके नाश करणवाला है ऐसा ज्ञान जिस पुरुषको प्राप्त भया है सो मोक्षकी इच्छा न भी करे तोभी मोक्षको प्राप्त होजाताहै जिसते संसारका कारण अज्ञान तिसका ज्ञानकरके नष्ट होगया है 'अयं' इस शब्द करके तो अपरोक्षता कथन करी है ऐसा जो कहे तो यही अर्थ होवो इस विषे दोष नहीं जिसकारणते स्वप्रकाश चैतन्य सदाही अपरोक्षहै ।

शंका–स्वप्रकाश चैतन्यरूपताकरके आत्माकी सदा अपरोक्षताके मान्यां हुयां आत्माको परोक्षविषयता अपरोक्ष विषयता और ज्ञान अज्ञानकी आश्रयता और ज्ञान अज्ञानकी विषयता न बनेगी॥

उत्तर–दशमपुरुषकी न्यांई सभी कुछ बन जायगा जैसे सदा अपरोक्ष जो दशवाँ पुरुष है तिसविषे अज्ञानभी होता है और परोक्षज्ञान भी तिसविषे होता है और अपरोक्ष ज्ञान भी तिसविषे होता है तैसे नित्य अपरोक्ष आत्माविषे भी अज्ञान और परोक्ष ज्ञान और अपरोक्ष ज्ञान सभी कुछ बनता. नित्य अपरोक्ष दशवें पुरुषविषे अज्ञान और परोक्षज्ञान और अपरोक्षज्ञान कैसे बनता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर–कोई दश मूर्ख पुरुष एक ग्रामसे किसी कार्यके निमित्त और ग्रामको चले तिस मार्गके बीच एक नदी थी तिस नदीका बडा वेग था तिस नदीके परले किनारेको प्राप्त होयके आपसमें यह विचारकरणे लगे हमने बडे वेगवाली नदी तरी है ताते हम आपणे पुरुषोंको गिणलें जो मत कोई नदीविषे डूबगया होवे तब गिणनेवाला पुरुष इदंताकरके प्रतीति होते जो हैं नौ तिनको गिणता भया और नवोंका द्रष्टा जो है आपणा आप तिसको भ्रमकरके न जानता भया यहाँ दशवाँ नित्य अपरोक्ष है और दशवेंका अज्ञानभी है दशवां है नहीं ऐसे जानकरके यह दशवाँ कथन करता भया न दशवां भासता है न दशवाँ है इस कथनका कारण जो है सो अज्ञान कार्यका आवरण है और दूसरा अज्ञानका कार्य विक्षेप है तिसकोभी श्रवण कर–दशवाँ नहीं भासता दशवाँ है इसते उपरांत दशवाँ नदीविषे डूबगयाहै यह निश्चय करके शोक करके दशवाँही दशवेंको रोताभया सो यह जो रोणाआदिकहै सो विक्षेप कथन कियाहै इसप्रकार अज्ञान और आवरण और विक्षेपको प्राप्त हुया हुया जो दशवाँ है सो नदीके किनारे चिंतातुर और ऊँचे स्वरोंकरके रोता भया इतनेमेंही कोई दयावान् पुरुष जिस ओर नदी जातीथी तिस ओरसे

आन प्राप्तभया और तिसने पूछ्या जो हे पुरुष ! तू क्यों रोता है तब दशवां पुरुष कहता भया जो हमारा दशवां पुरुष नदीविषे डूबकरके मरगया है इसवास्ते मैं रोता हूँ तब दयावान् पुरुषने आपणी दृष्टिकरके देख्या तो दशोंही पुरुष तिसको बैठे नजर आये तो तिसको देख करके दया आई जो यह तो व्यर्थही मूर्खता करके रोते हैं ताते इसका दुःख निवारण किया चाहिये ऐसे विचार करके दयावान् पुरुष कहता भया दशवां मरचा नहीं तुम न रोवो ऐसा तिसका वचन सुन करके दशवां पुरुष यह मानता भया इसने किधरही नदीके किनारे दशवें पुरुषको देख्या होवेगा इसप्रकार दशवां दशवेंको परोक्षरूपकरके स्वर्ग आदिकोंकी न्याई जानताभया तो इस परोक्ष ज्ञानकरके दशवें विषे अज्ञानका कार्य आवरणका असत्तापादक अंश दूर होगया अज्ञानका कार्य आवरणका कार्य दो अंश हैं असत्ता और अभानापादक, परोक्षज्ञानते असत्तापादक अंश दूर होता है और अपरोक्षज्ञानते दोनों अंश दूर होजाते हैं तब दशवां पुरुष तिस दयावान् पुरुषको कहता भया कहां है दशवां मेरेको मिलायदे तब दयावान् पुरुष यह कहता भया तू ही दशवां है तब दशवां कहता भया मैं दशवां कैसे हूँ तब दयावान् पुरुष कहने लगा तू मेरे सामने गिण तब दशवां पुरुष गिणता भया और कहता भया नौ पुरुष मेरेको नजर आवते हैं तब दयावान् पुरुष कहता भया नवोंके गिणनेवाला दशवां पुरुष तू है जो तू दशवां पुरुष न होवे तो नवोंको कैसे जाने ताते नवोंके जाननेवाला दशवां तू ही है इसप्रकार दशवें पुरुषको जब अपरोक्षज्ञान भया जो मैं दशवां हूँ तब दशवां पुरुष हर्षको प्राप्त भया और रोणेको त्यागता भया. जैसे नित्य अपरोक्षरूप दशवेंविषे सातअवस्था हुई हैं अज्ञान १ आवरण २ विक्षेप ३ परोक्षज्ञान ४ अपरोक्षज्ञान ५ शोकाभाव ६ हर्ष ७ तैसे नित्य अपरोक्षरूप आत्माविषे भी यह सात

अवस्था जाननी सो जिसप्रकार हैं तैसे श्रवण कर–यह जो चिदाभास है सो विषयोंके भोगोंविषे आसक्त चित्त हुया हुया आपणा जो वास्तव स्वरूप है स्वप्रकाश चैतन्यरूप कूटस्थ तिसको श्रुतियोंके विचारते प्रथम नहीं जानता यह जो न जानना है तिसका नाम अज्ञान है सो प्रथम अवस्था है और किसीके स्थानविषे चैतन्य आत्माका प्रसंग चल्या हुयां था तब सुनके अज्ञानी यह कहता भया कूटस्थ चैतन्यरूप आत्मा कोई नहीं जिसते नजर नहीं आवता जो कूटस्थ चैतन्य रूप आत्मा होता तो मेरेको नजर आवता यह जो अज्ञानीका कथन है सो अज्ञानका कार्य आवरण है सो असत्ता और अभानके कथनकी न्याई दूसरी अवस्था कूटस्थकी है आत्माविषे मैं कर्ताहूं मैं भोक्ता हूं इस कल्पनाका कारण देहद्वयसहित चिदाभास है तिसका नाम विक्षेप है सो चिदाभासकी तीसरी अवस्था है ॥

शंका–शरीरद्वयसहित चिदाभासको तुम विक्षेपरूप कहते हो और साथही चिदाभासकी विक्षेपरूप अवस्था कहतेहो सो तो यह बात विरुद्ध है ॥

उत्तर–जीवकी सात अवस्था हैं जीव नाम लिंगशरीर और चिदाभास और कूटस्थ चैतन्यका है ताते त्रितयरूप जो जीव है सो अवस्थावाला है और देहद्वयसहित चिदाभास अवस्था है ताते अवस्था और अवस्थावालेका भेद सिद्ध भया और ज्ञानवान् करके बोधको प्राप्त हुया हुया कूटस्थकी सत्तामात्रको जानता है इसका नाम परोक्षज्ञान है सो जीवकी चौथी अवस्था है और जब श्रवण मनन निदिध्यासनकी परिपाकता करके मैं कूटस्थ हूं यह जानता है इसका नाम अपरोक्ष ज्ञान है सो जीवकी पांचवीं अवस्था है और कूटस्थ असंग आत्माके ज्ञानकरके मैं कर्ताहूं मैं भोक्ताहूं इसते आदिलेकरके शोक समुदायको त्याग देता है इसका नाम शोकाभाव है सो जीवकी छठी

अवस्था है और तिसते उपरान्त यह जानता है जो करणेयोग्य था सो मैंने करलिया है और जो प्राप्तहोणे योग्य था सो मेरेको प्राप्तहोगया है इस प्रकारकरके हर्षको प्राप्त होता है सो इसका नाम निरंकुशा तृप्ति है सो जीवकी सातवीं अवस्था है यह जो सप्त अवस्थाएँ कथन करी हैं सो चिदाभासकी हैं कूटस्थकी नहीं ॥

शंका-इन सातों अवस्थाओंका यहाँ जो कथन है सो व्यर्थ है जिसते इसाविषे फल कुछ नहीं नजर आवता ॥

उत्तर-यह सात अवस्था बंधमोक्षरूप फलको जनावती हैं ताते बंधमोक्षका ज्ञानही इन सातों अवस्थाओंके निरूपणका फल है ताते सातों अवस्थाओंका निरूपण निष्फल नहीं ॥

शंका-ये सातों अवस्था बंधके कारण हैं और ये सातों अवस्था मोक्षके कारण हैं अथवा और कोई प्रकार है ॥

उत्तर-और प्रकार है इन सातों अवस्थाओंमें तीन अवस्था बंधका कारण हैं आदिकी अज्ञान आवरण और विक्षेपरूप इन तीन अवस्थाओंको बंधकारणता कार्यद्वारा कथन करते हैं ताते प्रथम अज्ञानके स्वरूपको श्रवण कर-मैं कूटस्थको नहीं जानता यह जो उदासीनरूप व्यवहार है तिसका जो कारण है विचारके प्रागअभावसहित तिसको महात्मा अज्ञान कथन करते हैं और शास्त्रकरके कथन किया जो प्रकार तिसको उल्लंघन करके केवल तर्कोंसे विचारको करके पीछेसे यह जानना कूटस्थ है नहीं जिसते भासता नहीं ऐसा जो विपरीत व्यवहार है तिसका कारण आवरण है स्थूल सूक्ष्म दोनों शरीरों सहित चिदाभासका नाम विक्षेप है और बंधका कारण संसारहै नाम जिसका ऐसा जो मैं कर्ता हूँ मैं भोक्ता हूँ इसते आदिलेकरके संपूर्ण शोक हैं सो विक्षेपके कार्य हैं ॥

शंका–यह जो तुमने कहा सप्त अवस्था चिदाभासकी हैं सो अयुक्त हैं जिसते अज्ञान और आवरण इन दोनोंको विक्षेपकी उत्पत्तिसे प्रथम विद्यमानता है और चिदाभासको विक्षेपके अंतर्गतता है इसते विक्षेपभी चिदाभासकी अवस्था नहीं बनती ॥

उत्तर–यद्यपि अज्ञान और आवरण विक्षेपकी उत्पत्तिसे प्रथम सिद्ध हैं तोभी अज्ञान और आवरण विक्षेपकी अवस्था आत्माकी नहीं जिसते आत्मा असंग है ॥

शंका–विक्षेपकी उत्पत्तिसे प्रथम तो विक्षेप हैही नहीं इसते विक्षेपकी अवस्था अज्ञान और आवरण कैसे होवें अवस्थावालेके हुयां हुयां अवस्था होती हैं अवस्थावालेके अभाव हुयां हुयां अवस्था नहीं बनतीं जैसे पुत्रके न उत्पन्न हुयां हुयां पुत्रकी बालक यौवनआदिक अवस्था नहीं बनती तैसे आवरण और विक्षेप चिदाभासकी अवस्था नहीं बनतीं ॥

उत्तर–स्थूलरूपताकरके विक्षेपकी उत्पत्तिसे प्रथम विक्षेपक स्वरूप नहीं यद्यपि सूक्ष्मरूपता करके विक्षेपकी उत्पत्तिसे प्रथम विक्षेप विद्यमान है तिसकारणते अज्ञान और आवरणको विक्षेपकी अवस्थाका वर्णन करणा दोष नहीं ॥

शंका–अप्रसिद्ध सूक्ष्मरूपको अंगीकार करके अज्ञान और आवरणको विक्षेपकी अवस्था वर्णन करणेते अधिष्ठानरूपताकरके प्रसिद्ध जो ब्रह्म है तिसकी अज्ञान और आवरण अवस्था हैं यह वर्णन करणा श्रेष्ठ है ॥

उत्तर–अधिष्ठानरूपताकरके प्रसिद्ध जो ब्रह्म है तिसकी अवस्था जो कहैं अज्ञान और आवरण तो संपूर्ण अवस्थाका अधिष्ठान ब्रह्म है संपूर्ण अवस्था ब्रह्मकी कहो अज्ञान और आवरण दोनों अवस्था ब्रह्मकी क्यों कहता है ॥

शंका–यद्यपि ब्रह्मविषे संपूर्ण कल्पित हैं जिसते ब्रह्म संपूर्ण अवस्थाओंका अधिष्ठान है तोभी विक्षेपकी उत्पत्तिसे पीछे होनेवाली जो अवस्थाएँ हैं चार तिनका जीवविषे अनुभव होता है इसते वे चारों अवस्थाएँ जीवकी हैं ब्रह्मविषे उनका अनुभव नहीं होता इसते वे चारों ब्रह्मकी अवस्थाएँ नहीं सो चार अवस्था कौन हैं मैं संसारी हूँ एक अवस्था तो यह है और मैं ज्ञानवान् हूँ यह दूसरी अवस्था है और मैं शोकसे रहित हूँ यह तीसरी अवस्था है और मैं कृतकृत्य हूँ एक निरंकुशतृप्तिरूप चतुर्थ अवस्था है ॥

उत्तर–जैसे जीवविषे अनुभव होणेते जीवकी अवस्था चारोंको मानता है तैसे अज्ञान और आवरणकोभी जीवविषे अनुभव होणेते जीवकी अवस्था मान. जिसते जीव यह कहताहै मैं अज्ञानी हूँ इस प्रतीति करके अज्ञान जीवविषे भासता है और ब्रह्मकी सत्ता और भान मेरी दृष्टिकरके हैं नहीं इस प्रतीति करके आवरण जीवविषे भासता है ताते अज्ञान और आवरण जीवकी अवस्था अनुभव करके सिद्ध भई ॥

शंका–जो अनुभवकरके अज्ञान और आवरण जीवकी अवस्थाएँ सिद्ध होती हैं तो पिछले आचार्योंने अज्ञान और आवरणको ब्रह्मके आश्रय क्यों वर्णन करचा हैं ॥

उत्तर–अधिष्ठानरूपता करके अज्ञान और आवरणका आश्रय ब्रह्म है यह पूर्वले आचार्योंका तात्पर्य है और अज्ञान और आवरणका अभिमानी जीव है इसते अज्ञान और आवरण जीवकी अवस्था हैं यह हमारा तात्पर्य है इसते पिछले आचार्योंके वचनोंसाथ हमारे वचनोंका विरोध नहीं जैसे आदिकी तीन अवस्था बंधका कारण हैं तैसे परोक्षज्ञान और अपरोक्षज्ञानरूप दो अवस्था अज्ञानका कार्य आवरणनिवृत्तिद्वारा मोक्षका हेतु हैं. परोक्षज्ञानकरके असत्तापादक आव-

रणका कारण अज्ञाननाश होजाता है और अपरोक्षज्ञान करके अभानापादक आवरणका कारण अज्ञान नाश होजाता है और शोकाभाव औरनिरंकुशा तृप्ति यह जो अवस्था ज्ञानका फलरूप हैं तिनके मध्यभी अभानापादक आवरणके नाश हुयां हुयां भ्रांति करके जो जीवरूपता प्रतीत होती थी सो नाश होजाती है तिस जीवरूपताके नाश होणेते मैं कर्ता हूँ मैं भोक्ता हूँ इत्यादि लक्षण हैं जिसका और संसार है नाम जिसका ऐसा जो शोक है सो संपूर्ण नाश होजाता है. संपूर्ण संसारकेनाश हुयाँ हुयाँ आत्माकी नित्यमुक्तरूपता प्रतीत होती है तिसते निरंकुशा तृप्तिकी प्राप्ति होती है फिर शोक कभी नहीं उत्पन्न होता ॥

शंका–ग्रंथके आरंभविषे बृहदारण्यक उपनिषद्की श्रुतिके अर्थ करणेकी तुमने प्रतिज्ञा करीथी तिसको छोडदिया और सात अवस्थाओंको वर्णन किया सो प्रसंगसे असंगत हैं ॥

उत्तर–श्रुतिके तात्पर्य कथनके प्रसंगविषे तिसका अंगरूप सात अवस्था वर्णन करी हैं इसते अवस्थाका वर्णन प्रसंगमें असंगत नहीं जिसते श्रुति अपरोक्षज्ञान और शोकाभावरूप दो अवस्था आप वर्णन करती है तिसविषे ऐसे जिज्ञासुके मनविषे आया जीवकी अवस्था दोई हैं जो श्रुति वर्णन करती है. अथवा जीवकी अवस्था और भी हैं तब हमने जीवकी सप्त अवस्था वर्णन करी ताते पंच अवस्थाओंको अधिक वर्णन करणा असंगत नहीं ॥ जैसे कोई स्वामी किसी आपणे सेवकको कथन करे इस अभ्यागतको भोजन करवाय देवो तब तिस सेवकने तिस अभ्यागतको चरण धोने वास्ते जल दिया और आसन दिया और पत्तल दई और पानकरणेवास्ते जल दिया तो यह संपूर्ण सेवकका व्यवहार स्वामीके आज्ञासे विरुद्ध नहीं होता और मूर्खोंको तिसविषे शंका भासती है जो इस सेवकने स्वामीकी आज्ञा नहीं मानी तैसे श्रुतिन जिज्ञासुको अपरोक्ष ज्ञान और शोकका

अभावरूप दो अवस्था वर्णन करीं तिनके अनुकूल पंच अवस्था हमने और वर्णन करी हैं ताते सातों अवस्थाओंका निरूपण विरुद्ध नहीं ॥

शंका-पीछे तुमने कहा था आत्मा स्वप्रकाशताकरके सदा अपरोक्ष है ताते आत्मा अपरोक्षज्ञानका विषय होवे और परोक्षज्ञानका विषय न होवे ॥

उत्तर--आत्माकी अपरोक्षता दो प्रकारकी हैं एक स्वप्रकाशरूपताकरके अपरोक्षता है जिसते आत्मा आपणी सिद्धिविषे और किसी साधनको नहीं चाहता. और दूसरी आत्माकी अपरोक्षता यह है जो बुद्धिकरके आत्माको स्वप्रकाश जानना ताते परोक्षज्ञानकालविषे भी आत्माकी स्वप्रकाशरूपताकरके जो अपरोक्षता है सो निवृत्त नहीं होती जिसते परोक्षज्ञानकालविषे आत्मा स्वप्रकाश है ऐसे प्रतीति होतीहै ॥

शंका-आत्मासे अभिन्न जो ब्रह्म है तिसविषे ज्ञानको परोक्षता किसते है ॥

उत्तर-आत्मरूपताकरके ब्रह्मका ज्ञान नहीं होता और ब्रह्मरूपताकरके ब्रह्मका ज्ञान होता है इसते ब्रह्मज्ञानको परोक्षता है ॥

शंका-ब्रह्म आत्मरूप है और आत्मा सदा अपरोक्ष है ताते अपरोक्षरूप ब्रह्म आत्माविषे परोक्ष ज्ञान जो है सो भ्रमरूप है ॥

उत्तर-ब्रह्मरूप आत्माविषे परोक्षज्ञानको जो तू भ्रमरूप कहता है सो किस कारणकरके कहता है ज्ञानकी भ्रमरूपताविषे कारण चार होते हैं एक तो कारण यह है जो ज्ञानकी बाधा होजाना जैसे सीपीविषे रूपेज्ञानकी बाधा होजातीहै. दूसरा ज्ञानका विषय प्रत्यक्ष न नजर आवना, तीसरा अपरोक्षरूपताकरके ग्रहणयोग्य पदार्थका परोक्षरूपता करके ग्रहण होना, चौथा ज्ञानका जो विषय है तिसका कोईक अंश प्रतीत होना और कोईक अंश न प्रतीत होना जो कहै पहिला

पक्ष तो नहीं बनता जिसते परोक्षज्ञानकी बाधा नहीं होती जैसे सीपीविषे रूपेज्ञानकी बाधा भई थी 'नेदं रजतं' इस ज्ञानकरके तैसे 'ब्रह्म नास्ति' यह किसीप्रमाण करके जो प्रतीत होवे तब 'ब्रह्म अस्ति' इस परोक्ष ज्ञानकी बाधा होवे सो तो ऐसा प्रमाण कोई बलवाला नहीं देखाजाता इसते 'ब्रह्म अस्ति' इस परोक्षज्ञानकी बाधा नहीं होती और द्वितीयपक्षभी नहीं बनता जिसते कुरुक्षेत्रविषे स्थित जो पुरुषहै तिसको मथुरा प्रत्यक्ष नहीं नजर आवती पर तिसको मथुराका ज्ञान भ्रमरूप नहीं किंतु मथुराका ज्ञान तिस पुरुषको परोक्षरूप यथार्थ है और जैसे पृथिवीविषे स्थितपुरुषको स्वर्गका जो परोक्ष ज्ञान है सो यथार्थ है स्वर्गके प्रत्यक्षरूपताकरके न प्रतीत हुयाँ हुयाँभी और तीसरा पक्ष भी नहीं बनता जिसते ब्रह्म परोक्ष है ऐसी प्रतीति नहीं हुई तब फिर ब्रह्मज्ञानको परोक्षरूपता क्योंकर है ऐसे पूछे तो श्रवण कर-'ब्रह्म अस्ति' ऐसे सत्तामात्ररूपताकरके ब्रह्म भासता है और 'अहं ब्रह्म' इस रूपता करके ब्रह्मका स्वरूप नहीं प्रतीत होता इसवास्ते अर्थते ब्रह्मज्ञानको परोक्षता है ॥

शंका-तीन कारणोंकरके ज्ञानको भ्रमरूपता न होवे पर चौथे कारणकरके परोक्ष ब्रह्मज्ञानको भ्रमरूपता बनती है, जिसते परोक्षज्ञानविषे आत्मअंशका ग्रहण नहीं भया और ब्रह्मअंशका ग्रहण भया है जाते एक अशंका ग्रहण भया और एक अशंका ग्रहण न भया ताते परोक्ष ब्रह्मज्ञानको भ्रमरूपता सिद्ध भई ॥

उत्तर--जो अंशके ग्रहण करके और एक अशंके न ग्रहण करके ब्रह्मज्ञानको भ्रमरूपता होवे तब घट पट आदिकोंके ज्ञानको भी भ्रमरूपता हुई चाहिये जिसते घटज्ञानकरके घटके संपूर्ण अंशोंका ग्रहण नहीं होता घटके अंतर जो अवयव हैं तिनके साथ नेत्रोंका संबंध नहीं होता इसते घटके सर्व अंश नहीं ग्रहण होते ॥

शंका—घट सावयवपदार्थ है इसते किसी अंशके ग्रहण कियाँ हुयाँ किसी अंशका अग्रहण भी बन जाता है पर ब्रह्म तो निरंश है इसते ब्रह्मविषे अंशका अग्रहण नहीं बनता ॥

उत्तर—दूरकरणे योग्य जो अंश है सोई भई उपाधि तिसकरके ब्रह्मभी अंशोंवाला बनजाता है सो दूरकरणेयोग्यको न अंश हैं ऐसे पूछे तो श्रवण कर दूरकरणेयोग्य ब्रह्मविषे दो अंश हैं एक असत्ता १ दूसरा अभान २ परोक्षज्ञानकरके असत्ता दूर होती है और अपरोक्षज्ञानकरके अभान दूर होता है अपरोक्षरूपताकरके ग्रहणयोग्य पदार्थ विषे परोक्षज्ञान भ्रमरूप नहीं होता जैसे अपरोक्षरूप दशवें पुरुष विषे परोक्षज्ञान भ्रमरूप नहीं होता तैसे अपरोक्षरूप ब्रह्मविषेभी परोक्षज्ञान भ्रमरूप नहीं होता जिसते अज्ञानका कार्य असत्तापादक आवरण दशम पुरुषविषे और ब्रह्मविषे तुल्य है और परोक्षज्ञानकरके तिसकी निवृत्ति भी तुल्य है ॥

शंका—वाक्यते जो परोक्षज्ञान होता है तो अपरोक्षज्ञान किसते होता है ॥

उत्तर—विचारसहित महावाक्यते अपरोक्षज्ञान होता है 'यह आत्मा ब्रह्म है' इस महावाक्यके अर्थको भली प्रकार विचार कियाँ हुयाँ प्रथम परोक्षता करके जान्या जो ब्रह्म था तिसविषे आत्माके साथ अभिन्नरूपता साक्षात् करी है जैसे दशवां तू है इस वाक्यते दशमपुरुषने आपणी दशमरूपता साक्षात् करी है विचारसहित वाक्यते अपरोक्षज्ञानकी उत्पत्ति जिसप्रकार होती है तिसको दृष्टांतसहित श्रवण कर—जैसे शोकसहित रोवते दशवें पुरुषको देखकरके दयावान् पुरुषने कह्या दशवां डूब्या नहीं तू मत शोक कर तब तिस दशवें पुरुषने पूछ्या दशवां कहां है तब दयावान् पुरुषने कह्या दशवां यहां ही

है तब दशवां पूछता भया वह कौन है तब दयावान् पुरुष कहता भया तूही दशवां है तब दशवां कहताभया मैं कैसे दशवां हूँ तब दयावान् पुरुष कहता भया गिण तब दशवां नवोंको गिणता भया और कहता भया तो नव पुरुष मेरेको नजर आवते हैं तब दयावान् पुरुष कहता भया नवोंके देखणेवाला कौन है जो नवोंको देखता है सो दशवां तू है इसप्रकार विचारकरके दशमपुरुष यह जानता भया दशवां मैं हूँ दशवें पुरुषको जो यह ज्ञान भया है मैं दशवां हूँ सो ज्ञान विचारसहित वाक्यके अर्थते उत्पन्न भया है इसते संशयरूप और विषयरूप नहीं जिसते आदि मध्य अंताविषे तिसको नवोंविषे संशय है नहीं मैं दशवां यह जो वाक्यते उत्पन्न भया है ज्ञान सो कभीभी दूर नहीं होता इसते वह ज्ञान दृढ अपरोक्षरूप है इसका दृष्टांत संपूर्ण अब श्रवण कर-जगत्की उत्पत्तिसे पूर्व संपूर्ण जगत् सत्‌रूप ब्रह्ममात्र होता भया सो ब्रह्म सजातीय विजातीय स्वगतभेदसे रहित है इसते आदिलेकरके प्रथम परोक्षरूपताकरके जिज्ञासुने ब्रह्मकी सत्ताको जान्या पीछे जीवरूपताकरके संघातविषे प्रवेश आदिरूप युक्तिके विचारकरके ब्रह्मकी आत्मरूपताकी संभावना भई पीछेसे ब्रह्म तू है इसवाक्यकरके अद्वितीय ब्रह्मरूपता आपणी निश्चय करता भया अर्थ यह--जो मैं ब्रह्म हूँ ऐसे साक्षात्कारको प्राप्त होता भया जिसते ब्रह्मका लक्षण सच्चिदानंदरूपता आत्माविषे अपरोक्षकरके देखता भया पंचकोशोंके आदि मध्य अंताविषे आत्माके व्यवहार हुयाँ हुयाँ भी आत्माकी सच्चिदानंदरूपता दूर नहीं होती है इसते मैं सच्चिदानंदरूप ब्रह्म हूँ इस ज्ञानको दृढ अपरोक्षरूपता है ॥ २० ॥

शंका--प्रथम विचाररहित केवल वाक्यते परोक्षज्ञान उत्पन्न होता है और पीछे विचारसहित वाक्यते अपरोक्ष उत्पन्न होता है इस वार्त्ताको तुम कैसे जानते हो ? ॥

उत्तर--तैत्तिरीयआदिक उपनिषदोंके अर्थविचारद्वारा हम जानते हैं सो प्रथम तैत्तिरीयउपनिषद्की कथा श्रवण कर--वरुणनाम एक ब्रह्म वेत्ता होता भया है तिसका पुत्र भृगुनामकरके होता भया सो भृगु ब्रह्मजिज्ञासाको धारणकरके पिताके पास प्राप्त होता भया और कहता भया हे पिताजी ! मेरेको ब्रह्म उपदेश करो तब वरुण कहते भये हे पुत्र ! जिसते यह संपूर्ण भूत उत्पन्न होते हैं और जिसकरके संपूर्ण स्थितिको प्राप्त होतेहैं और जिसविषे संपूर्ण लयको प्राप्त होतेहैं सो ब्रह्म है ऐसे तू जान इसवाक्यके श्रवण करणे करके जगत्के जन्मआदिकोंका कारणरूप ब्रह्मको परोक्षरूपकरके जानता भया पीछेते पंचकोशोंके विचार करके आत्मरूप करके अपरोक्ष ब्रह्मको जानता भया ॥

शंका--भृगु और वरुणके संवादविषे वरुणने भृगुके ताई तू ब्रह्म है ऐसा महावाक्यका उपदेश तो नहीं किया ताते भृगुको आत्मतत्त्वका साक्षात्कार कैसे होता भया ॥

उत्तर--यद्यपि तू ब्रह्म है ऐसा महावाक्य भृगुके ताई वरुणने उपदेश नहीं किया तोभी आत्मसाक्षात्कारका कारण जो है पंचकोशोंका विचार तिसको कथन करता भया तिसते आत्मसाक्षात्कार भृगुको होता भया ॥

शंका--अन्नमयआदिक पंचकोशोंके विचार कियाँ हुयाँ आत्माका साक्षात्कार होवे पर ब्रह्मका साक्षात्कार कैसे होता भया ? ॥

उत्तर--आत्मा ब्रह्मरूपहै ताते पंचकोशोंके विचार करके आनंदरूप आत्माके साक्षात्कारको प्राप्त होयकरके ब्रह्मका लक्षण जो है जगत्की उत्पत्तिस्थितिलयकारणतारूप तिसको आनंदरूप आत्माविषे जोडता भया आनंदतेही यह संपूर्ण भूत उत्पन्न होते हैं और आनंद करकेही जीवते हैं और सुषुप्तिकालविषे आनंदविषेही लय होजाते हैं ऐसे जानता भया ॥

शंका-ब्रह्मका लक्षण आनंदरूप आत्माविषे नहीं बनता जिसते ब्रह्म भिन्न है और आत्मा भिन्न है ॥

उत्तर-आत्मा और ब्रह्मका भेद नहीं सच्चिदानंद ब्रह्म लक्षणकी आत्मरूपता करके स्थिति श्रवण करणेते ब्रह्म सच्चिदानंद रूप है यह जो ब्रह्मका स्वरूप लक्षणहै तिसको कथन करके सच्चिदानंद लक्षण ब्रह्म पंचकोशरूप गुहा विषे स्थित ऐसा कथन किया ताते जानाजाताहै सच्चिदानंदरूप ब्रह्म आत्मा है जिसते पंचकोशरूप गुहाविषे स्थित आत्मा है इस प्रकार तैत्तिरीय उपनिषद्के विचार करके यह जाना-जाता है जो भृगुको पहिले परोक्ष ज्ञान होता भया और पीछेसे विचार करके अपरोक्ष ज्ञान होता भया है और छांदोग्यउपनिषद्के विचार करके भी यह जानाजाता है जो परोक्ष ज्ञान पहिले होता है और विचार करके पीछेसे अपरोक्ष ज्ञान होता है सो छांदोग्यउपनि-षद्की कथा श्रवण कर-ब्रह्माजी आपणी सभाविषे बैठे हुये हुये यह वाक्य कथन करते भये जो आत्मा है तिसको पापोंका स्पर्श कभी नहीं होता और तिसके विक्षेप प्राप्त कभी नहीं होता और आत्मा मृत्युसे रहित और खाने पीनेकी इच्छासे रहित है और सत्यकाम है और सत्यसंकल्प है तिस वाक्यको इंद्र श्रवण करता भया तिस वाक्य करके परोक्षरूपता करके आत्माको जानता भया पीछेते विचार करके तिन शरीरोंको निषेध करणेकरके तिन शरीरोंका साक्षीरूप आत्माके जानने वास्ते चार बार गुरु जो हैं ब्रह्माजी तिनके पास प्राप्त होता भया और ऐतरेय उपनिषद् विषे भी यही बात निर्णय होती है जो प्रथम परोक्षज्ञान होताहै पीछेते विचार करके अपरोक्ष ज्ञान होता है ऐतरेय उपनिषद्विषे यह कथा है यह संपूर्ण जगत् उत्पत्तिसे पहिले आत्मरूप होता भया और आत्मासे भिन्न और कुछभी सत्तायुक्त न होता भया इस वाक्यकरके ब्रह्मका लक्षण कथन करके पीछेसे यह कथन किया मैं लोकोंको रचूं यह

आत्मा करता भया ऐसा आरंभ करके फेर यह कथन किया आत्माके तीन स्थान हैं एक जाग्रत १ दूसरा स्वप्न २ तीसरी सुषुप्ति ३ सो तीनों परमार्थ दृष्टिकरके स्वप्नरूप हैं इस वाक्यकरके परमात्माविषे जगत्‌के आरोपको कथन किया और फिर यह कथन किया सो परमात्मा जन्मको प्राप्त होता भया और जिज्ञासाको प्राप्त होय करके यह विचार करता भया इन पृथिवीआदिक पंचभूतोंकी परमात्मासे भिन्न सत्ता है कि, नहीं इस विचारको करके परमात्मासे भिन्न किसीकी सत्ता नहीं यह निश्चय करता भया इस प्रकार आरोपित जगत्‌के निषेधको करके पीछेते यह कथन किया सो आत्मा आपणे आपको व्यापक ब्रह्मरूप देखता भया इसप्रकार आत्माकी ब्रह्मरूपता कथन करी और इसते आगे ज्ञानका साधन जो वैराग्य है तिसकी प्राप्तिके वास्ते पुरुषके शरीरविषे जीवका चार महीने वास और स्त्रीके शरीरविषे दश महीने वास इसविषे अनेक प्रकारके दुःख वर्णन किये उन दुःखोंको जानकरके जब वैराग्यकी प्राप्ति होगई तब यह आत्मा कौन है जिसकी हम उपासना करें इसते आदि लेकरके जो वाक्य हैं तिन करके तत्पदार्थ और त्वंपदार्थका शोधन करके चैतन्यरूप आत्माकी ब्रह्मरूपताको जिज्ञासु निश्चय करता भया इसीप्रकार और उपनिषदोंविषे भी यही कथन किया है अवांतर वाक्यों करके परोक्ष ब्रह्मज्ञान होता है और महावाक्यके विचार करके अपरोक्ष ब्रह्मज्ञान होता है ॥

शंका—महावाक्यके विचार करके अपरोक्ष ज्ञान होता है इस बातको तुम आपणे मुखसे बनाय बनाय कहतेहो और पिछले आचार्योंने तो इस अर्थको नहीं कथन किया ताते तुम्हारे कहनेको कोई नहीं मानता ॥

उत्तर—वाक्यवृत्तिनाम ग्रंथविषे शंकराचार्यजीने यह अर्थ कथन

किया है महावाक्यते अपरोक्ष ब्रह्मज्ञान होता है इसते ब्रह्मकी अपरोक्षताविषे विवाद नहीं ताते ऐसे मत कहो तुम आपणे मुखसे बनाय बनाय कहतेहो ताते तिन वाक्यवृत्तिके श्लोकोंको श्रवण कर-अहं शब्दकरके और अहं इस ज्ञानकरके जो प्रतीत होता है अंतःकरणरूप उपाधि सहित चैतन्यरूप आत्मा सो त्वंपदका वाच्य अर्थ है और परोक्षता रूप धर्म करके युक्त जगत्का कारण माया उपाधिवाला सर्वज्ञतादि धर्मोंवाला सच्चिदानंदरूप आत्मा तत्पदका वाच्य अर्थ है ऐसे तत् पद और त्वंपदके वाच्य अर्थको जानकरके उनके अभेद-वास्ते लक्षणा करणी योग्य है सो लक्षणा महावाक्यविषे भागत्याग-रूप है जैसे 'सोऽयं देवदत्तः' इस वाक्यविषे भागत्याग लक्षणा है और जहल्लक्षणाभी नहीं और अजहल्लक्षणाभी नहीं ॥

शंका-महावाक्य विषे लक्षणा क्यों आश्रय करणी योग्य है ? ॥

उत्तर-जिसते वाच्य अर्थकी एकता नहीं बनती इसते लक्षणा करणी योग्य है आत्मरूपता और परोक्षता एकको नहीं बनती और साद्वितीयता और पूर्णता एकको नहीं बनती जिस कारणते तिस कारणते लक्षणा आश्रय करणी योग्य है लक्षणाते विना अखंडार्थ बोध नहीं होता ॥

शंका-जैसे गौको लेआ इसते आदिलेकरके जो वाक्य हैं तिन वाक्योंविषे लक्षणाते विनाही वाक्यके अर्थका ज्ञान होता है तैसे महा-वाक्यविषे भी लक्षणासे विनाही वाक्यके अर्थका ज्ञान क्यों न होवे ?

उत्तर-गौको लेआ इत्यादिकोंविषे पदोंने स्मरण करवाये जो हैं आकांक्षा योग्यता सांनिध्यादिवाले गौसे आदिलेकरके पदार्थ तिनका परस्पर संबंधवाक्यका अर्थरूपताकरके अंगीकार किया है और जैसे नील महत् सुगंधवाला कमल है इसते आदिलेकरके

वाक्योंविषे नीलताआदिक गुणकरके विशिष्ट कमलको वाक्यका अर्थरूपता करके अंगीकार किया है तैसे महावाक्यविषे संबंध और विशिष्ट इन दोनोंके मध्यमें एकको वाक्यकी अर्थरूपता नहीं अंगीकार करी किन्तु सजातिय विजातीय स्वगतभेदते रहित वस्तुमात्र रूपकरके वाक्यका अर्थ ज्ञानवान् अंगीकार करते हैं इसते महावाक्य विषे लक्षणा अंगीकार करणी योग्य है जब लक्षणा अंगीकार करी तब त्वंपदका वाच्य अर्थ जो था अंतःकरण उपाधिसहित चैतन्यरूप आत्मा तिसके मध्य अंतःकरण उपाधिका त्याग करदेना और चैतन्यरूप आत्माका ग्रहण करणा और तत्पदका वाच्य अर्थ जो था जगत् कारण सर्वज्ञतादि सहित अद्वयानंद आत्मा तिसके मध्य जगत्कारण सर्वज्ञानादि रूपका त्याग करदेना और अद्वयानंदरूप आत्माका ग्रहण करणा इसप्रकार एक भागके त्याग कियां हुयां और एक भागके ग्रहण कियाँ हुयां जो ज्ञान होता है तिसको श्रवण कर-जो चैतन्यरूप आत्मा सबते परे बुद्धि आदिकोंका साक्षीरूपका करके प्रतीत होता है सो अद्वयानंद स्वरूप है अर्थ यह--अद्वितीय आनंदस्वरूप परमात्मा है और जो अद्वितीय आनंदरूप परमात्मा है सो बुद्धि आदिकोंका साक्षी चैतन्य एक स्वभाव है इस प्रकार अखंडार्थका बोध होता है ॥

शंका-ऐसे अखंड अर्थ बोधसे क्या फल प्राप्त होता है ? ॥

उत्तर-इसप्रकार दोनोंका परस्पर तादात्म्य बोध जब होता है तब त्वंपदार्थकी जो भ्रमकरके अब्रह्मरूपता प्रतीत होती थी सो दूरहोजाती है और तत्पदार्थकी जो भ्रमासिद्ध परोक्षता थी सोभी दूर होजातीहै॥

शंका-तिससेभी क्या फल प्राप्त भया ? ॥

उत्तर-जो तिसते फल प्राप्त होता है सो श्रवण कर-बुद्धिआदिकोंका साक्षी जो आत्मा है सो पूर्णानंदरूपता करके स्थित होता है दुःखरूपता और परिच्छिन्नरूपता तिसकी नष्ट होजाती है ॥

शंका–संकेतके बलकरके यथाथ अनुभवका जो साधन होवे तिसका नाम शास्त्र है ऐसे शास्त्रकार शास्त्रका लक्षण करते हैं. इसते वाक्यको अपरोक्ष ज्ञान कारणता नहीं बनती तुम कैसे कहते हो वाक्य अपरोक्ष ज्ञानका कारण है ॥

उत्तर--तेरेको सिद्धांतके रहस्यकी खबर नहीं है इस वाक्यते तू अपरोक्ष ज्ञान नहीं मानता ॥

शंका–सिद्धांत आपणे घरमें बैठे हम तो युक्ति करके अर्थका निर्णय किया चाहते हैं सो युक्ति करके तो वाक्यको परोक्षज्ञान कारणता प्रतीत होती है जैसे स्वर्गआदिकोंका कथन करणेवाला जो वाक्य है तिस वाक्यते स्वर्गआदिकोंकी परोक्षरूपता करके प्रतीति होती है तैसे महावाक्यभी वाक्य है तिसते अपरोक्ष अर्थकी प्रतीति नहीं होती ॥

उत्तर–यह नियम नहीं जो सर्ववाक्यते परोक्ष अर्थकी प्रतीति होती है जिसते दशवां तू है इस वाक्यते अपरोक्ष अर्थकी प्रतीति होती है तैसे महाक्यतेभी अपरोक्ष अर्थकी प्रतीति होती है त्वंपदार्थ जो है जीव स्वभावते अपरोक्षरूप है तिसको जब ब्रह्म होनेकी इच्छा भई तब तिसने महावाक्य श्रवण किया सो महावाक्य जो परोक्षज्ञानको उत्पन्न करे तब तिसकी प्रथम सिद्ध जो अपरोक्षता थी सो नाश होजाय इसते यह जो तू कहता है महावाक्यते युक्ति करके परोक्ष ज्ञान उत्पन्न होता है सो यह तेरी युक्ति बडी सुंदर है इसकी महिमा कुछ नहीं कहीजाती यह जो वचन था लोकोंकी वृद्धिकी इच्छा करणेवालेका मूल विनाश होगया सो तेरी कृपाकरके आज अर्थवाला हुया जिसते ब्रह्मभावरूप वृद्धिकी इच्छा करणेवाला जो जीव था तिसकी मूलरूप जो प्रथम सिद्ध अपरोक्षता थी सो भी नाश होगई ॥

शंका-जीवकी अपरोक्षता तो बनती है जिसते जीव उपाधिवाला है सो उपाधि अंतःकरण है और ब्रह्मकी अपरोक्षता नहीं बनती जिसते ब्रह्म उपाधिसे रहित है।

उत्तर-ब्रह्म उपाधिसे रहित नहीं जीवको जो ब्रह्मरूपताका ज्ञान होता है सो ज्ञान उपाधिसहित वस्तुविषे है ताते तिस ज्ञानका विषय जो ब्रह्म है सो भी उपाधिवाला है जिसते विदेहमुक्तिसे प्रथम उपाधिका अभाव नहीं होता ॥

शंका-तो फेर जीव ब्रह्मकी उपाधि भिन्न भिन्न कही चाहिये ॥

उत्तर-अंतःकरणसहितता जीवभावविषे उपाधि है अंतःकरण रहितता ब्रह्मभावविषे उपाधि है ॥

शंका-अंतःकरण संबंधको भावरूप होनेते उपाधिता बनजाती है और अंतःकरणरहितताको अभावरूप होनेते उपाधिता नहीं बनती ॥

उत्तर-जितने काल जीव है तितने काल जैसे अंतःकरणसहितता है तैसे जितने काल ब्रह्म है तितने काल अंतःकरणरहितता है ताते यह जो उपाधिका लक्षण है जितना काल उपहित होवे तितना काल जो स्थित होवे और उपहितका इतरोंसे भेद करे सो अंतःकरणसहितता और अंतःकरणरहितता इन दोनोंविषे एक जैसा है ताते जैसे अंतःकरणसहितता उपाधि है जीवभावकी तैसे अंतःकरणरहितता भी उपाधि है ब्रह्मभावकी भावरूपता और अभावरूपता करके अंतःकरणसहितता और अंतःकरणरहितताके भेद हुयांहुयां भी उपाधिरूपताविषे भेद कुछ नहीं जैसे लोहेकी बनीहुई एक बेडी है और एक स्वर्णकी बनी हुई बेडी है तिन दोनोंका स्वर्णरूपता करके और लोहरूपता करके भेद हुयांहुयां भी बेडीरूपविषे भेद कुछ नहीं

लोहेकी बेड़ी जिसके पडी हुई है वहभी कैदी है और स्वर्णकी बेड़ी जिसके पड़ी हुई है वहभी कैदी है तैसे अंतःकरण सहिततावालाभी उपाधिवाला है और अंतःकरणरहिततावालाभी उपाधिवाला है जैसे भावरूपउपाधि ब्रह्मज्ञानका कारण है तैसे अभावरूप उपाधिकोभी ब्रह्मज्ञानविषे कारणता है इस अर्थके दृढकरणेको शंकराचार्यजीने भाव और अभाव दोनोंको ब्रह्मज्ञानकी साधनता कही है दोप्रकार करके वेदांतकी प्रवृत्ति है एक विधिमुखता करके एक निषेधमुखता करके विधिमुखता करके प्रवृत्ति तो यह है जो वेदांती उपदेश करते हैं ब्रह्म सत्यरूप है ब्रह्म चैतन्यरूप है ब्रह्म आनंदरूप है और निषेध-रूपता करके वेदांतोंकी प्रवृत्ति यह है जो नेति नेति करके ब्रह्मविषे अनात्मप्रपंचका निषेध करणा ॥

शंका-जो वेदांत अनात्मप्रपंचके निषेधद्वारा ब्रह्मको जनावते हैं तब अहंशब्दार्थ जो कूटस्थ है तिसकाभी निषेध होवेगा ताते ब्रह्म 'अहम् अस्मि' यह समानाधिकरणता करके ज्ञान न उदय होवेगा अर्थ यह-जो कूटस्थ और ब्रह्मका अभेद ज्ञान न होवेगा जिसते अहं शब्दका अर्थ जो कूटस्थ है तिसका त्याग करदिया है ॥

उत्तर-संपूर्ण अहंशब्दके अर्थका त्याग नहीं किया जिस कारणते भागत्याग लक्षणा करके अहंशब्दके अर्थका एक अंश जडरूप त्याग्या है और एकअंश जो है चैतन्यरूप कूटस्थ तिसका त्याग नहीं होता इसते 'अहं ब्रह्म' यह ज्ञान उत्पन्न होता है अंतःकरणमात्र अंशके त्यागनेते बाकी रह्या जो चिदात्मा साक्षीरूप तिसविषे मैं ब्रह्महूं इस महावाक्य करके ब्रह्मरूपताका अनुभव होता है ॥

शंका-अंतःकरणसे रहित केवल आत्माको स्वप्रकाश होनेते सो बुद्धि वृत्तिका विषय नहीं होती ॥

उत्तर–स्वप्रकाश आत्मा साक्षीरूप घटादिकोंकी न्याई बुद्धिवृत्तिका विषय होता है जिसते मैं स्वप्रकाश हूँ ऐसे बुद्धिकी वृत्ति उदय होती है ॥

शंका–बुद्धिकी वृत्तिका जो विषय होता है सो दृश्य होता है तिसको स्वप्रकाशता नहीं बनती ॥

उत्तर–बुद्धिवृत्तिविषे प्रतिबिंबभावको प्राप्त भया जो चैतन्य तिसका नाम फल है तिस फलका जो विषय है सो स्वप्रकाश नहीं होता और सोई दृश्य होता है साक्षीरूप आत्मा फलका विषय नहीं और वृत्तिका जो विषयहै तिसकी स्वप्रकाशता दूर नहीं होती ऐसा पूर्वके आचार्योंने मान्याहै वृत्तिने अज्ञान नाश किया है और फलने तिस पदार्थको प्रकाशित किया है साक्षी तो आगेही प्रकाशरूप है तिसको फल नहीं प्रकाशता और अनात्म पदार्थ जो हैं घटादिक सो फलकाभी विषय होते हैं और वृत्तिकाभी विषय होते हैं वृत्तिने अज्ञानको नाश किया है और फलने घटादिकोंको प्रकाशित किया है जिसते घटादिकोंको जडरूप होणेते प्रकाशरूपता है नहीं और ब्रह्मविषे अज्ञानके नाश वास्ते वृत्तिमात्रकी प्राप्ति होती है जिसते अज्ञानकरके ब्रह्म आच्छादित हुया है इसते अज्ञानके नाश वास्ते वृत्ति चाहती है महावाक्यजन्य ‘ अहं ब्रह्म अस्मि ’ इस वृत्तिने ब्रह्मविषे अज्ञान नाश किया है और ब्रह्मको आपही प्रकाशरूप होणेते तिसविषे फलकी अपेक्षा नहीं इसते वृत्तिविषे प्राप्त हुयाहुया चिदाभास ब्रह्मके प्रकाशणे विषे समर्थ नहीं होता जैसे घटादिक पदार्थोंके देखणे वास्ते नेत्र और दीपक दोनों चाहिये हैं और दीपकके देखणे विषे एक नेत्रही चाहिये हैं दीपक हाथविषे पकड्या हुया भी दीपकके विषे सहायता कुछ नहीं करता तैसे ब्रह्मके अज्ञान नाशवास्ते वृत्ति एक चाहती है और वृत्तिविषे विद्यमानभी चिदाभासरूप फल ब्रह्मके प्रकाशकरणेको

समर्थ नहीं होता जैसे घटादिकोंके प्रकाशणेको समर्थ होता है इसते चिदाभास ब्रह्मके साथ अभेद होजाता है ब्रह्मसे भिन्न होकरके नहीं प्रकाशता जैसे अतितीखी धूपविषे स्थित हुयाहुया दीपक धूपके साथ एकताको प्राप्त होजाता है धूपसे भिन्न होकर धूपके प्रकाशणेको समर्थ नहीं होता ॥

शंका-ब्रह्म फलका विषय नहीं होता और वृत्तिका विषय होता है इस विषे क्या प्रमाण है ?

उत्तर--इसविषे वेद प्रमाण है ब्रह्मबिंदु नाम जो उपनिषद् है तिस विषे यह कथन किया है निर्विकल्प और अनंत और हेतुसे रहित और दृष्टांतसे रहित अप्रमेय और अनादि जो परम शिव है तिसको जानकरके ब्रह्मरूप होजाता है इस उपनिषद्विषे जो अप्रमेय शब्द है तिसकरके यह कथन किया है ब्रह्म फलका विषय नहीं और कठवल्ली उपनिषदविषे यह कथन किया है जिस ब्रह्मविषे सजातीय विजातीय स्वगतभेद किंचित् नहीं सो ब्रह्म मनकरके जानने योग्य है इस वाक्य करके यह प्रतीत होता है ब्रह्म बुद्धिवृत्तिका विषय है ताते ब्रह्मका फल विषय नहीं इसविषे यह ब्रह्मबिंदु उपनिषद्का वाक्य प्रमाण है और ब्रह्म बुद्धिवृत्तिका विषय है इस विषे कठवल्ली उपनिषद्का वाक्य प्रमाण है ऐसे व्यवस्था कियाँ हुयाँ दोनों वचनोंका परस्पर विरोध निवृत्त होजाता है ॥

प्रश्न-आत्माको जो जाने इसते आदि लेकर जो बृहदारण्यकका मंत्रआदि विषे तुमने कथन किया है तिसके अर्थ करणेके समय यह तुमने कथन किया अपरोक्ष ज्ञान और शोकका अभाव यह दो अवस्था जीवकी इस मंत्रने कथन की हैं तिस विषे हम पूछते हैं अपरोक्ष ज्ञान मंत्रके कितने अंशने कह्या है और शोकका अभाव मंत्रके कितने अंशने कह्या है ॥

उत्तर–मंत्रके पूर्वार्धने अपरोक्ष ज्ञान कथन किया है और मंत्रके दूसरे अर्द्धने शोकका अभाव कथन किया है सो अपरोक्ष ज्ञानका यह स्वरूप है सच्चिदानंद लक्षण ब्रह्मसे अभिन्न बुद्धिआदिकोंका साक्षी आत्माको जानना ॥

शंका–ऐसे जाननेका नाम जो अपरोक्ष ज्ञान है तो वोह अपरोक्ष ज्ञान एकबारही वाक्यके विचार करके होता है ताते श्रवण मननकी वारंवार कर्तव्यता जो व्यासजी सूत्रों विषे कथन करते हैं सो जिज्ञासुने न करी चाहिये ॥

उत्तर–यद्यपि एकबार महावाक्यके विचार करके अपरोक्ष ज्ञान होता है पर तोभी वह दृढ नहीं होता ताते ज्ञानकी दृढताके वास्ते वारंवार श्रवण मनन आदिक करणे ऐसा श्रीमत् शंकराचार्यजीने कथन किया है इसते एकबार महावाक्यके विचार करके अपरोक्ष ज्ञानकी उत्पत्ति हुयाँहुयाँ भी पाछेते तिस ज्ञानकी दृढताकेवास्ते जिज्ञासुओंने वारंवार श्रवण मनन आदि करणे ॥

शंका–शंकराचार्यजीने किस वाक्य करके वारंवार श्रवण मनन आदिकोंकी कर्तव्यता कही है ॥

उत्तर–वाक्यवृत्ति नाम ग्रंथविषे यह शंकराचार्यजीका वचन है 'अहं ब्रह्म' इस महावाक्यके अर्थका ज्ञान जितना काल दृढ न होवे तितना काल शम दम आदिक साधनसहित होय करके जिज्ञासु श्रवण मनन आदिकोंके अभ्यासको करे ॥

शंका–वेदवाक्य करके उत्पन्न भया जो ज्ञान है तिसकी अदृढता किस कारणते है ॥

उत्तर–तिसकी अदृढताके तीन कारण हैं एक तो श्रुतियोंकी अनेकता और दूसरा अखंड एकरस अद्वितीय ब्रह्मको सर्वलोकों करके न प्रसिद्ध होणेते तिसकी असंभावना और तीसरा विपरीत

भावना अर्थ यह—मैं कर्ता हूँ मैं भोक्ता हूँ इस प्रतीतिकी दृढता इन तीन कारणोंसे अपरोक्ष ज्ञानकी अदृढता होती है ताते अपरोक्ष ज्ञानकी दृढताके वास्ते वारंवार श्रवणआदिक किये चाहिये यह जो अपरोक्ष ज्ञानकी अदृढताके तीन कारण हैं तिनकी तीनही कारणों करके निवृत्ति होती है सो श्रवण कर श्रुतियोंकी अनेकता करके जो अदृढता है सो यह है जैसे कर्मकांडविषे वेदकी शाखाके भेद करके कर्मका भेद होता है सो इस प्रकार है ऋग्वेद करके होत्र नाम कर्म होता है और यजुर्वेद करके अध्वर्यव नाम कर्म होता है और साम वेदकरके उद्गीथ नाम कर्म होता है और जैसे कामनाके भेदकरके कर्मका भेद होता है सो इस प्रकार है वर्षाकी कामनावाला कारीरी नाम यज्ञको करे और बहुत जीवनेकी कामनावाला शतकृष्णल नाम यज्ञको करे तैसे उपनिषदोंविषे कथन किया जो ब्रह्मतत्त्व है सो भिन्न भिन्न है ऐतरेय उपनिषद्विषे कह्या है जो ब्रह्म चैतन्य रूप है और तैत्तिरीय उपनिषद्विषे कह्या है जो ब्रह्म आनंदरूप है और छांदोग्यउपनिषद्विषे कह्या है जो ब्रह्म सत्रूपहै और किसी जगह शोकनिवृत्ति रूप फल श्रवण किया है और किसी जगह पापनिवृत्तिरूप फल श्रवण किया है और किसी जगह जन्म मरण निवृत्तिरूप फल श्रवण किया है ताते फलकाभी भेद हैं और प्रतिपाद्य ब्रह्मवस्तुकाभी भेद है ऐसी शंकाएँ जिसको उदय होती हैं तिसको ब्रह्मका दृढ अपरोक्ष ज्ञान नहीं ताते इन शंकाओंके निवारण करणे वास्ते वारंवार श्रवण किया जाता है श्रवण करके ये संपूर्ण शंकाएँ नाश होजाती हैं श्रवणका क्या लक्षण है ऐसा पूछे तो श्रवण कर—संपूर्ण उपनिषदोंका आदि मध्य अंतविषे आत्मा ब्रह्मस्वरूप है और सच्चिदानंदरूपहै तिस विषे द्वैत सत्ता कभी नहीं भई इस अर्थविषे तात्पर्य ऐसा है जो निश्चय है तिसका श्रवण है ऐसा नाम श्रवण शारीरिक भाष्यके प्रथम आध्याय

विषे कथन किया है और अर्थकी असंभावनाकी निवृत्तिकेवास्ते मनन शारीरक भाष्यके दूसरे अध्यायविषे कथन किया ब्रह्मतत्त्वविषे संपूर्ण शंकाओंके दूर करणे करके बुद्धिकी स्थिरताका कारण जो अनेक प्रकारकी युक्तियां हैं तिन करके अखंड अद्वितीय ब्रह्मकी संभावनारूप मनन कथन किया है ताते यह सिद्ध भया मनन करके बोधकी अदृढताका कारण असंभावना नाश होजाती है अब विपरीतभावनाको और तिसकी निवृत्तिके साधनको श्रवण कर-विपरीत भावना दो प्रकारकी हैं एक तो यह है अन्वयव्यतिरेक करके आत्माको देह आदिकोंसे भिन्न जान्याँ हुयाँहुयाँ भी अनेक जन्मोंके दृढ अभ्यास करके देह आदिकोंविषे वारंवार क्षण क्षणविषे अहंबुद्धिका उदय होना और दूसरी विपरीत भावना यह है अचिंत्यरचनारूपताकरके प्रपंचकी मिथ्यारूपताके अनुभव हुयाँहुयाँ भी अनेक जन्मोंके दृढ अभ्यास करके जगत्‌विषे वारंवार क्षणक्षणविषे सत्यबुद्धिका उदय होना सो विपरीतभावना दो प्रकारकी चित्तकी एकाग्रताते नाश होजाती हैं ॥

शंका-विपरीत भावनाके नाशका कारण चित्तकी एकाग्रता किस साधनते प्राप्त होती है ॥

उत्तर-चित्तकी एकाग्रता दो साधनोंते प्राप्त होती है एक तो सगुण ब्रह्मकी उपासनाते और दूसरा ब्रह्म अभ्यासते दोप्रकारके पुरुष हैं यह तो ऐसे हैं जिनने निर्गुण ब्रह्मतत्त्वका उपदेश अभी श्रवण नहीं किया तिनको सगुण ब्रह्मकी उपासनाते चित्तकी एकाग्रता प्राप्त होती है इसीकारणते वेदांत शास्त्रोंविषे उपासनाके अनेक प्रकारके विचार किये हैं और दूसरे पुरुष ऐसे हैं जिनने निर्गुण ब्रह्मका उपदेश श्रवण करलिया है और सगुण ब्रह्मकी उपासना प्रथम नहीं करी ऐसे जो पुरुष हैं तिनके चित्तकी एकाग्रता ब्रह्म अभ्यास करके होती है ब्रह्म

अभ्यासका क्या स्वरूप है ऐसा पूछे तो श्रवण कर—जगत्की मिथ्या रूपता और देह आदिकोंकी अनात्मरूपताका चिंतन करणा अर्थ यह—जो मनमें अन्य संकल्प कोई उदय न होना इसी चिंतामें जलता न रहणा और मुखसे जब कुछ कथन करणा तब यही कथन करणा जगत् मिथ्या है और देहआदिक अनात्मा हैं और जब आपणे जैसोंके साथ मिलना तब परस्पर यही निर्णय करणा जो जगत् मिथ्या है और देह आदिक अनात्मा हैं इन तीनोंका नाम एकपरता है और इन तीनोंका नाम ब्रह्म अभ्यास है ऐसा बुद्धिमान् जानते हैं यह ब्रह्मअभ्यास वसिष्ठनाम ग्रंथके उत्पत्तिप्रकरणमें लीलाके प्रसंग विषे कथन किया है और श्रुतिभी कथन करती है ब्रह्म होनेकी इच्छा जिस जिज्ञासुको है सो ब्रह्मचर्यआदि साधना करके युक्त हुयाहुया श्रवण मनन करके आत्माको ब्रह्मरूप जानकरके ब्रह्म और आत्माकी एकरूपताके ग्रहण करणेवाली जो चित्तकी वृत्ति है तिसकी नदी-धाराकी न्याईं प्रवाहरूपताको करे और अनात्मपदार्थोंको विषय कर-णेवाले जो शब्द हैं तिनको आपणे मुख करके कथन न करे और मनकरके अनात्मपदार्थोंका चिंतन न करे जिससे अनात्मपदार्थोंके चिंतन करणेसे केवल मनको थकेवा होता है और अनात्मपदार्थोंके कथन करके वाणीको थकेवा होता है और गीताका वाक्यभी चित्तकी एकाग्रताको कथन करता है हे अर्जुन! जो पुरुष मैं सच्चिदानंदरूप ब्रह्म हूं इस ज्ञानकरके मेरेसे अभिन्न हुयेहुये अभेदरूपकरके मेरा चिंतन करते हुयेहुये मेरी उपासना करते हैं अर्थ यह—जो सर्वकालोंविषे मेरा रूप हुयेहुये स्थित होते हैं इसप्रकार सदा मेरेविषे चित्तके स्थित करणेवाले जो पुरुष हैं तिन पुरुषोंको आत्मरूपता करके चिंतनको प्राप्त हुयांहुयां मैं तिन पुरुषोंकी विपरीत भावनाको नाश कर देताहूँ और तिनपुरुषोंको अपरोक्ष दृढ बोध मैं सिद्ध करदेताहूं यह

जो बृहदारण्यक उपनिषद्की श्रुति है और गीताकी स्मृति है सो दोनों सदाही आत्माविषे चित्तकी एकाग्रताको विपरीतभावनाके नाश वास्ते कथन करती हैं ॥

शंका—देहआदिकोंको आत्मरूप जानना और जगत्को सत्यरूप जानना यह विपरीतभावना कैसे है ॥

उत्तर—विपरीतभावनाका लक्षण इसविषे आवता है ताते यह विपरीतभावनाहै विपरीतभावनाका क्या लक्षणहै ऐसा पूछे तो श्रवण कर—जो वस्तु जिस रूपकरके स्थित है तिस वस्तुको तिसरूप करके न जानना और अन्यरूपकरके जानना तिसका नाम विपरीतभावना है जैसे सीपी सीपीरूपता करके स्थित है तिसको सीपी न जानना और रूपा जानना अन्य दृष्टांत जैसे माता पिताको शत्रुरूप जानना. अब दार्ष्टांत श्रवण कर—आत्मा वास्तवसे देह आदिकोंते भिन्न है तिसको देह आदिरूप जानना और जगत् वास्तवसे मिथ्या है तिसको सत्यरूप जानना सो यह विपरीत भावना है तिस विपरीतभावनाका तत्त्वभावनाकरके नाशहोजाता है तत्त्वभावना कहिये आत्माकी देह आदिकोंते भिन्नभावना और जगत्की मिथ्यारूप भावना ताते विपरीतभावनाके नाशवास्ते जिज्ञासुने दिनरात्रि उठते बैठते जागते सोवते आत्माका देह आदिकोंते भेद चिंतन किया चाहिये और जगत्की मिथ्यारूपता चिंतन करी चाहिये ॥

प्रश्न—जैसे गायत्री आदिक मंत्रोंके जपकरणेविषे और देवताके ध्यान करणेविषे पूर्वमुख आदि नियम चाहिये हैं तैसे आत्माकी देह आदिकोंते भिन्नरूपता चिंतनविषे और जगत्की मिथ्यारूपता चिंतन विषे नियम चाहियेहै अथवा नियम नहीं चाहिये जैसे हलबाहना और वणिजकरणा इस विषे नियम नहीं चाहिये है ॥

उत्तर–विपरीतभावनाके दूरकरणे वास्ते जो ब्रह्मअभ्यास है तिस विषे नियम नहीं चाहिये है नियम तो उनविषे चाहिये है जिनका फल मरकरके प्राप्त होता है और ब्रह्मअभ्यासका फल तो प्रत्यक्ष है ताते इस विषे नियमकी चाहना कोई नहीं जैसे क्षुधाकी निवृत्तिवास्ते जो भोजन किया है तिसविषे नियम नहीं खडे हुए बैठे हुये जैसे खुशी होवे तैसे भोजन करे ॥

शंका–प्रत्यक्ष क्षुधाकी निवृत्ति है फल जिसका ऐसा जो भोजन तिसविषे श्रुतियों स्मृत्तियोंने नियम कथन किये हैं पूर्वकी ओर मुख-कर भोजन करे और हस्त चरण पवित्र करके भोजन करे और म्लेच्छ आदिकोंकी दृष्टि जहां नहीं पडे वहाँ भोजन करे इसते आदि लेकरके भोजनविषे नियम कथन किये हैं तुम कैसे कहतेहो प्रत्यक्ष फलवाले भोजनविषे नियम नहीं ताते यह सिद्ध भया प्रत्यक्ष है क्षुधानिवृत्ति फल जिसका ऐसा जो भोजन है तिसविषे जैसे नियम हैं तैसे विपरीतभावनानिवृत्ति प्रत्यक्ष है फल जिसका ऐसा जो ब्रह्म अभ्यास तिस विषेभी नियम चाहिये है ॥

उत्तर–क्षुधाका दूर करणा है फल जिसका ऐसा जो भोजन तिस-विषे नियम कोई नहीं और जो श्रुतियों स्मृतियोंने भोजनविषे नियम कथन किये हैं सो नियम परलोकविषे सुखके कारण हैं और क्षुधा निवृत्तिके कारण नहीं इसीकारणते क्षुधाके दूरकरणेवास्ते भोजन करणेवाला पुरुष नियम करके भोजन नहीं करता दश ग्रास भोजन करणा अथवा बिस ग्रास करणा किंतु जितने ग्रासोंकरके क्षुधा निवृत्त होवे तितने ग्रासोंका भोजन करता है और जपकरणेवाला जैसे दश माला पंच मालाओंका नियम करता है तैसे भोजन करणे वालेका नियम नहीं क्षुधाकी निवृत्तिकी इच्छावाला जो पुरुष है सो अन्नके प्राप्त हुयाँहुयाँ भोजन करता है और अन्नके न प्राप्त हुयाँहुयाँ

सतरंज चौपड आदिकोंविषे चित्तको लगावता है जिसकरके क्षुधाका क्लेश भूल जाय इस प्रकार पहर चार घडियोंको बिताय लेता हैं और पाछेते भोजनकी प्राप्तिके हुयाँहुयाँ बैठा चलता लंबापडचा हुया जैसे तिसकी इच्छा होती है तैसे भोजन करलेता है जिस प्रकार करके क्षुधादिका क्लेश न प्रतीत होवे सोई उपाय करता है और जपआदिकोंविषे नियम अवश्य है और जपको न करे तो पापकी प्राप्ति होती है और जपमंत्रके स्वर अक्षर विपरीत होजावें तो अनर्थकी प्राप्ति होती है जैसे इंद्रके मारणेवास्ते त्वष्टाने मंत्रका जप कियाथा तिस मंत्रके स्वरके विपरीत होणेते त्वष्टाके पुत्रको इंद्रने मारादिया ताते जप मंत्रविषे नियम चाहिये हैं और भोजनविषे कोई नियम नहीं चाहता ।

शंका–क्षुधासे प्रत्यक्ष दुःख प्रतीत होता है इसते क्षुधाके दूर करणेवास्ते भोजन विषे नियम नहीं चाहता भोजनही किया चाहिये है और विपरीत भावना तो प्रत्यक्ष दुःखका कारण है नहीं ताते विपरीतभावनाके दूर करणेवाला जो ब्रह्मअभ्यास है तिसका फल परलोकविषे होवेगा ताते ब्रह्मअभ्यास नियमसहित करणा ॥

उत्तर--विपरीतभावना तो प्रत्यक्ष दुःखदेनेवाली है जैसे क्षुधा प्रत्यक्ष दुःखदेनेवाली है ताते जिस तरह विपरीतभावना ब्रह्म अभ्यास करके दूर होवे तिसी प्रकार ब्रह्मअभ्यास करणा चलते फिरते लंबेपडेहुए ब्रह्मअभ्यासविषे नियमका आवश्यकता नहीं सो विपरीतभावनाके दूरकरणेका साधन ब्रह्मअभ्यास पीछे कथन किया है प्रपंचकी मिथ्यारूपता चिंतन करणी और देहआदिकोंकी अनात्मरूपता चिंतन करणी इसते आदि लेकरके ॥

शंका–मंत्रजपकी न्याईं पूर्वदिशाको मुख करणा इसते आदिलेकरके ब्रह्मअभ्यास विषे नियम मत होवे परंतु देवताध्यानकी न्याईं एकपरतारूप एकाग्रताका नियम चाहिये है ॥

उत्तर-ब्रह्मअभ्यास एकपरतारूप है ताते तिसविषे एकपरताका नियम नहीं चाहिये आपणेविषे आपणा नियम नहीं होता ताते ध्यानविषे जैसे नियम चाहिये है तैसे ब्रह्म अभ्यासविषे नियम नहीं चाहिये है ॥

शंका-ध्यान ध्येय चिंतामात्ररूप होता है तिसविषे नियम कौन है ?

उत्तर-प्रथम ध्यानके स्वरूपको श्रवण कर-पीछेते ध्यानविषे नियमोंको हम कथन करेंगे विजातीय प्रत्ययसे रहित देवताके स्वरूप विषे जो सजातीय प्रत्ययोंका तैलधाराकी न्याइ अनवच्छिन्न प्रवाह होता है तिसका नाम ध्यान है अब ध्यानविषे नियमको श्रवण कर जैसे हाथी घोडाआदिक जो बडा चंचल है तिसका एक स्थानविषे बंधनकेवास्ते औरतरफ जानेते रोकणेको नियम है तैसे ध्यानविषे मनका औरतरफ जानेते रोकणेका नियम है जिसते मन अतिचंचल-रूप है मनकी चंचलता अर्जुनने गीताविषे कथन करी है हे भगवन्! हे कृष्ण! यह मन बहुत चंचल है ध्यानको मथन करदेता है और पुरुषको व्याकुल करदेता है॥जैसे मथानी दहीको व्याकुल कर देती है और यह मन बडे बलवाला है इसका निरोध नहीं होसक्ता और जिस-विषे मन जायलगे अच्छे विषय भावै बुरे विषयमें तिसविषयसे मनका निवारण करणा कठिन है जैसे सहतऊपर बैठी हुई जो मक्खी है तिस सहतसे हटावना कठिन है अर्थ यह-जो मक्खी सहतको छोड नहीं सक्ती तैसे मन भी विषयोंको छोड नहीं सक्ता इसते विषयोंते मनका रोकणा मैं कठिन मानता हूं जैसे पवनका रोकणा कठिन है तैसे मन विषयोंते रोकणा बहुत कठिन है यह वसिष्ठजीने भी कथन किया है हे रामजी! समुद्रका पीजाना और सुमेरु पर्वतको उखाडना और अग्निको भोजन करलेना ये तीनों यद्यपि बडे कठिन भी कार्य हैं परंतु हे साधो! मनको रोकणा इनसे भी कठिन है और मनके रोकणेकी

अपेक्षा ये तीनों सुखवाले हैं और ब्रह्मअभ्यासविषे कुछ नियम नहीं चाहता जिसते ब्रह्मअभ्यास देह आदिकोंकी अनात्मता और जगत्की मिथ्यारूपता चिंतन और कथन और अन्योन्य प्रबोधनरूप है ताते इसकी इच्छा आवे तो कथन करे इसकी इच्छा होवे तो चिंतन करे इसकी इच्छा होवे तो अन्योन्य प्रबोधन करे ताते ब्रह्मअभ्यासविषे किसी बातका नियम नहीं। जैसे साँकलोंकरके बंध्याहुया है शरीर जिसका ऐसे पुरुषका इधर उधर न जाणा और एक स्थानविषे बैठे रहणेका नियम है तैसे ब्रह्मअभ्यासविषे मनने इधर उधर न जाणा और एक जगह स्थित होना तिस वार्ताका नियम नहीं किंतु जैसे साँकलोंकरके नहीं बँध्या हुया है शरीर जिसका वह पुरुष जैसे इच्छा आवती तैसे विचरता है इच्छा होती है तो बाग बगीचेमें चल्या जाता है इच्छा होती है सभाविषे जाणेकी तो सभाविषे चल्या जाता है इच्छा होती है गृहविषे बैठणेकी तो गृहविषे बैठता है तैसे ब्रह्मअभ्यासविषे स्थित हुयाहुया मन भी जैसे इच्छा होवे तैसे विचरे जो कथन करणेकी इच्छा होवे तो देह आदिकोंकी अनात्मता और जगत्की मिथ्यारूपताका कथन करे और जो चिंतनकी इच्छा होवे तो इसी अर्थका चिंतन करे और जो प्रबोधनकी इच्छा होवे तो इसी अर्थका परस्पर प्रबोधन करे ब्रह्मअभ्यासविषे केवल नियमका ही अभाव नहीं किन्तु जैसे मेले तमासे देखणेविषे बुद्धिको हर्ष प्राप्त होताहै तैसे कथन आदिकोंविषे अनेक जो मुनीश्वर और राजे ज्ञानवान् होवें हैं पीछे तिनकी ज्ञाननिष्ठाको स्मरण करके और अनेक प्रकारकी लौकिक कथाओंको स्मरण करके और अनेक प्रकारके अनुकूल दृष्टांत और अनेक प्रकारकी अनुकूल युक्तियोंको स्मरण करके बुद्धिको हर्ष प्राप्तहोता है ॥

शंका--कथन आदिकों करके एकपरताका अभाव होजायगा ॥

उत्तर-आत्मा चैतन्यरूप है देहआदिरूप नहीं और जगत् मिथ्या

है सत्य नहीं इस अर्थविषे इतिहासोंका तात्पर्य है ताते एकपरता-रूप निदिध्यासनविषे इतिहास आदिकोंकरके विक्षेप प्राप्त नहीं होता॥

शंका--जो निदिध्यासनविषे इतिहास आदिकोंकरके विक्षेप नहीं होता इसते इतिहासआदिक अंगीकार करोगे तो खेतीका करणा और वाणिजका करणा और सेवाका करणा और काव्य कोश व्याकरणादिका पढना और न्यायशास्त्र और मीमांसा सांख्य शास्त्रका पढना इसते आदिलेकरके भी निदिध्यासनविषे विक्षेप करेंगे ऐसे अंगीकार किया चाहिये ॥

उत्तर--खेतीके कारणेसे आदि लेकरके जो तैंने कथन किये हैं तिनकरके बुद्धिको विक्षेप प्राप्त होता है जिसते तिनकरके तत्त्वकी स्मृति नहीं होती इसते खेती आदिक संपूर्णोंका त्याग किया चाहिये है ॥

शंका–खेतीते आदिलेकरके तत्त्वके स्मरणका विरोधी होनेते जो संपूर्ण त्यागने योग्य हैं तो भोजन आदिकोंकाभी त्याग किया चाहिये जिसते भोजनआदिकोंविषे प्रवृत्ति भी तत्त्वके स्मरणकी विरोधिनी है ॥

उत्तर--तत्त्वका स्मरण करयांहुयां भी भोजन आदिकोंविषे प्रवृत्ति बनसक्ती है जिसते भोजन आदिकोंविषे अत्यंत विक्षेप नहीं होता काहेते जो वहाँ शिताबी फिर तत्त्वका स्मरण होय आवता है ॥

शंका--भोजन आदिकोंविषे प्रवृत्त हुयाँहुयाँ अत्यंत विक्षेप यद्यपि नहीं तोभी तत्त्वकी विस्मृति तो तिस कालमें होतीही है काहेते जो मन दश बीश तो हैं नहीं मन तो एक है भावैं वह तत्त्वका स्मरण करे भावैं वह भोजन करे ताते भोजनविषे प्रवृत्ति हुयाँहुयाँ निदिध्या-सनका अभाव होवेगा

उत्तर--यथार्थ है भोजन विषे प्रवृत्ति हुयाँहुयाँ तत्त्वकी विस्मृति

होती है परंतु तत्त्वकी विस्मृतिमात्रते अनर्थ नहीं होता अनर्थ किसते होता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-अनर्थ विपर्ययसे होता है विपर्ययनाम है जगत्‌विषे सत्यबुद्धिका और देह आदिकोंविषे आत्म बुद्धिका ॥

शंका-तत्त्वके विस्मरण हुयाँहुयाँ विपर्ययभी होजावेगा ॥

उत्तर-बहुतकाल तत्त्वके विस्मरण हुयाँहुयाँ विपय होता है और शिताबी तत्त्वके स्मरण करणेवाले पुरुषको विपर्यय प्राप्त होनेका काल कोई नहीं न तो तिसको देह आदिकोंविषे आत्मबुद्धिरूप विपर्यय प्राप्त होता है और न जगत्‌विषे सत्ताबुद्धिरूप विपर्यय होता है ॥

शंका-भोजन आदिकोंविषेप्रवृत्त हुयेहुयेको जैसे शिताबी तत्त्वका स्मरण होता है तैसे न्यायशास्त्र आदिकोंके अभ्यासकरणेवाले पुरुषको भी शिताबी तत्त्वका स्मरण क्यों न होवे ॥

उत्तर-न्यायशास्त्र आदिकोंके अभ्यासमें प्रवृत्त हुयेहुये पुरुषको तत्त्व स्मरणका समय ही नहीं मिलता केवल तत्त्वके स्मरणका समय मिलना यही नहीं किंतु न्यायशास्त्र और काव्य आदिकोंके अभ्यासका और ब्रह्म अभ्यासका परस्पर विरोध है धूप और छाँहकी न्याई ताते न्याय काव्यआदिकोंके अभ्यासकालविषे दैवयोगसे स्मरणको प्राप्त भया जो तत्त्व है तिसके बलसे अनादर करता है तिस तत्त्वस्मरणसे न्याय काव्य आदिकोंके अभ्यासका विरोधी जानके ताते ब्रह्म अभ्यास विषे प्रवृत्त भया जो पुरुष है तिसने न्याय काव्य कोश व्याकरण मीमांसा आदिक शास्त्रोंके अभ्यासका त्याग किया चाहिये जो तत्त्वके स्मरणका विरोधी वाणीका व्यापार है सो त्यागदेना चाहिये इस अर्थको मुंडक उपनिषद्‌की श्रुति कथन करती है ब्रह्मरूप जो आत्मा है तिस एकको जानो और अन्य जितनी वाणी हैं अनात्माके कथन करणेवाली काव्य कोश व्याकरणादिरूप तिनका त्याग करो आत्मज्ञानही मोक्षकी प्राप्तिका साधन है आत्मज्ञानके अभ्यासविना अन्य

किसी अभ्यासविषे लगोगे तो संसारनदीविषे डूब मरोगे जैसे वर्षाकालकी नदीके पार प्राप्तहोने वास्ते पुल साधन है पुलको छोडके अन्य रास्तेसे चल्या हुया पुरुष डूब मरता है और बृहदारण्यक उपनिषद्विषे भी कथन किया है अनात्म अर्थके जनावनेवाले जो शब्द हैं तिनको बहुत न पढे और मन करके तिनको स्मरण न करे जिसते तिनके पढने करके वाणीको थकेवा होता है और स्मरणकरके मनको थकेवा होता है ॥

शंका–तत्त्वस्मरणते भिन्न भोजनआदिक जैसे नहीं त्यागे तैसे तत्त्वअभ्यासते भिन्न जो काव्य कोश व्याकरण न्याय आदिकोंका अभ्यास है सोभी मैंने नहीं त्यागना ॥

उत्तर–भोजन आदिकोंको त्याग करता हुया तो पुरुष जीवता नहीं तूभी जो अन्य शास्त्रोंके अभ्यासको त्याग करता हुया न जीसके तो ऐसा खोटा हठ कर तात्पर्य यह–अन्य शास्त्रोंके त्याग कियाँहुयाँ तू मरता नहीं ताते मत खोटा हठ कर ॥

शंका–जो अन्य शास्त्रोंका अभ्यास तत्त्वअभ्यासका विरोधी है तो जनकसे आदिलेकरके ज्ञानवानोंने राजपालन आदिक क्योंकर किये हैं ॥

उत्तर–जनक आदिकोंको दृढ अपरोक्षज्ञानकी प्राप्ति थी तिसकरके जनकआदिकोंको राजपालनआदिकोंकरके विक्षेप न प्राप्त भया ॥

शंका–मेरेको भी तो दृढ अपरोक्ष बोधको प्राप्ति है ॥

उत्तर–जो तेरेको भी दृढ अपरोक्ष बोधकी प्राप्ति है तो तू भी जो इच्छा होवे सो कर,भावें न्यायशास्त्रआदिकोंको पढ भावें खेतीको कर ।

शंका–तत्त्ववेत्ता तौ संसारकी असारताको जाननेवाले हैं उनकी राजपालन आदिविषे प्रवृत्ति क्यों होवे ॥

उत्तर-यही तत्त्ववेत्ताकी दृष्टि होती है कि, प्रारब्धकर्मका फल अवश्य भोगना है ताते हमारा प्रारब्ध कर्म भिक्षा माँगनेका है तो भिक्षा माँगनी है और जे राज है तौ राज करणा है ताते जैसा प्रारब्ध कर्म है तैसे प्रवृत्ति होवे इसते भोगद्वारा प्रारब्धके नाशवास्ते राजआदिकोंविषे तत्त्ववेत्ताकी प्रवृत्ति होती है प्रवृत्त हुयेहुये भी राजआदिकोंविषे प्रारब्धके अनुसार जगत् विषे मिथ्यारूपता ज्ञानकी दृढता करके क्लेशको प्राप्त नहीं होते ॥

शंका-जो प्रारब्ध कर्म करके राजआदिकोंविषे तत्त्ववेत्ताकी प्रवृत्ति मानोगे तो प्रारब्धकर्मके वशकरके पापोंविषेभी प्रवृत्ति माननी चाहिये ॥

उत्तर-आपणे कर्मके वशवर्तनेवाले जो हैं तत्त्ववेत्ता तिनोंविषे अतिप्रसंगकी शंका नहीं कीनी चाहिये अति प्रसंगका अर्थ-पापकर्म विषे प्रवृत्ति ॥

शंका-प्रारब्धके वशते अतिप्रसंगविषे तत्त्ववेत्ता में होवेगा ॥

उत्तर-प्रारब्धकर्मकरके अतिप्रसंग है तौ होवे परंतु प्रारब्ध कर्मके दूरकरणेको कोईभी समर्थ नहीं ॥

शंका-जैसा ज्ञानीने प्रारब्धकर्म भोगा है तैसा अज्ञानीने प्रारब्ध कर्म भोगा है ताते ज्ञानीकी और अज्ञानीकी समानता भई भेद ज्ञानीका और अज्ञानीका किसकारणकर कहते हो ?॥

उत्तर-प्रारब्धकर्मके फल भोगनेविषे भेद हम ज्ञानीका और अज्ञानीका नहीं कहते किंतु क्या कहते ? हाँ, ज्ञानवान् प्रारब्ध कर्मको भोगता हुयाभी क्लेशको नहीं प्राप्त होता धैर्यकरके और अज्ञानी क्लेशको प्राप्त होता है अधैर्य करके तिसविषे दृष्टांत श्रवण कर दश पांच कोशपर कोई ग्राम है, तिस ग्रामको दो पुरुष चले जाते हैं एक

पुरुष मार्गके जाननेवाला है और एक पुरुष मार्गको नहीं जाननेवाला तिन दोनोंको मार्गके चलनेका तो श्रम एक जैसा है परंतु जो जाननेवाला है वह धैर्यसहित गमनकरता चल्या जाता है और धूप आदिकोंके दुःखते रहित होता है और न जाननेवाला दीनताको प्राप्त हुया हुया वारंवार मार्गविषे बैठता है और लोकोंसे पूँछता है कि, केती दूर ग्राम है, केती दूर ग्राम है ? इसते धूपके दुःखको अधिक प्राप्त होता है इतने ग्रंथकरके श्रुतिके पूर्वअर्द्धका अर्थ वर्णन किया तिसका अर्थ संक्षेप करके अब श्रवण कर-जब यह पुरुष यथार्थ आत्मसाक्षात्कारको प्राप्त होता है तब इस पुरुषको जगत्‌विषे सत्यताबुद्धि नहीं रहती और देहआदिकोंविषे आत्मबुद्धि नहीं रहती अब श्रुतिके उत्तर अर्द्धके अर्थको श्रवण कर-दृढ अपरोक्ष आत्मसाक्षात्कारको प्राप्त हुया जो पुरुष है सो किस पदार्थकी इच्छा करता हुया और किसको कामनाकेवास्ते शरीरके तापकरके तापको प्राप्त होवे अर्थ यह-जो शरीरके तापकरके तापको नहीं प्राप्त होता, अब इस आधेमंत्रके तात्पर्यको श्रवण कर-दृढ अपरोक्ष ज्ञानवान् पुरुषको जगत्‌विषे मिथ्याबुद्धि उदय होती है इसते तिसको कामना करणेलायक कोई पदार्थ नजर नहीं आवता और कामना करणेवाला भी कोई नहीं प्रतीत होता इन दोनोंके अभाव हुयाँहुयाँ कामनाका अभाव होजाता है जिसते कामनाकी कारणता दोईसे आश्रय और विषय इन दोनोंके अभाव हुयाँहुयाँ कामनाका अभाव होजाता है कामनाके अभाव हुयाँहुयाँ तापोंका अभाव होजाता है काहेते जो तापको कामना करकेही प्राप्त होते हैं जैसे तेलके अभाव हुयाँहुयाँ भी दीपक निर्वाण होजाता है ॥

शंका-कामनाकेविषे अभाव हुयाँहुयाँ कामनाका अभाव होजाता है यह वार्ता तुमने कहां देखीहै ॥

उत्तर-मायावी पुरुषने मायाकरके रच्या जो नगर है तिस नगरविषे अनेक प्रकारके स्थित जो पदार्थ हैं तिन पदार्थोंको जिसपुरुषने मिथ्यारूप जान्या है यह पदार्थ सब इंद्रजाल करके रचेहुये हैं इनोंविषे सत्यपदार्थ कोई नहीं ऐसा जाननेवाला पुरुष तिन पदार्थोंकी कामना नहीं करता ताते कामनाके विषयका अभाव हुयाँहुयाँ कामनाका अभाव सिद्ध भया केवल कामनाकाही अभाव नहीं होता किंतु तिन पदार्थोंको मिथ्या जाननेवाला पुरुष हँसता हुयाहुया तिन पदार्थोंका त्याग करदेता है इसी प्रकार विना विचारते सुंदर जो इस विषे भोग हैं पुष्पोंकीमाला चंदन स्त्रीआदिक तिन्होंविषे मिथ्या दृष्टिवाला जो पुरुष है सो तिन पदार्थोंविषे प्रीति नहीं करता किंतु दोषोंके देखनेकरके तिन्होंका त्याग करदेता है कौन वह दोष है जिन विषयोंविषे दोषोंको देखकरके विषयोंका त्याग करदेता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-प्रथम धनके दोष कथन करते हैं धनके इकट्ठे न करणेविषे अनेक क्लेश होते हैं विदेशका जाना और नीचोंकी सेवा करणी और झूठ बोलना इस आदिलेकरके अनेक अनर्थ धनके इकट्ठेकरणेविषे प्राप्त होते हैं और धनकी रक्षा करणेविषे भी अनेक क्लेश होते हैं धनवान्को चोरका भय होता है धनवान्को राजाका भय होता है धनवान्को सभीलोक चोर नजर आवते हैं इसते बडा पाप प्राप्त होता है और धनकी रक्षा करणेविषे सदा तप्त रहता है और धनके खर्च होनेविषे बडे क्लेशको प्राप्त होता है और जो धन नाशको प्राप्त होता है तिसविषेभी बडे दुःखको प्राप्त होता है इसतरह सर्व प्रकार करके धन अनर्थोंका कारण है । अब स्त्रीके दोष और असुंदरता श्रवण कर-स्त्रीका जो शरीर है सो बडा चंचल है पंघूडेकी न्याई तिसविषे सुंदरता कुछ है नहीं जिसते मांसकी एक पूतली है नाडियाँ और अस्थियां और मांसकरके गंडस्तनआदिक स्थानोंविषे हैं इन्होंकरके रच्या हुया

जो स्त्रीका शरीर है तिसविषे सुंदरता कुछ है नहीं और कामरूपी सर्पकरके डसा हुया जो कामी पुरुष है सो स्त्रीको बहुत सुंदर मानता है जैसे जिसको सर्पने काटा है सो कौडियां मिर्चोंको मीठा मानता है जिन पदार्थों करके स्त्रीका शरीर बन्या हुया है तिन पदार्थोंको भिन्न भिन्न देख्यां हुयाँ जिससे स्त्रीका शरीर सुंदर होवे तांबे सरीखे स्त्रीके शरीरको तूं देख विनाविचारसे व्यर्थ क्यों मोहको प्राप्त होता है स्त्रीका शरीर किनपदार्थों करके बन्या हुयां है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-त्वचा मांस रक्तते आदिलेकरके जो परम अपवित्र पदार्थ हैं तिनकरके स्त्रीका शरीर बन्या हुया है इसते आदिलेकरके जो शास्त्र हैं तिन विषे जो विषयोंके दोष हैं सो विस्तार करके वर्णन करे हैं तिन शास्त्रोंके सदा विचारणेवाला जो पुरुष है सो दोषोंवाले विषयोंविषे कैसे डूबे जिस विषयविषे जिस पुरुषको दोष प्रतीत होता है तिसविषे तिसपुरुषको इच्छा नहीं होती इसविषे युक्ति सहित दृष्टांतको श्रवण कर-कोई पुरुष क्षुधाकरके बडा दुःखी होवे और कोई उसको विषवाले लड्डू लादेवे और दूसरा पुरुष इसते कानोंमें कहदेवे जो इन लड्डुओंमें विष पडी हुई है तब वह पुरुष क्षुधाके क्लेशको तहां सहलेता है पर उन लड्डुओंको नहीं खाता और जिसपुरुषकी बहुत सुंदर मीठे अन्न करके क्षुधा निवृत्त होगई है और आपणे विवेक करके जानता है जो इन लड्डुओंमें विषपडी हुई है सो पुरुष तिन लड्डुओंके खानेकी इच्छा नहीं करता इसका तहाँ क्या कहना है ॥

शंका-प्रारब्धकर्मकी प्रबलताते ज्ञानवान्को भी भोगोंविषे इच्छा होती है ॥

उत्तर-प्रारब्धकर्मकी प्रबलताते ज्ञानवान्को जिससे भोगोंकी

इच्छा होती है तो भी ज्ञानवान् क्लेशको प्राप्त हुयाहुया भोगताहै अज्ञानीकी न्याई प्रसन्न हुयाहुया नहीं भोगता जैसे बेगारी पकड्या हुया बेगारको उठावता है तो भी प्रसन्नता करके नहीं उठावता क्लेश करके उठावता है और मंजूरी लेनेवाला प्रसन्नतासे उठावताहै कैसे इस बातको तुम जानतेहो जो ज्ञानवान् भोगोंको भोगता हुया क्लेशको प्राप्त होता है बिगारीकी न्याई ऐसा पूछेतो श्रवण कर-गृहस्थी जो ज्ञानवान् कुटुंबवाले और शास्त्रविषे श्रद्धावाले हैं सो भोगोंको भोगते हुये इस प्रकार सदा क्लेशको प्राप्त होते हैं आजपर्यंत भी हमारा कर्म क्षीण नहीं भया ऐसा लोकविषे देखाजाता है इसते हम जानते हैं जो ज्ञानवान् भोगोंको भोगता हुया क्लेशको प्राप्त होता है ॥

शंका-तत्त्ववेत्ताको भी जिसकरके क्लेश होता है तहाँ ज्ञानको व्यर्थता भई ॥

उत्तर-यह जो ज्ञानवान्‌को क्लेश प्राप्त होता है सो संसार ताप नहीं किंतु भोगोंविषे तिसका वैराग्य है संसार ताप वह होता है जो भ्रांति ज्ञानते होवे अर्थ-यह जो विषयोंविषे स्नेहका कारण ताप है सो संसार ताप है ऐसा आचार्योंने निर्णय किया है ताते ज्ञानवान्‌को जो क्लेश है सो विवेकते उत्पन्न भया है सो संसार ताप नहीं ॥

शंका-यह क्लेश विवेक जन्य है और अविवेक जन्य नहीं यह तुमने कैसे जाना ॥

उत्तर-यह क्लेश कामनाकी निवृत्तिका कारण है इसते जाना जो विवेकते उत्पन्न हुया है विवेक करके क्लेशको प्राप्त हुयाहुया थोडेही भोगकरके तृप्त होजाता है और विवेकसे विना अनंत भोगोंको प्राप्त हुयाहुया भी तृप्त कभी नहीं होता ॥

शंका-विवेकी पुरुषकी जैसे भोगोंकरके तृप्ति होजाती है तैसे अविवेकी पुरुषकी भोगोंकरके तृप्ति होवे तौ ते विवेक तृप्तिमें कारण नहीं॥

उत्तर-भोग तृप्तिका कारण नहीं इस अर्थको श्रुति कथन करती है सो श्रवण कर-विषयोंके भोगने करके चित्त कभी भी तृप्त नहीं होता संगों विषयोंके भोगनेकी कामना बढती जाती है जैसे अग्निविषे आहुतियोंके पायाँहुयाँ अग्नि बढती है अग्नि शांतिको नहीं प्राप्त होती तैसे भोगोंके भोगणे करके तृष्णा बढती है तृष्णा शांत नहीं होती और विवेककरके भोगोंको जानकरके भोगोंको भोग्यां हुयां चित्त शांतिको प्राप्त होजाता है जैसे चोरको जानलइये। जब यह चोर है तब वह चोरीको नहीं करता ताते तृष्णा बुद्धिका कारण जो भोगोंका भोगना सो विवेकके प्रभाव करके तृष्णाकी बुद्धिका कारण नहीं होता ॥

शंका-मनका तो स्वभावही है कामना करणी ताते मन थोडे भोगकरके कैसे तृप्तिको प्राप्त होता है ॥

उत्तर-निदिध्यासनकरके कैदीको प्राप्त हुयाहुया जो मन है तिसका स्वभाव कामना करणेवाला नहीं रहता तिसकारणते निदिध्यासनविषे स्थित जो मन है सो तृप्तिको प्राप्त होजाता है थोडे भोगकरके तिस मनको थोडाभी लीलारूप भोग बहुत प्रतीत होताहै जिसते विस्तारको प्राप्त नहीं होय सक्ता ताते क्लेश युक्त होनेते थोडे भोगकोभी बहुत मानता है और प्रथम बहुत नहीं मानता था जैसे कोई बहुते देशका राजा होवे और उस राजाको और कोई राजा जीतलेय और कैद करलेय और पाछेसे उसको एक ग्राम देय तब वह कैदते छूट्या हुया राजा एकग्राम करके प्रसन्न होजाता है और जितनाकाल वह शत्रुओं करके जीत्या नहीं गया और कैदको नहीं प्राप्त भया तितना कालपर्यंत वह राजा देशको भी बहुत नहीं मानता था तैसे मन भी जितना कालपर्यंत विवेकरूप राजाने निदिध्यासनरूप कैदखानेमें नहीं कैद

किया तितना कालपर्यंत सारे त्रिलोकीके भोगोंकरके भी तृप्त नहीं होता और निदिध्यासनरूपी कैदते छूटचा हुया थोडे भोगको भी बहुत मानता है ॥

शंका-पाछे तुमने यह कह्या कि प्रारब्धकर्मकी प्रबलताते ज्ञानवान्को भी भोगोंविषे इच्छा होती है सो तुम्हारा कहना अयुक्त है जिसते भोगोंविषे इच्छाके नाश करणेवाले विवेकके प्रगट हुयाँहुयाँ भोगोंविषे इच्छा उत्पन्न नहीं होय सक्ती ॥

उत्तर--विषयोंविषे दोष दर्शनके हुयाँहुयाँभी इच्छाकी उत्पत्ति होती है काहेते प्रारब्धकर्म तीन प्रकारका है जैसे एक स्वेच्छारूप है १ एक अनिच्छारूप है २ एक परेच्छारूप है ३ इच्छाप्रारब्ध कौन है ऐसा पूछेतो श्रवण कर--जैसे रोगीपुरुष कुपथ्यवस्तुका जो भोजनकरता है सो स्वेच्छा प्रारब्ध है जिसते आपनी इच्छाकरकेही रोगके बढनेके कारणविषे प्रवृत्त भया है ताते आपणे अनर्थको जानता हुयाहुयाभी कुपथ्यकी इच्छा करता है प्रारब्ध कर्मकरके और चोर चोरी कियां हुयां फाँसी मिलना नाककटना और कैद होना इसते आदिलेकरके अनर्थोंको जानताभी है पर प्रारब्धकर्मते फेर चोरीकी इच्छा करता है यद्यपि राजाकी स्त्रीकेसाथ प्रीतिकरणेवाले अनर्थको जानते हैं पर प्रारब्धकर्मते फेर तिसीकी इच्छा करते हैं अपथ्यसेवा और चोरी और राजाकी स्त्रीसाथ प्रीति यह प्रारब्धकर्मका फल है यह तुमने कैसे जान्यां ऐसा पूछे तो श्रवण कर--जिसते यह किसीसेभी दूर नहीं किये जाते ईश्वरभी इन्होंको दूर करणेको समर्थ नहीं इसते जानता है जो यह प्रारब्धकर्मका फलहै जिसते ईश्वर आपही आपने मुखसे गीताविषे अर्जुनके ताईं कथन करताभया है--हे अर्जुन! जैसे जिसका प्रारब्धकर्मके होता है तैसेही उसकी प्रवृत्ति होती है अज्ञानियोंकी क्या कहनी है ज्ञानीभी अपने प्रारब्धके अनुसार प्रवृत्त होता है संपूर्ण प्राणी अपने प्रारब्ध

कर्मको प्राप्त होते हैं तिसविषे प्रवृत्तिके निवारण करणेका प्रयत्न जो है सो निष्फल है तीव्र प्रारब्ध किसीकरके निवारण नहींहोता इसविषे और भी वचन श्रवण कर अवश्य भोगनेयोग्य जो सुखदुःख हैं सो जो कभी दूर होता तब राजा नल और रामचन्द्रजी और राजा युधिष्ठिर दुःखोंको न प्राप्त होते ॥

शंका--प्रारब्धकर्मके निवारण करणेको जेकर ईश्वर समर्थ नहा तब ईश्वरको अनीश्वरता प्राप्त भई जिसते ईश्वरका लक्षण ईश्वरविषे न आया ईश्वरका लक्षण यह है जो करणेको और न करणेको और अन्यथाकरणेको समथ होवे सो ईश्वर कहाता है ताते इस लक्षणके अभाव होनेते ईश्वरको अनीश्वरता प्राप्त भई ॥

उत्तर--प्रारब्धकर्मके न दूर करणेते ईश्वरको अनीश्वरताकी प्राप्ति नहीं होती जिसकारणते प्रारब्ध कर्मकी अवश्य भावताभी ईश्वरने रची है आपने करणेको आप कैसे दूर करे जो आपने करणेको आप दूर करे तौ ईश्वरका महत्त्व दूर होजाय लोकविषेभी जो आपने करणेको आप नहीं पालता तिसपुरुषका महत्त्व नहीं रहता अब अनिच्छा प्रारब्धको श्रवण कर गीताविषे अर्जुनके प्रश्न और भगवानके उत्तर करके अनिच्छा प्रारब्ध जानाजाताहै सो जिसप्रकार अर्जुनका प्रश्न है और भगवानका उत्तर है सो श्रवण कर किसकरके प्रेऱ्या हुया यह पुरुष पापकी इच्छा न करता हुयाभी पापको करता है जैसे राजाका नौकर राजाकरके प्रेऱ्या हुयाहुया किसी पुरुषके अनादरकी इच्छा नहींभी करता पर अनादर करता है हे पृश्निवंशविषे अवतारको प्राप्त भगवान् कृष्ण! इस मेरे प्रश्नका उत्तर कृपाकरके कहो ॥

श्रीभगवानुवाच।

इस पुरुषकी पापोंविषे प्रवृत्ति करवावनेवाला काम है और यह कामही किसी निमित्तकरके क्रोधरूपताको प्राप्त होजाता है जैसे-

किसीपुरुषकी किसीपुरुषविषे दशरुपयेकी कामना भई और इस पुरुषने उसके दश रुपयेही दिये नहीं तब वोह पुरुष क्रोधको प्राप्त होता है ताते कामही क्रोधरूपको प्राप्त भया सो काम रजोगुणते उत्पन्न होता है और बडा इसका भोजन है किसी उपाय करके तृप्त नहीं होता जैसे-अग्नि आहुतियां करके तृप्त नहीं होती और काम बडे पापोंका कारण है ताते कामको मोक्षमार्गविषे वैरी जान इस प्रश्न उत्तरकरके अनिच्छाप्रारब्ध प्रतीत होती है जिसते इच्छाते विनाही पुरुषकी प्रवृत्ति कथन करी है ॥

शंका-भगवान्के उत्तर विषे कामक्रोधको पुरुष प्रवृत्तिविषे कारणता प्रतीत होती है अनिच्छा प्रारब्धको पुरुष प्रवृत्तिकी कारणता नहीं प्रतीत होती ॥

उत्तर-प्रारब्धकर्मको पुरुषप्रवृत्तिविषे कारणता कथन करणेवाले गीतावाक्यको श्रवण कर-हे अर्जुन ! आपना जितना प्रारब्धकर्म है उसकरिके बद्ध हुयाहुया अविवेकते जिसके करणेकी इच्छा करेगा तिसकोभी करेगा प्रारब्धकर्मके अधीन हुयाँ हुयाँ जिसते प्रारब्धकर्म शरीरके साथ उत्पन्न हुयाहुया हो ताते अनिच्छाप्रारब्ध सिद्ध भया अब परेच्छा प्रारब्धको श्रवण कर-किसीपुरुषके घरविषे विवाहादिक कार्य होताहै तब वह भाईचारोंको इकट्ठा करताहै तिन चारों भाइयोंविषे जो मुखिया होताहै और संपूर्ण कार्योंविषे तत्पर करदेताहै सो पुरुष तत्पर हुयाहुया सुख दुःखको प्राप्त होता है यह सुख दुःखकी प्राप्ति तिसको आपनी इच्छासे नहीं भई और अनिच्छासेभी नहीं भई किंतु जिसके घर विवाह है तिसकी इच्छा करके भई है ताते यह जो कर्म है सो परेच्छा कर्म कहा है इसी कारणते विषयोंविषे दोषदर्शनके हुयाँ हुयाँभी प्रारब्धके निवारण करणेको नहीं समर्थ होता ताते प्रारब्धकर्म इच्छाको उत्पन्न करदेता है ॥

शंका-तत्त्ववेत्ताकोभी जेकर तुसी इच्छाका अंगीकार करोगे तब इच्छाके निषधकरणेवाली जो श्रुति है तिसका विरोध प्राप्त होवेगा

उत्तर-श्रुतिइच्छाके अभावको नहीं कहती किंतु क्या कहती है तत्त्ववेत्ताको इच्छा होती है पर तत्त्ववेत्ताकी इच्छा सफलप्रवृत्तिवाली नहीं होती यह श्रुतिने कथन किया है तिसविषे दृष्टांत श्रवणकर जैसे-भुना बीज अंकुरको नहीं उत्पन्न करता तैसे तत्त्ववेत्ताकी इच्छा जन्मोंको नहीं देती जिसते तत्त्ववेत्ताको संपूर्ण पदार्थोंविषे मिथ्या ज्ञान होता है ॥

शंका--तत्त्ववेत्ताविषयक इच्छा न अंगीकार कीनी चाहिये जिसते तिस इच्छाका फल कुछ है नहीं ॥

उत्तर-तत्त्ववेत्ताकी इच्छा फलते रहित नहीं तात्काल भोगरूप फलके देनेवाली है जैसे भुने अन्नके न उग्याँ हुयाँ भी उदरपूर्तीलक्षण कार्यको करता है तैसे ज्ञानवान्की इच्छा अल्पभोगरूपकार्यको कर देती है और बहुत व्यसनको नहीं करती व्यसनका अर्थ एक तो विपदा१ औरभ्रंश२ और कामते और क्रोधते उत्पन्न भया जो विकार यह चार हैं अर्थ यह ज्ञानवान् इच्छाकरके देह आदिकोंविषे अध्यासको नहीं प्राप्त होता और ब्रह्मानंदके अनुभवसे रहित नहीं होता और कामजन्यदोष करके वर्णआश्रमकी मर्यादाको नहीं त्याग देता और क्रोधकरके अन्य जीवोंके प्राणोंको नाश नहीं करता ॥

शंका-प्रारब्धकर्म भोगद्वारा व्यसनको भी उत्पन्न करदेवेगा

उत्तर-प्रारब्धकर्मका स्वभाव भोगदेनेका है और व्यसनको उत्पन्न करणा यह प्रारब्धकर्मका स्वभाव नहीं ॥

शंका-जो प्रारब्धकर्म व्यसनको नहीं उत्पन्न करता तो व्यसनको कौन उत्पन्न करता है ॥

उत्तर–भोग पदार्थविषे जो समता भ्रम है सो व्यसनको उत्पन्न करता है भोगोंविषे अब व्यसनका कारण जो भ्रम है तिसको श्रवण कर यह भोग विनाशको प्राप्त होवे और दिनोदिन वधते जावें और इन भोगोंको मत कोई विघ्न प्राप्त होवे इस इन भोगों- करके मैं बडाईको प्राप्त भया हूँ ऐसा जो भ्रम है तिसते व्यसनकी उत्पत्ति होती है अब प्रसंगते इस भ्रमके नाशके साधनको श्रवण कर जो नहीं होनेवाला सो कभी नहीं होता जो होनेवाला सो दूरनहीं होता ऐसा जो ज्ञान है सो यह जो चिंता है यह इष्टपदार्थ मेरेको कब प्राप्त होवेगा और यह दुःख मेरा कब दूर होवेगा सोई भय विषे तिसके नाश करणेवाला है जैसे विष पुरुषके अंतर प्राप्त होने पर पुरुषको नाश करदेता है तैसे चिंताभी पुरुषके अंतर प्राप्त होनेसे पुरुषको नाश करती है ताते चिंताको विष कहते हैं तिस चिंतारूप विषके नाश करणेवाला जो बोधहै सो भ्रमके नाशकरणेवाला है ॥

शंका–ज्ञानवान्को भोगोंके भोग्याँ हुयाँभी व्यसन नहीं होता और अज्ञानकी व्यसन होताहै इस वार्ताको तुमने किसकारणते जान्या।

उत्तर–ज्ञानवान्को जगत्विषे मिथ्या ज्ञान होता है तिसते तिसको व्यसन नहीं उत्पन्न होता और अज्ञानीको जगत्विषे सत्य- रूपता ज्ञान है तिस करके अज्ञानीको व्यसन उत्पन्न होता है तात्पर्य यह–जिसको भ्रम है तिसको व्यसन होता है और भोग मात्रत व्यसन नहीं होता ज्ञानीको भ्रम है नहीं तिसते व्यसनभी नहीं होता और अज्ञानीको भ्रम है तिसते अज्ञानको व्यसन होता है भ्रम व्यसनका कारण कैसे है ऐसा पूछे तो श्रवण कर–भ्रमकरके अशक्य अर्थोंका संकल्प उदय होता है अज्ञानीको तिसते अज्ञानी व्यसनको प्राप्त होता है और विवेकीको अशक्य अर्थोंका संकल्प नहीं होता तिसते तिसको व्यसन कैसे होवे ज्ञानवान् संपूर्ण भोग्यपदार्थोंको मिथ्या

जानकरके भोगोंविषे आस्था त्याग करदेता है इसते भोक्ता हुयाभी भोगोंके संकल्पको नहीं करता ताते तिसको व्यसन कैसे होवे ॥

शंका-भोग पदार्थोंको मिथ्या जान्याँहुयाँभी तात्काल सुखका हेतु भोगोंको होनेते तिनोंविषे आस्थाका अभाव नहीं बनता ॥

उत्तर--भोगोंविषे अनेकप्रकारके दोषोंके देखनेते ज्ञानवानको भोगोंविषे आस्था नहीं रहती जिसते ज्ञानवान् संपूर्ण भोग्यपदार्थोंको स्वप्नके भोगपदार्थोंके तुल्य देखता है और मदारीकरके बनाये हुये पदार्थोंके तुल्य देखता है जैसे मदारीकरके बनाये हुये पदार्थ अचिंत्य रचनारूपहैं और देखते देखतेही नाशको प्राप्त होजातेहैं तैसे संपूर्ण पदार्थ अचिंत्य रचनारूप हैं और देखते देखते नाश होजाते हैं ऐसे जानताहुया हुया ज्ञानवान् जगत्के पदार्थोंविषे आस्था नहीं करता आस्था नाम प्रीतिका है ॥

शंका-जाग्रत्के पदार्थोंविषे स्वप्नकी और इंद्रजालकी सदृशताके ज्ञानके हुयाँहुयाँ तिनोंविषे आस्थाका अभाव होवे स्वप्न और इंद्रजालकी सदृशताका ज्ञान किसते होता है ॥

उत्तर-जाग्रत्के पदार्थोंविषे स्वप्न इंद्रजालके पदार्थोंकी सदृशताके ज्ञानका कारण श्रवण कर जिस समय पुरुष सोता उठे तिस समय यह विचार करै कि स्वप्नमें जैसे पदार्थ प्रतीत होते हैं अपरोक्ष रूपता करके तैसे जाग्रत्के पदार्थभी अपरोक्ष रूपताकरके प्रतीत होते हैं ताते जाग्रत् स्वप्न इन दोनों पदार्थोंको वारंवार विचारे चिरकालपर्यंत जाग्रत् और स्वप्नके पदार्थोंकी तुल्यताको देखकरके जाग्रत्के पदार्थोंविषे सत्यता बुद्धिको त्यागकरके अज्ञान दशाकी न्याईं जाग्रत्के पदार्थोंविषे रागद्वेषको नहीं प्राप्त होता ॥

शंका-जगत्विषे जो मिथ्यारूपताका ज्ञान है और प्रारब्ध

कर्मका जो भोग है इन दोनोंका परस्पर विरोध है जिसते प्रारब्धकर्मका जगत्की सत्ताको चाहता है ताते जगत्‌विषे मिथ्यारूपताके ज्ञान हुयाँहुयाँ प्रारब्धकर्म करके भोग सिद्धि नहीं बनती ॥

उत्तर-भोगविषयोंकी सत्यताको नहीं चाहता इसते तत्त्वज्ञानका और प्रारब्धका विरोध नहीं यह संपूर्ण जगत् इंद्रजालविषे प्रतीत होते जो पदार्थ हैं तिनकी न्याईं मिथ्या हैं जिसते इनकी उत्पत्तिका स्वरूप चिंतन नहीं किया जाता इस प्रकार जगत्की मिथ्यारूपता जिसको कहींभी नहीं भूलती तिस पुरुषकी प्रारब्धकर्मके भोगकरके कुछ हानि नहीं अर्थ यह-ज्ञानवान्‌को सुखदुःखके अनुभव करके जगत्की मिथ्यारूपताका अभाव नहीं होता और जगत्की मिथ्यारूपता जानने करके प्रारब्धकर्मका फल जो है सुखदुःख तिसका अभाव हो तौ जिसते इन दोनोंके विषे भिन्न भिन्न है । अर्थ यह-अभाव प्रारब्धाविषे तो यह है जीवको सुखदुःख देना और तत्त्वज्ञानविषे यह है जगत्‌को मिथ्या जनाय देना ब्रह्मज्ञानका इतने मात्र मैं आग्रह है जो मैंने जगत्‌को इंद्रजालके पदार्थोंकी न्याईं मिथ्या दिखलावना और जीवको सुखदुःखरूप भोगके दूरकरणे विषे हठ नहीं और प्रारब्धकर्मका इस विषे हठ है जो मैंने जीवको सुखदुःख भुगावना और इस वार्तामें तिसका हठ नहीं जो मैंने जगत्‌को सत्य करणा । ताते ब्रह्मविद्याका और प्रारब्धकर्मका परस्पर विरोध नहीं जिसते तिनोंकेविषे भिन्न है रसना घ्राणकी न्याईं जैसे एकशरीराविषे रसना और घ्राण वास करते हैं तिनोंका विरोध नहीं रसना तौ रसकोई ग्रहण करती है गंधको नहीं ग्रहण करती और घ्राण इंद्रिय गंध ग्रहण करती हैं रसको नहीं ग्रहण करती ॥

शंका-भोगने योग्य पदार्थोंविषे मिथ्या रूपताका ज्ञान जो है सो सुखदुःखके भोगको दूर नहीं करता यह वार्ता तुमने कहां देखी है ।

उत्तर-हमने इंद्रजाल करके रचेहुये पदार्थोंविषे मिथ्या रूपताके ज्ञान हुयाँहुयाँ हर्ष शोक रूप भोग देख्या है। अर्थ यह-दो पुरुष मदारीके खेलको देखने लगे हैं और दो पुरुषोंको तिसविषे ज्ञान है जो यह पदार्थ संपूर्ण मिथ्या हैं और तिसने एक पुरुषके हाथमें स्वर्णकी मोहर दई और तिसको कह्या यह मोहर मेरेको तू बेच देय और एक रुपया तूं लेले तब वोह पुरुष इसवार्ताको सुनकरके हर्षको प्राप्त होताहै और दूसरे पुरुषके कपडोंको आग लगाई तब वोह पुरुष शोकको प्राप्त होता है जैसे यहां मोहरका देना और आगका लगावना दोनों मिथ्या हैं पर हर्षशोकको देते हैं तैसे मिथ्यारूप पदार्थभी ज्ञानवान्‌को सुखदुःख देते हैं कुछ औरभी श्रवण कर प्रारब्धकर्म और ब्रह्मविद्या इन दोनोंका विरोध है ऐसे कहनेवालेको हम पूछते हैं प्रारब्ध कर्म ब्रह्मविद्याका नाश करणेवाला है अथवा ब्रह्मविद्या प्रारब्ध कर्मके नाश करणेवाली है पहलापक्ष तो नहीं बनता प्रारब्ध कर्म ब्रह्मविद्याके नाश करणेवाला तब होवे जब जगत्‌की सत्ताको पहलां सिद्ध करके जीवको भोग भुगावे सो ऐसा तो प्रारब्ध कर्म नहीं करता किंतु जीवको भोगमात्र देता है और जगत्‌की सत्ताको नहीं बनावता इसते प्रारब्ध कर्म ब्रह्मविद्याका विरोधी नहीं ॥

शंका-प्रारब्धकर्म भोगको भुगावता है। यह तुम कहते हो तो भोगके बलते भोगने योग्य पदार्थोंकी सत्यताकोभी करवावो ॥

उत्तर-भोग मात्रते भोगने योग्य पदार्थोंकी सत्यता नहीं होती जिसते इसविषे दृष्टांत कोई है नहीं और मिथ्या पदार्थोंसे भोग होता है इस विषे दृष्टांत बहुतहैं भोगका अर्थ सुखदुःखका अनुभव ॥

शंका-मिथ्या पदार्थों करके भोग होता है इस विषे दृष्टांत कोई नहीं ॥

उत्तर-मिथ्यारूप स्वप्नके पदार्थों करके भोग सिद्ध होताहै । जैसे तैसे जाग्रत् अवस्थाके पदार्थों करके भोग सिद्ध होता है जाग्रत् और स्वप्नके भोगविषे न्यूनता और अधिकता कुछ नहीं मिथ्या जो है सीपीका रूपा तिसकरके हर्ष शोक कलहरूप भोग देखाजाता है मिथ्या जो है रस्सीविषे सर्प तिसकरके भयकी प्राप्ति रूप भोग देखा-जाता है और जेकर तू कहे ब्रह्मविद्या प्रारब्धके नाश करणेवाली है तो यहभी वार्ता नहीं बनती ब्रह्मविद्या प्रारब्धके नाश करणेवाली तब होवे जब भोगने योग्य जगत्के पदार्थोंको दूर करे जैसे सीपीविषे रूपेके भ्रमसे अनंतर यह रूपा नहीं यह ज्ञान रूपेके स्वरूपको दूर करदेताहै तैसे ब्रह्मविद्याभी भोगने योग्य पदार्थोंके स्वरूपको दूर करे जेकर प्रारब्धकर्मका भोग जो सुखदुःखका अनुभव है तिसके साधनको अभाव होनेते प्रारब्धके नाश करणेवाली होवे सो तो ब्रह्मविद्या जग-त्के स्वरूपको नाश नहीं करती किंतु जगत्की मिथ्या रूपताका जनावती है ताते प्रारब्ध कर्मके नाश करणेवाली ब्रह्मविद्या नहीं ॥

शंका-ब्रह्मविद्या जगत्को मिथ्यारूप जनावती है जिस कारणते तिसी कारणते जगत्के स्वरूपकोभी नाश करो ॥

उत्तर-ब्रह्मविद्या जगत्को मिथ्या रूपही जनावतीहै और जगत्के स्वरूपको नाश नहीं करती जैसे मदारी करके रचेहुये जो पदार्थ हैं तिन्होंको तत्त्वज्ञान मिथ्या जनावता है और तत्त्वज्ञानोंके स्वरूपको नहीं नाश कर्ता और मदारीके खेलके देखनेवाले जो लोक हैं सो तिन पदार्थोंके स्वरूपको दूर नहीं किया चाहते और उन्होंको मिथ्या जान लेते हैं तैसे ब्रह्मविद्या भोगने योग्य पदार्थोंके स्वरूपको दूर नहीं करती किंतु जगत्को मिथ्या जनाय देती है ॥

शंका-(श्रुतिको आश्रयकरके) श्रुति यह वार्ता कहतीहै जिस अव-स्थाविषे ज्ञानवान्को सम्पूर्ण जगत् आत्मरूप होजाताहै तिस अवस्था

विषे किस नेत्र इंद्रिय करके किस वस्तुको देखे इस प्रकार द्रष्टा दर्शन दृश्यके अभावको बोधन करता है इसते जानता है और ब्रह्मविद्या उत्पन्न हुईहुई जगत्के स्वरूपको नाशकरती है त्रिपुटीके अभाव हुयांहुयां ज्ञानवान्को प्रारब्ध कर्मका भोग सिद्ध नहीं होता इसीप्रकार किस घ्राण इंद्रियकरके किस गंधको कौन सूँघे और किस वाक्य इंद्रियकरके किस वचनका कथन करे किस श्रोत्रइंद्रियकरके किस वचनको सुने इसीतरहां सर्व त्रिपुटियोंका अभाव जानना इसप्रकार श्रुतिविषे बहुत वार कथन कियाहै तिसते यह जानाजाता है ब्रह्मविद्या उदय हुईहुई द्वैतके स्वरूपको नाश करती है विना द्वैतक नाश-कियेसे ब्रह्मविद्या उदय नहीं होती द्वैतके नाश हुयांहुयां ज्ञानवान्को प्रारब्धभोग सिद्ध नहीं होता ॥

उत्तर-तैंने जो कथन श्रुति कीनी है तिसका अर्थ तेरेको नहीं आवता जिसकारणते सूत्रकार भगवान् व्यासजी इस श्रुतिका अर्थ कथन करते भये हैं सो श्रवण कर-सुषुप्ति अवस्था विषे और विदेह मुक्ति अवस्थाविषे किसी इंद्रियकरके किसी विषयको नहीं जानता पुरुष और जेकर इस श्रुतिको सुषुप्ति अवस्था और विदेह मुक्ति अवस्थाविषे द्वैतके अभाव कथन पर न मानो किंतु ज्ञानवान्को द्वैतके दर्शनके अभाव कथन पर मानो तो याज्ञवल्क्य आदिकोंको आचार्यता न बनेगी काहेते जेकर याज्ञवल्क्यमुनिको द्वैत नजर आवता है तब याज्ञवल्क्यको अद्वैत ज्ञान न भया तो आचार्य कैसे होवेगा और जेकर कहो याज्ञवल्क्य आदिक द्वैतको नहीं देखते तो उपदेशके योग्य शिष्यकी प्रतीतिके अभाव होनेते गुरुका उपदेश तिसके तांइ होवेगा उपदेश तो शिष्यकी प्रतीतिसे बनताहै परंतु उपदेशके अभाव हुयांहुयां ब्रह्मविद्याकी संप्रदायका अभाव होवेगा ॥

शंका-याज्ञवल्क्य आदिकोंको आचार्यतासमयविषे विद्यमान जो ज्ञान है तिसको ब्रह्मविद्यारूपता तो है परंतु अपरोक्ष ब्रह्मविद्या-

रूपता नहीं द्वैतकी प्रतीति होनेते और जब याज्ञवल्क्य आदिक निर्विकल्प समाधिविषे स्थित होते हैं तब तिन्होंको द्वैतकी प्रतीतिका अभाव होता है तब द्वैतकी प्रतीतिके अभावका नाम अपरोक्ष ब्रह्मविद्या है ।

उत्तर–द्वैतकी प्रतीतिके अभावका नाम जेकर अपरोक्ष ब्रह्मविद्याको मानेगा तब सुषुप्ति विषे द्वैतकी प्रतीतिका अभाव होता है ताते सुषुप्ति अपरोक्ष ब्रह्मविद्या होनी चाहिये ॥

शंका–केवल द्वैतकी प्रतीतिके अभावका नाम अपरोक्ष है ब्रह्मविद्या मैं नहीं कहता, किंतु आत्मज्ञान और द्वैतप्रतीतिका अभाव इन दोनोंका नाम मैं अपरोक्ष ब्रह्मविद्या कहताहूं ताते सुषुप्ति अवस्थाविषे आत्मज्ञानके अभाव होनेते सुषुप्ति अवस्थाको ब्रह्मविद्यारूपता नहीं ।

उत्तर–द्वैतकी प्रतीतिके अभाव हुयांहुयांभी सुषुप्ति अवस्थाविषे आत्मज्ञानके अभावते जेकर सुषुप्ति अवस्थाको अपरोक्ष ब्रह्मविद्यारूपता नहीं तब आत्मज्ञानको अपरोक्ष ब्रह्मविद्यारूपता कहना चाहिये और द्वैतकी न प्रतीति होनेका नाम अपरोक्ष ब्रह्मविद्या न कहना चाहिये ॥

शंका–एक एकको अपरोक्ष ब्रह्मविद्या रूपता नहीं किंतु द्वैतका न प्रतीत होना और आत्मज्ञान इन दोनोंके मिल्यांहुयांका नाम अपरोक्ष ब्रह्मविद्या है ॥

उत्तर–तेरे मतविषे द्वैतकी प्रतीति न होनी आधी विद्या तो यह है और आधी विद्या आत्मज्ञान है घटादिकोंको आत्मज्ञान नहीं और द्वैतप्रतीतिका अभाव है ताते घटादि अर्द्धविद्यावाले भये जिसते घटादिकोंको कदाचित्भी किसी प्रकारका द्वैत नहीं प्रतीत होता और तेरे

मतविषे समाधिवाले पुरुषोंको आधीब्रह्मविद्याभी न भई चाहिये जिस-कारणसे मच्छरके शब्दसे आदिलेकरके समाधिवालोंको विक्षेप बहुत है और घटादिकोंको कोई विक्षेप है नहीं ताते घटादिकोंको तेरे मत-विषे द्वैतकी प्रतीतिके अभावकी दृढता करके अर्धब्रह्मविद्या होनी चाहिये ॥

शंका-आत्मज्ञानही विद्या है द्वैतकी अप्रतीति विद्या नहीं ।

उत्तर-यह वार्ता तो इष्ट है ताते इस निश्चयको धार करके सुखी हो ॥

शंका-आत्मज्ञानही विद्या है परंतु सो ब्रह्मविद्या दुष्ट चित्तविषे उत्पन्न नहीं होती इस कारणते चित्तके दोषोंको दूर करणेवास्ते चित्त-वृत्तिका निरोध करना चाहता है ऐसे मैं कहताहूँ ।

उत्तर-जेकर तेरा चित्त दुष्ट है सो तू चित्तका निरोध सुखपूर्वक कर ऐसेकोभी चित्तका निरोध करणा किसते इष्ट है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-चित्तके दोष दूर हुयाँहुयाँ अद्वितीय आत्मज्ञानकेवास्ते जानने योग्य जो है जगत्की मिथ्यारूपता सो भलीप्रकार जानीजाती है जिसकारणते इसते चित्तका निरोध हमारेको इष्ट है इस प्रकार किसकी इच्छाको करता हुया इस मंत्रके अंशकरके कथन करणे योग्य जो अर्थ सो कथन किया अब तिसके अर्थकी समाप्ति करते हैं ताते यह सिद्ध भया ज्ञानवान् इच्छाको करता हुया भी अज्ञानीकी न्याईं इच्छा नहीं करता इसकारणते श्रुतिने "किमिच्छन्" कथन किया है ॥

प्रश्न-श्रुतिके अक्षरोंका अर्थ तो यह प्रतीत हुवा सो ज्ञानवान् किसी पदार्थकी इच्छा नहीं करता तिस अर्थको छोड़करके जो तुमने यह अर्थ कथन किया तो ज्ञानवान् इच्छा करता हुयाभी अज्ञानीकी न्याईं इच्छा नहीं करता इसविषे कारण है ॥

उत्तर-इस प्रकार व्याख्यान करणेविषे इन दोनों शास्त्रोंका परस्पर

विरोध नहीं आवता एक शास्त्रज्ञानवान्को रागादिकोंके अभावके कथन करणेवाला है सो यह है चित्तकी प्रवृत्तिका स्थान जो है और तिन्होंविषे जो राग है सो अज्ञानका चिह्न है विषयोंविषे रागवाले चित्तको ज्ञान नहीं होता जैसे जिस वृक्षकी खोडविषे अग्नि है तिसवृक्षविषे हरियाली नहीं होती और दूसरा शास्त्रज्ञानवान्को रागादिकोंका कथन करणेवाला है सो यह है जगत्के मिथ्या जाननेते और आत्माकी असंग निर्विकारता जाननेते शास्त्रका उपदेश समाप्त होजाता है अर्थ यह जो आगे शास्त्रको उपदेश करणे योग्य कुछ नहीं रहता इतने मात्र करके मोक्षकी प्राप्ति होजाती है और रागद्वेष आदि चित्तविषे जैसे हैं तैसेही रहे रागद्वेष आदिकोंकरके मोक्षका अभाव नहीं होजाता जो शास्त्रतत्त्ववेत्ताको राग कथन करणेवाला है तिसका अर्थ यह है-अज्ञानीकी न्याईं ज्ञानवान्को रागद्वेष दृढ नहीं होता किंतु रागाभास होता है और जो शास्त्र रागके अभावको कथन करणेवाला है तिसका अर्थ यह है ज्ञानवान्को जगत्की सत्ता लेकर राग नहीं होता इसप्रकार दोनों शास्त्रोंका अविरोध होजाता है यहांतक इतने ग्रंथ करके "किमिच्छन्" इस श्रुतिवाक्यका अर्थ कथन किया आगे "कस्य कामाय" इस वाक्यका अर्थ वर्णन करते हैं ज्ञानवान्को जैसे जगत्विषे मिथ्यारूपताका ज्ञान होता है तिसकरके कामना करणे योग्य पदार्थ कोई नहीं रहता इस अर्थको जनावने वास्ते यह कथन किया "किमिच्छन्" इसीप्रकार आत्माकी असंगताके ज्ञान करके वास्तव भोक्ता कोई नहीं रहता इस अर्थके जनावने वास्ते श्रुतिने किसकी कामनावास्ते कथन किया है ॥

शंका-आत्माको भोक्तारूपताका निषेध तब बने जब पहिले आत्माविषे भोक्तारूपताकी प्राप्ति होवे सो तो भोक्तारूपताकी प्राप्ति आत्माको असंग होनेते कभी नहीं बनती ।

उत्तर-आत्माको भोक्तारूपताकी प्राप्ति अज्ञानियोंके अनुभव करके सिद्ध है इस अर्थको बृहदारण्यक उपनिषद्की श्रुतिभी कथन करती है और मैत्रेयी भर्तादि कामनाके वास्ते भर्ता स्त्रीको प्यारा नहीं लगता यहांसे लेकरके आत्माकी कामनाके वास्ते संपूर्ण प्यारे लगते हैं यहां जो वाक्यसमुदाय है तिसकरके भर्ता और स्त्रीसे आदिलेकरके प्रपंचको आत्माके भोगको साधनता कथन करी है तिसते यह जाना-जाता है कि, आत्माको अज्ञान करके भोक्तारूपताकी प्राप्ति है इस प्रकार बृहदारण्यक उपनिषद्की श्रुतिविषे बहुत घोषण किया है अर्थ यह-जो बहुतवार कथन किया है और आत्माविषे भोक्तारूपताके निषेधवास्ते भोक्ताविषे विकल्पकरके पूछते हैं भोक्ता कौन है ? यह निर्णय किया चाहिये कूटस्थ भोक्ता है अथवा चिदाभास भोक्ता है अथवा चिदाभास और कूटस्थ दोनों मिले भोक्ता हैं कूटस्थ तो असंग होनेते भोक्ता नहीं बनता ॥

शंका-कूटस्थ असंगभी होवे और भोक्ताभी होवे इसविषे क्या दोष है ॥

उत्तर-असंग नाम है निर्विकारका और भोक्ता विकारी होता है काहेते जो सुखदुःखका अभिमानरूप विकारका नाम भोग है निर्वि-कारता और सविकारता इन दोनोंकी एकविषे प्राप्ति नहीं होती जैसे सूर्यविषे अंधकार और दूसरा प्रकाश इन दोनोंकी एकविषे प्राप्ति नहीं होती तैसे कूटस्थ निर्विकार असंगविषे भोगरूपविकारकी प्राप्ति नहीं होती ।

शंका-जेकर कूटस्थ भोक्ता नहीं बनता तो विकारी चिदाभास भोक्ता कैसे होवे ॥

उत्तर-चिदाभास यद्यपि विकारी है तोभी अधिष्ठानते विना चिदा-भासकी सिद्धि नहीं होती ताते अधिष्ठानरूप कूटस्थको छोड़करके

चिदाभासकी स्थिति नहीं बनती इसते केवल चिदाभासकी भोक्ता नहीं बनता ताते चिदाभास और कूटस्थ दोनों मिले हुये भोक्ताहैं यह व्यवहारदशाविषे कथन करचा है परमार्थ दृष्टिकरके उभय आत्मकता नहीं बनती ॥

शंका—उभयआत्मक भोक्ता व्यवहारदृष्टिकरके सिद्ध है पारमार्थिक नहीं यह तुम्हारा कहना अयुक्त है जिस कारणते बृहदारण्यक उपनिषद्विषे यह कथन किया है कि, यह जो पुरुष है सो जाग्रत् स्वप्न सुषुप्तिके प्रकाशनेवाला असंगहै। ऐसे असंग कूटस्थको जैसे कथन किया तैसे उभयात्मक चिदाभासकोभी कथन किया है प्राणोंके विद्यमान हुयाँहुयाँ जो यह विज्ञानमय चिदाभास इस वाक्यकरके हृदयाविषे प्रतीत होता है इसते बुद्धिउपाधिक कूटस्थकी न्याई श्रुति करके प्रतिपादित होनेते चिदाभास वास्तव है ॥

उत्तर—चिदाभासकी वास्तवताविषे श्रुतिका तात्पर्य नहीं। जिसकारणते बुद्धि उपाधिक जो उभयात्मक भोक्ता है तिसके आरंभको करके बुद्धिआदिकोंकी कल्पनाका अधिष्ठानरूप कूटस्थ चिदात्मा शेष स्थापन किया है और बुद्धिआदिक अनात्मवस्तुवोंका निषेध करके बृहदारण्यक आदिक उपनिषदोंविषे जिसप्रकार स्थापन कियाहै सो श्रवण कर—तिसविषे प्रथम बृहदारण्यक उपनिषद्का प्रसंग राजा जनक याज्ञवल्क्य मुनीश्वरसे यह पूँछता भया कि, आत्मा कौन है तब याज्ञवल्क्य मुनीश्वर उत्तर कथन करता भया—प्राणोंके विद्यमान हुयाँहुयाँ जो विज्ञानमय हृदय विषे प्रतीत होता है। ऐसे विज्ञानमयके प्रारंभको करके पाछेसे कहता भया यह पुरुष असंग है तिसका बुद्धिआदिकोंके साथ संग नहीं इस प्रकार असंगकूटस्थको शेष याज्ञवल्क्य मुनीश्वर स्थापन करता भया अब ऐतरेय उपनिषद्का प्रसंग शिष्य पूँछताहै ॥

प्रश्न-कौनहै यह आत्मा जिसकी हम उपासना करें देह इंद्रियां, प्राण, मन, बुद्धि, कूटस्थ, इनमें आत्मा कौन है ? इस प्रकार अंतः-करण उपाधिसहित आत्माके आरंभको करके सनकादि मुनीश्वर गुरु कहते भये-चैतन्यमात्र स्वरूप आत्मा है ॥ इसप्रकार कूटस्थ शेष स्थापन किया है, इसी प्रकार और २ उपनिषदोंविषेभी कह्या है इसप्रकार श्रुतियों और युक्तियोंके विचार करके उभयात्मक भोक्ताकी मिथ्यारूपता सिद्ध भई । और सत्यरूप कूटस्थ असंगकी अभोक्ता-रूपता सिद्ध भई ॥

शंका-तुझ करके कथन करी जो श्रुतियां और युक्तियां हैं तिन-करके भोक्तादि मिथ्यारूपताके सिद्ध हुयाँहुयाँ लोकोंको भोक्ताविषे सत्यरूपताकी बुद्धि कारणते होरही है ॥

उत्तर-लोकप्रसिद्ध जो भोक्ता है सो कूटस्थके विवेकज्ञानके अभाव करके कूटस्थकी सत्यताको आपणेविषे कल्पनाकरके तिसद्वारा आप-नेविषे भोक्तारूपकी सत्यताको मानकरके कदाचित् भोग्यके त्याग-नेकी इच्छा नहीं करता ।

शंका-जेकर आत्मा भोक्ता नहीं तो आत्माकी कामना वास्ते संपूर्ण प्यारे होते हैं । इसप्रकार बृहदारण्यक उपनिषद्विषे आत्माकी शेषरूपता करके भोग्यको क्यों कथन किया है ।

उत्तर-श्रुतिने कूटस्थ आत्माकी शेषरूपताकरके भोग्यको नहीं कथन किया । किंतु अज्ञानियोंको अनुभवकरके सिद्ध जो उभयआ-त्मक भोक्ता है तिसका शेषरूप संपूर्ण भोग्य है ॥ ऐसा श्रुतिने अनुवाद किया है अर्थ यह-तो अज्ञानियोंके अनुभवको श्रुतिने कथन किया है आपणे हृदयसे नहीं कथन किया ताते लोकप्रसिद्ध जो भोक्ता है सो आपणे भोगवास्ते भर्ताके स्त्रीपुत्रादिरूप जो भोगके

साधन हैं तिसकी इच्छा करता है यह जो अज्ञानियोंका अनुभव है सो श्रुतिने प्रकट किया है और कूटस्थ आत्माका भोक्तारूप करके नहीं कथन किया ।

शंका-अज्ञानियों करके अनुभवसिद्ध आत्माकी भोक्तारूपताको श्रुतिने किसवास्ते कथन किया ॥

उत्तर-इसवास्ते श्रुतिने कथन किया कि, अज्ञानियोंका भोग्य-विषे प्रेम बहुत है तिसकरके अज्ञानी दुःख पावते हैं तिस दुःखको देखके श्रुतिको दया आई तब श्रुतिने अज्ञानियोंके ताईं यह उपदेश किया कि, हे लोको ! तुम भोग्य विषे प्रीति मत करो जिस भोक्ताके वास्ते भोग्य है तिस भोक्ताविषे प्रीति करो इस वास्ते अज्ञानियोंके अनुभवसिद्ध आत्माकी भोक्तारूपताको श्रुतिने कथनकिया भोग्य विषे-प्रेमको त्याग करके आत्माविषे प्रेम करणा चाहता है इसविषे दृष्टां-तरूपताकरके ईश्वराविषे प्रेमप्रार्थनासहित पुराणवचनको श्रवण कर-हे लक्ष्मीपते ! हे परमेश्वर ! आत्मज्ञानसे रहित अज्ञानियोंकी जो विष-योंविषे दृढप्रीति है सो प्रीति मेरे हृदयसे दूर होनेसे तेरा स्मरण करणे लगा अर्थ यह-जो मेरा मन विषयोंविषे प्रीतिको त्यागकरके सदा तेरे विषे स्थित होवे अथवा अविवेकियोंकी विषयोंविषे जैसी दृढ प्रीति है तैसी दृढप्रीति मेरी तेरेविषे होवे अर्थ यह-तेरे भजनविषे लगा हुयां जो मैं हूँ सो मेरी प्रीति तेरे भजनते मत दूर होवे अर्थात् सदाही मेरे हृदयविषे सर्वकार्योंको करताहुयांभी तेरे भजनकी प्रीति बनी रहे ॥

शंका-इसप्रकारका वचन पुराणविषे और श्रुतिविषे क्या आया ॥

उत्तर-यह पुराणविषे कथन करी जो युक्ति है तिस करके संपूर्ण स्त्रीपुत्रधनादिरूप भोग्यसे विरक्त होगया है चित्त जिसका ऐसा

पुरुष भोगोंविषे प्रीतिको त्याग करके भोक्ता आत्माविषे प्रीतिको दृढ करता हुया भोक्ताके तत्त्वके जाननेकी इच्छा करता है और भोक्ताविषे प्रमाद कभी नहीं करता सदा तिसके स्वरूपको विचारता रहता है जैसे पामर जीव माला चंदन स्त्री वस्त्र सुवर्ण आदिकोंविषे तत्पर रहता है तिनका प्रमाद नहीं करता और जैसे विद्यार्थी सभाविषे औरोंके जीतनेकी इच्छावाला काव्य नाटक तक आदिकोंका निरंतर अभ्यास करता है तैसे जन्ममरणके जीतनेकी इच्छावाला जो जिज्ञासु है सो सदा निरंतर आत्माका विचार करे और जैसे स्वर्गकी प्राप्तिके इच्छावाला जो पुरुष है सो जप तप यज्ञ उपासना आदिकोंको श्रद्धाकरके करता है तैसे मुमुक्षु आत्मज्ञानकेवास्ते सदा आत्माका विचार करे और जैसे अणिमा महिमा आदिक सिद्धियोंकी प्राप्तिकी कामनावाला योगी अतियत्नकरके समाधि करता है तैसे जिज्ञासु मोक्षकी प्राप्ति वास्ते यत्न करके आत्माका विचार करे अर्थ यह-जो आत्माको देह आदिकोंसे भिन्न जाने इसप्रकार सदा अभ्यासविषे लगहुये जो हैं विद्यार्थी स्वर्गार्थी और योगी तिनोंको आपोआपणे कार्यविषे दिनप्रति दिन चतुराई बढती जाती है तैसे मुमुक्षुका विवेकभी दिनदिनविषे निर्मलताको प्राप्त होताजाता है अभ्यासकी दृढता करके विवेककी निर्मलताके प्राप्त हुयेहुयां क्या फल होता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-भोक्ताके वास्तवस्वरूपके विवेक करणेवाला जो जिज्ञासु है तिसने साक्षीकी असंगता जाग्रत् आदिकों विषे अन्वय व्यतिरेक करके जानी है ॥ अर्थ यह-जाग्रत् स्वप्न सुषुप्तिविषे साक्षीकी एकरसता जानी है और जाग्रत्का स्वप्नविषे अभाव और स्वप्नका सुषुप्तिविषे अभाव और सुषुप्तिका जाग्रतविषे अभाव जाना जाता है यह अन्वय व्यतिरेक श्रुतिने स्पष्ट दिखलाया है जाग्रत्अवस्थाविषे जो स्थूल प्रपंच देखाजाता है सो जाग्रत् अवस्थाविषेही रहता है

स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाविषे नहीं प्राप्त होता और स्वप्न अवस्थाविषे जो सूक्ष्म प्रपंच वासनामय देखाजाता है सो स्वप्न अवस्थाविषेही रहता है जाग्रत् और सुषुप्ति अवस्थाविषे नहीं प्राप्त होता और जिस द्रष्टाने जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति इन तीन अवस्थाओंको अनुभव किया है सो द्रष्टा इन तीन अवस्थाओंविषे एक है इस प्रकार द्रष्टाके अन्वयको और जाग्रत् आदिक अवस्थाके व्यतिरेकको सभी लोक आपणे अनुभवकरके जानते हैं केवल अनुभवही इस अर्थविषे प्रमाण नहीं किंतु वेदभी प्रमाण हैं सो वेद यह है द्रष्टा जाग्रत् स्वप्न सुषुप्तिविषे जो कुछ देखता है तिसको ग्रहण करके अवस्थांतरविषे नहीं जाता इसी कारणते यह द्रष्टा पुरुष असंग है सो यह आत्मा सुषुप्ति अवस्थाविषे गमन करके और मन करके देखकरके और सुखको देखकरके द्वैताभावको फिर जाग्रत् अवस्थाको प्राप्त होता है जाग्रत् स्वप्न और सुषुप्तिरूप प्रपंचको जो सच्चिदानंद ब्रह्म प्रकाशता है सो ब्रह्म मैं हूँ बुद्धि और चिदाभासरूप मैं नहीं इस प्रकार श्रुतिकरके और आपणे अनुभव करके निश्चयको प्राप्त भया जो पुरुष है सो संपूर्ण बंधनोंते रहित हो जाता है एकही आत्मा जानने योग्य है जाग्रत् स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओंविषे तिन अवस्थाओंते असंग जो साक्षी है सो मैं हूं इसप्रकार जाननेवाले पुरुषको फेर जन्मकी प्राप्ति नहीं होती है और जाग्रत् आदिक तिन अवस्थाओं विषे भोग्यरूपताको प्राप्त होता है अर्थ यह–जाग्रत् अवस्थाविषे स्थूल भोग्यरूपताको जो प्राप्त होता है और स्वप्न अवस्थाविषे वासनामय सूक्ष्म भोग्यको जो प्राप्त होता है और सुषुप्ति अवस्थाविषे आनंदरूप भोग्यको जो प्राप्त होता है और तिन अवस्थाविषे विश्वतैजस प्रज्ञरूपको जो प्राप्त होता है वह तिन अवस्थाओंविषे भोगरूपको प्राप्त होता है अर्थ यह–जाग्रत् अवस्थाविषे जो पदार्थोंके अनुभवरूप भोगको प्राप्त होता है और स्वप्न अवस्थाविषे वासनामय सूक्ष्मपदार्थोंके

अनुभवरूप भोगको प्राप्त होता है और सुषुप्ति अवस्थाविषे आनंद अनुभवरूप भोगको जो प्राप्त होता है वह वास्तवते जाग्रत् आदि बारह पदार्थोंते भिन्न है अर्थ यह-जाग्रत्आदिबारह पदार्थोंकी कल्पनाका जो अधिष्ठान है चैतन्य मात्ररूप साक्षी निरतिशयानंद रूपता करके शोभमान जो परमात्मा है सो मैं हूं इस प्रकार विवेककरके आत्मतत्त्वके असंग निश्चय कियाँहुयां भोक्तारूपता किसको भई ऐसा पूछे तो श्रवण कर-विज्ञानमय है नाम जिसका ऐसा जो चिदाभास है सो विकारी होनेते भोक्ता है ॥

शंका-जेकर चिदाभास भोक्ता अंगीकार करोगे तब यह जो पीछे तुमने कथन किया किसकी कामनाके वास्ते यह वचन भोक्ताके अभावको कहने वास्ते है तिसका विरोध प्राप्त होवेगा ॥

उत्तर--तिस वचनका विरोध नहीं प्राप्त होता जिसते तिस वचनका अर्थ यह है सत्यभोक्ता कोई नहीं जिस भोक्ता चिदाभासकी मिथ्यारूपता श्रुति भी कथन करती है महामाया जीव इश्वरको आभासरूप करके करती है और अनुभवतेभी चिदाभास मिथ्या जानाजाता है द्रष्टा दर्शन दृश्यरूप त्रिपुटीके अंतर्गतता करके चिदाभास अनुभव होता है इसते चिदाभास मिथ्या है जैसे मदारीके रचे हुये पदार्थ मिथ्या होते हैं तैसे जगत् अचिंत्यरचनारूप होनेते मिथ्या है तिस मिथ्यारूप जगत्के अंतर्गत होनेसे चिदाभासभी मिथ्या है ऐसा ज्ञानवान् जानते हैं और जैसे जगत्का अभाव होजाता है जैसे सुषुप्ति और मूर्च्छा अवस्थाविषे चिदाभासकाभी अभाव होजाता है सो साक्षीने अनुभव किया है इसते चिदाभास मिथ्या होवे है ॥

शंका--तिस मिथ्या चिदाभाससे क्या सिद्ध भया ?

उत्तर-जब चिदाभास आत्मा जो है कूटस्थ तिसते भिन्न

आपणे आपको वारंवार मिथ्यारूप निश्चय करता है और आपणे नाशको निश्चय करता है तब फेर भोगोंकी वांछा नहीं करता जैसे अतिरोगी पुरुषको जब पृथिवीपर उतारते हैं तब वह विवाहकी इच्छा नहीं करता तैसे चिदाभासभी भोगोंकी इच्छा नहीं करता और चिदाभास अज्ञानदशाकी न्याईं मैं भोक्ताहूं इस व्यवहार करणेविषेभी लज्जाको प्राप्त होता है जैसे न पढाहुआ पुरुष सभाविषे वार्ता करता हुया लज्जाको प्राप्त होता है और आजपर्यंतभी मेरा कर्मक्षय न हुया ऐसे क्लेशको प्राप्त हुयाहुया प्रारब्धकर्मके फलको भोगता है और आपणी भोक्तारूपताको ज्ञानसे उपरांत साक्षीविषे कल्पनेको समर्थ नहीं होता जिससे आपणेविषेही भोक्तारूपताके माननेविषे लज्जाको प्राप्त होता है और आपणी भोक्तारूपताको साक्षीविषे कल्पे यह तो कथाही व्यर्थ है इस अभिप्रायको लेकरके किसकी कामनावास्ते यह श्रुति वचन है सो भोक्ताके निषेधको करै है शंकासे रहित होकरके तिसके शरीरसे तापकरके तापकी प्राप्ति नहीं होती तत्त्ववेत्ताको जिन शरीरोंविषे ताप है सो शरीर तीन प्रकारके हैं एक स्थूल, दूसरा सूक्ष्म, तीसरा कारण और तीनोंविषे जो जो उचित ताप हैं सो श्रवण कर- स्थूलदेहविषे वात पित्त कफते उत्पन्न हुयेहुये करोडों रोग हैं और दुर्गंधता और कुरूपता और दाह और अंगभंगसे आदिलेकरके अनेक प्रकारके ताप हैं और सूक्ष्मशरीरविषे कामक्रोध आदि ताप हैं और शांत दांत आदि ताप हैं जिसते कामक्रोधआदि प्राप्त हुयेहुये पुरुषोंको दुःख देते हैं और शांत दांत आदिक न प्राप्त हुयेहुये पुरुषको दुःख देते हैं इसते दोनों प्रकारके तापही हैं जिसते दुःखका कारण है कारण- शरीरविषे जो ताप हैं सो छांदोग्य उपनिषद्विषे कथन किये हैं देवराज इंद्र जो ब्रह्माजीका शिष्य है तिसने ब्रह्माजीके ताईं कथन किया है हे भगवन् ! सुषुप्तिअवस्थाविषे यह पुरुष आपणे आपको नहीं जानता

यह मैं हूँ जैसे जाग्रत् अवस्थाविषे जानता है और सुषुप्ति अवस्था-विषे और और भूतोंकोभी नहीं जानता और मृतहुयेकी न्याईं होजाता है और सुषुप्तिअवस्थाविषे मैं भोगनेयोग्य पदार्थ किसीकोभी नहीं देखता इसप्रकार स्व परके ज्ञानको अभावको और अज्ञानविषे मरण-तुल्यताको और अगले दिनविषे होनेवाले जो दुःख हैं तिनका कारण वासनाके सद्भावको इद्रन आपणे गुरु ब्रह्माजीके आगे कथन किया है यह जो तिन शरीरोंविषे ताप है सो स्वाभाविक है इसते किसीप्रकार करके शरीरोंका ताप दूर नहीं होता जिस कारणते इन तापोंके साथ शरीरोंके वियोग हुयाँहुयाँ शरीर स्थित नहीं रहते इसकारणते शरी-रोंविषे ताप स्वभाव सिद्ध हैं तिसविषे दृष्टांतोंको श्रवण कर ॥ जैसे तंतुओंसे रहित वस्त्र नहीं होता जैसे बालोंसे रहित लोई नहीं होती । और जैसे मृत्तिकासे रहित घट नहीं होता तैसे तापोंसे रहित शरीर नहीं होते यह ताप जो हैं सो शरीरोंविषे हैं चिदाभासविषे वास्तवमें ताप कोई नहीं जिसते चैतन्यका प्रकाश एक स्वभावही देखा है और स्वभाव नहीं देखा । ताते चैतन्यका प्रतिबिंबरूप चिदाभास और चिदाभासकाभी स्वभाव नहीं जेकर चिदाभासविषेभी ताप नहीं बनते साक्षीविषेभी ताप नहीं बनते यह तो क्या कहना है ॥

शंका–जेकर चिदाभासविषे ताप नहीं तो मैं तापको प्राप्त हुया-हुया इस अनुभवकी क्या व्यवस्था है ॥

उत्तर–वास्तवते चिदाभासविषे तापके अभाव हुयाँ हुयाँभी तापोंवाले शरीरोंके साथ अविद्याकरके आपणी एकताको मानता है चिदाभास आपणे शरीरों करके सहित तिनोंविषे साक्षीकी सत्यताको कल्पना करके तिन तापोंवाले शरीरोंको आपणा वास्तवरूप चिदा-भास मानता है इसप्रकार चिदाभासको भ्रमकी प्राप्तिके हुयाँहुयाँ

शरीरोंके तापोंको प्राप्त हुयाहुया मैं तापको प्राप्त हुयांहुयां ऐसे चिदाभास कुटुंबीकी न्याईं मानता है जैसे कुटुंबीपुरुष स्त्रीपुत्रआदिकोंके तापोंको प्राप्त हुयाहुया मैं तापको प्राप्त हुआ ऐसे व्यर्थही मानता है तैसे चिदाभास भी शरीरोंके तापको प्राप्त हुयाहुया मैं तापको प्राप्त भया हूँ ऐसे व्यर्थ मानता है इसप्रकार अविवेक कालविषे चिदाभास भ्रमकरके आपणेविषे तापोंको मानता हैओर जब चिदाभासको विवेक प्राप्त होता है तब भ्रांतिका त्याग करदेता है और आपणे आपको मिथ्यारूपता करके कुछभी न गिनता हुया आपणा वास्तवरूप तापोंसे रहित जो साक्षी हैं तिसको सदा चिंतन करताहुयाँ तापोंवाले शरीरकेसाथ तादात्म्याध्यासको प्राप्त होकरके शरीरके तापोंको आपणेविषे नहीं मानता भ्रांतिज्ञान तापोंका कारण है और तत्त्वज्ञान तापोंके अभावका कारण है। इसविषे दृष्टांत श्रवण कर-रस्सीविषे सर्पके ज्ञानकरक पुरुषको भय और भागनाआदि दुःख प्राप्त होता है और स्थानविषे चोरज्ञानकरकेभी भयआदिक दुःख प्राप्त होता है। और जब रस्सीका यथार्थ ज्ञान होता है तब सर्पज्ञान दूर हो जाता है सर्पज्ञानके दूर हुयाँ प्रथम किया जो भय आदिक तिसकरके लज्जाको प्राप्त होता है और व्यर्थ मैंने भयआदिक किया है ऐसे मानता है आपणे दोषोंकी क्षमा करावता हुयाहुया चिदाभास साक्षीकी शरणको प्राप्त होताहै जैसे कोइ पुरुष भ्रमकरके किसी उत्तमपुरुषको कहदेवे तू चोर है और पाछेसे और पुरुषके पाससे तिसका पदार्थ निकास आवता है। तब तिस उत्तम पुरुषकरके बहुत क्षमा करावता है जैसे कोई पुरुष वारंवार किया जो पाप है तिसके दूरकरणवास्ते वारंवार गंगास्नान व्रत जप आदिकोंको करता है तैसे चिदाभासभी साक्षीविषे आरोप्या जो संसाररूप दोष सोई पाप भया तिसके दूर करणेवास्ते सदा साक्षीविषे तत्पर होता है साक्षीके ध्यानको करता हुया और

चिदाभास आपणे गुणोंको प्रकट करणेविषे लज्जाको प्राप्त होता है जैसे गुह्यस्थानविषे कुष्ठवाली वेश्या जाननेवाले पुरुषके साथ हासविलास करणेविषे लज्जाको प्राप्त होती है और चिदाभास विवेककरके तिनको शरीरोंते आपणे भिन्न जानता हुया फिर शरीरोंकेसाथ तादात्म्य भ्रमको नहीं प्राप्त होता जैसे म्लेच्छोंके संगकरके दोषको प्राप्त हुया जो ब्राह्मण है सो तिस दोषके दूरकरणेवास्ते प्रायश्चित्तको करता हुयाहुया फिर म्लेच्छोंके साथ संग नहीं करता और यह जो कथन किया चिदाभास साक्षी शरणको प्राप्त होता है सो केवल आपणे अपराधके दूर करणेवास्ते नहीं होता किंतु साक्षीकी शरणविषे चिदाभासको महत् फल प्राप्त होता है जैसे युवराजाविषे स्थित जो राजाका पुत्र है सो चक्रवर्ती राज्यकी प्राप्तिके वास्ते राजाका अनुसारी होता है ॥

शंका–युवराजको राजाका अनुसारी होनेविषे चक्रवर्त्ती राज्यरूप जैसे फल प्राप्त होता है तैसे चिदाभासको साक्षीकी शरणविषे फल कुछ नहीं इसकारणते चिदाभास साक्षीकी शरणको क्योंकर प्राप्त होता है ॥

उत्तर–चिदाभासने साक्षीकी शरणविषे बहुत फल श्रुतियोंविषे श्रवण किये हैं तिन फलोंके वास्ते साक्षीकी शरणको प्राप्त होता है सो फल कौन हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर–जो पुरुष ब्रह्मको जानता है सो ब्रह्मरूप होजाता है और जिसको ब्रह्मवेत्ता उपदेश करता है तिसका अज्ञान नष्ट होजाता है और ब्रह्मवेत्ता शोकसे तरजाता है और पापसेभी तरजाता है अर्थ यह–जो शोकसे और पापसे रहित होजाता है और ब्रह्मवेत्ता पंच कोशोंके साथ तादात्म्याध्यासते रहित हुयाहुया मोक्षको प्राप्त होजाता है इसप्रकार ब्रह्मरूपताकी प्राप्तिसे आदिलेकर जो फल श्रवण किये हैं तिनोंकी प्राप्तिकेवास्ते चिदाभास साक्षीकाही

सदा चिंतन करता है और मिथ्यारूप जगत्का चिंतन नहीं करता ॥

शंका-ब्रह्मज्ञानकरके ब्रह्मरूपताकी प्राप्तिके हुयाँहुयाँ चिदाभासकी चिदाभासरूपता नाश होजावेगी ताते आपणे नाशवास्ते ब्रह्मज्ञानके यत्नको कैसे करेगा ॥

उत्तर-जैसे देवतारूपकी प्राप्तिकी कामनावाले मनुष्य अग्निआदिकोंविषे प्रवेश करजाते हैं जो आपणे नाशका कारण है अर्थ यह अनेक प्रकारके क्लेशोंवाले मनुष्य शरीरको त्याग करके अनेकप्रकारके सुखोंयुक्त देवभावकी प्राप्तिवास्ते आपणे नाशके कारणविषे प्रवृत्त होते हैं तैसे चिदाभासभी साक्षीरूपता करके स्थितिके वास्ते आपणे नाशके कारण मनुष्य ब्रह्मज्ञानाविषे प्रवृत्त होता है ॥

शंका-ब्रह्मज्ञानकरके चिदाभासकी चिदाभासता जेकर दूर होजाता है तो ज्ञानवानोंविषे जीवव्यवहार कैसे होता है ॥

उत्तर-जैसे अग्निविषे जिसपुरुषने प्रवेश किया है उस पुरुष विषे पुरुषव्यवहार तितनाकालपर्यंत रहता है जितनाकालपर्यंत तिसका देहदाह आदिकोंकरके अदृश्यभावको प्राप्त नहीं होता तैसे ज्ञानवान् विषेभी प्रारब्धक्षयपर्यंत चिदाभास व्यवहार रहता है और शरीरके अदृश्यभावको प्राप्त होकर विदेहमुक्ति विषे चिदाभास व्यवहार दूर होजाता है ॥

शंका-मैं भोक्ताहूं इस भ्रमका कारण जो है अज्ञान तिसके नाश होनेते ज्ञानवान्को भोगोंकी प्रतीति कैसे होती है और मैं मनुष्यहूं यह विपरीतज्ञान कैसे होता है ॥

उत्तर-जैसे रस्सीविषे सर्पज्ञानसे पुरुषका शरीर भयकरके काँपने लगजाता है तिस काँपनेका कारण रस्सीका अज्ञान है तिसके

नाश हुयांभी काँपना तिसी क्षणविषे नाश नहीं होजाता किंतु हौले हौले नाश होता है और मंद अंधकारविषे स्थित हुईहुई रस्सी फिरभी सर्परूपकर प्रतीत होआवती है तैसे प्रारब्धभोगभी अज्ञानके नाशमात्रस नाश नहीं होता किंतु प्रारब्धके फल भोगनेसे नाश होता है तिसका हठकरके नाश नहीं होता और कदाचित् भोगकालविषे ज्ञानवान् मैं मनुष्य हूं यह कथनभी करता है ॥

शंका–जेकर ज्ञानवान्को मैं मनुष्यहूं इसबुद्धिका उदय भया तिसकरके तत्त्वज्ञानका नाश होजावेगा ॥

उत्तर–कदाचित् व्यवहारकालविषे मैं मनुष्यहूं इस बुद्धिका उदय मात्रकरके वेदप्रमाणते उत्पन्न हुया जो ज्ञान है सो नाशकों प्राप्त नहीं होता जिसते मैं मनुष्यहू इसबुद्धिके दूरकरणे रूप जीवनमुक्ति व्रत नहीं जैसे रसनाकेसाथ अन्नके संबंध दूरकरणरूप एकादशीका व्रत होता है तात्पर्य यह-जैसे रसनाके साथ अन्नके संबंध हुयांहुयां एकादशीकाव्रत नष्ट होजाता है तैसे कदाचत् व्यवहारकालविषे मैं मनुष्यहूं इसबुद्धिके उदय होनेकरके ज्ञान नाश नहीं होता किंतु सम्यक्‌ज्ञान करके भ्रमज्ञानका नाश होता है यह ज्ञानका स्वभाव है इसकारणते कदाचित् व्यवहारकालविषे मैं मनुष्यहूं इस बुद्धिकी उत्पत्ति हुयाँहुयाँभी मैं ब्रह्महूं इस वृत्तिके उत्पन्न होनेकरके मनुष्यबुद्धिका अभाव होजाता है ॥

शंका–रस्सीआदिकोंविषे सर्पआदिकोंके भ्रमस्थानविषे सर्पआदिकोंके ज्ञानकेअभाव हुयाँहुयाँभी भ्रमका कार्यशरीरका काँपनाआदिक कुछ काल रहता है यह वार्त्ता तो यथार्थ है परंतु दशमपुरुषके दृष्टांतविषे जब दशमपुरुषको यह किसीपुरुषने उपदेशकिया कि, दशवाँ तूहै इसवाक्यके विचारकरके दशवेंको उत्पन्न भया जो यह ज्ञान दशवाँ मैं हूं तिस ज्ञानकरके भ्रमके नाश हुयांहुयां भ्रमका कार्य नहीं देखता ॥

उत्तर-दशमपुरुषने दशवाँ नदीविषे मरगया है इस भ्रमकालविषे दशवेंने आपणे हाथों करके शिरको ताडन किया तिसकरके तिसके शिरविषे घाव पडगया पाछेसे जब दशवेंका भ्रम निवृत्त भया और यह जान्या कि, दशवाँ मैं हूं तब भ्रमका कार्य शिरको ताडना और रोना दूर होजाताहै और ताडनाते उत्पन्न भया जो घाव है सो कदापि नहीं दूर होता तैसे ज्ञानवान्का प्रारब्धकर्मभी अज्ञानके नाश होनेते नाश नहीं होता ॥

शंका-ज्ञानकी प्राप्ति हुयांहुयां भी जेकर संसारकी प्रतीति भई तो मोक्षको पुरुषार्थता कैसे सिद्धभई ॥

उत्तर-ज्ञानकी प्राप्तिके हुयांहुयां ज्ञानवान्को संसारकी प्रतीतिविषे क्लेश नहीं भासता मोक्षकी प्राप्तिरूप हर्षने संसारप्रतीतिरूप दुःखको तिरोधान करलिया है जैसे दशवें पुरुषको दशवें पुरुषके न मरणके ज्ञानकरके उत्पन्न भया जो हर्ष है सो शिरके घावोंकी पीडाको आच्छादित करता है और जेकर जीवनमुक्ति व्रत भया तिस करके अध्यास प्राप्त होवे अर्थ यह-जो मैं मनुष्य हूं जब यह बुद्धि उदय होवे और प्रारब्धभोगकी प्रतीति होवे तब फेर विचार करणा जैसे रसके भक्षण करणेवाले क्षुधाके क्लेशके दूरकरणेवास्ते एकादिनविषे वारंवार भोजन करता है तैसे अध्यासकी निवृत्ति वास्ते वारंवार विचार करणा॥

शंका-ज्ञानकरके जिसका नाश नहीं भया ऐसा जो प्रारब्धकर्मका फल तिसका नाश किसकरके होता है ? ॥

उत्तर-भोग करके प्रारब्धकर्मके फलका नाश होता है जैसे दशवेंके शिरका घाव औषधकरके दूर होता है, इतने ग्रंथकरके किसकी इच्छाको करता हुया और किसकी कामनावास्ते तत्त्ववेत्ता शरीरके तापोंकरके तापको प्राप्त होवे इस श्रुतिवाक्यने कथन किया जो है

ज्ञानवान्के शोकका अभाव सो कथन किया यह शोककी निवृत्तिरूप चिदाभासकी छठवीं अवस्था है अब चिदाभासकी सातवीं अवस्था जो है तृप्तिरूप तिसको श्रवण कर-विषयोंकरके जो तृप्ति होतीहै सो अंकुश-सहित होती है जिसते और विषयकी कामनाकरके तिस तृप्तिका नाश होजाता है और अपरोक्षज्ञानजन्य जो तृप्ति है सो निरंकुशा है जिसते तिसका अभाव किसीकरके नहीं होता तृप्तिका अभाव दो प्रकारसे होता है अकेला जब कोई कार्य करणे योग्य प्रतीत होता है तब तृप्तिका अभाव होजाता है और दूसरा जब प्राप्त होनेयोग्य वस्तु अप्राप्त प्रतीत होती है तब तृप्तिका अभाव होता है सो ज्ञानवान्को करणे योग्य कार्य कोई नहीं प्रतीत होता, संसारविषे मिथ्याबुद्धि होणेते संसारके व्यवहार कार्य नहीं करणे योग्य प्रतीत होते और मोक्षकी प्राप्ति होणेते मोक्ष वास्ते कोई साधन करणे योग्य तिसको नहीं प्रतीत होता आनंदकी निरतिशय प्राप्ति होणेते अप्राप्त वस्तु प्राप्त होने योग्य कोई नहीं रहती इसते ज्ञानवान्की तृप्ति निरंकुशा है ज्ञानकी प्राप्तिसे प्रथम इस लोकविषे इष्टकी प्राप्तिके वास्ते और अनिष्टके दूरकरणेके वास्ते कृषि वाणिज्य सेवाते आदिलेकर अनेक कार्य करणे योग्य प्रतीत होते भये और स्वर्ग ब्रह्मलोकआदिकोंकी प्राप्तिके वास्ते और नरककी न प्राप्तिके वास्ते यज्ञयोग्य उपासना आदिक अनेककार्य करणे योग्य प्रतीत होते भये और मोक्षके वास्ते श्रवण मननआदि अनेक साधन ज्ञानके करणे योग्य प्रतीत होते भये और अब ज्ञानकी प्राप्ति हुयांहुयां कोई साधन करणे योग्य प्रतीत नहीं होता जिसते संसारको तिसने मिथ्या जान्या है तिसते संसारसुखोंकी इच्छा नहीं रहती और जिसते तिसको मोक्ष प्राप्त होगई है तिसते तिसको मोक्ष साधनभी करणे योग्य नहीं रहे यह ज्ञानवान्की कृतकृत्यतारूप निरं-कुशा तृप्ति है अब इस तृप्तिकी फलरूप जो तृप्ति है तिसको श्रवण

कर ज्ञानवान् इस कृतकृत्यतारूप तृप्तिको चिंतन करता हुया प्रतियोगियोंके चिंतन सहित इस प्रकार नित्यही तृप्तिको प्राप्त होता है अज्ञानी जो दुःखी है सो पुत्र आदिकोंकी इच्छा करके कुत्ते और सूकर आदिकोंके जन्मको प्राप्त होवे परमानंदकरके पूर्ण जो मैं हूं सो किसकी इच्छा करके जन्मको प्राप्त होवौं और परलोकके जानेकी इच्छावाला जो पुरुष है सो कर्मोंको करे संपूर्ण स्वर्ग आदिकलोकोंका आत्मा जो मैं हूं सो किस कारणते और किसप्रकार कर्मोंको करूं ॥

शंका-आपणे अर्थवास्ते कर्म भी नहीं किया परंतु परउपकारके वास्ते वेदशास्त्रका उपदेश लोकोंको करो ॥

उत्तर--जो वेदशास्त्रके उपदेशकरणेका अधिकारी है सो उपदेश करे मेरेको तो अक्रिय होणेते उपदेश करणेका अधिकार नहीं ॥

शंका-अक्रिय तो तू नहीं जिसते आपणे शरीरके वास्ते भिक्षाआदि कर्म करता प्रतीत होता है और परलोकके वास्ते स्नानआदि करता प्रतीत होता है ॥

उत्तर-निद्रा, भिक्षा, स्नान और शौचआदिक कर्मोंको मैं कदाचित् नहीं करता और तिनकी इच्छाभी मैं नहीं करता मूर्ख अज्ञानी मेरेविषे स्नान आदिकर्मोंको कल्पते हैं तिसकरके मैं क्रियावाला नहीं होजाता, जैसे बाँदरोंने चिरमिठियोंके समूहविषे अग्निकी कल्पना करयाँ तिसकरके चिरमिठियाँ दग्ध नहीं होतीं तैसे अज्ञानियोंने मेरेविषे क्रियाकी कल्पना करी तो तिसकरके मैं क्रियावाला नहीं होता॥

शंका-संसारसुखोंकी इच्छाके अभाव हुयां यज्ञआदिकर्मोंकी कर्तव्यता तेरेको मत होवे परंतु ब्रह्मसाक्षात्कारके वास्ते श्रवणादिक करना चाहिये ॥

उत्तर-जिसको जिसवस्तुका अज्ञान है तिस पुरुषने अज्ञानके दूर-

करणेवास्ते श्रवण करना चाहिये और जिस पुरुषको जिस वस्तुविषे संशय है तिस संशयके दूर करणेके वास्ते तिस पुरुषको मनन करना चाहिये अज्ञान और संशयते रहित जो मैं हूं सो श्रवण और मनन किसकारणते करूं और जिसको देह आदिकोंविषे आत्मताबुद्धिरूप और जगत्‌विषे सत्यबुद्धिरूप विपर्यय है सो पुरुष इस विपर्ययकी निवृत्तिवास्ते निदिध्यासन करे और मेरेको तो विपर्यय है नहीं फिर मैं निदिध्यासन किसवास्ते करूं ॥

शंका–जेकर तेरेको विपर्यय नहीं तो मैं मनुष्य हूं और मैं ब्राह्मण हूं इत्यादि व्यवहार तेरा कैसे होवेगा ? ॥

उत्तर–विपर्ययके अभाव हुयाँहुयाँभी चिरकालकी वासनाकरके मैं मनुष्य इत्यादि व्यवहार बनजाता है ॥

शंका–जेकर वासनाकरके मैं मनुष्य हूं यह व्यवहार होता है तो इस व्यवहारकी निवृत्तिवास्ते ध्यान करना चाहता है ॥

उत्तर–प्रारब्धकर्मपर्यंत इस व्यवहारते रहणा है प्रारब्धके नाश हुयाँ मैं मनुष्यहूं इस व्यवहारका नाश होता है प्रारब्धके नाशसे विना मैं मनुष्यहूं यह व्यवहार हजारों ध्यानकरकेभी दूर नहीं होता एक ध्यानका क्या कहना है ॥

शंका–मैं मनुष्यहूं इस व्यवहारकी विरलताकेवास्ते ध्यान करना चाहिये ॥

उत्तर–जिसको व्यवहार बाधक प्रतीत है तिसको ध्यान करना चाहता है और मेरेको तो यह व्यवहार क्लेशका कारण नहीं प्रतीत होता इसकी निवृत्तिके वास्ते मेरेको ध्यान करणा योग्य नहीं ॥

शंका–विक्षेपके दूर करणेवास्ते समाधि तो तेरेको अवश्य करनी चाहिये ॥

उत्तर-विक्षेप और समाधि दोनों मनका धर्म है मेरे विषे तो विक्षेप नहीं ताते विक्षेपकी निवारक समाधिभी मेरेको करणे योग्य नहीं ।

शंका-समाधिका फल जो अनुभव है तिसके वास्ते तेरेको यत्न करना चाहिये है ॥

उत्तर-अनुभव तो मेरा स्वरूप है ताते तिसके वास्ते यत्न कुछ नहीं किया चाहता ताते जो करणे योग्य सो मैंने करलिया और जो प्राप्त होने योग्य सो प्राप्त होगया है यह तत्त्ववेत्ताका निश्चय होता है ॥

शंका-जेकर किसीप्रकार भी तत्त्ववेत्ताको कुछ करणे योग्य नहीं तो शास्त्रनिषिद्ध प्रवृत्ति तिसकी होवेगी ॥

उत्तर-मैं कर्ता हूँ मैं भोक्ता हूँ इस अभिमानसे रहित जो तत्त्ववेत्ता है उसका जैसे प्रारब्धकर्म है तैसे व्यवहार होवै भावें भिक्षा माँगना आदिरूप लौकिक व्यवहार, भावें शास्त्रकरके कथित जप समाधि आदि व्यवहार, भावें शास्त्रनिषिद्ध हिंसादि व्यवहार तत्त्ववेत्ताको किसी व्यवहारका स्पर्श नहीं होता-जैसे स्वप्नते जागे पुरुषको स्वप्नका कोई व्यवहार स्पर्श नहीं करता यह वेदांतोंका असल सिद्धांत कथन किया अब युक्ति करके कुछ कथन करते हैं सो श्रवण कर, तत्त्ववेत्ता यह कहता है संपूर्ण जगत् मेरी दृष्टिविषे मिथ्या है और कर्तव्य मेरेको कुछ नहीं तथापि जितनाकाल शरीरकी स्थिति है तितनाकाल कुछ करणाभी होता है ताते लोकोंके कल्याण वास्ते शास्त्रविहित व्यवहारको मैं करूं इसकरकेभी मेरी कुछ हानि नहीं सो शास्त्रीय व्यवहार तीन प्रकारकाहै एक शरीरका एक वाणीका एक मनका । देवतोंका पूजन करणा और स्नान शौच भिक्षा आदिकोंका करणा यह शरीरका शास्त्रीय व्यवहार है । अरु प्रणवका जप करणा और उपनिषदोंका पढना यह वाणीका शास्त्रीय व्यवहार

है। और बुद्धिभावसे नारायणका ध्यान करो और भावसे निर्विकल्प समाधिकरके ब्रह्मानंदमें लीन होजावो यह मनका शास्त्रीय व्यवहार है इस प्रकार इस व्यवहारको करता हुया भी तत्त्ववेत्ता इस दृढनिश्चयविषे स्थित रहता है। मैं साक्षीरूप हूँ न मैं कुछ करता हूँ न करावताहूँ ऐसे हुयाँहुयाँ ज्ञानवान्का और अज्ञानीका विवाद किसी वस्तुविषे नहीं होता जिसते ज्ञानीका विषय भिन्न है। जैसे जगन्नाथवासियोंका और द्वारकावासियोंका विवाद नहीं होता। ज्ञानवान्का विषय क्या है। और अज्ञानीका विषय क्या है। जो ऐसा पूछै तो श्रवण कर–साक्षी असंग है और शरीर वाणी मन मिथ्या हैं। यह तो ज्ञानीका विषय है। और शरीर आदिक सत्य हैं। यह अज्ञानीका विषय है। और अज्ञानीको साक्षीकी कुछ खबर नहीं ऐसे हुयाँहुयाँ भी जो ज्ञानी और कर्मी विवाद करते हैं सो तत्त्ववेत्ताओंकरके हाँसीके योग्य हैं॥ जैसे दो डोरा परस्पर वृत्तांतको न जानते हुये हुये कलह करें। एक डोरा बकरियोंके चरावणेवाला सो किसी वृक्षकी छायामें सोगया और तिसकी बकरियां कहूँ चली गईं जब वह उठ्या तब तिसको बकरियां न नजर आईं सो बकरियोंको ढूँढने लगा एकराही डोरापुरुष उसको मिला तिसको तिसने पूछा बकरियाँ तैने किधर देख्या है तब उस राहीडोरेने पूँछा तू कहाँसे आया है तब वोह जिसपाससे आया उसपासे कहदिया तब बकरियांके चारणेवाले समझ जो यह कहता है इसपासे तेरी बकरियां हैं उसपासे वह गया दैवयोगसे तिसको बकरियाँ प्राप्त हो गईं तब वह एक लडी बकरी तिसको देने लगा तिसका उपकार मानकरके तब वोह राहीडोरा कहने लगा मैं तो तेरी बकरी लेता नहीं बकरीवाले समझ जो यह कहता है मैं लडी बकरी नहीं लेता इसप्रकार परस्पर वृत्तांतको न जानके बडी कलह करते भये तिसते हाँसी करणेके योग्य है जिसते

निर्विषय कलह करणेवाले हैं कर्मी जिस साक्षी आत्माको नहीं जानता कैसाभी साक्षी आत्मा है देहइंद्रियां मनआदिकोंते भिन्न हैं तिस साक्षीको तत्त्ववेत्ताने जेकर ब्रह्मरूप जान्या तिसकरके कर्मीका कुछ घटता नहीं ताते कर्मीका कलह व्यर्थ है और ज्ञानीने मिथ्या जान-करके शरीर इंद्रियां मनआदिक जो त्यागेहैं तिनकरके कर्म करे तिसकरके ज्ञानवान्का कुछ नहीं घटता ताते ज्ञानी जो कर्मीके साथ कलह करता है सो व्यर्थ है इसते कलह करणेवाले दोनों कर्मीते ज्ञानी बुद्धिमानों करके हँसनेके योग्य हैं ॥

शंका-ज्ञानवान्को कर्मोंके करणेविषे फल कुछ नहीं इसते कर्मोंका त्याग करना चाहता है ॥

उत्तर-कर्मोंका त्याग करणेविषेभी ज्ञानवान्को कुछ फल नहीं ताते कर्म कीने चाहिये ॥

शंका-कर्मोंका त्याग निष्फल नहीं तिसते बोधकी प्राप्ति होती है॥

उत्तर-कर्मोंका करणाभी निष्फल नहीं तिसते बोधकी इच्छा उत्पन्न होती है ॥

शंका-ज्ञानवान्को बोधकी इच्छा नहीं होती जिसते बोध प्राप्त हुयाँहुयाँ है ॥

उत्तर-ज्ञानवान्को फिर बोधभी प्राप्त नहीं होता जिसते प्रथम प्राप्त हुयाहुया है ताते बोधवास्ते कर्मोंका त्याग ज्ञानवान्को नहीं बनता ॥

शंका-और ज्ञानवान्को जो बोध है तिसकी स्थिरताके वास्ते एक वादी उत्पन्न भया कर्मोंका त्याग करना चाहता है ॥

उत्तर-बोधको स्थिरता तो बाधकके अभावको चाहती है और साधनको नहीं चाहती जैसे-चूहोंका खेलना बिल्लीके अभावको चाहता

है और कपडोंके त्यागको नहीं चाहता वेदवाक्यरूप प्रमाणते उत्पन्न भया जो ज्ञान है तिसका और किसी प्रबल प्रमाण करके अभाव नहीं होता जिसते वेदप्रमाणको और कोई प्रबल प्रमाण नहीं ताते बोधकी स्थिरतावास्ते और कोई साधन करणे योग्य नहीं ॥

शंका-और प्रमाणकरके बोधका अभाव मत होवे परन्तु अविद्या और अविद्याका कार्य जो मैं करता हूं यह अध्यास तिस करके बोधका अभाव होजावेगा ॥

उत्तर-अविद्या और अविद्याका कार्य बोधके नाशकरणेको समर्थ नहीं जिसकारणते प्रथमही बोधने दोनों नाशकर छोडे हैं ॥

शंका-अविद्याका अभाव तो होता है और अविद्याके कार्यका अभाव नहीं होता जिसते बोधके हुयाँहुयाँ भी अविद्याका कार्य नजर आवता है ताते अविद्याका कार्य करके बोधका नाश होजावेगा ॥

उत्तर-अविद्याके कार्यका अविद्या उपादान कारण है अविद्याके नाश हुयाँहुयाँ अविद्याके कार्यकी सत्ता नहीं रहती जैसे आकाशकी निराकारताके ज्ञान हुयाँहुयाँ आकाशकी कडाहाकारताकी सत्ता नहीं रहती पर कडाहाकारता नेत्रों करके प्रतीत होती है तिसकरके रसते नहीं रुकजाते तैसे अविद्याका कार्य सत्तासे रहित मिथ्या हुयाँ हुयाँ प्रतीत होके तिसकरके बोधके नाशकी शंका नहीं बनती जब अविद्याके कार्यविषे सत्यता प्रतीति होवे तब तो वोह बोधकी उत्पत्तिका प्रति बंध नहीं होता और अब बोधकरके मिथ्यारूपताको प्राप्त हुयाँहुयाँ अविद्याका कर्मबोधके नाशको करेगा यह कथन करणा तो ऐसा है जैसे कोई कहे जीवके चूहेने बिल्लेको नहीं मारया तो भी मोययाहुया चूहा बिल्लेको मारलेगा जो पुरुष शिवजीके अस्त्र करके घायल हुयाँहुयाँ भी न मरता भया सो लोहेसे रहित कानामात्ररूप बालकने चलाया जो

तीर है तिस करके मरेगा इसविषे प्रमाण कोई नहीं जैसे, तैसे अनेक प्रकारके विचित्र जो आपने कार्य हैं उन करके विस्तारको प्राप्त हुई जो अविद्या है तिस अविद्याके साथ बोधरूप राजा श्रवण मनन निदिध्यासन समयविषे युद्ध करता भया और तिस अविद्याको और अविद्याके कार्योंको मारदेता भया अर्थ यह—जो अविद्याका स्वरूपसे नाश करदेता भया और अविद्याके कार्यको मिथ्या करदेता भया सो बोध अन्य अभ्यासकी दृढता करके अविद्याके नाशको करके अत्यंत दृढताको प्राप्त हुयाहुया सत्तासे रहित मिथ्यारूप जो अविद्याका कार्य है अध्यास तिसकरके कैसे बाधको प्राप्त होवें अर्थ यह—जो नाशको नहीं प्राप्त होता तो अज्ञान और अज्ञानका कार्यरूप जो मुरदेहैं सो बोधरूपी राजा करके मारेहुये प्रारब्धकी स्थितिरूप मैदान विषे पडेरहे तिसकरके बोधरूप चक्रवर्ती राजाकी हानि नहीं होती किंतु सभी तिसकी कीर्ति होती है होवे ऐसे प्रसंगविषे क्या आया ऐसे पूछे तो श्रवण कर—जो अविद्या और अविद्याके कार्यका नाशकरणेवाला बोधरूप शूरमाँ है तिसके साथ जो पुरुष वियोगको नहीं प्राप्त होता. अर्थ यह—जो मैं ब्रह्महूं यह ज्ञान सदा जिसके हृदयविषे दृढ है तिसको शरीर इंद्रियों आदिकोंकी प्रवृत्ति करके और निवृत्ति करके कुछ इष्ट अनिष्टकी प्राप्ति नहीं होती ॥

शंका—जेकर ज्ञानवान्‌का प्रवृत्तिविषे आग्रह नहीं तो अज्ञानीकाभी प्रवृत्तिविषे आग्रह नहीं चाहता ॥

उत्तर—अज्ञानीको प्रवृत्तिविषे आग्रह करणा सदा चाहता है जिसते मनुष्यजन्मको धारकरके स्वर्गवास्ते वा मोक्षवास्ते यत्नकरणा योग्य है और जेकर मनुष्यशरीरको पायकर स्वर्गवास्ते अथवा मोक्षवास्ते यत्न न करे तो मनुष्यशरीरभी गधे कुत्ते आदिकोंके तुल्य भया ॥

प्रश्न--ज्ञानवान्का प्रवृत्तिविषे आग्रह नहीं होता यह तुमने कह्या तो कर्मियोंके मध्यविषे ज्ञानवान् स्थित होव तब तिसने किया चाहता है।

उत्तर--जब कर्मियोंके मध्यविषे ज्ञानवान् स्थित होता है तब कर्मियोंके अनुसार ज्ञानवान् मनकरके वाणीकरके शरीरकरके संपूर्ण कर्मोंको करता है और जब ज्ञानवान् जिज्ञासुओंके मध्यविषे स्थित होता है तब जिज्ञासुओंको बोधकी प्राप्तिकेवास्ते संपूर्ण कर्मोंविषे दोषको कथन करता हुआ आपभी संपूर्ण कर्मोंको त्यागदेता है किसकारणते ज्ञानवान् इसप्रकार वर्तता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर। जैसे बालकके अनुसार पिता तिसका वर्तता है तैसे अज्ञानियोंके अनुसार तत्त्ववेत्ताका वर्तना योग्य है सो जैसे बालक करके उलांवेको प्राप्त हुयाहुया और ताडनाको प्राप्त हुयाहुया तिसका पिता क्लेशको और क्रोधको नहीं प्राप्त होता सगों बालकको लडावता है तैसे ज्ञानवान्भी अज्ञानियोंकी निंदाको सुनकरके निंदा नहीं करता और स्तुतिको सुनकरके स्तुति नहीं करता किंतु तिन अज्ञानियोंको जैसे ज्ञानकी प्राप्ति होवे तैसे करता है जिसकारणते तत्त्ववेत्ताको अज्ञानीका बोध करवावणा इतना कर्तव्य है ताते जिस प्रकार करके अज्ञानियोंको बोध होवे सोई प्रकार है ज्ञानवान् करना चाहता है अज्ञानको बोध करवावणेसे ज्ञानवान्को भिन्न और कर्तव्य कोई नहीं इसप्रकार कृतकृत्यताकरके तृप्त हुयाहुया और जो प्राप्त होने योग्य वस्तु है तिसकी प्राप्तिकरके तृप्त हुयाँ हुयाँ ज्ञानवान् आपने मनकरके सदा ऐसे क्यों मानता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर। धन्योहं धन्योहं जिसते मैं सदाही देशकालवस्तुके परिच्छेदसे रहित आत्माको विनाही यत्नसे अनुभव करता हूँ इस कारणते मैं कृतकृत्यहूँ इसप्रकार आत्मज्ञानके लाभ करके तृप्तिको प्राप्त होता है अब

आत्मज्ञानके लाभका जो फल है तिसफलकी प्राप्तिकरके जो भई है तृप्ति तिसको श्रवण कर-"धन्योहं धन्योहं" जिसते ब्रह्मानंद मेरेको स्पष्ट प्रतीत होता है इसते मैं कृतकृत्यहूँ यह दो प्रकारकी तृप्ति इष्टकी प्राप्ति करके होती है अब अनिष्टकी निवृत्ति करके जो होती है तृप्ति तिसको तू श्रवण कर। "धन्योहं धन्योहं" जिसते दुःखरूप संसारको मैं नहीं देखता अब तिसते मैं कृतकृत्यहूँ दुःखरूप संसारकी प्रतीति तैंने क्यों नहीं होता ऐसा पूछे तो श्रवण कर-अनेक वासनावाला मेरा अज्ञान नाश होगया है इस कारणते दुःखरूप संसारकी प्रतीति मेरेको नहीं होती इसते "धन्योहं धन्योहं" और अज्ञानकी निवृत्ति होनेते मेरेको करणे योग्य अब कुछ नहीं रह्या। इसते "धन्योहं धन्योहं" और प्राप्त होने योग्य मैंने अब प्राप्त होगया है इसते अप्राप्त वस्तु कुछ नहीं रही इसते "धन्योहं धन्योहं" और मेरेको जो प्राप्त भई है तृप्ति तिसका दृष्टांत संसारविषे कोई नहीं नजर आवता इसते "धन्योहं धन्योहं" इसते परे और कथन करणे योग्य कुछ नहीं अब तृप्तिही सबको नजर आवती है इसते मैं धन्यहूँ धन्यहूँ वारंवार धन्यहूँ मैं यह जो सर्वप्रकारकी कृतकृत्यता मैंने कथन किया है तिसका कारण जो पुण्यके समूहका फल है तिसको याद करता हुया ज्ञानवान् तृप्तिको प्राप्त होता है बडे उत्तर मेरे पुण्य हैं बडे उत्तम मेरे पुण्य है जिनपुण्योंका फल मेरेको ऐसी तृप्तिरूप प्राप्त भया है और इस पुण्यके करणेवाला जो मैं हूं सोभी उत्तमहूं उत्तमहूं धन्य हैं शास्त्र धन्य हैं शास्त्र और धन्य हैं शास्त्रके उपदेश करणेवाले गुरु धन्य शास्त्रके उपदेश करणेवाले गुरु धन्य हैं ज्ञान और अज्ञानकरके जो प्राप्त भया है सुख सो आश्चर्यरूप हैं सो आश्चर्यरूप हैं जिसते तिसके तुल्य सुख और कोई है नहीं इस तृप्तिदीपके अभ्यास करणेवालेको जो फल प्राप्त होता है सो श्रवण कर-इस तृप्ति

दीपनाम प्रकरणका जो सदा विचार करणेवाले पुरुष हैं सो ब्रह्मानंदमें मग्न हुयेहुये इस तृप्तिको प्राप्त होते हैं जैसे पीछे कथन करया है॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां सप्तमं तृप्तिदीपविवेकप्रकरणं समाप्तम्॥ ७॥

अथ कूटस्थदीपप्रकरणम् ८.

ॐ नमः सद्गुरुप्रसाद॥ अब कूटस्थदीपनाम जो प्रकरण है तीसरा दीपआदिसे पंचदशीका आठवाँ प्रकरण तिसका आरंभ करते हैं जिज्ञासुओंको मोक्षका कारण ब्रह्म और आत्माकी एकताका ज्ञान है सो ज्ञान त्वं पदार्थ शोधनसे उत्पन्न होता है इसकारणते त्वंपदार्थका शोधन किया चाहिये शोधननाम है वाच्यअर्थ और लक्ष्यअर्थ निर्णय करणेका सो लक्ष्यअर्थ त्वंपदका कूटस्थ है और वाच्यअर्थ चिदाभास है सो दोनों भिन्नभिन्नकरके वर्णन करते हैं इस स्थूलशरीरके प्रकाशक चैतन्य दो हैं एक कूटस्थ और एकचिदाभास कूटस्थने सामान्यरूपता करके प्रथम शरीरको प्रकाशता है और चिदाभास जो है अंतःकरण में चैतन्यका प्रतिबिंबरूप तिसने पश्चात् विशेष रूपताकरके प्रकाशता है जैसे आकाशविषे स्थित जो प्रसिद्ध सूर्य्य है तिसने कंधको प्रथम सामान्य रूपता करके प्रकाशता है और जलविषे जो सूर्यका प्रतिबिंब है तिसने विशेषरूपता करके कंधको प्रकाशता है॥

शंका--कंधविषे प्रतिबिंबरूप सूर्यके प्रकाशते भिन्न आकाशविषे स्थित सूर्यका प्रकाश नहीं देखाजाता॥

उत्तर--कंधविषे दश वीश प्रतिबिंबरूप सूर्यका प्रकाश देखीता है दशों प्रतिबिंबरूप सूर्यके कंध ऊपर प्रकाशोंकी संधिके स्थानका है

और बीस प्रतिबिंबरूप सूर्यके कंध ऊपर प्रकाशकी संधिके स्थान वही हैं तिन संधिरूप स्थानोंको प्रकाशनेवाला आकाशविषे स्थित सूर्यका सामान्यप्रकाश प्रतीत होता है जेकर संधियोंको स्थानविषे तथा आकाशविषे स्थित सूर्यका प्रकाश न होवे तो संधियोंके स्थानके रूपकी प्रतीति न होवे जिसते बिना प्रकाशते रूपकी प्रतीति नहीं होती और प्रतिबिंबके सूर्यके अभाव हुयाँहुयाँ आकाशविषे स्थित सूर्यका प्रकाश कंधाविषे प्रतीत होता है इसीप्रकार बुद्धिविषे चैतन्यका प्रतिबिंबरूप चिदाभासके प्रकाशकरके युक्त जो अनेक बुद्धिवृत्तियाँ वह घटज्ञान पटज्ञानादिरूप तिनोंकी संधिकी जाग्रत् अवस्थाविषे और स्वप्न अवस्था विषे प्रकाशनेवाला और बुद्धिवृत्ति-योंके अभावको सुषुप्ति और समाधिअवस्थाविषे प्रकाशनेवाला जो कूटस्थ चैतन्य है तिसको चिदाभासते भिन्नकरके जानना जैसे-देहके बाहर घटादिकोंके प्रकाशक चिदाभास और ब्रह्म भिन्न भिन्न हैं तैसे देहके अंतर देहके प्रकाशक चिदाभास और कूटस्थ भिन्न भिन्न है सो जैसे हैं तैसे श्रवण कर-एक घटके प्रकाशनेवाला जो बुद्धिविषे स्थित चिदाभास है सो घटमात्रके प्रकाशको करता है और घटविषे जो चिदाभास करके ज्ञातारूपी धर्म है वह उत्पन्न हुयांहुयां 'ज्ञातो घटः" इस व्यवहारका कारण तिस ज्ञाततारूपधर्मको घटकी कल्पनाका अधिष्ठान जो ब्रह्म चैतन्य है तिसने प्रकाशता है ॥

शंका-बुद्धिविषे जो चिदाभास है तिसको अंगीकार करणा व्यर्थ है जाते घटकी ज्ञातताके प्रकाशनेवाले ब्रह्म चैतन्य करके घटकी प्रतीति बनजाती है ॥

उत्तर-जेकर बुद्धिवृत्तिविषे प्रतिबिंबरूप चिदाभासको न मानेगा तो घटकी ज्ञातता और अज्ञाततारूप भेद सिद्ध न होवैगा सो जिस प्रकार है सो श्रवण कर-घटविषे ज्ञानता रूप धर्म और अज्ञाततारूप

धर्म कालभेद करके रहता है जिसते सभी लोक कहते हैं मैं घटको नहीं जानता और मैं घटको जान्या है ताते यह भेद तेरे मतविषे कैसे सिद्ध होवेगा ? जेकर बुद्धिकी वृत्तिविषे चैतन्यका प्रतिबिंबरूप चिदाभास न मानेगा ताते जब बुद्धिकी वृत्तिविषे चैतन्यके प्रतिबिंबरूप चिदाभासकी घटविषे प्रकटता होती है तव घटविषे ज्ञाततारूप धर्मकी उत्पत्ति होतीहै और तिसकी प्रकटतासे प्रथम घटविषे अज्ञाततारूप धर्म रहता है ताते ज्ञातता और अज्ञाततारूपधर्मके भेदवास्ते घटके प्रकाशक बुद्धिकी वृत्तिविषे चैतन्यका प्रतिबिंबरूप चिदाभास आवश्यक मानना चाहिये ॥

शंका–एक घटविषे ज्ञातता और अज्ञाततारूप विरुद्ध धर्म कैसे रहते हैं ॥

उत्तर–घटविषे ज्ञातताकी स्थितिका कारण ज्ञान है और अज्ञातताकी स्थितिका कारण अज्ञान है सो ज्ञान किसको कहते हैं और अज्ञान किसको कहते हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर–बुद्धिकी वृत्तिके अग्रभागविषे चैतन्यका प्रतिबिंबरूप चिदाभास सहित जो बुद्धिकी वृत्ती है सो ज्ञान है ॥ जैसे–अग्रभागविषे लोहेसहितका नाम बाण होता है तिस ज्ञानकरके व्याप्त हुयाहुया घट ज्ञात कहाता है और जडताका नाम अज्ञानकरके व्याप्त हुयाहुया घट अज्ञात कहाता है इसते एक घटविषेहीज्ञातता और अज्ञातता रूप विरुद्ध धर्म ज्ञान और अज्ञान रूप कारणकरके बनजाते हैं अर्थ यह–ज्ञातताका कारण ज्ञान है और अज्ञातताका कारण अज्ञान है ॥

शंका–अज्ञात घटको अज्ञानकरके व्याप्त होनेते ब्रह्मकरके प्राकाश्यता पर ज्ञानकरके व्याप्त होवे जो ज्ञात घट है उसको ब्रह्मकरके प्राकाश्यता किस कारणते है ॥

उत्तर-जैसे अज्ञातघटविषे अज्ञातताको उत्पन्न करता है और अज्ञातताको प्रकाशता नहीं तैसे ज्ञानभी घटविषे ज्ञातताको उत्पन्न करदेता है ज्ञातताको प्रकाशता नहीं ताते जैसे अज्ञात घटका प्रकाशक ब्रह्मचैन्य है तैसे ज्ञात घटका प्रकाशकभी ब्रह्मचैतन्य है जिसते ज्ञातताको उत्पन्न करके ज्ञान नाश होजाता है ॥

शंका-जैसे अज्ञान अज्ञातताको उत्पन्न करता है तैसे बुद्धि ज्ञातताको उत्पन्न करो चिदाभाससहित बुद्धि ज्ञातताको उत्पन्न करती है ऐसे क्यों कहते हो ॥

उत्तर--चिदाभासते रहित जो बुद्धि है सो ज्ञातताको उत्पन्न करणेविषे समर्थ नहीं तिसको अप्रकाशरूप होनेते जैसे मिट्टीआदिक विकारीहोनेते अप्रकाशरूप हैं तैसे विकारी बुद्धि भी चिदाभासते रहित हुईहुई अप्रकाशरूप है ताते ज्ञातताके उत्पन्न करणेविषे समर्थ नहीं जैसे लाल काली आदिक मिट्टी करके लिप्या हुया घट किसी देशविषे किसी कालविषे ज्ञातताको प्राप्त नहीं होता तैसे बुद्धिमात्रकरके युक्त घट ज्ञात नहीं होता जिसते केवल बुद्धिको ज्ञातताको उत्पन्नकरणेकी सामर्थ्य नहीं इसते घटविषे चिदाभासरूप फलकी जो प्रकटता है सोई घटविषे ज्ञातता है ॥

शंका--जेकर केवल बुद्धि ज्ञातताके उत्पन्न करणेको समर्थ नहीं तो भी ब्रह्मचैतन्य रूप फलके विद्यमान होनेते चिदाभास नहीं मान्या चाहता ॥

उत्तर--फल नाम है घटादिकोंकी प्रतीतिका सो फल ब्रह्मचैतन्य नहीं होता जिसते नेत्रआदिके प्रमाणकी प्रवृत्तिके प्रथम भी ब्रह्मचैतन्य विद्यमान है इसते फलको उत्तरकालविषे होनेते ब्रह्मचैतन्य फल

नहीं होता ताते नेत्रआदिक प्रमाणकी प्रवृत्तिसे उत्तर घटविषे प्रकट भया जो चिदाभास है सोई फल है ताते चिदाभास अवश्य अंगीकार किया चाहिये है ॥

शंका-यह जा तुमने कह्या ब्रह्म चैतन्य फल नहीं सो तुम्हारा कहना सुरेश्वराचार्यके वचनसे विरुद्ध है कैसे विरुद्ध है ऐसा पूछे तो श्रवण कर--अनात्मपदार्थोंविषे प्रमाणकी प्रवृत्तिके हुयाँहुयाँ प्रमाणकी फलरूपता करके अंगीकारकी जो चैतन्य वस्तु है सोई वेदांतवाक्य रूप प्रमाणकरके जानने योग्य है अर्थ यह-सुरेश्वराचार्यका वचन है तिस करके ब्रह्मचैतन्य फलरूप प्रतीतहोता है जिसते वेदान्तवाक्य प्रमाण करके जानने योग्य ब्रह्म है ॥

उत्तर--सुरेश्वराचार्यके वचनका यह अर्थ है--कि, फल ब्रह्मचैतन्य जैसा होता है ॥

शंका-यह सुरेश्वराचार्यके वचनका तात्पर्य तुमने कैसे जान्या ? ॥

उत्तर--सुरेश्वराचार्यके गुरु जो श्रीमत्शंकराचार्य हैं तिनोंके उपदेशसहस्री नामग्रंथविषे ब्रह्मचैतन्य और फलचैतन्यका भेद कथन किया है इसते हम जानते हैं जो सुरेश्वराचार्यका यह तात्पर्य है कि इस-प्रकार सुरेश्वराचार्यके वचनकी व्यवस्था न करियेगा तब गुरुके वचन साथ सुरेश्वराचार्यका वचनका विरोध आवेगा जिसकारणते ब्रह्मचैतन्य और फलचैतन्यका भेद है तिसकारणते घटविषे प्रकट हुयाँहुयाँ चिदाभास घटविषे ज्ञातताको उत्पन्न करे है और उत्पन्न हुई हुई ज्ञा-तताको फिर ब्रह्मचैतन्य प्रकाशता है जैसे ब्रह्मचैतन्य अज्ञातताको प्रकाशता है ब्रह्मचैतन्य किसको प्रकाशता है और चिदाभास किसको प्रकाशता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर--बुद्धिकी वृत्ति और चिदाभास और घट इन्होंके समूहको ब्रह्मचैतन्य प्रकाशता है और चिदाभास एक-

घटमात्रको प्रकाशता है जिसते चिदाभास एक घटमात्रविषे फलरूपता करके प्रकट भयाहै घट चिदाभास और ब्रह्म इन दोनोंकरके प्रकाशता है इसविषे कारण श्रवण कर-घटको ब्रह्म और चिदाभास इन दोनों करके प्रकाशमान होनेते घटविषे ज्ञाततारूपकरके दुगुण चैतन्य प्रतीत होता है घटकी ज्ञातताका प्रकाशक जो ब्रह्मचैतन्य है तिसको नैयायिक अनुव्यवसाय कहते हैं ॥ अर्थ यह-जो ज्ञानान्तर घटविषे कहतेहैं सो दो प्रकारका व्यवहार होताहै एक 'अयंघटः' और दूसरा 'ज्ञातोघटः' यह व्यवहार चिदाभासकरके सिद्ध होताहै और 'ज्ञातोघटः' यह व्यवहार ब्रह्मचैतन्यकरके सिद्ध होता है देहसे बाह्यघटादिक पदार्थोंविषे चिदाभास और ब्रह्म जैसे भिन्न भिन्न प्रकाशक वर्णन किये हैं तैसे देहके अंतर चिदाभास और कूटस्थ विवेककरके भिन्न भिन्न जानने योग्य हैं ॥

शंका-देहसे बाहर घटादिकोंविषे चिदाभास सहित घटाकार वृत्तिकी न्याईं देहके अंतराविषे विषयवृत्ति तो होती नहीं इसते वृत्ति सहित चिदाभासको तुम भी कैसे अंगीकार करतेहो ? ॥

उत्तर-अंतरविषे विषयवृत्तिके अभाव हुयाँहुयाँ भी अंतरवृत्तियाँ तो होती हैं सो कौन हैं ऐसा पूछे तो श्रवणकर-अहं वृत्ति, कामवृत्ति, क्रोधवृत्ति, लोभवृत्ति इनोंविषे चिदाभास व्याप्या हुआ है जैसे तप्त लोहेविषे अग्नि व्यापीहुइ है तप्त लोहेविषे जो अग्नि है सो तिस लोहेके प्रकाशनेको समर्थ है औरपदार्थोंके प्रकाशनेको समर्थ नहीं इसीप्रकार चिदाभाससहित अंतरवृत्तियां आपने आपके प्रकाशनेको समर्थ हैं और पदार्थोंकेप्रकाशनेको समर्थ नहीं इसप्रकार अंतरवृत्तियांविषे चिदाभास सिद्ध भया अब अंतरकूटस्थकी सिद्धिके प्रकारको श्रवण कर संपूर्ण वृत्तियां एककालविषे उत्पन्न नहीं होतीं क्रमकरके होली होली उत्पन्न होती हैं और संपूर्ण वृत्तियां सुषुप्ति और मूर्च्छा और समाधिविषे लीन होजाती हैं ॥

शंका-इस प्रकारकरके समाधि आदिकोंविषे वृत्तियोंका अभाव होवे पर तिसकरके कूटस्थ कैसे जानता है ?॥

उत्तर-संपूर्ण वृत्तियोंके संधियोंको और संपूर्ण वृत्तियोंके अभावको जिस निर्विकार चैतन्य प्रकाशता है सो कूटस्थ जानने योग्य है ऐसे हुयांहुयां यह सिद्ध भया जैसे शरीरतें बाहर घटादिकोंविषे द्विगुण चैतन्य है एक घटमात्रका प्रकाशक चिदाभास दूसरा घटकी ज्ञातताका प्रकाशक ब्रह्मचैतन्य तैसे शरीरके अंतर अहं आदि रूप वृत्तियोंविषे भी कूटस्थ चैतन्य और वृत्तियोंका प्रकाशक चिदाभास इस प्रकार दुगुण चैतन्य है तिसीकारणते वृत्तियोंविषे संधियाँ नालो प्रकाश अधिक दखता है ॥

शंका-जैसे घटादिकोंविषे ज्ञातता और अज्ञातताका प्रकाशक ब्रह्मचैतन्य मान्या है तैसे वृत्तियोंविषेभी ज्ञातता और अज्ञातताका प्रकाशक कूटस्थ चैतन्य क्यों नहीं मानते ?॥

उत्तर-वृत्तियोंविषे ज्ञातता और अज्ञातता है नहीं इसते वृत्तियोंविषे ज्ञातता और अज्ञातताका प्रकाशक कूटस्थ चैतन्य हम नहीं मानते और घटादिकोंविषे ज्ञातता और अज्ञातता अनुभव सिद्ध है ताते तिसका प्रकाशक ब्रह्मचैतन्य हम मानते हैं वृत्तियोंविषे ज्ञातता और अज्ञातता क्यों नहीं ऐसे पूछे तो श्रवण कर-वृत्तियोंविषे ज्ञान और अज्ञानकी प्राप्ति है नहीं इसते वृत्तियोंविषे ज्ञातता और अज्ञातता है नहीं ज्ञानकी प्राप्ति तिसविषे होती है जो चिदाभास सहित वृत्तियोंविषे होता है और वृत्ति तो वृत्तियोंविषे नहीं होती इसते वृत्तिविषे ज्ञातता नहीं और अज्ञातता अज्ञानकी प्राप्ति करके होती है ॥ अज्ञानकी प्राप्ति वृत्तियोंविषे है नहीं जिसते वृत्तिकी उत्पत्तिमात्रते वृत्तिविषे अज्ञान नाश होजाता है और जेकर वृत्तियोंविषेभी अज्ञान होवे तो वृत्तियोंकरके घटादिकोंका अज्ञान नाश न होना चाहिये ताते वृत्तियों-

विषे अज्ञानताभी नहीं इसी कारणते वृत्तियोंविषे ज्ञातता और अज्ञातताकी प्रकाशताकरके कूटस्थ चैतन्यको हम नहीं मानते ॥

शंका–कूटस्थ और चिदाभास दोनोंको चैतन्यरूपताकी समानताके हुयाँ हुयाँ एकको कूटस्थता और दूसरेको अकूटस्थता किस कारणते है ? ॥

उत्तर–चिदाभासकी उत्पत्ति और विनाशका अनुभव होता है इसकारणते चिदाभासको अकूटस्थता है और कूटस्थकी उत्पत्ति विनाशविषे प्रमाण कोई है नहीं इसकारणते कूटस्थकी कूटस्थता है ॥

शंका–चिदाभासते भिन्न कूटस्थ आपणे मुखकरके तुम कल्पते हो ताते तिसको हम अंगीकार नहीं करते ॥

उत्तर–बडे आचार्योंने कूटस्थका निरूपण ऐसा किया है कि, अंतःकरण और अंतःकरणकी वृत्तियोंका जो चैतन्यरूप साक्षी है और आनंदरूप और सत्य आत्मा इत्यादिवाक्योंविषे तिसको तू नहीं प्राप्त होता ताते ऐसे मत कहो कूटस्थको तुम आपने मुखकरके कल्पतेहो और कूटस्थते भिन्न चिदाभासभी बडे आचार्योंने वर्णन किया है जैसे–मुख और मुखका प्रतिबिंबरूप मुखाभास और आभासका आश्रय दर्पणआदि यह तुमने प्रत्यक्ष जान्या है तैसे आत्मा जो है कूटस्थ और चिदाभास और चिदाभासका आश्रय अंतःकरणआदिक यह तुमनेभी शास्त्रकरके और युक्तियोंकरके जान्या है इस वाक्यविषे आभासनामकरके कूटस्थते भिन्न चिदाभास वर्णन किया है मनका साक्षी है, बुद्धिका साक्षी है यह कूटस्थके कथन करणेवाला शास्त्र है और जैसी जैसी उपाधि है तैसे तैसे चैतन्य प्रतिबिंबभावको प्राप्त होता है यह चिदाभासके कथन करणेवाला शास्त्र है और कूटस्थ उत्पत्ति विनाशरूप विकारसे रहित है और चिदाभास उत्पत्ति विनाशरूप

विकारवाला है इसते आदिलेकर युक्तियां तो पीछे कथन कर आये हैं ॥

शंका--चिदाभासका अंगीकार करणा व्यर्थ है जिसते बुद्धिअवच्छिन्न कूटस्थकरके लोकांतरविषे गमनागमन सिद्ध होजाता है ॥जैसे घटावच्छिन्न आकाशका देशांतरविषे गमनागमन होता है ॥

उत्तर-असंगकूटस्थको बुद्धिके अवच्छेदमात्रकरके जीवरूपता नहीं बनती और जेकर असंगको बुद्धिके अवच्छेदमात्रकरके जीवरूपता मानोगे तो घट और कंधआदिकोंकरकेभी अवच्छिन्नको जीवरूपता होनी चाहिये ॥

शंका-बुद्धि स्वच्छ है इसते बुद्धिअवच्छिन्नको जीवरूपता बनती है और घटकंधआदिक अस्वच्छ हैं तिसते घटकंधआदिकोंकरके अवच्छिन्नको जीवरूपता नहीं बनती ॥

उत्तर-बुद्धिविषे स्वच्छता और घटकंध आदिकोंविषे अस्वच्छता होवे पर स्वच्छता परिच्छेदविषे कारण नहीं होता जैसे दो पुडोंपे किसीने बनाये अन्नके मापनेवास्ते एक काष्ठका और एक कँहेका काष्ठका अस्वच्छ है और कँहेका स्वच्छ है ता काष्ठके पुडोंपेसाथ माप्या अन्न गाढा नहीं होजाता और कँहेका पुडोंपेसाथ माप्या अन्न बद्ध नहीं होजाता तैसे स्वच्छबुद्धि अवच्छिन्नताकरके चैतन्य जीवरूप होजाताहै और अस्वच्छ घटकंधआदिकोंकरके अवच्छिन्न जीवरूप नहीं होता इसविषे युक्ति कोई नहीं ॥

शंका-कँहेके पुडोंपेविषे चावलादि अधिकताके अभाव हुयाँहुयाँ भी कँहेके पुडोंपेविषे चावलका प्रतिबिंब पडता है इतनी अधिकता है ।

उत्तर-तो बुद्धिविषे चिदाभास तैंने अंगीकार किया जिसते कँहेके पुडोंपेविषे चावलोंके प्रतिबिंबकी न्याईं बुद्धिविषे चैतन्यके प्रतिबिंबको तू मानता है प्रतिबिंबका और आभासका अर्थ एक है ॥

बिंबलक्षणते रहित और बिंबकी न्याईं जो प्रतीति होवे सो प्रतिबिंब कहाता है और आभासकाभी अर्थ यह है-जो थोडासा भासे सो आभास कहाता है चिदाभास संगवाला है और विकारी है इसते बिंब-रूप असंग और अविकारी कूटस्थ चैतन्यकी लक्षणते रहित है और प्रकाशरूप होनेते बिंबरूप कूटस्थ चैतन्यकी न्याईं प्रतीत होता है जैसे-हेतु लक्षणसे रहित और हेतुकी न्याईं प्रतीत होनेवाले हेत्वाभास कहते हैं ताते चिदाभासका अंगीकार करणा व्यर्थ नहीं ॥

शंका-चिदाभास होवे पर वह बुद्धिते भिन्न नहीं जिसते बुद्धिके हुयाँही होता है ॥

उत्तर-यह तो अल्प शंका तैंने कीनी है जिसते तेरेको यह शंका कीनी चाहिये कि, बुद्धि देहसे भिन्न नहीं जिसते देहके हुयाँहुयाँही बुद्धि होती है ॥

शंका-देहके नाश हुयाँभी बुद्धि होती है जिसते शास्त्र यह कहता है कि, देहको त्यागकरके बुद्धिसहित जीव होता है ॥

उत्तर-जेकर शास्त्रप्रमाणसे देहसे भिन्न तू बुद्धिको मानता है तो देहविषे प्रवेशके कथन करणेवाली श्रुतिकरके बुद्धिसे भिन्न चिदा-भासभी मान्या चाहिये ॥

शंका-बुद्धियुक्तिकाही प्रवेश बनता है बुद्धिसे भिन्नका प्रवेश नहीं बनता ॥

उत्तर-ऐतरेय उपनिषदविषे बुद्धिसे भिन्नका प्रवेश कथन किया है आत्मा प्रवेशके संकल्पको करके शरीरविषे प्रवेश करता भया तांते बुद्धियुक्तकाही प्रवेश होता है ऐसे मत कहो ॥ इंद्रियाँ बुद्धिआ-दिकोंकरके सहित यह शरीर मेरी चैतन्यरूपताते विना व्यवहार करणेको समर्थ नहीं इसते मैंने शरीरविषे प्रवेश करना चाहिये ऐसे विचारकरके शिरके कपालोंके मध्यदेशको फोडकरके शरीरविषे प्रवे-

शको करता हुयाहुया जाग्रत्आदिक अवस्थाको अनुभव करता है॥

शंका-असंगआत्माका प्रवेश नहीं बनता ॥

शंका-(सिद्धांतीकी) असंगको जगत्कारणता नहीं बनती ॥

उत्तर-(पूर्वपक्षीका) जगत्का कारण जो है सो मायावाला है ॥

उत्तर-(सिद्धांतीका) प्रवेशकरताभी मायावाला है जिसते सृष्टिकरता और प्रवेशकरता दोनोंका विनाश होजाता है याज्ञवल्क्यमुनीश्वरने मैत्रेयीके ताईं यह कथन किया है कि, हे मैत्रेयि ! आत्मा वास्तवसे चैतन्य घनरूप है भूतोंका कार्यदेह इंद्रिय अंतःकरणविषे प्रवेशरूप निमित्तते जीवरूपताको प्राप्त होजाता है और जब अंतःकरणका नाश होजाता है तब जीव संज्ञानाश होजाता है उपाधिके त्यागकरणेकरके जीवसंज्ञा नहीं रहती इसप्रकार उपाधिवाला जो जीवरूप है उसके विनाशको कथन कियाहै और कूटस्थकी अविनाशताको कथन करते हैं । अरे मैत्रेयि ! यह आत्मा अविनाशी है जिसते इसका धर्मके नाशते नाश नहीं होता इसप्रकार चिदाभासते भिन्न कूटस्थ कथन किया है कूटस्थकी नित्यताका कारण कूटस्थका देह इंद्रिय अंतःकरणते असंगत हैं ॥

शंका-छांदोग्य उपनिषद्वविषे चिदाभासकी नित्यता कथन कीनी है चिदाभास जब शरीरको त्याग देता है तब शरीर मरता है और चिदाभासरूप जीव नहीं मरता ॥

उत्तर-छांदोग्यश्रुतिका यह तात्पर्य नहीं जो चिदाभासरूप जीव नित्य है किंतु यह अर्थ है जब शरीरका नाश होता है तब चिदाभासका नाश नहीं होता और मोक्षअवस्थाविषे जीवका नाश होता है जिसते चिदाभासरूप जीवकी उपाधि लिंगशरीरका नाश होजाता है और संचितकर्मके नाश होनेते ब्रह्मज्ञानकरके नाश होजाता है ताते चिदाभासरूप जीव अनित्य है ॥

शंका–जेकर जीव विनाशी है तब तिसका अविनाशी ब्रह्मके साथ समानाधिकरणतारूप अभेदज्ञान न होवेगा जिसते विनाशी और अविनाशी एकता नहीं बनती ॥

उत्तर–अहं ब्रह्म यह जो समानाधिकरण है सो मुख्य समानाधिकरण नहीं जैसे–"सोयं देवदत्तः" यह मुख्य समानाधिकरणहै किंतु बाधविषे समानाधिकरण है जैसे-किसी पुरुषको स्थाणुविषे चोरविषे भ्रम भया और पाछेसे तत्त्वज्ञानके हुयांहुयां यह पुरुष कहता है कि, जो चोरसा स्थाणु है इस वाक्यविषे समानाधिकरण बाध है अर्थ यह–जो चोरकी बाधाकरके स्थाणु शेष रहता है तैसे भ्रमकरके प्रतीत भई जो जीवरूपता तिसके बाधको करके ब्रह्मरूपता शेष प्रतीत होती है॥ इस प्रकारके नैष्कर्म्यसिद्धि नाम ग्रंथविषे सुरेश्वराचार्यने स्पष्ट कथन किया है ताते "अहंब्रह्म" इस वाक्यविषे और बाधविषे समानाधिकरण होवे ॥

शंका–नैष्कर्म्यसिद्धिविषे सुरेश्वराचार्यने बाध समानाधिकरणके कथन कियाँ हुयाँ भी श्रुतियोंविषे बाध समानाधिकरण किधर नहीं प्रतीत होता ॥

उत्तर–संपूर्ण यह ब्रह्म है इस श्रुतिवाक्यविषे जगत्का और ब्रह्मका समानाधिकरण बाधविषे देख्या है तैसे "अहंब्रह्म" यह जीवके साथ ब्रह्मका समानाधिकरण है ॥

शंका–जेकर बाध समानाधिकरण भी बनता है तो विवरणाचार्यने बाधसमानाधिकरणका बहुत यत्नकरके क्यों खण्डन किया ? ॥

उत्तर–विवरणाचार्यने 'अहं'शब्दका अर्थ कूटस्थ मान्या है इसते बाधसमानाधिकरणका खण्डन किया है शोधन किया हुया जो त्वंपदार्थका अर्थ कूटस्थ है तिस कूटस्थकी ब्रह्मरूपताके कहनेको कथन

किया है तैसे और और ग्रंथोंविषेभी अहंशब्दका अर्थ चिदाभास मानकर बाध समानाधिकरण कथन किया है मिथ्या होनेते चिदाभास बाधके योग्य है इसते हमारा कथन यथार्थ है और कूटस्थ सच्चिदानंदरूपहै तिसते तिसकी बाधा नहीं होती इसते विवरणाचार्यका कथन यथार्थहै ताते विवरणाचार्यके वचनका और हमारे वचनका विरोध नहीं कूटस्थकी ब्रह्मके साथ एकता बनसक्ती है इसके निश्चय करणेवास्ते कूटस्थशब्दका अर्थ श्रवण कर-स्थूल सूक्ष्मरूप शरीर दोनों सहित चिदाभासरूप भ्रमका अधिष्ठान जो चैतन्य है सो कूटस्थ है और संपूर्ण जगत्की कल्पनाका अधिष्ठान जो चैतन्य है सो ब्रह्म है॥

शंका–जीव भ्रमका अधिष्ठान चैतन्य कूटस्थ है यह कथन अयुक्त है जिसते जीवको कल्पिता नहीं ॥

उत्तर–जेकर चैतन्यविषे संपूर्ण जगत् कल्पित है तब जगत्का एक अंशरूप चिदाभास कल्पित है इस वार्ताका क्या कथन करणा है जैसे जिस जलविषे बकरी नहीं डूबती तिस जलविषे हाथी नहीं डूबता तिसका क्या कहना है ॥

शंका–जगत्की कल्पनाका अधिष्ठान चैतन्य एक है इसते तत्पदके अर्थका और त्वंपदके अर्थका भेद नहीं ताते महावाक्यविषे तत्पद और त्वंपद यह दोनों पुनरुक्ति प्रसंगते कथन कीने चाहिये ॥

उत्तर–तत्पदके अर्थका और त्वंपदके अर्थका औपाधिक भेद है वास्तवमें एकताहै सो उपाधि कौन है ऐसा पूछे तो श्रवण कर--संपूर्ण जगत्की कल्पनाका अधिष्ठान तत्पदार्थ ब्रह्म है और जगत्का एकदेश चिदाभासकीकल्पनाका अधिष्ठान त्वंपदार्थ कूटस्थ है इसप्रकार उपाधि करके तत्त्वपदार्थका भेदहै ताते पुनरुक्ति नहीं वास्तवते चैतन्य एकहै॥

शंका–सीपीविषे रूपेकी न्याईं चिदाभास कल्पित नहीं जिसते अधिष्ठान और आरोप दोनों धर्मोंवाला प्रतीतहोता है ॥

उत्तर-चिदाभास दोनोंधर्मोंवाला प्रतीत होताहै इसते कल्पितहै ॥ बुद्धिरूप उपाधिद्वारा मैं कर्ता हूं मैं भोक्ताहूं मैं प्रमाताहूं इसते आदि-लेकर कल्पितधर्मोंवाला प्रतीत होता है और प्रकाशरूप आत्माके धर्मवाला प्रतीत होता है चिदाभासरूप भ्रमका कारण है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-बुद्धि और चिदाभास और आत्मा और आत्माविषे जगत् कैसे है इन चारोंपदार्थोंका निर्णय न होता तिसते जो प्राप्त भया अज्ञान सो चिदाभासरूप भ्रमका कारण है और जन्ममरणरूप अनर्थोंका कारण है ताते पुरुषार्थ करके अज्ञानका नाश किया चाहिये ॥ अज्ञानके नाशका कारण कौनहै ऐसे पूछे तो श्रवण कर-बुद्धि और चिदाभास और कूटस्थ आत्मा और जगत् इन चारोंके स्वरूपका विवेक अज्ञानके नाशका कारण है और इनके स्वरूपको विवेक जाननेवाला ज्ञानी है और ज्ञानते जन्ममरणरूप अनर्थका अभाव होजाता है और मोक्षको पुरुष प्राप्त होजाता है यह वेदांत शास्त्रका सिद्धांत है ॥ ऐसे हुयांहुयां नैयायिक आदिकोंने कुतर्कोंको लेकर जो अनेकप्रकार हास्य किये हैं सो हास्य कौन हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर-बंधमोक्षको अविवेक कार्यताके हुयां हुयां अद्वैतवादविषे किसको बंध है और किसको मोक्ष है और कौन गुरु है और कौन शिष्य है ? इसते आदिलेकरके हास्य हैं सो नैयायिकोंके हास्यखंडन ग्रंथोंविषे कथन करी जो युक्तियाँ हैं तिन युक्तियोंकरके नैयायिकोंको निरुत्तर करके निवारण करणा यह कूटस्थका जो बुद्धिआदिकोंसे विवेक है और श्रुतियोंकरके तथा युक्तियों करके कथन किया सो पुराणोंविषेभी कथन किया है काम क्रोध आदिरूप वृत्तियोंकी उत्पत्तिके हुयां हुयां वृत्तियोंकी साक्षीरूपताकरके कूटस्थ स्थित है और वृत्तियोंकी उत्पत्तिसे प्रथम वृत्तियोंके प्रागभावकी साक्षीरूपताकरके कूटस्थ स्थित है और वृत्तियोंके नाश हुयाँहुयाँ वृत्तियोंके ध्वंसको साक्षीरूपता करके

कूटस्थ स्थित है और आत्मजिज्ञासाकी प्राप्तिके हुयाँहुयाँ जिज्ञासुकी साक्षरूपताकरके कूटस्थ स्थित है और जिज्ञासासे प्रथम मैं अज्ञानी ऐसे अनुभव किया जो है अज्ञान उस अज्ञानकी साक्षीरूपताकरके कूटस्थ स्थित है सो कूटस्थ असत्य जगत्का अधिष्ठान होनेतेसत्य है और जड संपूर्णकाप्रकाशक होनेते चैतन्यरूप है और सदा प्रेमका विषय होनेते आनंदरूप है और सर्वअर्थोंकी प्रकाशकता करके सर्व-वस्तुओंके साथ संबंधवाला है और सर्वकेसाथ संबंधवाला होनेते पूर्ण है यहां यह अनुमान जानना कूटस्थ वृत्तिआदिकोंते भिन्न है वृत्ति-आदिकोंका साक्षी होनेते जो वृत्तिआदिकोंते भिन्न नहीं होता सो वृत्तिआदिकोंका साक्षी भी नहीं होता जैसे वृत्तिआदि वृत्तिआदिकोंते भिन्न नहीं तो वृत्तिआदिक वृत्तिआदिकोंका साक्षीभी नहीं मिथ्या वस्तुका अधिष्ठान होनेते कूटस्थ सत्य है मिथ्या रूपेका अधिष्ठान सीपीकी न्याईं कूटस्थ चैतन्यरूप है संपूर्ण जडवस्तुका प्रकाशक होनेते जो चैतन्य रूप नहीं होता सो संपूर्ण जडवस्तुका प्रकाशकभी नहीं होता जैसे घट चैतन्यरूप नहीं तो संपूर्ण जडवस्तुका प्रकाश-कभी नहीं और कूटस्थ परमानंदरूप है परम प्रेमका विषय होनेते जो परमानंदरूप नहीं होता सो परम प्रेमका विषयभी नहीं होता जैसे घट परमानंदरूप नहीं तो परमप्रेमका विषयभी नहीं कूटस्थ पूर्ण है, संपूर्ण पदार्थके साथ संबंधवाला होनेते आकाशकी न्याईं कूटस्थ संपूर्ण-पदार्थोंके साथ संबंधवाला है सर्वदा प्रकाशक होनेते जो सर्वके संबंधवाला नहीं सो सर्वदा प्रकाशकभी नहीं जैसे-दीपक सर्वके साथ संबंधवाला नहीं तो सर्वदा प्रकाशकभी नहीं ॥ इसप्रकार शैवपुराण विषे कूटस्थका विवेक कियाहै सूत संहितानामक ग्रंथविषे सो कूटस्थ कैसा है ? जीवरूप और ईश्वररूप कल्पनाते रहित है और अद्वितीय है और स्वयंप्रकाश चैतन्यरूप है और शिव है अर्थ यह-जो परमानंद

रूप है सो कूटस्थ जीव ईश्वररूप ताते रहित कैसे है ? ऐसा पूछे तो श्रवण कर–जिसते श्रुतिने जीव ईश्वरके मिथ्या कथन करचा है इसते कूटस्थ जीव ईश्वररूपताते रहित है जीवईश्वरका मिथ्या कथन करणेवाली सो श्रुति कौन है ऐसा पूछे तो श्रवण कर–श्वेताश्वतर उपनिषद्की श्रुति यह कहती है कि, तिनगुणोंकी साम्यावस्थारूप जो महामायाहै सो मायारूपता और अविद्यारूपताको प्राप्त होती है ॥ मायाविषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है तिसको ईश्वररूपताकरके दिखलावती है और अविद्याविषे जो चैतन्यका प्रतिबिंब है तिसको जीवरूपताकरके दिखलावतीहै ॥ ताते मिथ्यारूप मायाके अधीन जो चिदाभास रूप ईश्वर और मिथ्यारूपा अविद्याके अधीन जो चिदाभासरूप जीव है सो मिथ्यारूप है यह श्वेताश्वतर उपनिषद्की श्रुति जनावती है ॥

शंका–जेकर जीव ईश्वर मिथ्या है तो जीव ईश्वरका देहआदिकोंसे भेद न होना चाहिये अर्थ–यह जो जडपदार्थोंकी प्रेरकता और प्रकाशता न होनी चाहिये ॥

उत्तर–जैसे पृथिवीकार्यताकरके तुल्य हुयाँहुयाँभी मिट्टीके घटको और काँचके घटको प्रेरकता नहीं पर काँचके घटविषे प्रतिबिंबके ग्रहण करणेका सामर्थ्य है और मिट्टीके घटविषे नहीं तैसे मायाकार्यताकरके जीव ईश्वर और जगत्की मिथ्यारूपताके तुल्य हुयाँहुयाँ भी जीव ईश्वरको चेतनता और प्रेरकता है और शरीर घटादि जगत्को चेतनता और प्रेरकता नहीं ॥

शंका–मृन्मयघटका कारण जो मिट्टी है सो काँचके घटका कारण नहीं होता और काँचके घटका कारण जो मिट्टी है सो मृन्मयघटका कारण नहीं ताते मृन्मयघटका और काँचके घटका कारण मृत्तिकाके भेद होनेते मृन्मयघटकी और काँचके घटकी विलक्षणता

बनसक्ती है पर जीव ईश्वर और जगत्कारण माया तो एक है ताते जीव ईश्वरकी जगत्से विलक्षणता नहीं बनती ॥

उत्तर-जैसे एकअन्नते उत्पन्न हुये मन और शरीरकी विलक्षणताहै यही मन संकल्प विकल्पका कारण है और शरीर संकल्प विकल्पका कारण नहीं तैसे एकमाया कार्यताके हुयाँहुयाँभी जीव इश्वरकी शरीर घटादिरूप जगत्से विलक्षणता है ॥

शंका-काँचके घटकी न्याईं जीव ईश्वरकी स्वच्छता होवे परंतु चैतन्यरूपता किस कारणते है ? ॥

उत्तर-जीव ईश्वरकी चैतन्यरूपताविषे विवाद कुछ नहीं जिसते चैतन्यरूपताकरके जीव ईश्वरका अनुभव होताहै ॥

शंका-मिथ्यारूप जीव इश्वरकी चैतन्यरूपताकरके अनुभव क्यों होता है ॥

उत्तर-जिस मायाने जीव ईश्वरको कल्प्या है तिस मायाका यहभी स्वभाव है जो कलिपतोंकोभी चैतन्यरूपकरके दिखलाय देना इसमें आश्चर्य कुछ नहीं जिससे माया सर्वकलपना करणेको समर्थ है जीवविषे स्थित जो निद्रा है सो स्वप्नाविषे जीव ईश्वरको चेतनकलपा देती है जेकर निद्राविषेभी ऐसी समर्थ भई तो महामाया जीव ईश्वरचेतना कलप देती है इसविषे तेरेको क्या आश्चर्य है ॥

शंका-जेकर ईश्वर मायाकरके रचाहुया मिथ्या है तो जीवकी न्याईं सर्वज्ञतादिक ईश्वरविषे न होनी चाहिये ॥

उत्तर-सर्वज्ञतादिक ईश्वरविषे मायाकलपकरके दिखलाई देती है जो माया ईश्वरको कलपसक्ती है तिसको ईश्वरविषे सर्वज्ञता आदिक कलपनेविषेकी भार है ॥

शंका-जेकर जीव ईश्वर माया कलिपत है तो कूटस्थभी माया कलिपत होवो ॥

उत्तर-ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये जिसते हठकरके किसी अर्थकी सिद्धि नहीं होती किंतु प्रमाणकरके अर्थकी सिद्धि होती है कूटस्थकी मिथ्यारूपता विषे तो प्रमाण कोइ नहीं ताते कूटस्थ मिथ्यानहीं ॥

शंका-कूटस्थकी सत्यताविषेभी तो प्रमाण कोई नहीं ॥

उत्तर-कूटस्थकी सत्यताविषेभी संपूर्ण श्रुतियाँ प्रमाण हैं और कूटस्थकी सत्यताका विरोधि कोई और वस्तु श्रुतियाँ नहीं सहारतीं जैसे सूर्य आपणी प्रकाशरूपताके विरोधी तमको नहीं सहारता ॥

शंका-कूटस्थकी सत्यताविषे और जीव ईश्वरकी मिथ्यारूपता विषे श्रुतियाँही तुम पढतेहो और युक्तियोंकरके कुछ अर्थसिद्धि नहीं करते ॥

उत्तर-जिज्ञासुओंको श्रुतियोंके अर्थकी प्रकटतावास्ते हमारा उद्यम है इसते युक्तियोंसे कथन नहीं करते इसकरके नैयायिक आदिकाका शंकाका इहां अवसर कुछ नहीं ताते मोक्षकी इच्छावाले पुरुषको खोटे तर्कोंको त्यागकरके श्रुतिका आश्रय करणा योग्य है श्रुतियाँ तो जीव ईश्वरको मिथ्या कथन करती हैं जिसते माया और अविद्या विषे प्रतिबिंबरूप जीव ईश्वर है ऐसा श्रुतिमें कथन किया है मैं एकते बहुतरूप होवूं इस इच्छासे आदिलेकरके शरीरविषे प्रवेशपर्यंत सृष्टि ईश्वरकरके रचीहुई है और जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति बंधमोक्षरूप संसार जीवकरके रचा हुया है और कूटस्थ असंग निर्विकार है और जन्ममरण आदिरूप संपूर्ण व्यवहार मिथ्या हैं यह श्रुतियोंविषे कथन किया है ताते मुमुक्षु यह जो श्रुतियोंका अर्थ है इसको सदा विचारे ॥

शंका-कूटस्थ जन्म आदिक विकारोंसे रहित है इस वार्ताको तुम कैसे जानतेहो ? ॥

उत्तर--श्रुतिवाक्यते हम जानते हैं सो श्रुतिवाक्यको श्रवण कर-- परमार्थदृष्टिविषे स्थित होकरके देख्याहुया न उत्पत्ति है न विनाश है न कोई बंधनको प्राप्त हुयाहुया है और न कोई मुक्त है न कोई शमदमआदिक साधनावाला है न कोई मुमुक्षु है ॥

शंका–जेकर वास्तवसे उत्पत्तिविनाशआदिक नहीं तो श्रुतियोंविषे तहाँतहाँ जीव ईश्वर और जगत्आदिकोंके स्वरूपको कथन क्यों किया है ? ॥

उत्तर–मनवाणीते परे जो आत्माका स्वरूप है इसके ज्ञानवास्ते श्रुति जीव और ईश्वर और जगत्के स्वरूपको कथन करती है जिसते जीव ईश्वर जगत्का स्वरूप अज्ञानदशाविषे प्रतीत होता है मनवाणी करके तिसकी मिथ्यारूपताको कथन करके मनवाणीते परे जो आत्मतत्त्वहै तिसको श्रुति जनावे है ॥

शंका–जेकर वास्तव तत्त्व एकरूप श्रुतियां बोधन करती हैं तो श्रुतियोंविषे परस्पर विवाद क्यों है ॥

उत्तर–तत्त्वविषे तो श्रुतियोंका विवाद नहीं किंतु तत्त्वबोधनके प्रकारविषे विवाद है सोभी जिन पुरुषोंको तत्त्वबोधन करणा है तिन पुरुषोंके चित्तकी विषमताके अनुसार है ऐसे सुरेश्वराचार्यने कथन किया है सो सुरेश्वराचार्यका वाक्य श्रवण कर–जिस जिस प्रक्रियाकरके जिज्ञासुओंको आत्मज्ञान होवे सोई सोई प्रक्रिया तिस तिस जिज्ञासुको श्रेष्ठ है इसीकरके श्रुतियोंने और आचार्योंने अनेक प्रक्रियाँ कथन की हैं ताते प्रक्रियोंविषे विवाद है तत्त्वविषे विवाद नहीं जैसे साठ मुद्राके ग्रहण करणेवाले जो पुरुष हैं तिनोंका लेखेविषे विवाद अनेक प्रकारका है साठमुद्राविषे विवाद कुछ नहीं कोई बारहपंचे साठ कहता है कोई दशछिके साठ कहता है कोई पंद्रहचौके साठ कहता है कोई तीन वीसोंको साठ कहता है ॥

शंका-जेकर श्रुतियोंका अर्थ एकरूप है तो श्रुतियोंके कथन करणेवाले पुरुषोंका परस्पर विवाद क्यों है? कोई कहता है भेद श्रुतियोंका अर्थ है कोई कहता है अभेद श्रुतियोंका अर्थ है ॥

उत्तर-मूर्खपुरुष संपूर्ण श्रुतियोंके तात्पर्यको न जानकरके भ्रमे हुये विवाद पठा करते हैं और विवेकी पुरुष श्रुतियोंके तात्पर्य संपूर्णको जानकरके आनंदके समुद्रविषे स्थित होते हैं और किसीके साथ विवादको नहीं करते जेकर विवेकी आनंदके समुद्रविषे स्थित हैं तो विवेकियोंका निश्चय कैसा है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-मायारूप मेघ है सो जगत्रूप जलकी वर्षा जैसे होवे तैसे करो तिसकरके चिदाकाशकी हानि नहीं और चिदाकाशको कुछ लाभ भी नहीं अब कूटस्थदीपके अभ्यासका फल श्रवण कर-जो पुरुष इस "कूटस्थदीप"का निरंतर विचार करता है सो निरंतर कूटस्थरूपताकरके प्रकाशता है अर्थ यह-जो आपको सदा कूटस्थरूप जानता है ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यां भाषायां
अष्टमं कूटस्थदीपप्रकरणं समाप्तम् ॥ ८ ॥

अथ ध्यानदीपप्रकरणम् ९.

ॐसद्गुरुप्रसाद ॥ अब ध्यानदीप नाम जो चौथा दीप है आदिसे नववाँ प्रकरण तिसका आरंभ करते हैं जिस पुरुषने उपनिषदोंका श्रवण किया है उस पुरुषको बुद्धिकी मंदता आदिक किसी प्रतिबंध करके जेकर ब्रह्मका अपरोक्षज्ञान न होवे तो तिस पुरुषने ज्ञानको उत्पन्न करके मोक्षका कारण जो उपासना सो करनी चाहिये जिसते निर्गुण ब्रह्मकी उपासना करकेभी मोक्षकी प्राप्ति होती है जैसे संवादी भ्रमकरके प्रवृत्त हुये पुरुषको वांछितपदार्थकी प्राप्ति होती है तैसे भ्रमरूपभी उपासना है

पर तिस करके जिज्ञासुओंको वांछित जो ब्रह्मरूपताकरके स्थितिरूप मोक्ष है तिसकी प्राप्ति होती है उपासना करके मोक्षकी प्राप्ति होती है इसविषे क्या प्रमाण है ऐसा पूछे तो श्रवण कर नरसिंहतापिनी उपनिषद्की श्रुति इसविषे प्रमाण है ॥ जिसते निर्गुणब्रह्मकी उपासना करके भी मोक्ष होता है ॥ इसी कारणते नरसिंहतापिनी उपनिषद्विषे अनेक प्रकार करके ब्रह्मतत्त्वकी उपासना कथन कीनी है संवादी भ्रम किसको कहते हैं ऐसा पूछे तो श्रवण कर भ्रम दो प्रकारका होता है एक संवादी और एक विसंवादी भ्रम है॥जिस भ्रमसे वांछित अर्थकी प्राप्ति होवे सो संवादी भ्रमहै और जिस भ्रमसे वांछित अर्थकी प्राप्ति न होवे सो विसंवादी भ्रम है जैसे दो पुरुषसे उन दोनों पुरुषोंके बीच एकको मणिकी प्रभाविषे मणिभ्रम होता भया और दूसरेको दीपककी प्रभाविषे मणिभ्रम होता भया तब दोनों पुरुष मणिके लेनेवास्ते भ्रमकरके जाते भये जिसते मणिविषे मणिज्ञान दोनोंको नहीं भया मणिकी प्रभाविषे और दीपककी प्रभाविषे मणिज्ञान भया है परंतु जिस पुरुषके मणिकी प्रभाविषे मणिज्ञान भया है तिस पुरुषको उद्यम किया हुया मणिका लाभ होता है सो संवादीभ्रम है और जिस पुरुषको दीपककी प्रभाविषे मणि भ्रम है तिस पुरुषका उद्यम निष्फल है जिसते तिसको लाभ कुछ नहीं होता तैसे ब्रह्मतत्त्वविषे मनका लगावनारूप जो उपासना है सो भ्रमरूप है जिसते ब्रह्म मन वाणीते परे है पर तिसकरके ब्रह्मसाक्षात्कारद्वारा मोक्षकी प्राप्ति होती है इसते ब्रह्मकी उपासनाभी संवादी भ्रम कहाता है और धन पुत्र स्त्री आदिकोंविषे जो मनका लगावना है तिसते लाभ कुछ नहीं होता तिसते सो विसंवादी भ्रम कहाता है इसप्रकार प्रत्यक्षकरके जानी जो वस्तु है तिसविषे संवादीभ्रम होता है और अनुमानकरके जानी जो वस्तु तिसविषे भी संवादी भ्रम होता है सो श्रवण कर-किसी पुरुषको

अग्निकी चाह थी तिसपुरुषने दूरसे जलती कवाड देखी और तिसको जान्या यह धूँआं है तिस स्थानविषे अग्निका अनुमान किया कि, यह स्थान धूँएँवाला होनेते अग्निवाला है भोजनवाले स्थानकी न्याईं अग्निवाला इसप्रकार अग्निका अनुमान करके प्रवृत्तहुये पुरुषको दैवयोग करके जेकर अग्निकी प्राप्ति होजाय तब वह संवादी भ्रम है तिसते जलती कवाड विषे धूँएँका ज्ञान यथार्थ नहीं और शास्त्रने कथनकिया जोअर्थ है तिसमेंभी संवादीभ्रम होता है जैसे किसी पुरुषने भ्रमकरके गोदावरीके जलको गंगाजल जान करके स्नान कर पानभी किया तिसकरके वह शुद्धिको प्राप्त होजाता है जिसते गंगाजलकी न्याईं गोदावरीका जलभी शुद्धका कारण है परंतु गोदावरीके जलविषे जो गंगाजल ज्ञान है सो भ्रम है और जैसे कोई पुरुष तापकरके संतापको प्राप्त हुयाहुया बकवाद करणे लगा तिस बकवादविषे तिसके मुखसे नारायणका नाम उच्चारण भया नारायणको निकालो, नारायण मेरेको मारता है, नारायणको आसन देवो नाराणकी पूजाकरो इसते आदिलेकरके जो तिसका कथन है सो भ्रमरूप है जिसते तिसको यह ज्ञान नहीं ॥ जो नारायणका नाम मेरेको स्वर्गके देनेवाला है केवल सन्तापकरके भ्रमको प्राप्त हुयाँहुयाँ और पुरुषोंके स्मरणकी न्याईं तिसने नारायणका स्मरण किया है परंतु भ्रम करके भी नारायणका नाम स्मरण करणेते वोह पुरुष मरकरके स्वर्गको प्राप्त होता है ॥ भावसे मलीनचित्तभी तिसको स्मरण करे तोभी हरिका नाम पापोंका नाश करता है जैसे अग्निको न जानकरकेभी अग्निके ऊपर चरण रखनेसे अग्नि दाह करदेती है तैसे परमेश्वरके नामके माहात्म्यको न जान्याहुयाभी परमेश्वरका नाम उच्चारण कियाँ हुयाँ पापोंका नाश करदेता है और पुराणोंविषे कथन किया है अजामिल बडा पापी था सो पुत्रको नारायणनामकरके बुलावता हुयाँ मरकरके मोक्षको प्राप्तभया ताते

भ्रमरूपभी नारायणके नामका स्मरण मोक्षका कारण है जिसते अजामिलको नारायणके नामविषे पुत्र नामताका ज्ञान भ्रम है ताते यह सिद्ध भया कथनकिये जो दृष्टांत तिनोंकरके संवादी भ्रम करोडों प्रकारका है जिसते प्रत्यक्षप्रमाणके विषे संवादी भ्रम है और अनुमानप्रमाणके विषेभी संवादी भ्रम है और शास्त्रप्रमाणके विषेभी संवादी भ्रम है और जेकर संवादीभ्रमको न अंगीकार करेगा तो मृत्तिका और काष्ठ और शिला और कागजोंकी मूर्तियाँ फलसिद्धिकेवास्ते पूजनेयोग्य तेरे मतविषे कैसे होवेंगी स्वतः देवतारूपता तो तिनको है नहीं, छांदोग्यउपनिषद और बृहदारण्यक उपनिषद्विषे पंचाग्निविद्या है तिस विद्याविषे प्रवाहणनाम राजाने गौतम नाम ऋषिके ताईं कथन किया है स्त्री और पुरुष और पृथिवी और मेघ और स्वर्गलोक इन पाँचोंको अग्निरूपजानके उपासना कियाँहुयाँ ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है सो संवादीभ्रमते फलकी प्राप्ति न अंगीकार कैसे होवेगी स्त्री आदिकोंविषे अग्निज्ञान तो भ्रमरूप प्रसिद्ध है औरविषे औरका ज्ञान होनेते और मनको ब्रह्मरूप जानके उपासना करणी सूर्यको ब्रह्मरूप जानके उपासना करणी इसते आदिलेकरके जो उपासना है सा संवादी भ्रमरूप हैं शास्त्रकरके कथन कियाहुया और विषे और वस्तुका ज्ञान जैसे-शालग्रामविषे विष्णुज्ञान अथवा लोकप्रसिद्ध जो और वस्तुविषे और ज्ञान जैसे मणिप्रभाविषे मणिज्ञान तिस भ्रमरूप ज्ञानते जब वांछितफलकी प्राप्ति होजावे तब दैवयोगकरके सो संवादी भ्रम है ॥

शंका-ब्रह्मकी जो भ्रमरूप उपासना है तिसको यथार्थ ज्ञानकरके जो प्राप्तहोने योग्य मोक्षहै तिसकी कारणता कैसे है ? ॥

उत्तर-संवादी भ्रमकी न्याईं तिसको मोक्षप्राप्तिविषे कारणता है जैसे संवादी भ्रम आप भ्रमरूप भी है पर सम्यक्‌ज्ञानसे जो फलप्राप्त

होता है तिसफलको देता है तैसे ब्रह्मतत्त्वकी उपासना भ्रम रूपभी है पर मुक्तिरूपफलके देनेवाली है ।

शंका-ब्रह्मतत्वको जानकरके उपासना करी है ब्रह्मतत्त्वके न जानकरके जेकर कहो जान करके करी है तो एह वार्ता नहीं बनती जिसते जाननेकरके मोक्षकी प्राप्ति होजाती है तिसते उपासनाकरणी व्यर्थ है और जेकर कहो विना ब्रह्मतत्वके जान्या ब्रह्मतत्वकी उपासनाकरी है तो यहभी वार्त्ता नहीं बनती जिसते उपासनानाम है चित्तकी तदाकारताके करणेका तो जेकर ब्रह्मतत्वजान्याही नहीं तब तिसविषे चित्तकी तदाकारता करणी नहीं बनती ॥

उत्तर-ब्रह्मकी आत्मरूपताके अपरोक्ष ज्ञानकरके मोक्षकी प्राप्ति होती है ऐसा अपरोक्षज्ञान जिसको नहीं प्राप्त भया उसको-उपासना व्यर्थ नहीं और वेदांतशास्त्रोंते परोक्षरूपता करके ब्रह्मतत्वको जानकरके अखंड एकरस ब्रह्मतत्त्व मैं हूं ऐसी उपासना बनसक्ती है जिस ब्रह्मतत्त्वकी उपासना करणी है तिसब्रह्मविषे परोक्षज्ञानका क्या रूप है ऐसा पूछे तो श्रवण कर बुद्धिआदिकोंका साक्षी आनंदरूप ब्रह्म है ऐसा जानकरके सच्चिदानंद ब्रह्म है ऐसा जो शास्त्रते उत्पन्नभया ज्ञान सो उपासनाका कारण परोक्षज्ञान है जैसे शालग्रामआदिरूप प्रतिमा विषे शास्त्रद्वारा विष्णुरूपताको व्यापकताको न अनुभवकरके परोक्षज्ञान होता है ॥

शंका-शास्त्रकरके विष्णुको चतुर्भुज जान्याजाता है सो विष्णु चतुर्भुज यथार्थ है ताते शास्त्रकरके विष्णुका परोक्षज्ञान होता है यह कैसे कहतेहो ? ॥

उत्तर-शास्त्रकरके विष्णुको चतुर्भुजरूप जान्या हुयाँभी नेत्रों करके विष्णुकी चतुर्भुजताको न अनुभव करता हुयाहुया पुरुष

विष्णुके अपरोक्ष ज्ञानवाला नहीं होता जिसते उपासना कालविषे विष्णुकी प्रत्यक्षाताको नहीं अनुभव करता नेत्रोंकरके इसते परोक्षज्ञानी कहता है ॥

शंका-विष्णुआदिकोंका जो परोक्षज्ञान है सो भ्रमरूप है जिसते विष्णुज्ञानँ विष्णुरूप पदार्थविषे मनकी कल्पनारूप है नहीं ॥

उत्तर-ज्ञानको परोक्षरूपताकरके भ्रमरूपता नहीं होती किंतु तिसज्ञानताविषे असत्यरूप होवे सो ज्ञान भ्रमरूप होता है अप्रमाणते उत्पन्न हुयाहुया और विष्णुविषे परोक्षज्ञान तो शास्त्ररूप प्रमाणसे उत्पन्नभया है ॥ शास्त्रकरके जैसा विष्णुका स्वरूप है तैसा प्रतीत होता है परंतु प्रत्यक्ष नहीं प्रतीत होता ॥ ताते विष्णुआदिकोंके परोक्षज्ञानको भ्रमरूपता नहीं जेकर परोक्षज्ञानको भ्रमरूपता मानोगे तो पर्वतआदिकोंमें अग्निआदिकोंके ज्ञानको भी भ्रमरूपता होनी चाहिये ताते संपूर्ण व्यवहारका अभाव सिद्ध होवेगा ॥

शंका-सच्चिदानंदरूपताको जनावनेवाले शास्त्रते उत्पन्नभया जो ब्रह्मज्ञान तिसको परोक्षरूपता किसकारणते है ? ॥

उत्तर-जिसते सर्वअंतःकरण वृत्तियोंके साक्षीने आत्मरूपताकरके ब्रह्मको नहीं जान्या तिसते तिस ज्ञानको परोक्षरूपता है और ब्रह्म सच्चिदानंदरूप है और देशकालवस्तुके परिच्छेदसे रहित है और नित्य है, शुद्ध है, चैतन्यरूप है, सत्य है, मुक्त है, निरंजन है और जो इदंताकरके प्रतीत होता है स्थूल अथवा सूक्ष्मभाव अथवा अभाव सो संपूर्ण सत्य है और जो यह संपूर्ण प्रतीत होता है सो चैतन्यरूप है इसते आदि लेकरके शास्त्रते सच्चिदानंदरूप ब्रह्मकी प्रतीति हुयां हुयां भी आत्मरूपताके न जाननेते तिस ब्रह्मको साक्षात् नहीं अनुभव करता ।

शंका-जेकर ब्रह्मकी आत्मरूपताको परोक्षज्ञानी नहीं जानता तो परोक्ष ब्रह्मज्ञानको तत्त्वज्ञानता कैसे है ? ॥

उत्तर-परोक्ष भी ब्रह्मज्ञान शास्त्रोंने कथन किया जो प्रकार तिस करके ब्रह्मकी सच्चिदानंदरूपताको निश्चय करावता है ताते तत्त्वज्ञान है भ्रम नहीं ॥

शंका-जैसे शास्त्रकरके ब्रह्मकी सच्चिदानंदरूपताको जानाजाता है तैसे महावाक्योंकरके ब्रह्मकी साक्षी आत्मरूपताको भी जानीता है तिसते शास्त्रते उत्पन्न भया जो ब्रह्मज्ञान है तिसको अपरोक्षरूपता क्यों न होवे ॥

उत्तर-ब्रह्म यद्यपि शास्त्रोंविषे महावाक्योंने आत्मरूपता करके कथन कीना है पर तोभी अन्वयव्यतिरेककरके तत्पदार्थ और त्वंपदार्थको विवेकसे रहित पुरुषने ब्रह्मको आत्मरूपताकरके नहीं जान सक्ता इसकारणते केवल शास्त्रते अपरोक्षज्ञान नहीं होता ॥

शंका-सम्यक्ज्ञानका कारण प्रमाण और वस्तु है सो प्रमाण भी महावाक्यरूप विद्यमान है और ब्रह्मआत्मारूप वस्तु भी विद्यमान है ताते विचारसे विना अपरोक्षज्ञान नहीं होता यह क्यों कहते हो ? ॥

उत्तर-ब्रह्म और आत्माकी एकताके अपरोक्षज्ञानका विरोधी देह इंद्रियादिकोंविषे आत्मताभ्रम है तिसते विद्यमान हुयाँहुयाँ हठकरके पुरुष ब्रह्मको आत्मरूपताके जाननेको मंदबुद्धि होनेते समर्थ नहीं होता ताते देह इंद्रियाँदिकोंविषे आत्मभ्रमके निवारणवास्ते विचार अवश्य करना चाहिये जिसते विचारते विना भ्रम दूर नहीं होता।

शंका-जेकर देह इंद्रियाँदिकोंविषे आत्मता भ्रम अपरोक्षब्रह्मआत्मज्ञानका प्रतिबंधक है तो द्वैतभ्रमको अद्वितीयब्रह्मके परोक्ष ज्ञानकी भी प्रतिबंधकता होवे ॥

उत्तर-अपरोक्ष द्वैतभ्रम अपरोक्ष अद्वैतज्ञानका प्रतिबंधक है और परोक्षअद्वैतज्ञानका प्रतिबंधक नहीं ताते शास्त्रविषे श्रद्धावाले पुरुषको शास्त्रते परोक्षज्ञान होता है जैसे अपरोक्षशिलाज्ञान परोक्ष ईश्वरज्ञानका प्रतिबंधक नहीं प्रतिमा आदिकोंकी विष्णुरूपताविषे किसीका विवाद नहीं अर्थ यह जो प्रतिमाविषे परोक्ष विष्णुज्ञान होजाता है ॥

शंका-कोईएक श्रद्धासे रहित पुरुष प्रतिमाविषे विष्णुकी परोक्षज्ञानताविषे विवाद करते हैं ताते तुम कैसे कहतेहो प्रतिमाकी विष्णुरूपताविषे कोई विवाद नहीं करता ॥

उत्तर-श्रद्धासे रहित पुरुषका विवाद दृष्टांतके योग्य नहीं जिसते वेदकरके कथन किये हुये कर्मोंविषे और उपासनाविषे श्रद्धावालेका अधिकार है ताते श्रद्धावाले पुरुषको यथार्थ वक्ताके एकवारी उपदेशते परोक्षज्ञान होता है शिलाविषे विष्णुरूपताका उपदेश विचारको चाहता नहीं ॥

शंका-जेकर कर्म उपासनाका उपदेश नहीं विचारको चाहता तो शास्त्रोंविषे कर्मोंके और उपासनाके विचार क्यों किये हैं ॥

उत्तर-करणेयोग्य कर्म और उपासनाविषे अनेक संशय होते हैं ताते तिनोंके निर्णयवास्ते विचार करना है कर्म और उपासनाविषे संशय क्यों होते हैं ऐसा पूछे तो श्रवणकर अनेक वेदोंकी शाखाविषे तहाँ तहाँ कथन किया जो कर्म और उपासना है तिसको एकस्थानविषे इकट्ठाकरके निर्णयकरणेको अल्पबुद्धिपुरुष समर्थ नहीं होता ॥

शंका-जेकर कर्म और उपासनाका स्वरूप निर्णय नहीं होता तो कर्म और उपासनाकी अकर्तव्यता प्राप्त भई ॥

उत्तर-जैमिनिसे आदिलेकरके मुनीश्वरोंने कर्म और उपासनाके

करणेका प्रकार निश्चयकरके कल्पसूत्रोंविषे लिख्या है तिनोंके लिखे विषे श्रद्धावाला जो पुरुष है सो विचारसे विना भी कर्मोंके करणेको भलीप्रकार समर्थ होता है ॥

शंका–जैमिनिआदिक मुनीश्वरोंने उपासनाका विचार तो कल्पसूत्रोंमें नहीं किया ताते उपासनाका करणा कैसे बने ? ॥

उत्तर–ब्रह्मवसिष्ठआदि मंत्रकल्पनाम ग्रंथविषे उपासनाकी कर्तव्यताका प्रकाश कथन किया है तिसके विचारविषे जो अस्मदादिक असमर्थ पुरुष हैं वे कल्पग्रंथोंविषे कथन किया जो उपासनाका प्रकार तिसको गुरुके मुखते जानकरके उपासनाके करणेको समर्थ होते हैं ॥

शंका–जेकर कल्प ग्रन्थोंविषे कथन किये प्रकारकरके उपासना करणेको समर्थ होता है तो अन्यकल्पग्रंथोंके बनावनेवाले पुरुषोंने वेदवाक्योंका विचार क्यों किया है ? ॥

उत्तर–आपनी बुद्धिके परचावने वास्ते करचा है और उपासनाकी कर्तव्यता सिद्धि वास्ते नहीं करचा उपासनाकी कर्तव्यता तो यथार्थवक्ताके उपदेशकरके सिद्ध होती है ॥

शंका–ब्रह्मकी उपासनाकी न्याई ब्रह्मसाक्षात्कारभी उपदेशमात्रतहां सिद्ध होवे ॥

उत्तर–जैसे उपासना विचारसे विना उपदेशमात्रकर सिद्ध होती है तैसे ब्रह्मसाक्षात्कार उपदेशमात्रकरके विचारसेविना कभी भी पुरुषोंका सिद्ध नहीं होता अर्थ–यह सत्ययुगविषेभी विचारकरके ब्रह्मका अपरोक्षज्ञान होता है और कलियुगविषे भी विचारकरके ब्रह्मका अपरोक्षज्ञान होता है काशीविषे भी विचार करके ब्रह्मका अपरोक्ष ज्ञान होता है और कुरुक्षेत्रविषे भी विचारकरके ब्रह्मका अपरोक्षज्ञान होता है किसी कालविषे किसीदेशविषे विचारसे विना ब्रह्मका अपरोक्षज्ञान

नहीं होता ॥ जिसकारणते अश्रद्धा परोक्षज्ञानकी प्रतिबंधक है अविचार प्रतिबन्धक नहीं इसीकारणते अश्रद्धाके निवृत्त हुयाँहुयाँ यथार्थवक्ताका एकबारही उपदेशते परोक्षज्ञान होता है और अपरोक्षज्ञानका प्रतिबंधक अविचार है सो अविचार विचारसे निवृत्त होता है ताते अपरोक्षज्ञानवास्ते विचार करया चाहता है ॥

उत्तर-विचारके किया हुयाँहुयाँ भी जेकर अपरोक्षज्ञान न होवे तो क्या करणे योग्य है ? ॥

उत्तर-फिरभी विचारकरणे योग्यहै विचारसे भिन्न और कोई अपरोक्षज्ञानका कारण नहीं ॥ जितनाकालपर्यंत अपरोक्षज्ञान ब्रह्मआत्माकी एकतारूप न प्राप्त होवे तितना कालपर्यंत वारंवार विचार करणा ॥

शंका-वारंवार विचार करकेभी जेकर इसजन्मविषे अपरोक्षज्ञान न होवे तो विचारको व्यर्थता प्राप्त भई ॥

उत्तर-मरणपर्यंत विचारको करता हुया पुरुष जेकर आत्माके अपरोक्ष साक्षात्कारको न प्राप्त होवे तो जन्मांतरविषे आत्माके साक्षात्कारको प्रतिबंधके नाश हुयाँहुयाँ प्राप्त होता है यह वार्ता तुमने कैसे जानी ? जो इस जन्मविषे विचार कियेते जन्मांतरविषे प्रतिबंधके नाश हुयाँहुयाँ आत्मासाक्षात्कार होता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर व्यासजीके वचनते हमने जान्या है व्यासजीने आपणे ब्रह्मसूत्रविषे यह कथन किया है ब्रह्म आत्माके विचार करणेवाला जो पुरुष है तिसको जेकर इस जन्मविषे ज्ञानकी उत्पत्तिविषे प्रतिबंध कोई न होवे तो इसजन्मविषे ब्रह्मसाक्षात्कार होता है जैसे जनकआदिकोंको इसी जन्मविषे विचार करके ब्रह्मसाक्षात्कार होता भया और जेकर इस जन्मविषे ब्रह्मसाक्षात्कारविषे कोई प्रतिबंध होवे तब इस जन्मविषे किया जो विचार है तिसकरके जन्मांतरविषे ब्रह्मसाक्षात्कार होता है जैसे वामदेवको इस जन्मके विचार करके जन्मांतरविषे ब्रह्मसाक्षात्कार होता भया प्रति-

बंधके हुयाँ हुयाँ इस जन्मविषे ब्रह्मसाक्षात्कार नहीं होता इसविषे कठवल्ली उपानिषद्की श्रुतिभीप्रमाण है सो कहती है श्रवण करते हुएभी विचार करते हुएहुएभी ब्रह्मको अपरोक्ष नहीं जानसक्ते प्रतिबंधके वशते इस जन्मविषे श्रवण मनन निदिध्यासन करणेवाले पुरुषको प्रतिबंधके हुयाँहुयाँ जन्मांतरविषे अपरोक्षज्ञान होता है इस अर्थविषे ऐतरेय उपनिषद्की श्रुतिभी प्रमाण है तिसविषे यह कथन किया है ॥ वामदेव नाम ऋषि गर्भविषे वास करता हुआ ऐसे जानता भया इन देवताओंके संपूर्ण जन्म मैं जानताहूं अर्थ यह जो देवताओंके जन्मसे प्रथम विद्यमान है सो देवताओंके जन्मको जानता है देवताओंके जन्मसे प्रथम विद्यमान तो ब्रह्मतत्त्व है सो ब्रह्मतत्त्व मैं हूं ताते प्रथमजन्मविषे जो विचार किया तिस विचारकरके गर्भविषे वामदेवको ब्रह्मसाक्षात्कार होता भया इस जन्मविषे ज्ञानकी न उत्पत्ति और जन्मांतरविषे उत्पत्ति इस विषे दृष्टांत श्रवणकर जैसे किसीपुरुषने वेदकी ऋचा कंठकरणेका आरंभ किया है तिस दिनविषे बहुत वार घोखिया हुया भी जेकर ऋचा कंठ नहीं भई तो दूसरे दिनविषे प्रथमदिनके घोषणेके विना घोखियाँते प्रभावते ऋचा कंठ होजाती है और जैसे खेती और गर्भादिक कालकरके परिपक्व होते हैं एकदिनविषे परिपक्व नहीं होते तैसे आत्मविचारभी एक दिनविषे परिपक्व नहीं होता हौले हौले परिपक्व होता है बहुतवार आत्मतत्त्वके विचार कियाँ हुयाँभी प्रतिबंधके वशते आत्मसाक्षात्कार नहीं होता यह वार्ता वार्तिककार सुरेश्वराचार्यजीने भी कथन करी है वारंवार विचारकरके कियाँ हुयाँभी तीन प्रकारके प्रतिबंधते पुरुष तत्वक साक्षात्कारको नहीं प्राप्त होता प्रथम विचारके कियाँ हुयाँ ब्रह्मज्ञानकी उत्पत्ति नहीं होती और अब उत्पत्ति होती है इसविषे कारण क्या है इस प्रश्नका यह उत्तर है प्रथम प्रतिबंध जो है तिसकरके विचारके कियाँ हुयाँभी ज्ञान न भया अब प्रतिबंध

नाश होगया है इसते अपरोक्ष ज्ञानकी उत्पात्ति हुई है सो प्रतिबंध तीन प्रकारका है एक भूत, दूसरा भविष्य, तीसरा वर्तमान इन तीन प्रकारके प्रतिबंधके विद्यमान होनेते पढ्या है वेद और वेदका अर्थ जिसने सोभी पुरुष मोक्षको नहीं प्राप्त होता प्रतिबंधके हुयाँ हुयाँ ज्ञान नहीं होता यह वार्ता छांदोग्य उपनिषद्विषेभी कथन करी है ॥ तिसको श्रवणकर जैसे किसीपुरुषको घर विषे बहुतसा स्वर्ण दब्या हुया है परंतु उसपुरुषको उसका ज्ञान है नहीं तो वह पुरुष उसके ऊपर विचरता हुयाभी तिस स्वर्णको नहीं प्राप्त होता कंगाल रहता है तिस स्वर्णके न ज्ञानका कारण तिस स्वर्णके ऊपर मिट्टीरूप प्रतिबंध है तैसे यह संपूर्ण प्रजा दिनदिनविषे ब्रह्मलोकको प्राप्त होती हैं परंतु इस ब्रह्मलोकको नहीं जानती मिथ्यारूप अज्ञानकरके आवरण हुयाँ हुयाँ अब अतीत प्रतात प्रतिबंधको श्रवणकर एक कोई संन्यासी संन्यासग्रहणते प्रथम गृहस्थ अवस्थाविषे एक मायाविषे स्नेहवाला होता भया पीछे वह पुरुष संन्यासको ग्रहण करके श्रवण करने लगा तब तिसका चित्त मायाविषेही लगा रहे आत्मतत्त्वका मनन तिसको न होवे जा गुरुन उपदेश तिसको किया जिस मोहते उत्पन्न भया जो प्रतिबंध तिसते आत्मसाक्षात्कारको न प्राप्त भया ऐसी कथा लोकविषे श्रवण करया है जकर अतीतपदार्थभी प्रतिबंध करता है तो अतीत पदार्थविष मोहवाले पुरुषको ज्ञानकी उत्पात्ति कैसे होती है ऐसा पूछे तो श्रवणकर–तिस संन्यासीका जो गुरु आत्मतत्त्वके उपदेश करणेवाला सा अति दयालु होकर तिस संन्यासीको पूछता भया कि, हमारेकरके उपदेश किये हुये आत्मतत्त्वका तेरेको साक्षात्कार नहीं भया इसते हम जानते हैं जो तैने तिसका मनन नहीं किया तेरे मनविषे और पदार्थका चिंतन होताहै तब वह संन्यासी कहता भया मायाविषे मेरा चित्त लगा हुआ है तब तिसके गुरु तिसको मायाविषे स्नेह जानकरके

फिर कहते भये तू यह माया ब्रह्म मैं हूं यह उपासना कर तिसविषे तिसका चित्त एकाग्र होता भया तिसकरके तिसके चित्तविषे यह भावना दृढ हो गई कि, मैं माया हूं तब तिसके गुरु तिसको कहते भये हैं माया रूपब्रह्म अगाडी वार्त्ताको श्रवण कर-कुटियासे बाहर निकसकर तब वह संन्यासी आपने गुरुको कहता भया मेरा शरीर बडा स्थूल है और मेरे सींग बडे हैं और कुटियाका दरवाजा छोटा है ताते मैं कैसे कुटियाते बाहिर निकसों तब तिसको तिसके गुरु कहते भये तू महिषी रूप नहीं माहिषिकी भावना करके तूं आपको महिषीरूप मानने लगा है वास्तवते तू मनुष्यरूप है जलके पात्रविषे आपणे मुखको देख ऐसे कहकरके तिसको जलका पात्र दिया तिस जलके पात्रविषे तिस संन्यासीने आपना मुख देख्या और जानता भया कि, मैं मनुष्य हूँ मैं महिषी नहीं तब तिस संन्यासीका गुरु तिसको कहता भया हे शिष्य ! जैसे मायाकी भावनाकरके तू मायारूप आपको मानता भया है तैसे ब्रह्मकी भावना करके तू ब्रह्मरूपताको प्राप्त होवेगा ऐसे उपदेशके करणेते तिस संन्यासीका महिषीविषे स्नेहरूप प्रतिबंध नाश होगया तिसते वह संन्यासी गुरुने उपदेश किया जो ब्रह्मतत्त्व तिसको अपरोक्षरूपकरके जानता भया तात्पर्य यह उपासनासे भूतप्रतिबंधका अभाव होता है अब वर्तमान प्रतिबंधको श्रवणकर-वर्तमानप्रतिबंध चार प्रकारका है एक चित्तकी विषयोंविषे आसक्ति, दूसरा बुद्धिकी मंदता ॥ अर्थ यह-जो गुरु और शास्त्रके उपदेशको न समझ सकता, तीसरा श्रुतिविरुद्ध युक्तियोंकरके श्रुतियोंके अर्थोंको अन्यथा चिंतन करणा ॥ अर्थ यह-जो पूर्वपक्षीकी युक्तियोंविषे रुचि बहुत होती इसका नाम कुतर्क है और चौथा दुराग्रह ॥ अर्थ यह-जो आत्मा करता है भोक्ता है और जगत् सत्य है तिसविषे युक्तिसे रहित हठ रखना चारों प्रतिबंधोंके मध्य एकके हुयाँहुयाँ भी ब्रह्मसाक्षात्कार

नहीं होता इस वर्तमान चारप्रकारके प्रतिबंधकी निवृत्ति किसकरके होती है ? ऐसा पूछे तो श्रवण कर-शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समाधि इस करके विषयासक्तिरूप प्रतिबंधका नाश होता है और वारंवारके श्रवणकरके बुद्धिकी मंदता नाश होती है और आत्ममननसे कुतर्क-रूप प्रतिबंधका नाश होता है और निदिध्यासनकरके विपर्यय दुरा-ग्रहरूप प्रतिबंधका नाश होता है इन साधनोंकरके प्रतिबंधके दूर हुयाँहुयाँ आत्माकी ब्रह्मरूपताको अपरोक्ष अनुभव करता है ॥ अब भावी प्रतिबंध श्रवणकर-अवश्य जन्मांतरके देनेवाला जो प्रारब्धकर्म है सो भावी प्रतिबन्धहै सो वामदेवको और जडभरतको होता भया है तिसका भोगसे विना नाश नहीं होता ताते तिसके नाशविषे कालका नियम नहीं जिसते वामदेवका एक जन्मकरके और जडभर-तका तीन जन्मों करके भावी प्रतिबंध नाश हुया है ॥

शंका-एक जन्मकरके वामदेवका और तीन जन्मोंकरके जडभर-तका भावी प्रतिबंध नाश होता भया यह कालका नियम तो तुमहीं आप करते हो ताते यह कैसे कहते हो जो भावी प्रतिबंधके नाशविषे कालका नियम नहीं ॥

उत्तर-गीताविषे यह कथन कियाहै कि, बहुत जन्मोंके बीतियाँ हुया भी प्रतिबंधके नाश हुयाँहुयाँ योगभ्रष्टको मोक्षकी प्राप्ति होती है योगभ्रष्टनाम तिसका है जो पुरुष ब्रह्मसाक्षात्कारके वास्ते विचार विषे प्रवृत्त भया है और ब्रह्मसाक्षात्कारपर्यंत विचारसे रहित होनेते ब्रह्मसाक्षात्कारको न प्राप्त हुयाँहुयाँ मृत्युको प्राप्त होगया है ॥

शंका-जेकर योगभ्रष्टको बहुत जन्मोंके बीत्या हुयाँहुयाँ मोक्षकी प्राप्ति होती है तो तिसने प्रथम किया जो तत्त्वविचार है सो निष्फल भया ॥

उत्तर-तत्त्वविचार निष्फल नहीं प्रतिबंधके नाश होनेते पीछे

अपरोक्षज्ञानरूप फल तिस विचारका है सो गीताविषे जैसे कथन किया है तैसे श्रवणकर योगभ्रष्ट पुरुष आत्मतत्त्व विचारके प्रभावते ऐसे उत्तमस्वर्गको प्राप्त होते हैं जिसस्वर्गको अश्वमेधआदि यज्ञोंको करणेवाले पुरुष प्राप्त होते हैं तिसस्वर्गविषे बहुतकाल सुखको अनुभवकरके अंतविषे मनुष्यजन्मको प्राप्त होता है स्वर्गते गीडिया जो योगभ्रष्ट है सो दोप्रकारका है एक विषयोंकी कामनावाला एक विरक्तचित्त विषयोंकी कामनावाला जो योगभ्रष्ट है सो माता पिताकरके शुद्ध और अतिधनवाले राजेआदिकोंके गृहविषे जन्मपावता है और जेकर योगभ्रष्ट विरक्तचित्त होता है तो ब्रह्मविचारके प्रतापसे आत्मज्ञानवान् और चित्तकी एकाग्रतावाले विरक्त मुनीश्वरोंके घरविषे जन्मको लेताहै यह जन्म अतिदुर्लभहै थोडे पुण्योंकरके नहीं प्राप्त होता किसते दुर्लभ है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-जिसकारणते तिस जन्मविषे पिछले जन्मविषे किया जो ब्रह्मअभ्यास तिनको शीघ्रही प्राप्त होजाता है केवल ब्रह्मअभ्यासहीको नहीं प्राप्त होता ॥ किंतु ब्रह्मअभ्यासविषे पिछले जन्मविषे पुरुषार्थ अधिक कर्ता है तिसकारणते यह जन्म दुर्लभ है पिछले जन्मके अभ्यासके पुरुषार्थते इसजन्मके अभ्यासक पुरुषार्थकी अधिकताविषे कारण श्रवणकर-योगभ्रष्टपुरुष आपने चित्तविषे यह विचारता है कि, जेकर मैं उन अभ्यास विषे प्रमाद करूंगा तब जन्मआदि दुःखोंकी प्राप्ति होवेगी इसते अभ्यासविषे अधिक पुरुषार्थ करता है और जिस योगभ्रष्टका अभ्यास चित्त हैं तिसको पूर्वअभ्यासने जोराजोरी ब्रह्मअभ्यासविषे जोर देता है तिसकी जेकर ब्रह्मअभ्यासविषे इच्छा न होवे तोभी जैसे नदीके प्रवाहविषे तरणेवाला जो पुरुष है तिसने रुडनेकी इच्छा नहीं भी करी पर नदीके वेगने तिसको जोराजोरी रोड्या है इस प्रकार अनेक जन्मोंविषे कर्‍या जो है ब्रह्मअभ्यासका प्रयत्न तिसकरके ब्रह्मसाक्षा-

त्कारको प्राप्त हुयाहुया तिस ब्रह्मसाक्षात्कारते मोक्षको प्राप्त होजाता है ॥ एक भावी प्रतिबंध और भी है तिसको श्रवणकर-जिसपुरुषको प्रथम ब्रह्मलोककी कामना है तिसकरके ब्रह्मलोककी प्राप्तिवास्ते उपासनाकीनी तिसउपासना करके चित्तकी एकाग्रता होनेते ब्रह्मलोक विषे वैराग्यहुया तो वह ब्रह्मलोककी दृढकामनाके निरोधको करके आत्माके विचारको करणे लगा ऐसा जो पुरुष है तिसको आत्म-साक्षात्कार नहीं होता ॥

शंका-जेकर ब्रह्मलोककी कामनावाले पुरुषको कामनाको त्यागकरके आत्मविचार किया हुया भी आत्मसाक्षात्कार नहीं होता तो तिसकी मोक्ष कभी भी न होनी चाहिये ॥

उत्तर-ब्रह्मलोकविषे उसको ज्ञानप्राप्त होता है कल्पके अंतविषे ब्रह्माजीके साथ वोह विदेहमुक्तिको प्राप्त होजाता है जिसते शास्त्रविषे यह कथन किया है वेदांतोंके विचारकरके यह ज्ञान जिन्होंको निश्चित भया है कि, जगत् मिथ्या है आत्मा ब्रह्मरूप है ऐसे जो पुरुष हैं त्यागते और योगते शुद्ध भया है अंतःकरण जिन्होंका ऐसे जो संन्यासी हैं सो ब्रह्माजीके विदेहहोनेसमयविषे ब्रह्मलोकविषे ब्रह्मसाक्षात्कारको प्राप्त हुएहुए संपूर्णही विदेहमुक्तिको प्राप्त होजाते हैं और स्मृति भी कहती है जो पुरुष वेदांतोंके विचार और त्याग और योगके बलसे ब्रह्मलोकविषे प्राप्त भयेहैं सो संपूर्णपुरुष ब्रह्मलोकविषे ब्रह्मसाक्षात्कार-को प्राप्त हुएहुए तिसकरके कृतकृत्य हुएहुए महाप्रलयके प्राप्त हुयाँ-हुयाँ ब्रह्माजीके विदेह मुक्तिके समयविषे ब्रह्माजीके साथही विदेह-मुक्तिको प्राप्त होजाते हैं ॥ तात्पर्य यह-ब्रह्मलोककी वांछाही तिनको ब्रह्मज्ञानाविषे प्रतिबंधक है और ब्रह्मलोकके भोग देनेवाला प्रारब्धकर्म प्रतिबंधक है सो वांछा और प्रारब्धकर्म दोनों ब्रह्मलोकके प्राप्त हुयाँहुयाँ निवृत्त होजाते हैं ॥ ताते ब्रह्मलोकविषे

तिसको पिछले विचारते ब्रह्माजीके उपदेशते भावानुसार ब्रह्मसाक्षात्कार होता है ब्रह्मसाक्षात्कारको प्राप्त हुयाहुया जीवन्मुक्तिको ब्रह्मलोकविषे भोक्ता है और अतमें विदेहमुक्तिको प्राप्त होजाता है इतने करके यह कथन किया ॥ विचारके किया हुयाँभी प्रतिबंधके प्रभावते ब्रह्मसाक्षात्कार इसजन्मविषे नहीं होता और आगे यह श्रवणकर–तीव्रपापोंवाले पुरुषोंको ब्रह्मविचारभी दुर्लभ है अर्थ यह जो ब्रह्मविचारभी तिनको नहीं प्राप्त होता इसी अर्थको कठवल्ली उपानिषद्विषे कथन किया है अनंतपापोंके प्रभावकरके श्रवणरूप विचार वास्तेभी परमात्माका लाभ नहीं होता ॥

प्रश्न–विचारविषे जिसका सामर्थ्य नहीं और मोक्षकी इच्छा है तिसको क्या कर्तव्य है ॥

उत्तर–इसका उत्तर तो पीछे हमने कथन किया है विचारविषे असमथ जो पुरुष है सो गुरुते श्रवण करके निर्गुणब्रह्मकी उपासना करे तिसके उत्तरको विस्तारकरके अब कथन करते हैं ॥ विचारकी न प्राप्तिविषे कारण दो हैं एक बुद्धिकी अत्यंतमंदता और दूसरा सामग्रीका अभाव सो सामग्रीका अभाव यह है ब्रह्मतत्त्वके उपदेश करणेवाले गुरुकी प्राप्ति न होनी और अध्यात्मशास्त्र प्राप्त न होना और गुरुशास्त्रके प्राप्त हुयाँहुयाँभी शरीरविषे शिष्यके अथवा गुरुके रोग लगजाना अथवा गुरुशिष्यका विवाद होजाना जैसे याज्ञवल्क्य और वैशंपायनका अथवा शिष्यकी गुरुविषे दोष दृष्टि होजानी जैसे इंद्रकी दध्यंगाथर्वणऋषिविषे अथवा गुरुकी शिष्यविषे अनधिकारी बुद्धि होजानी अथवा देशविषे राजआदिकोंका उपद्रव होनेते अथवा शिष्यको उपदेश श्रवणका काल न मिलना अथवा गुरुको उपदेश करणेका काल न मिलना तिस सामग्रीके अभावते जो विचारको नहीं प्राप्त होसक्ता सो पुरुष निर्गुणब्रह्मकी उपासना करे ॥

शंका-निर्गुणब्रह्मकी उपसना नहीं बनती जिसते निर्गुण ब्रह्म-गुणोंते रहित है ॥

उत्तर-उपासनानाम तो चित्तवृत्तियोंका नदीधारावत् प्रवाहाकारताका है सो चित्तवृत्तियोंकी नदीधारावत् प्रवाहाकारता जैसे सगुण-ब्रह्ममें होती है तैसे निर्गुणब्रह्मविषे भी होसक्ती है ॥

शंका-निर्गुणब्रह्मकी उपासना नहीं बनसक्ती काहेते जो चित्तके विषे उपासना होती है उसको होती है और ब्रह्म तो मनवाणीका विषे नहीं ॥

उत्तर-यह दोष तो ज्ञानपक्षविषे भी समान है जिसते ज्ञान तिसी-वस्तुका होता है जो मन वाणीकेविषे है और ब्रह्म तो मन वाणीके विषे नहीं ताते ब्रह्मका ज्ञानभी नहीं होता ॥

शंका-ब्रह्मका ज्ञान तो बनता है जिसते ब्रह्म मनवाणीकेविषे नहीं यह जाननेको समर्थ होता है ॥

उत्तर-ब्रह्म मनवाणीकेविषे नहीं ऐसी उपासना करणेको भी समर्थ होता है ॥

शंका-ब्रह्म जेकर उपासनाके योग्य होवेगा तो तिसको सगुणता प्राप्त होवेगी ॥

उत्तर-ब्रह्म जेकर जाननेके योग्य होवेगा तो तिसको सगुणता प्राप्त होवेगी ॥

शंका-जहत् अजहत् लक्षणाले अंगीकार करणेते ब्रह्मको ज्ञान करके ज्ञेयताके हुयाँहुयाँ भी सगुणताकी प्राप्ति नहीं होती ॥

उत्तर-लक्षणाकरके जो लक्ष्य है तिसकी उपासना भी बनती है ॥

शंका-ब्रह्मको उपासना योग्यताका श्रुतिने निषेध कऱ्या है ॥

जो मनकरके मनन नहीं होता और जिसकरके मन जानीता है तिसको ब्रह्मज्ञान और जिसकी जीव उपासना करते हैं सो ब्रह्म नहीं ॥ इसप्रकार केनउपनिषद्की श्रुति उपासनायोग वस्तुको ब्रह्मरूपताका निषेध करती है इसते ब्रह्म उपासनाके योग नहीं ॥

उत्तर-जैसे केनउपनिषद्की श्रुतिने उपासनायोगको ब्रह्मरूपताका निषेध कर्या है तैसे ज्ञानयोगको भी ब्रह्मरूपताका निषेध केन उपानिषद्की श्रुतिने कर्या है ज्ञानका जो विषयहै तिसते ब्रह्मभिन्न है और अज्ञानका जो विषय है तिसतेभी ब्रह्म भिन्न है ॥

शंका-ज्ञान और अज्ञानकेविषे जो भिन्नता है सो ब्रह्म है ऐसे जेकर श्रुति कथन करती है तो तैसेही ब्रह्म जानने योग्य है ताते ब्रह्मज्ञान सिद्ध भया ॥

उत्तर-ऐसे ब्रह्मको जानकरक उपासना भी करणी बनती है ॥ अर्थ-यह ब्रह्मज्ञान और अज्ञान उपासनाकेविषे भिन्न है ऐसे जान करके नदकि प्रवाहकी न्याई ब्रह्माकार चित्तवृत्तिका प्रवाह करणा इसकानाम उपासना है सो जैसे श्रुतिने कथन किया है तैसे करसक्तेहैं ॥

शंका-ज्ञानविषयता ब्रह्मको वास्तव नहीं अज्ञानकी निवृत्तिवास्ते ज्ञानवानोंने कल्पनाकरके जिज्ञासुओंको कही है ॥

उत्तर-उपासनाविषयता भी ब्रह्मको वास्तव नहीं चित्तकी एकाग्रताद्वारा ज्ञानकी उत्पत्ति करके अज्ञानके नाशवास्ते ब्रह्मवेत्ताओंने कल्पनाकरके जिज्ञासुओंको कही है ॥

शंका-ज्ञानपक्षविषे वृत्तिको ब्रह्माकारता बन सक्ती है और उपासनापक्षविषे नहीं बनती ॥

उत्तर-शब्दप्रभावते वृत्तिको ब्रह्माकारता ज्ञान और उपासना इन

दोनोंपक्षाविषे बनसक्ती है और जेकर युक्तिसे रहित उपासना पक्ष विषे उलाँभा तूं देएगा सो उलाँभा ज्ञानपक्षाविषे भी समान है ॥ तिस उलाँभेका यह स्वरूप है कि तेरी उपासनाविषे भक्ति है जिसते उपासनाकी तू ऐसी खिंचकरता है ॥ दूसरे उलाँभेका स्वरूप यह कि तेरा उपासनाविषे वैर है जिसते तू उपासनाका निषेध करता है सो कहो ॥

शंका-निर्गुणउपासनाविषे प्रमाण कोई नहीं इसते मैं निर्गुणउपासनाका निषेध करताहूं और मेरा उपासनाकेसाथ वैर कोई नहीं ॥

उत्तर-निर्गुणउपासनाविषे प्रमाणका अभाव नहीं जिसते बहुतसी श्रुतियोंविषे निर्गुणउपासना देख्या है नृसिंहतापनीउपनिषद्के उत्तरखण्डविषे देवताओंने ब्रह्माजीके आगे प्रश्न किया है हे भगवन्! यह जो सूक्ष्मआत्मा ओंकारकरके जाननेयोग्य है तिसको उपदेश करो ॥ तब ब्रह्माजीने अनेकप्रकारकरके निर्गुणब्रह्मकी उपासनाका उपदेश किया और प्रश्नउपनिषदके पाँचवें प्रश्नाविषे शैवनामसुनीश्वरने पिप्पलादगुरुके आगे प्रश्न किया कि, जो पुरुष मरणपर्यंत ओंकारकी उपासना करता है तिसकरके किसफलको प्राप्तहोता है ? तब तिसके गुरु पिप्पलादमुनीश्वर कहते भये हे सत्यकाम ! जो पुरुष ओंकारको सगुण ब्रह्मरूप जानके उपासना करता है तिसको सगुणब्रह्मकी प्राप्ति होती है और जो ओंकारविषे निर्गुणब्रह्मकी उपासना करता है सो निर्गुणब्रह्मको प्राप्त होता है यह जो तीनमात्रावाला ओंकार है तिसकरके परमपुरुष जो निर्गुण परमात्मा है तिसके ध्यानको करता है सो पुरुष ब्रह्मलोकविषे प्राप्त होकरके निर्गुणपरमात्माके अनुभवको करताहै और कठवल्लीउपनिषद्विषे यमने नचिकेताके ताईं कथन किया है संपूर्ण वेद जिसवस्तुको कथन करते हैं सो वस्तु मैं तेरे ताईं कथन करूंगा ऐसा आरंभकरके पीछे यह कथन किया ओंकाररूप अक्षर जो है सो ब्रह्म है ओंकार आश्रय करणा जिज्ञासुको श्रेष्ठ है।

तात्पर्य यह ओंकारको निर्गुणब्रह्म रूप जानके उपासनाकरणेते निर्गुणब्रह्मका साक्षात्कार होता है और मांडूक्यउपनिषद्विषे 'ॐ'यह अक्षर सर्वरूप है इत्यादि वाक्योंकरके तिनोंसे रहित तुरीयावस्थारूप निर्गुणब्रह्मकी उपासना कथन की है और तैत्तिरीय उपनिषद् और मुंडक उपनिषद् आदिकोंविषे सर्वत्र निर्गुण उपासना कथन करी है ॥

प्रश्न-निर्गुणउपासना किसप्रकार करी है ? ॥

उत्तर-निर्गुणउपासनाके करणेका प्रकार पंचीकरणविषे कथन किया है ॥

शंका-निर्गुणउपासना ज्ञानका साधन है मोक्षका साधन नहीं ॥

उत्तर-ज्ञानका साधन निर्गुणउपासना होवो इसविषे हमारेको कुछ अनिष्ट नहीं ॥

शंका-सगुणउपासनाही संपूर्ण पुरुषोंने करी है और निर्गुणउपासना तो किसीने नहीं करी ताते हम जानते हैं कि, निर्गुण उपासना नहीं है ॥

उत्तर-अनेक प्रमाणोंकरके सिद्ध जो निर्गुणउपासना है तिसका जेकरके मूर्ख नहीं अनुष्ठान करते तो भी उत्तम जिज्ञासुओंने तिसका त्याग नहीं करचा ताते तिस निर्गुणउपासनाका निषेध नहीं बनता जिसते निर्गुणउपासनाका न करणा पुरुषका अपराध है इसकरके निर्गुणउपासनाका अभाव नहीं सिद्धहोता ॥ सिद्धउपासना जो प्रमाण है तिसका मूर्खोंने जेकर अनुष्ठान नहीं करचा तो भी तिसका बुद्धिमानोंने त्याग नहीं करचा ॥ जैसे सगुणउपासना जो बहुतकाल पीछे फलके देनेवाली तिसको त्यागकरके मूर्ख पुरुष शताब्दी फलके देनेवाले वशीकार करणेवाले मंत्रोंका जपकरते हैं तो भी विवेकियोंने

तिनोंको देखकरके सगुणउपासनाका त्याग नहीं करचा और जैसे नेमकी है अपेक्षा जिनोंविषे ऐसे जो वशीकारआदि मंत्र हैं तिनको त्याग करके नेमकी अपेक्षा नहीं जिसविषे ऐसे जो खेतीआदि व्यापार हैं तिनोंविषे अतिमूर्ख प्रवृत्त होते हैं ॥ पर तिन मंत्रोंके अनुष्ठानका सबने त्याग नहीं करचा ॥ तैसे संसारके सुखोंके कामनावालोंने निर्गुणउपासनाका त्याग करचा है पर जिज्ञासुओंने निर्गुणउपासनाका त्याग नहीं करचा मूर्खोंका निर्णय इहाँही स्थित रहो ॥ अब निर्गुण उपासना कथन करते हैं तिसको श्रवणकर–निर्गुण उपासना जिसते संपूर्ण उपनिषदोंविषे एक है तिसते संपूर्ण उपनिषदोंविषे कथन किये जो हैं निर्गुण ब्रह्मके गुण तिन संपूर्णगुणोंको इकट्ठा करके एकस्थान विषे निर्गुणब्रह्मकी उपासना करणी सो गुण दो प्रकारकरके हैं एक विधिरूप और एक निषेधरूप तिनमें जो विधिरूप गुण हैं तिनोंके एकस्थानविषे इकट्ठा करणा तिन संपूर्णगुणों सहित ब्रह्मकी उपासना करणी यह वार्ता व्यासजीने आनंदते आदिलेके ब्रह्मके गुण हैं इस सूत्रविषे कथन की है ॥ विधिरूप गुण कौन है ऐसा पूछे तो श्रवण-कर–ब्रह्म आनंदरूप है और ब्रह्म चैतन्यरूप है और आनंदरूप है और ब्रह्म नित्य शुद्ध बुद्ध सत्य मुक्त निरंजन विभु एक आनंदरूप है और सर्वते परे है ॥ और एकरस आत्मा है इसते आदिलेकरके विधिरूप गुण हैं ॥ तात्पर्य यह–जिस उपनिषद्विषे ब्रह्मको आनंदरूप कथन किया है और चैतन्य रूप नहीं कथन किया तिस उपनिषद्के पढनेवाले जिज्ञासुओंने केवल आनंदरूप जानकरके ब्रह्मकी उपासना नहीं करणी किंतु दूसरी उपनिषद्विषे जो चैतन्यरूप कथन किया है तिस चैतन्यरूप गुणको ग्रहण करो इसीतरह और उपनिदोंविषे जो गुणकथन किये हैं नित्य शुद्धबुद्ध आदिरूप तिनको भी ग्रहण करके सर्व गुणोंवाले ब्रह्मकी उपासना करणी

और जो निषेधरूप गुणहै तिस तिस उपनिषदोंविषे श्रवण कीने जैसे-बृहदारण्यकविषे यह सुन्या है ब्रह्म स्थूल नहीं अणु नहीं मध्यम नहीं लंबा और मुंडकविषे यह सुन्या है ब्रह्म दृश्य नहीं हार्थो-करके ग्रहण करने योग्य नहीं और कठवल्लीविषे यह सुन्या है ब्रह्म शब्द नहीं, स्पर्श नहीं, रूप नहीं, रस नहीं, गन्ध नहीं, तिन संपूर्ण गुणोंको एकस्थान विषे इकट्ठा करके ब्रह्मकी उपासना करणी तात्पर्य यह जितने गुणोंका जिस उपनिषद्विषे निषेध कऱ्या है तितने गुणोंते रहितही ब्रह्मकी उपासना नहीं करणी किंतु संपूर्ण उपनिषदोंविषे जितने गुणोंका निषेध कऱ्या है तिन सबगुणोंसे रहित ब्रह्मकी उपासना करणी यह व्यासजीने कथन किया है कि परमात्माविषे संपूर्ण निषेध गुणोंको इकट्ठा करके उपासना करणी जिसते द्वैतप्रपंचके निषेधोंकरके ब्रह्मका उपदेश सब उपनिषदोंविषे समान है और शिष्यको जनावने योग्य जो ब्रह्म है तिसकी सब उपनिषदोंविषे एक रूपता करके इस सूत्रविषे विद्यमानता है ॥

शंका-निर्गुणब्रह्मविद्याविषे गुणोंका इकट्ठाकरणा नहीं बनता गुणोंके एकट्ठा कियाहुयाँ विद्याकी निर्गुणरूपता नहीं रहती ॥

उत्तर-यह शंका तो तैंने व्यासजीके आगे कीनी चाहिये मेरे आगे न कीनी चाहिये जिसते मैं व्यासजीके कथन किये हुयेको कथन करताहूं इतने कहनेते सूक्ष्महाँसीको करताहूं आशंकाकरणवालेकी मूर्खताको सिद्धांती पूर्वपक्षी जनावता है सूक्ष्महाँसीद्वारा मूर्खताको सिद्धांतीने जनाया जो है तिसके निवारणको कथन करता है इन उपासनाको निर्गुणरूपता बनती है जिसते इन उपासनाविषे स्वर्णकी है दाढी जिसकी और स्वर्णके हैं केश जिसके ऐसी सूर्यआदिकोंकी मूर्ति कथन नहीं कीनी तब सिद्धांती कथन करता भया इस प्रकार यह उपासना जेकर निर्गुण है तो संतोषकर शंका मत कर ॥

शंका-आनंदआदिरूप गुणोंका और स्थूलताके अभाव आदि गुणोंका उपास्यवस्तुके अंदर प्रवेश नहीं होता इसते आनंद आदि-गुणोंयुक्त ब्रह्मकी उपासना नहीं बनती ॥

उत्तर-आनंद आदिगुणोंका तत्त्वके अंदर प्रवेशके न हुयाँहुयाँ भी आनंद आदिगुण तत्त्वके लखावणेवाले हैं ताते तिनगुणोंकरके लख्या जो ब्रह्मतत्त्व है तिसकी उपासना करणी योग्य है सो उपासना जिसप्रकार करणी योग्य है सो श्रवणकर आनंदआदि गुणोंकरके और स्थूलताके अभाव आदिगुणोंकरके जो अखंड एकरस आत्मा मैं हूं ऐसे जिज्ञासु उपासना करते हैं ॥

शंका-ऐसे हुयाँहुयाँ ज्ञान और उपासनाका भेद कैसे है ? ॥

उत्तर-उपासना कर्ताके अधीन होती है और ज्ञान वस्तुके अधीन होता है इसते उपासना और ज्ञानका भेद है और भी उपासना और ज्ञानके भेदके कारणोंको श्रवणकर ॥ आत्मतत्त्वके विचारते ज्ञानकी उत्पत्ति होती है और उत्पन्न हुएहुए ज्ञानको बोध मत होवे यह है रूप जिसका ऐसी जो अनिच्छा सो दूर नहीं करसक्ती और ज्ञान आपनी उत्पत्तिमात्रते संसारकी सत्यताको नाश करदेता है और ज्ञानकी उत्पत्तिमात्र करके पुरुष कृतकृत्य हुयाहुया निरतिशय सुखको प्राप्त होता है और जीवन्मुक्तिको प्राप्त होकरके प्रारब्धकर्मके नाशपर्यंत शरीरको धारता है प्रारब्धकर्मके नाश हुयाँहुयाँ फिर शरी-रको ज्ञानवान् नहीं धारता किंतु विदेहमुक्त होजाता है और उपासना श्रद्धावान् पुरुषको यथार्थ वक्ता गुरुके उपदेशके ऊपर विश्वासको करके विचारते विनाही उत्पन्न होती है सो उपासनाका स्वरूप यह है विजातीय प्रत्ययोंका तिरस्कार करके सजातीय प्रत्ययोंका प्रवाह करणा अर्थ-यह उपास्य वस्तुका सदा चिंतन करणा और

घटपटआदिक पदार्थोंका चिंतन न करणा कितनाकालपर्यंत उपास्यवस्तुके स्वरूपको चिंतन करणा ऐसा पूछे तो श्रवणकर-जितना काल पर्यंत उपास्यवस्तुके स्वरूपका अभिमान उपासना करणेवाले पुरुषको न प्राप्त होवे तितना कालपर्यंत उपास्यवस्तुके स्वरूपका चिंतन करणा और पीछेभी मरणकालपर्यंत तैसेही धारणा करणी उपासना करणेवाले पुरुषको उपास्यवस्तुके स्वरूपका अभिमान प्राप्त होता है ॥ यह वार्ता छांदोग्यउपनिषद्विषे कही है सो कथा श्रवणकर-एक ब्रह्मचारी संवर्गता गुणयुक्त प्राणकी उपासना करता भया संवर्गका अर्थ यह है सूर्य, चंद्रमा, अग्नि, जल इन चारोंको समष्टि प्राणग्रास करलेता है और सुषुप्तिकालविषे वाणी, नेत्र, श्रोत्र, मन इन चारोंको व्यष्टिप्राण ग्रास करलेता है ताते प्राण संवर्ग है सो ब्रह्मचारी भिक्षाको जाता भया और अभिप्रतारीनाम राजाके आगे यह वाक्य कथन करता भया अभिप्रतारीनाम राजा और तिसका पुरोहित दोनों भोजनकरणे लगेथे तिस ब्रह्मचारीको तिनोंने भिक्षा न दी तब ब्रह्मचारी कहता भया हे अभिप्रतारिन्! हे कापेय! जो एक चवाँ महात्माको ग्रास करलेता है और संपूर्ण भुवनकी जो रक्षा करता है तिसको मनुष्य नहीं जानते बहुतप्रकार करके वसते हुएहुएको जिसकेवास्ते यह अन्न है तिसको अन्न तुमने नहीं दिया इसमंत्रकरके ब्रह्मचारी आपनी संवर्गरूपताको जो चित्तविषे धारी हुई थी प्रकट करता भया और यह जो पीछे कथन किया मरणपर्यंत उपासनाको धारण करे तिसविषे कारणको श्रवणकर जिसकारणते उपासना उपासनाकरणेवाले पुरुषकी इच्छाकरके करणेको और करणेको और न प्रकारकरके करणेको शक्य है तिसकारणते पुरुषकी इच्छाके अधीन होनेते मरणपर्यंत उपासनाको करे॥ इसप्रकार सदा उपासनाके करणेवालेको क्या फल होता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-सदा उपासनाके कर-

णेते उपासनाकी दृढता होती है तिसते जाग्रतकी न्याईं स्वप्नेविषेभी उपासनाकी प्राप्ति होती है जैसे प्रमादसे रहित होके वेदके पढनेवाला पुरुष दृढवासनाकरके स्वप्नविषे भी वेदको पढता है और जैसे सदा गायत्री आदिकोंके जपकरणेवाला पुरुष दृढवासनाकरके स्वप्नेविषे भी गायत्रीआदिकोंके जपको करता है स्वप्नआदिकोंविषे ध्यानकी प्राप्ति विषे कारण श्रवणकर उपासकपुरुष उपासनाका विरोधी चित्तवृत्तियोंके त्यागको करके निरंतर उपास्य वस्तुकी भावनाको करता है तिसकारणते उपासनाकी भावना दृढ होजाती है तिसते स्वप्नविषे भी तिसको उपासनाकी प्राप्ति होती है ॥

शंका-प्रारब्धकर्मते विषयोंके अनुभव करणेवाला उपासक जो पुरुष है तिसकी निरंतरताकरके उपासना सिद्ध नहीं होती ॥

उत्तर--प्रीतिके अधिक हुयाँहुयाँ विषयोंके अनुभव समयविषे भी उपासना दूर नहीं होती जैसे दुराचारिणी स्त्रीकी घरके काम कियाँ हुयाँभी यारविच्चों चित्तकीवृत्ति दूर नहीं होती ॥

शंका-दुराचारिणीका यारके चिंतन करणेविषे गृहके कार्योंका अभाव होजायगा ॥

उत्तर-यारके संगके सुखको अनुभव करणेवाली स्त्रीके घरके काम निवृत्त नहीं होजाते किंतु स्वाभाविक परे होते हैं पतिव्रतास्त्री भर्ताकी सेवाविषे तत्पर जैसे घरके कामोंको बनायबनायकरके सुंदर करती है तैसे कार्य दुराचारिणीसे नहीं होते अर्थ-यह जैसे रसोईके समय किसी चीजमें लून अधिक पड जाता है किसीमें थोडा पडजाता है और किसीमें जल अधिक पडजाता है कोई चीज कच्ची रहजाती है कोई पक्की होती है ऐसे उपासनाविषे लगा हुआ जो पुरुषहै सो संसारसुखोंविषे कैसा रहित है अर्थ यह--जो संसार सुखविषे तिसकी

प्रीति नहीं रहती इसते कोई संसारका काम सौर जाता है कोई बिगर जाता और तत्त्ववेत्ता तो संसारके व्यवहारोंको अच्छी तरह करता है जिसते संसारको व्यवहारोंके ज्ञानका विरोध नहीं. ज्ञानसे क्या जनावता है संसार मिथ्या है और आत्मा चैतन्यरूप है ताते ज्ञानका संसारके व्यवहारोंके साथ विरोध नहीं व्यवहार संसारकी सत्यताको और आत्माकी जडताको नहीं चाहता किंतु आपने साधनोंको चाहता है ताते व्यवहारका तत्त्वज्ञानके साथ विरोध नहीं व्यवहारके साधन कौन है ऐसा पूछे तो श्रवणकर—मन, इंद्रियां, शरीर, गृह, क्षेत्रादि पदार्थ व्यवहारका साधन है तिन तत्त्वज्ञानी नाश नहीं करता इसते ज्ञानिक व्यवहार यथावत् परा होता है ॥

शंका—ज्ञानी यद्यपि विषयोंको नाश नहीं करता पर चित्तके नाशको करता है इस ज्ञानीका व्यवहार यथावत् नहीं होता ॥

उत्तर—जो चित्तके नाशको करता है सो जिज्ञासु है ज्ञानी नहीं॥

शंका—तत्त्वज्ञानीने चित्तका नाश नहीं करया यह कहाँ तुमने देख्या है ॥

उत्तर—घटके तत्त्वजाननेवाले पुरुषने चित्तका नाशरूप चित्तकी एकाग्रताको नहीं करया यह हमने देख्या है ॥

शंका—घटस्थूल होनेते अति प्रकट है इसते तिसके जाननेविषे चित्तकी एकाग्रता नहीं चाहती और ब्रह्म तो अतिसूक्ष्म है इसते तिसके ज्ञानविषे चित्तकी एकाग्रता चाहीती है ॥

उत्तर—ब्रह्मकी स्वप्रकाश आत्मरूपताकरके घटकी अतिप्रकटता है जिसते घटके जाननेविषे सूर्यनेत्र आदिक चाहते हैं सूर्यनेत्र आदिकोंसे विना घट नहीं दृष्टि आवता और आत्माके जाननेविषे

किसीकी अपेक्षा नहीं. ताते आत्मज्ञानी चित्तके निरोधको नहीं करता एकवार वृत्तिके उदय होनेकरके घट जेकर भासता है तो स्वप्रकाश आत्मा एकवार वृत्तिके उदय होनेकरके क्या घटकी न्याई प्रतीत नहीं होता किंतु प्रतीत होताही है ॥

शंका-ब्रह्मकी स्वप्रकाशताके हुयाँहुयाँभी ब्रह्माकार बुद्धिकी वृत्तिको तत्त्वज्ञान होनेते और बुद्धिकी वृत्तिको क्षणक्षणविषे नाशवाला होनेते वारंवार बुद्धिकी वृत्ति ब्रह्मविषे एकाग्र किया चाहती है ॥

उत्तर-यह तो शंका घटादिकों विषेभी तुल्य है जिसते घटाकार बुद्धिकी वृत्तिका नाम घटज्ञान है सो बुद्धिकी वृत्ति क्षणक्षणविषे नाश होजाती है ताते घटके जाननेवास्ते घटविषे बुद्धिकी वृत्ति एकाग्र किया चाहिये सो तो बात अयुक्त है जिसते कोईभी पुरुष घटके जाननेवास्ते घटविषे बुद्धिकी वृत्तिको एकाग्र नहीं करता तैसे ब्रह्मके ब्रह्मविषे बुद्धिकी वृत्तिको एकाग्र नहीं करता ॥

शंका-घटादिकोंके ज्ञानको क्षणैक हुयाँहुयाँ भी एकवार निश्चय किया है जिसघटका तिस घटका व्यवहार सदा कारणेको समर्थ होता है तिसकारणते घटविषे चित्तकी एकाग्रता नहीं कीनी चाहिये ॥

उत्तर-यह तो वार्ता आत्माविषे भी तुल्य है जैसे एकवार देख्या जो घट तिसविषे चित्तकी एकाग्रताके अभाव हुयाँहुयाँ भी जब पुरुषकी इच्छा होवे तब तिसविषे जलका स्थापन करणा और तिसको और स्थानविषे लेजाना इसते आदिलेकरके पुरुष व्यवहारकरणेको समर्थ होता है तैसे एकवार आत्माके निश्चय कियाँहुयाँ जब ज्ञानीकी इच्छा होती है तब उपदेश करणेको मनन करणेको ध्यान करणेको समर्थ होता है उपदेश आदिकोंके करणेविषे चित्तकी एकाग्रताकी लोर नहीं।

शंका--तत्त्ववेत्ताभी उपासककी न्याई आत्माके ध्यानको जब करता है तब जगत्के पदार्थोंके चिंतनसे रहित देख्या है।

उत्तर-तत्त्ववेत्ताका जगत्के पदार्थोंके चिंतनका अभाव ध्यानकरके होता है ज्ञानकरके नहीं होता ॥

शंका-तत्त्ववेत्ताभी मोक्षकी सिद्धिवास्ते ब्रह्मध्यान किया चाहता है ॥

उत्तर-मोक्षकी सिद्धिवास्ते तत्त्ववेत्ताको ध्यान नहीं किया चाहता जिसते ज्ञानसे मोक्षकी प्राप्ति होती है ध्यानसे नहीं होती शास्त्रविषे ढंडोरारूप यह कथन है कि, ज्ञानतेही विदेहकैवल्यकी प्राप्ति होती है और ज्ञानकरकेही जीवन्मुक्तिकी प्राप्ति होती है आत्माको ज्ञानकरके मृत्युको उल्लंघ जाता है ज्ञानसे भिन्न और मोक्षका कोई मार्ग नहीं स्वप्रकाश आत्माको जानकरके संपूर्ण बंधनोंते रहित होजाता है और ध्यान तत्त्ववेत्ताकी इच्छा होवे तो करे न इच्छा होवे तो न करे॥

शंका-तत्त्ववेत्ताको ध्यानकी कर्तव्यता जेकर न मानोंगे तो तत्त्ववेत्ताकी सदा बहिर्मुख प्रवृत्ति होवेगी ॥

उत्तर-तत्त्ववेत्ताकी बहिर्मुख प्रवृत्ति ज्ञानको अथवा मोक्षको नाश नहीं करता इसते बहिर्मुख प्रवृत्ति होती है तो होवे तिसकरके कुछ तत्त्ववेत्ताकी हानि नहीं ॥

शंका-तत्त्ववेत्ताकी जेकर बहिर्मुखप्रवृत्ति मानोंगे तो अतिप्रसंग आवेगा ॥

उत्तर-तत्त्ववेत्ताविषे कुछ प्रसंग नहीं कथन किया जाता तो अतिप्रसंग तिसको कैसे आवेगा ॥

शंका-प्रसगंनाम विधिनिषेध शास्त्रका है ॥

उत्तर-विधिनिषेधशास्त्ररूप प्रसंग तो अज्ञानी ऊपर है तत्त्ववेत्ताके ऊपर नहीं ॥ वर्ण और आश्रम और वय और अवस्था इन चारोंका अभिमान जिसको है तिसीके ऊपर विधिनिषेध शास्त्र है जैसे मालके

ऊपर जकात होती है और तत्त्ववेत्ताको वर्णआश्रम आदिकोंकी अभिमानता है इसते तिसपर विधिनिषेधशास्त्र नहीं जैसे मालते रहित जो पुरुष है तिसके ऊपर जकात नहीं ॥

शंका-जो देहधारी है तिसको वर्णआश्रमका अभिमान होता है तत्त्ववेत्ताभी देहधारी है तिसते तिसकोभी वर्णआश्रमका अभिमान है ॥

उत्तर तत्त्ववेत्ताको वर्णआश्रम आदिकोंका अभिमान नहीं जिसते तत्त्ववेत्ताका यह निश्चय है वर्णआदिक देहविषे मायाकरके कल्पित होते हैं और चैतन्यरूप आत्मा जो मैं हूं उसविषे वर्णआश्रम आदिक कोई नहीं ॥

शंका-ब्रह्मवेत्ताका निश्चय रहो परंतु शास्त्र तो तिसको कर्तव्य कथन करता है ॥

उत्तर-शास्त्रभी तत्त्ववेत्ताको कर्तव्यके अभावको कहता है सो श्रवणकर हृदयकरके त्याग दिया है संपूर्ण आस्था जिसने अर्थ यह अहंता ममता राग द्वेष ईर्षा दंभते आदिलेके जगत्को मिथ्या जानके त्याग दिये हैं जिसने और संशयविपर्यसे रहित दृढपरोक्षज्ञान है जिसको ऐसा जो पुरुष है सो समाधि और कर्म इनोंको भावसे करो वा न करो सो पुरुष मुक्तरूप है और भी शास्त्र श्रवणकर कर्मोंके त्यागसाथ और कर्मोंसाथ और समाधिसाथ और जपसाथ जिसका मन वासनासे रहित है तिसपुरुषका प्रयोजन कुछ नहीं ॥

शंका-ज्ञानवान् भी वासनाके दूर करणेवास्ते ध्यान कीना चाहता है ॥

उत्तर-दृढ अपरोक्षज्ञानवान्के मनविषे वासना नहीं रहती जिसते ज्ञानवान्ने यह भलीप्रकार निर्णय करके संशय विपर्ययसे रहित

जान्या है आत्मा असंग है और आत्माते भिन्न संपूर्ण दृश्य बाजीगरकी न्याईं मिथ्या है ऐसे प्रसंगविषे क्या होवे ऐसा पूछे तो श्रवणकर यह प्रसंग विषे तत्त्ववेत्ताको प्रसंग नहीं है जिसते इसते तत्त्ववेत्ता विषेअतिप्रसंग कैसे होवे किसको अतिप्रसंग होता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर जिसको प्रसंग होता है तिसविषे अतिप्रसंगकी शंका बनती है जैसे. विधिनिषेधते रहित होनेते बालकको अतिप्रसंग नहीं होता तैसे तत्त्ववेत्ताको भी विधिनिषेधते रहित होनेते अतिप्रसंग नहीं होता ॥

शंका—बालकको विधिनिषेधते रहित होनेविषे कारण अज्ञान है और ज्ञानवान्‌को तो अज्ञान नष्ट होगया है ताते तिसको विधिनिषेधका अधिकार है ॥

उत्तर—ज्ञानवान्‌को अज्ञानसे रहित हुयाँहुयाँ भी संपूर्ण जानने योग्य वस्तु तिसने जानलई है तिसते तिसको विधिनिषेध शास्त्रका अधिकार नहीं किसको विधिनिषेध शास्त्रका अधिकार नहीं और किसको है ऐसा पूछे तो श्रवण कर—जो पुरुष कुछ जानता है कुछ नहीं जानता तिसको विधिनिषेधशास्त्रका अधिकार है बालकको और ज्ञानीको विधिनिषेध शास्त्रका अधिकार नहीं ॥

शंका—जिसको वर और शाप देनेका सामर्थ्य है सो व्यासआदिकोंकी न्याईं ज्ञानी है और जिसको वर और शाप देनेका सामर्थ्य नहीं सो ज्ञानी नहीं ॥

उत्तर—वर और शापदेनेका सामर्थ्य ज्ञानका फल नहीं किंतु तपका फल है ॥

शंका—व्यासआदिक ज्ञानियोंविषे वर और शापका सामर्थ्य देख्या है इसते यह कैसे कहतेहो वर और शाप ज्ञानका फल नहीं ॥

उत्तर—व्यासआदिकोंविषे वर और शापका सामर्थ्य ज्ञानका फल नहीं किंतु तपका फल है ॥

शंका-तपसे रहितको तो ज्ञान नहीं होता, जिसते श्रुति कहती है तपकरके ब्रह्मके जाननेकी इच्छाकर ॥

उत्तर-जिस तपकरके ज्ञानकी प्राप्ति होती है सो तप भिन्न है और वरशापका कारण तप भिन्न है ॥

शंका-जेकर ज्ञानके कारण तपते वर शापका कारण तप भिन्न है तो व्यासआदिकोंविषे वरशापका सामर्थ्य और ज्ञान दोनों क्यों देखते हैं ॥

उत्तर-दोनों प्रकारका तप व्यासआदिकोंने किया है इसते व्यास आदिकोंविषे ज्ञानभी देख्या है और वरशापका सामर्थ्यभी देख्या है और जिसपुरुषने एक तप किया है तिसको एकफलकी प्राप्ति होती है अर्थ-यह जिसने वरशापके कारण तपको किया है तिसको वरशापका सामर्थ्य प्राप्त होता है, ज्ञान नहीं होता और जिसने ज्ञानके कारण तपको करचा है तिसको ज्ञानकी प्राप्ति होती है और वर शापका सामर्थ्य नहीं होता ॥

शंका-जो वरशापके सामर्थ्यसे रहित है तिसके ऊपर शास्त्रके विधिनिषेधका अभाव हुयाँहुयाँभी वरशापके सामर्थ्य वाले संन्यासियों करके तिसकी निंदा होवेगी ॥

उत्तर-वरशापकी सामर्थ्य प्राप्त हुयाँहुयाँभी निंदा दूर नहीं होती जिसते वरशापके सामर्थ्यवाले संन्यासियोंकी भी लंपटानेविषे निरंतर निंदा करते हैं ॥

शंका-वरशापके सामर्थ्यवाले संन्यासियोंने भोगियोंकरके आपनी निंदाके निवारणवास्ते अन्नवस्त्रआदिसुंदरभोग भोगने चाहिये ॥

उत्तर-संन्यासियोंने विषयियोंकी प्रसन्नतावास्ते विषयोंको भोगना चाहिये ऐसा कथन करणेवाला जो तू है तिस तेरी बुद्धिकी महिमा

कुछ कही नहीं जाती जिसते तेरी बुद्धि सूक्ष्म है और जितने संन्यासी विषयियोंकी प्रसन्नतावास्ते सुंदरवस्त्रआदिक भोगोंको भोगते हैं तिनके संन्यासकी महिमा नहीं कही जाती जिसते तिनका संन्यास वैराग्यके भारकरके पृथिवीविषे बहुत धसता जाता है जैसे पारेकी भरीहुई गाडीके पैए पृथिवीविषे धसते जाते हैं ॥

शंका–विषयलंपट पामर पुरुषोंने शाप और अनुग्रहविषेसमर्थ वर्णआश्रमके धर्मविषे तत्पर उत्तम संन्यासियोंकी निंदाके कियाँहुयाँ तिनकी कुछ हानि नहीं होती ॥

उत्तर–तैसे देहअभिमानी वर्णाश्रमके दास संन्यासियोंकरके कीहुई जो तत्त्ववेत्ताकी निंदा है तिसकरके तत्त्ववेत्ताकी कुछ हानि नहीं होती यह प्रसंगसे प्राप्त हुई जो वार्ता सो इहाँहीं रहे अब प्रसंगको श्रवणकर–जिसकारणते तत्त्ववेत्ता व्यवहारके साधन मनइंद्रियोंके नाशको नहीं करता तिसकारणते राजपालन आदिरूप जगत्व्यवहार भलीप्रकार करणेको समर्थ होता है ॥

शंका–तत्त्ववेत्ताकी राजपालनआदि व्यवहारविषे इच्छाही नहीं होती जिसते तत्त्ववेत्ताने जगत्को मिथ्या जान्या है जैसे–मृगतृष्णाकी नदीको मिथ्या जान्या हुया तिसविषे स्नानकी इच्छा नहीं होती ॥

उत्तर–ज्ञानवानकी राजआदि व्यवहारविषे इच्छा मत होवो जैसा तिसका प्रारब्धकर्म है तैसे वर्तो भावसे ध्यान करता हुआ व्यवहार करता हुआ और उपासक पुरुष तो निरंतर ध्यान करता हुयाहुयाही स्थित होवे जिसकारणते उपासककी ब्रह्मरूपता ध्यानने कीनी है वास्तवमें तिसकी ब्रह्मरूपता ज्ञानने प्रगट नहीं कीनी इसकारणते उपासक तो सदा ध्यान कीना चाहता है जैसे आपनेविषे ध्यानकरके करी जो विष्णुरूपता है सो वास्तव नहीं ॥

शंका-ध्यानकरके करी हुई जो विष्णुरूपता है सो वास्तव क्यों नहीं ? ॥

उत्तर-ध्यानकरके करी हुई विष्णुरूपताका ध्यानके अभाव हुयांहुयां अभाव होजाता है जैसे किसी पुरुषने वाणीविषे कामधेनु गौका ध्यान कऱ्या सो वाणीकी कामधेनुरूपता तितनाकाल रहती है जितना काल ध्यान है ध्यानके नाश हुयां हुयां वाणीकी कामधेनु रूपता नाश होजाती है और ज्ञानने प्रगट करी जो ब्रह्मरूपता है सो वास्तव है तिसका ज्ञानके नाश होनेते नाश नहीं होता जैसे दीपकने दिखलाया जो घरविषे पदार्थ तिसका दीपककेबूझा हुयां अभाव नहीं होता तिसकारणते ब्रह्मत्तत्त्व नित्य है इसी कारणते ज्ञान ब्रह्मतत्त्वको उत्पन्न नहीं करता प्रथम विद्यमान जीवकी ब्रह्मरूपताको जनावदेता है यह तात्पर्य है ब्रह्मतत्त्व जेकर ज्ञानने उत्पन्न कऱ्या तो ज्ञानके नाश हुयाँहुयाँ ब्रह्मतत्त्वका नाश होजाय जैसे-तंतुओंने उत्पन्न कऱ्या जो वस्त्रहै तिसवस्त्रका तंतुओंके नाश हुयांहुयां नाश होजाता है पर-ब्रह्म तत्त्वका तो नाश नहीं होता इस कारणते ब्रह्मतत्त्व ज्ञानने उत्पन्न कऱ्या ज्ञान ब्रह्मतत्त्वके जनावनेवाला है जैसे-शीशा मुखके जनाव-नेवाला है ताते ज्ञानका अभावकरके ब्रह्मतत्त्वका अभाव नहीं होता जैसे शीशेके अभावकरके मुखका अभाव नहीं होता ॥

शंका-जैसे ज्ञानीकी वास्तवब्रह्मरूपता है तैसे उपासककी भी वास्तवब्रह्मरूपता है ॥

उत्तर-पामरोंकी और सर्पआदिकोंकीभी वास्तव ब्रह्मरूपता है ताते अतिथोरी शंका तैंने कीनी है ॥

शंका-पामरआदिकोंकी वास्तव विद्यमान ब्रह्मरूपता है पर तिनको आपनी ब्रह्मरूपताका ज्ञान नहीं तिसते तिनोंका मोक्ष नहीं होता ॥

उत्तर-तैसे उपासकोंकी ब्रह्मरूपता विद्यमान है, पर उपासकोंको अपनी ब्रह्मरूपताका ज्ञान नहीं है इसते उपासकोंका मोक्ष नहीं होता॥

शंका-जेकर उपासनासे मोक्ष नहीं होता तो शास्त्रउपासना करणी क्या कहता है ॥

उत्तर-और कार्यांते उपासनाका करणा श्रेष्ठ है इसवास्ते शास्त्र उपासनाकरणी कहता है ॥ जैसे भूखेमरणेते भंगखाना श्रेष्ठ है इसते बुद्धिमान् निर्धनको भंगखाना कहते हैं पर राजकीरिस भंगखाना नहीं करता तैसे ध्यानभी ज्ञानकी रीस नहीं करता पामरोंके व्यवहारते कर्मोंका करणा श्रेष्ठ है और कर्मोंके करणेते सगुणब्रह्मकी उपासना श्रेष्ठ है और सगुणब्रह्मकी उपासनाते निर्गुणब्रह्मकी उपासना श्रेष्ठ है जितनीजितनी ज्ञानकी निकटता अधिक है तितनीतितनी श्रेष्ठता अधिक है और निर्गुणउपासना हौलीहौली परिपक्व होईहोई ब्रह्मज्ञान जैसी होजाती है जैसे संवादी भ्रम मणिप्रभाविषे मणिरूप मणिकी प्राप्ति रूप फल कालविषे यथार्थ ज्ञान जैसे होजाता है तैसे निर्गुणउपासनाभी अतिदृढ होईहोई मुक्तिरूप फलकालविषे ब्रह्मविद्या जैसी होजाती है ।

शंका-संवादी भ्रम आपतो यथार्थ ज्ञानरूप नहीं होता किंतु संवादी भ्रमकरके प्रवृत्त हुए पुरुषके नेत्रोंका मणिनालसंबंध होता है तिसते यथार्थ ज्ञानकी उत्पत्ति होती है ॥

शंका-तैसे निर्गुणउपासनाभी निदिध्यासनरूप होईहोई महावाक्यजन्य अपरोक्षज्ञानविषे कारण होजावेगी ॥

शंका-जेकर निर्गुणउपासना चित्तकी एकाग्रताद्वारा निदिध्यासन रूपताको प्राप्त होईहोई अपरोक्षज्ञानविषे कारण होवेगी तो मूर्तिध्यान और मंत्रजपआदिकोंकाभी चित्तकी एकाग्रताद्वारा अपरोक्ष ज्ञानविषे कारणता होनी चाहिये ॥

उत्तर-मूर्तिध्यान और मंत्रजपआदिकोंकोभी चित्तकी एकाग्रता द्वारा अपरोक्षज्ञानविषे कारण हम मानते हैं ताते यह शंका हमारेको अनिष्ट नहीं ॥

शंका-जेकर मूर्तिध्यानआदिकोंकोभी चित्तकी एकाग्रता द्वारा अपरोक्षज्ञानविषे कारणता है तो निर्गुणउपासनाविषे अधिकता कुछ भई ॥

उत्तर-यद्यपि चित्तकी एकाग्रताद्वारा मूर्तिध्यानआदिकोंको अपरोक्षज्ञानविषे कारणता है तथापि निर्गुणउपासनाविषे ब्रह्मज्ञानकी निकटता अधिक है ताते निर्गुणउपासना श्रेष्ठ है सो निकटताके प्रकारको श्रवणकर निर्गुणउपासना जब दृढ होती है तब सविकल्पसमाधि होती है तिस सविकल्प समाधिते निरोध है नाम जिसका ऐसी जो विकल्पसमाधि सो विनाही यत्नते प्राप्त होती है जिसने पतंजलिमुनीश्वरने योगशास्त्रविषे ऐसा कथन किया है सविकल्पसमाधिविषे जो ब्रह्माकार वृत्ति है तिसवृत्तिको निरोध हुयाँहुयाँ सर्व वृत्तियोंके निरोध होनेते निर्बीजसमाधि होती है निर्बीजका अर्थ निर्विकल्प होवो इसप्रकार निर्विकल्पसमाधिका लाभ तिसते क्या भया ऐसा पूछे तो श्रवणकर-निर्विकल्पसमाधिके लाभ हुयाँहुयाँ पुरुषके अंतर असंगवस्तुशेष रहती है ॥ असंगवस्तुके शेष हुयाँहुयाँ क्या भया ऐसा पूछे तो श्रवणकर-असंगवस्तुके वारंवार चिंतन कियाहुया तत्त्वमसिआदि महावाक्योंते मैं ब्रह्महूं ऐसा तत्त्वज्ञान उदय होता है तिसतत्त्वज्ञानके स्वरूपको श्रवण कर आत्माकी निर्विकारता असंगता नित्यता स्वप्रकाशता एकता पूर्णता शास्त्रकरके कथन करी हुई संशयसे रहित बुद्धिविषे शीघ्र दृढ होजाती है ॥

शंका-निर्विकल्पसमाधिते अपरोक्ष ब्रह्मज्ञान उत्पन्न होता है इस विषे क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर-अमृतबिंदुआदिक उपनिषदोंकी श्रुतियाँ प्रमाण हैं निर्विकल्पसमाधिकरके अपरोक्षज्ञानकी प्राप्तिकेवास्ते अमृतबिंदु आदिक उपनिषदोंविषे योगाभ्यास कथन करया है ॥ इसप्रकार निर्गुण उपासनाको अपरोक्षज्ञानकी निकटताके हुयाँहुयाँ निर्विकल्पसमाधिके लाभद्वारा और पुण्यकी उत्पत्तिद्वारा निर्गुणउपासनाको ज्ञानका कारण होनेते निर्गुणउपासना सगुणउपासनाआदिकोंते श्रेष्ठ है ॥ इसप्रकार निर्गुणउपासनाको अपरोक्षज्ञानकी कारणताके सिद्ध हुयाँहुयाँ निर्गुणउपासनाको त्यागकरके तीर्थयात्रा और जपादिकोंके करणेवाले पुरुषोंको व्यर्थश्रमकी प्राप्ति होती है ॥ जैसे कोई पुरुष हाथमें प्राप्तके पेडेको त्यागकरके सूखेहाथकोचाटे तिसको व्यर्थ श्रमकी प्राप्ति होतीहै ॥

शंका-आत्मतत्त्वके विचारको त्यागकरके निर्गुणउपासनाके करणेवाले पुरुषोंकोभी इसी दृष्टांतकी प्राप्ति होती है ॥

उत्तर-तेरा कहणा यथार्थ है जिसकारणते कथन किये दृष्टांतकी प्राप्ति होती है तिसकारणते विचारकी असमर्थताके हुयाँहुयाँ उपासना करणेयोग्य है ॥ अतिव्याकुलचित्तवाले पुरुषोंको विचारते ब्रह्मसाक्षात्कार नहीं होता जिसकारणते चित्तकी व्याकुलताके नाशकरणेवाली उपासना करणेयोग्य है उपासनाकरके बुद्धिकी व्याकुलता नाश होजाती है तिसते तिनको उपासना मुख्य है और चित्तकी व्याकुलताते जो रहित है और अज्ञानमात्रकरके आच्छादित हुआ है स्वरूप जिनका उनको सांख्य है नाम जिसका ऐसा जो विचारहै सो मुख्य है जिसते आत्मसाक्षात्कारके करावणेवाला शीघ्रविचार है निर्गुणब्रह्मकी उपासना और विचार इन दोनोंको तत्त्वज्ञानद्वारा मोक्षसाधनताविषे गीताका वाक्यभी प्रमाण है पंचमअध्यायविषे भगवान्ने अर्जुनकेताई कथन किया है जिसमोक्षरूपस्थानको विचारवाले प्राप्त करते हैं तिसी मोक्षरूपस्थानको निर्गुणउपासनावालेभी प्राप्त होते हैं ॥ ताते विचा-

रका और निर्गुणउपासनाका फल एक है ऐसे जो जानता है सोई शास्त्रके अर्थको यथार्थ जानता है श्रुतिभी इसअर्थविषे प्रमाण है मोक्षका कारण ज्ञान है सो विचारते उत्पन्न होता है और निर्गुणउपासनाते उत्पन्न होता है ऐसे श्रुति कथन करती है ॥

शंका-सांख्य है नाम जिसका ऐसा जो है विचार और योग नाम जिसका ऐसी जो है निर्गुणउपासना तिन दोनोंको तत्त्वज्ञानकी कारणताके अंगीकार किया हुयाँ सांख्यशास्त्र और योगशास्त्रविषे कथन किये जो तत्त्व हैं तिनकाभी अंगीर करचा चाहिये ॥

उत्तर-श्रुतिसे विरुद्ध जो सांख्यशास्त्रविषे और योगशास्त्रविषे कथन किया है सो श्रुतिकरके बाधको प्राप्त होता है अर्थ यह-सो मिथ्या कथन है ॥

शंका-उपासनाके करणेवालेका तत्त्वज्ञानकी प्राप्तिसे प्रथम शरीर छूटगया हुया तो मोक्ष न होवेगा ॥

उत्तर-उपासनाके करचाहुयाँभी जिसको इसजन्मविषे ज्ञान प्राप्त नहीं भया तिसपुरुषको दूसरेजन्मविषे मनुष्यशरीरको धारणकरके भावे मरणकालविषे भावे ब्रह्मलोकविषे ज्ञान होवेगा और ज्ञानसों मोक्ष होवेगा मरणकालविषे ज्ञानते मोक्षकी प्राप्तिविषे गीता वचन प्रमाण है ॥ अंतकालविषे जिसजिसवस्तुको चिंतनकरता हुया जीव शरीरको त्यागता है तिसतिसवस्तुको प्राप्त होता है और श्रुतिभी कहती है जिसवस्तुविषे इसजीवका चित्त है तिसचित्तकरके सहित यह जीव प्राणोंको प्राप्त होताहै और प्राण जठराग्निकरके संयुक्त मनकरके सहित जिसवस्तुका इसने संकल्प किया तिसवस्तुको प्राप्त करवायदेता है ॥

शंका-कथन किये जो हैं तुम श्रुति स्मृतिके वाक्य तिनकरके यह प्रतीत होता है ॥ अंतकालविषे जिसजीवका जैसासंकल्प होता है

तैसा तिसको आगे जन्म होता है और यह तो नहीं प्रतीत होता जो अंतकालविषे ज्ञानते मोक्ष होता है ॥

उत्तर-श्रुतिस्मृतिके अक्षरोंते यही प्रतीत होता है जो तू कहता है॥

शंका-जेकर श्रुतिस्मृतिका अर्थ यही है जो मैं कहता हूं तो मरण कालविषे ज्ञानते मोक्ष होता है ॥ इस अर्थविषे तिस श्रुतिस्मृतिके वाक्यको तुम प्रमाण कैसे कहतेहो ? ॥

उत्तर-मरणकालविषे अंतके संकल्पते आगे जन्म होता है ॥ इस अर्थके निश्चय हुयाँहुयाँ जैसे सगुणब्रह्मकी उपासना करणेवालेको मरण कालविषे सगुणब्रह्मका संकल्प होता है प्रथमके अभ्यासते तैसे निर्गुणब्रह्मके उपासना करणेवालेको भी निर्गुणब्रह्मका संकल्प होता है तिससंकल्पते तिसको निर्गुणब्रह्मकी प्राप्ति होती है ॥

शंका-निर्गुणउपासकोंको निर्गुणब्रह्मकी प्राप्ति निर्गुणविषे संकल्पकी दृढताते होवो पर मोक्षकी प्राप्ति तो नहीं होती ॥

उत्तर-निर्गुणब्रह्मकी प्राप्ति और मोक्ष इनका नाममात्रते भेद है अर्थते भेद नहीं जैसे घट और कलश इनदोनोंका नाममात्रसे भेद है अर्थते भेद नहीं अर्थ एकही है ॥ स्वरूपविषे स्थितिकानाम मोक्ष है ऐसे शास्त्रविषे कथन किया है जैसे संवादी भ्रम नाममात्रकरके भ्रम कहता है वास्तवसे सो तत्त्वज्ञान है ॥

शंका-निर्गुणउपासना मानसिक क्रियारूप है ताते तिसको मोक्षकी-कारणता अयुक्त है जिसते शास्त्र कहता है ज्ञानते मोक्ष है क्रियाते नहीं ॥

उत्तर-मानस क्रियारूप निर्गुणउपासनाते ज्ञानकी उत्पत्ति होती है ज्ञानकरके मूल विद्याका नाश होता है मूलविद्याके नाशका नाम मोक्ष है जैसे अविमुक्तरूप सगुणब्रह्मकी उपासनाते तकब्रह्मका ज्ञान होता है उपासनारूप मानसिकक्रिया ज्ञानका कारण है ॥

शंका-निर्गुणउपासनाका मोक्षफल है इसविषे क्या प्रमाण है ?॥

उत्तर-नृसिंहतापनी उपनिषद्की श्रुतियाँ इसविषे प्रमाण हैं जो पुरुष निर्गुणब्रह्मको अपनास्वरूप जानता है तिसपुरुषके मन विषे कामना उत्पन्न नहीं होती और प्रथम विद्यमान जो कामना- हैं सो नष्ट होजाती हैं जिसते कामना योग्य अनात्मपदार्थ मिथ्या भासते हैं इसते तिसको आप्तकाम कहते हैं ॥ जैसे जिसको सीपीके रूपेका मिथ्या ज्ञान भया है सो पुरुष बलात्करके कहता है मैंने रूपाप्राप्त होगया है तिसका तात्पर्य यह होता है कि जिसवस्तुकी प्राप्ति होती है तिसवास्ते फिर यत्न नहीं करता तैसे सीपीके रूपेवास्तेभी मेरेको यत्न करणा नहीं रहा इसते सीपीकारूपा मेरेको प्राप्त होगया है तैसे निर्गुणब्रह्मको आत्मरूप जाननेवाले पुरुषकाभी अनात्मपदार्थोंकी प्राप्तिवास्ते यत्न नहीं रहता इसते कहता है तिसको संपूर्णकामनाकरणे योग्य पदार्थ प्राप्त होगये हैं, इसते तिसकानाम आप्तकाम है और आत्माविषेही है काम जिसका सो कहता है आत्मकाम अर्थ- यह जो सदा है आत्माविषे निष्ठा जिसकी तिसपुरुषके प्राण मरणसमयविषे शरीरते बाहर नहीं निकसते इसीशरीरविषे लीन हो जाते हैं जैसे-अतितप्तलोहेपर जलकी बूँदें पाई हुई तिसके बीचही लीन होजाती हैं सो पुरुष प्रथम निर्गुणब्रह्माकारवृत्तिकरके निर्गुणब्रह्मरूप हुयाहुया निर्गुणब्रह्मको प्राप्त होता है और शरीरइंद्रियाँ प्राणोंके अभिमानसे रहित और अज्ञानसे रहित सच्चिदानंदमात्ररूप हुयाहुया सोपुरुष स्वप्रकाश ब्रह्मरूप होजाताहै चैतन्यरूप यह ओंकार है और चैतन्यरूप यह संपूर्ण जगत् है तिसते जगत् परमेश्वररूप है सो परमेश्वर परब्रह्म एक है अमृत है अभय है, निश्चयकरके ब्रह्म जो ब्रह्मको आत्मरूप जानता है सो अभयब्रह्मरूप होता है यह अर्थ और उपनिषदोंविषेभी प्रसिद्ध है ब्रह्माजी कहते हैं कि हे देवताओ ! यह रहस्य मैं

तुम्हारे ताईं कथन करचा है इसते आदिलेकरके जो वाक्य हैं तिनों करके नृसिंहतापिनी उपनिषद्विषे निर्गुणउपासनाका मोक्ष फल श्रवण करचा है ॥

शंका-जेकर निर्गुणउपासनाकरकेभी मोक्ष होवेगा तो मोक्षकेवास्ते ज्ञानसे भिन्न और कोईमार्ग नहीं इसश्रुतिका विरोध प्राप्त होवेगा ॥

उत्तर-निर्गुणउपासना ब्रह्मज्ञानको उत्पन्न करके मोक्ष करती है यह हम कथन करते हैं इसते श्रुतिविरोध नहीं निर्गुणउपासनाते मोक्ष नृसिंहतापिनी उपनिषद्विषे निष्काम पुरुषको कथन करचा है और सकामपुरुषको ब्रह्मलोककी प्राप्ति प्रश्नउपनिषद्विषे कथन करी है सो प्रश्नउपनिषद्का वाक्य श्रवणकर-जो पुरुष तीनमात्रावाले ओंका-ररूप अक्षरकरके निर्गुण परमात्माका ध्यान करता है सो पुरुष प्रथम तेजोरूप सूर्य्यको प्राप्त होता है सूर्य्यको प्राप्त होकरके संपूर्ण पापोंको त्याग देता है जैसे सर्प कुंजको त्याग देता है तिसपापोंसे रहित पुरुषको सामवेद अभिमानी देवताओंको ब्रह्मलोकविषे लेजाताहै सो ब्रह्मलोकविषे प्राप्त हुयाँहुयाँ निर्गुणब्रह्मका उपासक पुरुष समष्टि लिंगशरीरोंके अभिमानी हिरण्यगर्भतेपरे जो निर्गुणब्रह्म है सर्वशरीरोंविषे समस्थित अज्ञानते परे निर्गुणपरमात्मा तिस अनुभवको करता है इसवाक्यकरके सकाम निर्गुणब्रह्मकी उपासना करणेवाले पुरुषको ब्रह्मलोककी प्राप्ति श्रवण करना चाहिये ॥

शंका-प्रश्न उपनिषद्विषे सकामको ब्रह्मलोककी प्राप्ति श्रवण करीती है मोक्ष तो तिसका नहीं श्रवणकरता ॥

उत्तर-ब्रह्मलोकविषे तिसको ब्रह्मसाक्षात्कार श्रवण करता है ब्रह्मसाक्षात्कारते मोक्षकी प्राप्ति अर्थ सिद्ध है और व्यासदेवजीनेभी

यह कथन किया है ॥ सूत्रविषे अहंग्रह उपासनावाले जो पुरुष हैं निर्गुणब्रह्म मैं हूं ऐसी जो उपासना है सो अहंग्रह उपासना है तिनपुरुषोंको ब्रह्म लोकते आनकरके अमानवपुरुष ब्रह्मलोकविषे लेजाता है और प्रत्येक उपासकोंको नहीं लेजाता जिसते अहंग्रह उपासनावालोंका ब्रह्मलोक विषे संकल्प दृढ होजाता है जैसा जिसका संकल्प है तैसा तिसको फल प्राप्त होता है ताते ब्रह्मलोककी कामनावाला जो निर्गुणब्रह्मका उपासक है तिसको ब्रह्मलोककी प्राप्तिरूप फल होता है ॥

शंका-जेकर सकाम निर्गुणउपासनाके करणेवालेको ब्रह्मलोककीही प्राप्ति होती है तो तिसको तत्त्वज्ञान किसते प्राप्तहोता है ॥

उत्तर-निर्गुणउपासनाके सामर्थ्यते तिसको ब्रह्मलोकविषे तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति होती है जिसते शास्त्रविषे यह कथन है निर्गुणउपासनाके प्रभावते ब्रह्मलोकविषे प्राप्तभया जो उपासक सो मनुकरके रचा हुया जो यह जन्ममरणरूप चक्र इसविषे नहीं भ्रमता उपासकपुरुष ब्रह्मलोकविषे प्राप्त हुयाहुया फिर जन्मको नहीं प्राप्त होता ब्रह्मलोकविषे प्राप्त हुयेहुये निर्गुणब्रह्मके उपासक ब्रह्माके साथ विदेहमुक्तिको प्राप्त होजाते हैं ताते निर्गुणब्रह्मकी उपासना करणेवाले पुरुषको फिर जन्मकी प्राप्ति नहीं होती किंतु तिसका मोक्ष होजाता है ॥ कथन करते करते जो प्रणवाकिया है वेदविषे सो उपासना बहुल निर्गुण होती है और कहींकहीं प्रणवकी उपासना सगुणभी है प्रणवका अर्थ ओंकार तात्पर्य यह ओंकारको निर्गुणब्रह्मरूप जानके उपासनाकरणी और सगुणब्रह्मरूप जानकेभी उपासना कारणी पिप्पलादमुनीश्वरने आपने शिष्य सत्यकामके ताईं यह कथन किया है हे सत्यकाम ! ओंकार निर्गुणब्रह्मरूप है और सगुब्रह्मरूपभी है जिसकारणते तिसकारणते उपासक पुरुष इस ओंकारकी उपासनाकरके निर्गुणब्रह्मको भावें

सगुणब्रह्मको प्राप्त होताहै कठवल्लीउपनिषद्विषे यमनेभी नचिकेताके ताईं कथन किया है ओंकारकी उपासनाको जानकरके जेकर पुरुषको निर्गुणब्रह्मके प्राप्तिकी इच्छा होती है तब निर्गुणब्रह्मको प्राप्त होजाता है और जेकर सगुणब्रह्मके प्राप्तिकी इच्छा होती है तब सगुणब्रह्मको प्राप्त होजाता है ताते यह भलीप्रकार सिद्ध भया निर्गुणब्रह्मकी उपासना करणेवाले पुरुषको इसीजन्मविषे ब्रह्मसाक्षात्कार होता है भावें मरणकालविषे, भावें ब्रह्मलोकविषे भावें और मनुष्य शरीरको धारकरके पृथिवीलोकविषे ब्रह्मसाक्षात्कार अवश्य होता है विचारते तत्त्वज्ञानकी प्राप्त होनेविषे जो असमर्थ है तिसको निर्गुणब्रह्मके ध्यानका अधिकार है यह अर्थ आत्मगीताविषे भलीप्रकार कथन किया है सो आत्मगीताके वाक्य श्रवणकर–विचारकरके मेरे साक्षात्कारकरणेको जो असमर्थ है सो मेरी उपासना करे और मनमें यह शंका न लेवे ॥ मेरेको परमात्माका साक्षात्कार होवेगा कि, न होवेगा? कुछकाल उपासनाके करणेकरके उपासनाके फल प्राप्ति समयविषे तिसको साक्षात्कार अवश्य होवेगा मेरा ध्यान साक्षात्कारका साधन है जैसे पृथिवीकेनीचे दब्याहुयाँ जो धन है तिसके लाभविषे पृथिवीका फटनाही उपायहै और उपाय नहीं तैसे मेरी प्राप्तिविषेभी विचारते रहित पुरुषको मेरी उपासनाही उपाय है और कोई कारण नहीं मनरूप तो पृथिवी है और बुद्धिरूप कही है तिसकरके मनरूप पृथिवीको खोदना अर्थ–यह जो मनकी एकाग्रताको करणा और देहअभिमानरूप शिलाको आत्मरूप धनके उपरो दूरकरके धनरूप जो मैं हूं उसको पुरुष ग्रहण करे ज्ञानविषे असमर्थ पुरुषको ध्यानका अधिकार है इसविषे औरभी शास्त्रका वाक्य श्रवणकर–ब्रह्मके अपरोक्ष अनुभवके न हुयाँ हुयाँभी मैं ब्रह्महूं ऐसी उपासना करे ॥ देवताका उपासना करके प्रथम अविद्यमानभी देवतारूपताको प्राप्त होता है ॥ जेकर आत्मरूपता

करके नित्य प्राप्त जो सर्वात्मा—ब्रह्म है सो उपासनासे प्राप्त होता है इसको तो क्या कहणा है॥ ब्रह्मध्यानका फल प्रत्यक्ष सिद्ध है तिसते ध्यानकरणे योग्य है ध्यानते अनात्मरूप देहआदिकोंविषे अहंबुद्धिकी शिथिलतारूप फलको दिनदिनविषे देखता हुआहुआभी जेकर ध्यानको न करे तो तिसपुरुषसे और अधिक पशु कौन है यह कहो॥ तात्पर्य—यह ध्यानके फलको प्रत्यक्ष देख्या हुयाभी जो ध्यान नहीं करता सो अभिमानको दूरकरके ध्यानते अद्वितीयात्माके अनुभवको करताहुआ मरणस्वभाववाले शरीरविषे अहं अभिमानके त्यागते आपपुरुष अमृत ब्रह्मरूप हुयाहुया इसीजन्मविषे आपना वास्तव स्वरूप जो है सच्चिदानंदरूपं ब्रह्म तिसको प्राप्त होता है जो पुरुष इस ध्यानदीपनाम प्रकरणको भलाप्रकार विचारता है सो संपूर्ण संशयोंसे रहित हुयाँ हुयाँ सदा ब्रह्मके ध्यानको करता है॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदशमयात्मस्वरूपकृतभाषायां नवमं ध्यानदीपप्रकरणं समाप्तम्॥ ९॥

अथ नाटकदीपप्रकरणम् १०.

॥ ॐ सद्गुरुप्रसाद ॥ अब पाँचवाँ नाटकदीप आदिसे पंचदशीका दशवाँ प्रकरण तिसका आरंभ करते हैं मंदबुद्धिवाले जिज्ञासुओंका यत्नसे विना निष्प्रपंच ब्रह्म आत्मरूपताके ज्ञानवास्ते ब्रह्मवेत्ताओंने अध्यारोप और अपवाद कल्प्या है इसते प्रथम परमात्माविषे जगत्के अध्यारोपको कथन करते हैं जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम जो सजातीय विजातीय स्वगतभेदसे रहित आनंदचैतन्यस्वरूप पूर्ण परमात्मा होता भया सो परमात्मा आपही आपनी मायाकरके शरीरोंविषे प्रवेश करता भया जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम परमात्माको सजातीय विजा-

तीय स्वगतभेदसे रहित छांदोग्यउपनिषद्विषे आपने पुत्र श्वेतकेतुके ताईं उद्दालकमुनीश्वर कथन करता भया हे सोम्य ! हे पुत्र ! यह जितनाजगत् तू देखता है सो संपूर्ण आपनी उत्पत्तिते प्रथम परमात्मरूप होता भया जैसे घट आपनी उत्पत्तिसे प्रथम मृत्तिका रूप होता है सो परमात्मा सजातीय विजातीय स्वगतभेदसे रहित है बृहदारण्यकउपनिषदविषे परमात्मा चैतन्यरूप और आनंदरूप और पूर्णकथन किया है ऐसा जो परमात्मा है सो आपनी मायाशक्तिकरके जो शक्ति श्वेताश्वतर उपनिषद्विषे प्रकृति नामकरके कथन करी है तिसप्रकृतिकरके परमात्मा जगत् रूप हुयाहुया भी निर्विकार रहताहै इसवासते परमात्माका नाम महेश्वर कह्या सो परमात्मा आपही शरीरआदि संघातरूप जगत्को जीवरूप करके रचकर तिसविषे प्रवेश करता भया ॥

शंका—जेकर एक परमात्मानेही संपूर्ण शरीरोंविषे प्रवेश करया है इसलिये पूजाकरणेके योग्य है ताते उत्तम है और यह पूजाकरणेवाला है ताते तिसते अधम है ऐसा भेद न प्रतीत होना चाहिये ॥

उत्तर—यह जो उत्तम अधम भाव प्रतीत होता है सो परमात्माके स्वभावकरके नहीं प्रतीत होता किंतु शरीररूप उपाधिकरके प्रतीत होता है जेकर देवतआदिक उत्तमशरीरविषे परमात्मा प्रवेश करता है तो उत्तम देवतारूप होजाता है और जेकर अधम मनुष्य शरीरविषे परमात्मा प्रवेश करता है तो मनुष्यरूप होजाता है अब जगत्के अपवादको श्रवण कर—सहितसाधनाके प्रथम अपवादका साधन कहते हैं अनेकजन्मोंविषे जो ईश्वरका भजन किया है अर्थ यह—आपने वर्णाश्रमके कर्मोंका श्रद्धाकरके कियाहुया परमेश्वरविषे अर्पण करणा ॥ तिसते आत्माकी ब्रह्मरूपताके ज्ञानका साधन जो श्रवण मनन निदिध्यास रूप विचारहै तिसके करणेकी इच्छा करताहै ॥ तिस श्रवण मनन निदिध्यासरूप विचार करके ज्ञानकी उत्पत्ति होती है

ज्ञानकरके आत्माका अद्वयानंदताका आच्छादक अज्ञान नाश होजाता है अज्ञानके नाश हुयाँहुयाँ अद्वयानंदरूप परमात्मा शेष रहता है ताते यह सिद्ध भया ॥ प्रथम साधन ईश्वरका भजन है और दूसरा साधन श्रवणादिकोंविषे रुचि, तीसरा साधन श्रवण मनन निदिध्यासनोंविषे प्रवृत्ति, तिनोंते उत्पन्नभया जो ज्ञान तिसकरके जगत्का अपवाद जगत्के अत्यंतभावकी प्रतीति करके परमात्माकी अद्वैतरूपताका ज्ञान होता है ॥

शंका-कैवल्य उपनिषद्विषे यह कथन किया है कि, जाग्रत् स्वप्न, सुषुप्तिरूप पंचको जो प्रकाशता है सो ब्रह्म मैं हूं इस ज्ञानकरके पुरुष सर्व बंधनोंसे रहित होजाता है ताते बंधनोंका अभावरूप जो मोक्ष है सो ज्ञानका फल है फिर तुम परमात्माका शेष रहणा ज्ञानका फल कैसे कथन करते हो ? ॥

उत्तर-अद्वितीय ब्रह्मविषे वास्तव बंध मोक्षका निरूपण नहीं होसकता परमात्माको मैं दुःखी हूं मैं द्वैतको अनुभव करता हूं यह जो भ्रम है सो बंध है और अद्वितीय परमानंद स्वरूपकरके जो स्थिति है सो बंध निवृत्तिरूप मोक्ष है इसते कैवल्य उपनिषद्की श्रुतिके साथ विरोध नहीं ॥

शंका-मोक्षकेवास्ते विचारकरके उत्पन्न हुया जो ज्ञान तिसकी इच्छा नहीं जिसते गीताविषे यह कथन किया है कर्म करकेही जनकादिक राजे संसिद्धिको प्राप्त भये हैं ॥

उत्तर-बंध जो है सो अज्ञानसे होता है तिस अज्ञानका विचारसे उत्पन्न हुये ज्ञानसे विना नाश नहीं होता ताते ज्ञानकी अवश्य इच्छा है और गीताविषे जो कर्मोंकरके जनक आदिकोंको संसिद्धिकी प्राप्ति कथन की है सो संसिद्धिनाम अंतःकरणकी शुद्धिका है मोक्षका नहीं ताते गीतावाक्यका विरोध नहीं ॥

प्रश्न-विचारकरके बंधकी निवृत्ति कथन करी है सो किसके विचारकरके होती है यह कृपाकरके कहो ॥

उत्तर-जीव और परमात्माके विचारकरके बंधका अभाव होता है तिसते जिज्ञासु जीव ब्रह्मकी एकताके साक्षात्कारपर्यंत सदाही जीव और परमात्माके विचारको करै ताते प्रथम जीवके स्वरूपको कथन करते हैं चिदाभास सहित जो अहंकार है व्यवहारकालविषे देहआदि-कों विषे'अहं' अभिमानके करणेवाला और पुण्यपापरूपकर्मोंके करणेवाला और सुखदुःखरूप फलके भोगनेवाला जीव है तिसका सुखदुःखके भोगणेविषे क्या साधन है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-कामादि-वृत्तियोंवाला अंतःकरणका अंश मन सुखदुःखरूप भोगका साधन है तिस मनकी दो क्रिया हैं एक अन्तर्वृत्ति और एक बाह्यवृत्ति सो वृत्तियाँ क्रमकरके उत्पन्न होती हैं इन दोनों वृत्तियोंके स्वरूपको और विषयको भिन्न भिन्न श्रवणकर-अंतर्मुख वृत्ति 'अहं' है सो कर्ता जो जीव है तिसके विषे करे और 'इदं' यह बाह्यवृत्ति है सो देहते बाहर इदंताकरके ग्रहण करणे योग्य पदार्थोंके विषे करती है ॥

शंका-जेकर मनकरकेही सर्वव्यवहारकी सिद्धि होती है तो श्रोत्र नेत्रआदिक इंद्रियोंको व्यर्थता भई ॥

उत्तर-मनने इदं ऐसे सामान्यरूप वस्तुके विषे कऱ्या है और इदंताकरके ग्रहण करणे योग्य पदार्थोंविषे जो विशेष है शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध तिनोंको भिन्नभिन्नकरके श्रोत्रआदिक इंद्रियोंकरके ग्रहणकऱ्या है इसते श्रोत्रआदिक इंद्रियोंकी व्यर्थता नहीं इतनेकरके जीवका स्वरूप कथन कऱ्या अब परमात्माके स्वरूपको श्रवणकर अहंकाररूप कर्ताको और अहंरूप और इदंरूप मनकी वृत्तिरूप क्रियाको और संपूर्ण विषयोंको जो घ्राण आदिक इंद्रियोंकरके ग्रहण करणे योग्य हैं इन संपूर्णको इकट्ठा जो चैतन्य प्रकाशता है सो वेदांत-

शास्त्रोंविषे साक्षी कथन करता है ॥ मैं रूपको देखताहूं इसप्रतीति विषे द्रष्टा दर्शन दृश्यरूप त्रिपुटी इकट्ठी भासती है मैं इसका अर्थ है अहंकाररूप द्रष्टा देखताहूं इसका अर्थ है दर्शनरूप क्रिया रूपको इसका अर्थ है दृश्य इसीतरह मैं सुनताहूं मैं गंधलेताहूं मैं स्वादलेताहूं इसते आदिलेकरके त्रिपुटियाँ भासती हैं तिन त्रिपुटियोंको प्रकाशनेवाला जो साक्षी है सो परमात्मा है साक्षी विकारते रहित हुयाहुया अनेकपदार्थोंको इकट्ठा प्रकाशता है इसविषे दृष्टांत श्रवणकर जैसे किसी स्थानविषे वेश्या नृत्य करती है उस स्थानविषे नाचकरावणे वाले धनीको और तमासा देखनेवालोंको और वेश्याको दीपक इकट्ठाही प्रकाशता है जैसा एक आपने विकारको प्राप्त होकरके और जेकर सभी उसस्थानते चलेजावें तो संपूर्णोंके अभावको प्रकाशता है तैसे साक्षी अहंकाररूप करताको और बुद्धिकी वृत्तिरूप क्रियाको और विषयोंको प्रकाशता है जाग्रत् और स्वप्नविषे और सुषुप्तिविषे इन सपूर्णके अभाव हुयाँहुयाँभी आप प्रथमकी न्याईं प्रकाशता है ॥

शंका–प्रकाशरूप बुद्धिकोही अहंकारादि सर्वपदार्थोंकी प्रकाशकता बनजाती है इसते बुद्धिसे भिन्न साक्षीको मानना न चाहिये ॥

उत्तर–निर्विकारसाक्षी चैतन्यकी स्वप्रकाशता करके सदा प्रकाशमान हुईहुई बुद्धि अनेक प्रकारकरके नृत्यको करती है अर्थ–यह जो कभी घटाकार होती है कभी पटाकार होती है तात्पर्य यह–बुद्धि विकारी होनेकरके जड़ है तिसते बुद्धिविषे स्वतःप्रकाश नहीं ताते बुद्धिसे भिन्न बुद्धिआदिक संपूर्णोंका प्रकाशक साक्षी अवश्य मानना चाहता है यह जो कथन किया है अर्थ–तिसकी श्रोता पुरुषकी बुद्धिविषे यत्नसे विना स्थितिकेवास्ते नाटकरूपताकरके वर्णन करते हैं अहंकार जो है सो नाच करावणेवाले धनीके तुल्य है जैसे धनी नाचके अच्छे न अच्छे होनेकरके हर्षशोकको अभिमानकरके प्राप्त होता है तैसे

अहंकारभी भोगोंके अच्छे मंदे अभिमानकरके हर्षशोकको प्राप्त होता है और विषय जो हैं सो तमाशा देखनेवाले पुरुषोंके तुल्य हैं तमाशेके देखनेवाले पुरुषोंके निकट स्थित हुयाँहुयाँ भी तमाशेके अच्छे मंदे-करके हर्षशोक नहीं होता तैसे विषयोंको भोगके अच्छे मंदेकरके हर्ष शोक नहीं होता ताते तमाशा विषे देखनेवाले पुरुषोंके तुल्य है और बुद्धि नाचने वाली वेश्याके तुल्य है जैसे-वेश्या अनेकप्रकारोंके विकारोंको प्राप्त होती है तैसे बुद्धिभी अनेक प्रकारोंके विकारोंको प्रात होती-है और इंद्रियां वेश्याके पीछे लगे हुये सारंगी कंसीके साजोंके बजावने वाले भडुओंके तुल्य हैं जैसे उन वेश्याके विकारोंके अनुसार व्यापा-रको करते हैं तैसे इंद्रियाँभी बुद्धिके विकारोंके अनुसार व्यापारको करती हैं और साक्षीदीपककी न्याईं प्रकाशक है ॥

शंका-साक्षीको अहंकारआदिकोंकी प्रकाशताके हुयाँहुयाँ अहंकारआदिकोंके साथ कभी संबंध होना और कभी सबंध न होना रूप विकारकी प्राप्ति होवेगी ॥

उत्तर-जैसे दीपक जानेआवनेरूप विकारसे सहित आपने स्थान विषे स्थित हुयाहुया आपने निकटवर्ती संपूर्ण पदार्थोंको प्रकाशता है तैसे साक्षी विकारसे रहित हुया हुया आपने निकट स्थित संपूर्ण-पदार्थोंको प्रकाशता है ॥

शंका-यह जो तुमने कथन किया है साक्षी बाहर और अंदर संपूर्ण पदार्थोंको प्रकाशता है सो अयुक्त है जिसते श्रुति साक्षीविषे बाहर अंतरभेदके अभावको कथन करती है बृहदारण्यकाविषे यह कहा है साक्षीरूप ब्रह्म न किसीका कारण है न किसीका कार्य है न किसीके बाहर है न किसीके अंतर है ॥

उत्तर-यह बाहर अंदर भेद शरीरका अपेक्षाकरके है शरीरके

जो बाहर पदार्थ हैं सो बाहर कहते हैं और शरीरके अंतर जो पदार्थ हैं सो अंतर कहते हैं और साक्षीविषे बाहर अंतरकी कल्पना कोई नहीं शरीरके बाहर कौन पदार्थ है और शरीरके अंदर कौन पदार्थ हैं ऐसा पूछे तो श्रवणकर-शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध यह पांचोंविषय तो शरीरके बाहर हैं और अहंकार अंदर है ॥

शंका-यह तुमने कथन करचा है कि, स्थिरस्थितिको प्राप्त हुया हुया साक्षी बाहर अंदर पदार्थोंको प्रकाशता है विकारसे रहित हुया-हुया सो तुम्हारा कहना अयुक्त है जिसते मैं घटको देखता हूं इस अनुभवविषे यह प्रतीत होता है ॥ प्रथम साक्षी अहंकारको प्रकाशता पीछे घटाकार वृत्तिकी प्रकाशरूपताकरके साक्षी बाहर आवता है ऐसे अनुभवकरके प्रतीत होता है ॥

उत्तर-अहंकारके ग्रहणकरणेवास्ते देहके अंतर स्थित हुईहुई बुद्धि रूपादिक विषयोंके ग्रहणकरणेवास्ते नेत्रआदिकोंद्वारा वारंवार बाहर आवती है तिसते मूर्खपुरुष बुद्धिकी अंतर बाहर आवने जाने रूप चंचलताको बुद्धिके प्रकाशक साक्षीविषे कल्प लेते हैं ताते साक्षीविषे अंतर बाहर आवनाजाना रूप चंचलता वास्तव नहीं ॥

शंका-प्रकाशने योग्य वस्तुकी चंचलता प्रकाशकाविषे मूर्खोंने कल्पी है यह वार्ता कहींभी देख्या नहीं ॥

उत्तर-घरविषे झरोखेद्वारा जहां धूप प्राप्त होती है तहां बालक आपने हाथको चंचल करते हैं ।तिस हाथके चंचल करणेकरके अचल-भी धूप बालकोंको चंचल प्रतीत होती है इसस्थानाविषे जैसे प्रका-शने योग्य हाथकी चंचलता प्रकाशक धूपविषे बालकोंने कल्पी है तैसे बुद्धिकी चंचलता बुद्धिके प्रकाशक साक्षीविषे कल्पी है अज्ञानि-योंने वारतवसे साक्षी आपने स्वरूपविषे स्थित है बाहर अंतर्गमनागमन नहीं करता पर बुद्धिके जानेआवने करके बाहर अंदर जानाआवना अज्ञा-

नियोंको प्रतीत होता है ॥ आपने स्थानाविषे स्थित है साक्षी इसका क्या अर्थ है ? किसी बाहरस्थानविषे स्थित है साक्षी अथवा अंतर स्थानाविषे स्थित है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-साक्षी बाहरस्थानविषे स्थित है न अंतरस्थानाविषे स्थित है जिसते बाहर अंतरस्थान दोनों बुद्धिके हैं तो फिर साक्षी कैसा स्थित है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-मन बुद्धिइंद्रिये आदिको संपूर्णोंकी प्रतीतिके अभाव हुयाँहुयाँ जहाँ साक्षी प्रकाशता है तहाँ स्थित हैं ॥

शंका-सर्वव्यवहारके अभाव हुयाँहुयाँ देश तो कोई नहीं प्रतीत होता इसते तिसदेशविषे साक्षीको स्थित कैसे कथन करते हो ? ॥

उत्तर-हमारा यह तात्पर्य है कि, सर्वदेशआदि कल्पनाका अधिष्ठान जो साक्षी है तिसको आपने स्वरूपसे भिन्न आपनी स्थितिवास्ते किसीदेश आदिकोंकी चाह नहीं ॥

शंका-जेकर साक्षीका देश कोई नहीं तो शास्त्रोंविषे साक्षीको सर्वगत सर्वसाक्षी क्यों कथन किया है ? सर्वगतका अर्थ-सर्व देशोंविषे स्थित है ॥

उत्तर-सर्वदेशकी कल्पनाकरके साक्षीको सर्वगत कहता है वास्तव साक्षीविषे सर्वगतता नहीं जिसते साक्षी अद्वितीय है और असंग है जैसे साक्षीविषे सर्वगतता वास्तव नहीं तैसे साक्षीविषे सर्वसाक्षिताभी वास्तव नहीं बुद्धि जिस जिस देशको और जिस जिस पदार्थको अंतरको और बाहरको और सर्वको कल्प्या है तिस देशविषे साक्षी स्थित कहता है और सर्वको बुद्धि जब कल्पती है तब सर्वका साक्षी कहता है तैसेही संपूर्ण पदार्थोंविषे जानना ॥ अर्थ-यह जब बुद्धि रूपको कल्पती है तब रूपका प्रकाशक हुया हुया परमात्मारूपका साक्षी कहता है इसी प्रकार जब बुद्धि रसादिक पदार्थोंको कल्पती है तब रसादिकोंको प्रकाशता हुया रसआदिकोंका साक्षी कहाता है ॥

शंका–जेकर साक्षीरूपता वास्तव नहीं तो परमात्माका वास्तव क्या स्वरूप है ?॥

उत्तर–वास्तव परमात्माका स्वरूप मनवाणीते परे है॥

शंका–जेकर वास्तव परमात्माका स्वरूप मनवाणीके विषे नहीं तो तिसको मैं कैसे ग्रहणकरूं ?॥

उत्तर–तिसको तू मत ग्रहण कर॥

शंका–जेकर परमात्मा मेरेकरके ग्रहणकरणेके योग्य नहीं तो यह जो तुमने विचारकरके कथन किया, अविद्याके नाश हुयाँहुयाँ परमात्मा शेष रहता है यह तुम्हारा कहना न बनेगा॥

उत्तर–जो जो तैंने ग्रहण किया हुया है आत्माते भिन्न द्वैत तिसकी मिथ्यारूपताके निश्चय करके तिसके त्याग कियाँहुयाँके तेरा स्वरूप आत्माही सत्यरूपताकरके शेष रहेगा॥

शंका–कथन कीनी जो तुमने युक्ति है तिसकरके आत्मा यद्यपि शेष रहता है तो भी तिसकी अपरोक्षताके वास्ते कुछेक प्रमाण चाहता है॥

उत्तर–तिसकी अपरोक्षताकेवास्ते कुछ प्रमाण नहीं चाहता जिसते तिसकास्वरूप स्वप्रकाश है प्रमाणकी अपेक्षा तो अनात्मवस्तुओंकी अपरोक्षतावास्ते होती है॥

शंका–आत्मा स्वप्रकाशताकरके आपनी अपरोक्षताके प्रमाणको नहीं चाहता इसज्ञानकी सिद्धिकेवास्ते प्रमाण चाहता है॥

उत्तर–इस ज्ञानवास्ते जेकर प्रमाण चाहता हैं तो गुरुके मुखते श्रुतियोंको पढी श्रुतियाँ इस ज्ञानकी सिद्धिविषे प्रमाण हैं और जेकर सर्व ग्रहण करी हुई अनात्मवस्तुके त्याग करणेविषे असमर्थ हैं तो

ज्ञानके कारण विचारकर शरणको प्राप्तहो विचारविषे तत्पर हुयाहुया अंतर बाहर परमात्माके अनुभवको कर बुद्धिने जो जो कल्प्याहै अंतर अथवा बाहर वस्तु तिस तिसकी साक्षीरूपताकरके तिस तिस वस्तुके अधीन परमात्माको अंतर बाहर अनुभव कर ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां दशमं नाटकदीप प्रकरणं समाप्तम् ॥ १० ॥

अथ ब्रह्मानन्देयोगानन्दप्रकरणम् ११.

दोहा–श्रीमद्गंगारामगुरु, चरणकमलको ध्याय ॥
ब्रह्मानंदभाषाकरौं, ब्रह्मानंद हृदि पाय ॥ १ ॥

श्रीसद्गुरुप्रसाद ॥ अब ब्रह्मानंदनाम ग्यारहवें प्रकरणका आरंभ करते हैं इस ब्रह्मानंदके पाँचअध्याय हैं प्रथमाध्यायकानाम योगानंद है सो पंचदशीका आदिसे ग्यारहवाँ प्रकरण है इसविषे ब्रह्मानंदको कथन करेंगे सो ब्रह्मानंद एक नाम है और एक ब्रह्मका स्वरूप जो आनंद है तिसका नाम है तिस दोप्रकारके ब्रह्मानंदको संपूर्ण जानकरके इसलोकके तापोंके समूहको जो शरीरविषे अहंता अभिमानकरके प्राप्त होते हैं और पुत्रादिकोंविषे ममता अभिमानकरके प्राप्त होते हैं और शत्रुआदिकोंविषे जो क्रोधसे प्राप्त होते हैं और परलोकके जो संपूर्ण ताप हैं नरकोंकाभय और स्वर्गादिकोंकी अभिलाषारूप तिन तापोंके समूहको त्यागकरके सुखरूप ब्रह्म होजाताहै ब्रह्मज्ञान संपूर्ण अनर्थोंके अभावका कारण है और संपूर्ण वांछितअर्थोंकी प्राप्तिका कारण है इस वार्ताविषे अनेक श्रुतियाँ स्मृतियोंके वचन प्रमाण हैं ताते प्रथम तैत्तिरीय उपनिषद्के वचनको श्रवणकर–ब्रह्मवेत्ता पुरुष ब्रह्मानंदको प्राप्त होता है ब्रह्मवेत्ताका अर्थ यह है–देशकालवस्तुके परि-

च्छेदसे रहित परमात्माको जो आत्मरूपताकरके जाने सो ब्रह्मवेत्ता कहाता है इसकरके ब्रह्मज्ञानको वांछितअर्थकी प्राप्तिकी कारणता सिद्ध भई अब ब्रह्मज्ञानको अनर्थोंके अभावकी कारणता छांदोग्यउपनिषद्विषे जो कथन करी है तिसको श्रवणकर-भूमा है नाम जिसका ऐसा जो देशकालवस्तुके परिच्छेदसे रहित सुखरूप आत्माहै तिसको जाननेवाला जो पुरुष है सो शोकसे रहित होजाता है शोकनाम अज्ञानते उत्पन्नभया जो संसार तिसका है तिस संसारको आत्मवेत्ता तरजाता है ॥ तात्पर्य यह अज्ञानी संसारको सत्य जानकरके तिसकी चिंताविषे डूबजाता है और ज्ञानी तिसको मिथ्या जानकरके तिसकी चिंताविषे डूबता नहीं ॥

शंका-कथन करचा जो तुमने तैत्तिरीयउपनिषद्का वाक्य तिसविषे ब्रह्मज्ञानको परप्राप्तिविषे कारणता प्रतीत होती है आनंदप्राप्तिविषे कारणता नहीं प्रतीत होती ॥

उत्तर-ब्रह्मज्ञानको आनंदके प्राप्तिकी कारणता कथन करणेवाले तैत्तिरीय उपनिषद्के वाक्य श्रवण कर-ब्रह्म सत्य है ब्रह्म चैतन्यरूप है अनंत है ब्रह्मवेत्ताओंकरके प्राप्त होने योग्य सच्चिदानंदरूप आत्माते आकाशकी उत्पत्ति भई इस प्रकारकरके कथन करचा जो है आत्मा सो रसरूप है ॥ अर्थ यह-जो आनंदरूप है तिस आनंदरूप ब्रह्मको 'ब्रह्म अहं अस्मि' इसज्ञानते प्राप्त यह करके अपरिच्छिन्न निरतिशय सुखवाला होता है ॥ ब्रह्म और आत्माकी एकता ज्ञानसे विना और साधनोंकरके अपरिच्छिन्न निरातिशय सुखको नहीं प्राप्त होता॥जिसकालविषे जिज्ञासु गुरुके निकट जाकरके श्रवण करता है और तिसते मनन निदिध्यासनको करके ब्रह्म अहंअस्मि ऐसी दृढ संशय विपर्ययसे रहित स्थितिको ब्रह्मविषे प्राप्त होता है तब भयते रहित होजाता है भयके कारणके नाशहुयां भयते रहित होता है भयका

कारण आपनेसे भिन्न दूसरी वस्तु होती है॥तात्पर्य यह संपूर्ण जगत्को मिथ्या जाननेते भयनाश होजाता है जैसे स्वप्नते जागे पुरुषको स्वप्नके सिंह सर्प चोरआदिकोंते भय नाश होजाता है जिस ब्रह्मविषे स्थितिते भयका नाश होता है तिस ब्रह्मका स्वरूप श्रवणकर-ब्रह्म इंद्रियोंके विषे नहीं और जैसे मन प्राणआदिक ममताका विषे मेरे प्राण मेरा मन इस प्रतीतिकरके होते हैं तैसे ब्रह्म ममताके विषे नहीं जिसते ब्रह्मका अपना स्वरूपहै ब्रह्मका शब्दकरके कथन नहीं होता और ब्रह्मका आधारभी कोई नहीं ब्रह्म आपनी महिमाविषे स्थित है ॥ इस अर्थविषे ज्ञानवानोंका अनुभव प्रमाण है ऐसे ब्रह्मविषे जब जिज्ञासु स्थितिको प्राप्त होता है तिसीकालविषे मोक्षरूप ब्रह्मस्वरूप होजाता है ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मरूप होता है ऐसे श्रुतिभी कथन करती है और जिसकालविषे यह पुरुष अदृश्यताँदिगुणोंवाले आत्मरूप ब्रह्मविषे थोडासाभी भेद देखता है यह मेरेकरके उपासनाकरणे योग्य है इसकी मैं उपासना करणे वालाहूं ऐसे भेदको जब परमात्माविषे देखता है तिसी कालविषे तिस भेद देखणेवाले पुरुषको भय प्राप्त होता है ॥ इस अर्थके दृढकरणेवास्ते ब्रह्म और आत्माकी एकताके ज्ञानसे रहित बडे प्रतापवाले देवताओंकोभी भयकी प्राप्ति होती है ॥ इस अर्थको दिखलावनेवास्ते तैतिरीयउपनिषद्विषे पवन, सूर्य, अग्नि, इंद्र, यम इनोंको भय कथन कर्या है पिछले जन्मविषे यह पाँचो देवता परमात्माका और अपना भेद देखते भये हैं तिसकरके इस पवनआदिजन्मको धारण करके परमात्माके भयकरके धर्मको जानते हुयेहुयेभी विचरते हैं यह अर्थ कठवल्ली उपनिषद्विषेभी कथन किया है ॥ जेकर देवताओंकोभी भेद देखणेते भयकी प्राप्ति होती है तो मनुष्यको भी भेदके देखणेते भय प्राप्त होता है इसका तो क्या कहना है ॥ तात्पर्य यह ब्रह्म विषे भेद दृष्टिको त्यागकरके मैं ब्रह्महूं और संपूर्ण जगत्

ब्रह्म है ऐसी निष्ठा कीनी चाहिये इस निष्ठाकेविना दुःखोंका अभाव नहीं होता ॥

शंका-आत्मवेत्ता शोकको तरजाता है इसते आदिलेके कथन किये जो तुमने वचन तिनविषे ब्रह्मानंदके ज्ञानको अनर्थोंके अभावकी कारणता प्रकट नहीं प्रतीत होती ॥

उत्तर-ब्रह्मानंदके ज्ञानको अनर्थोंके अभावकी कारणताके प्रकट कथन करणेवाले वचनको श्रवणकर-ब्रह्मका स्वरूप जो आनंद है तिसके जाननेवाला पुरुष किसीते भयको प्राप्त नहीं होता इसलोक विषे भयका कारण सिंह सर्प चोरआदिक हैं और परलोकविषे भयका कारण पापादिक हैं सिंह सर्प चोरादिक भयका कारण देहाध्यास करके होते हैं सो देहाध्यास ज्ञानवान्का ज्ञानकरके नाश होजाता है और पापोंका भय पापकरणेवालेको होता है पापोंका करणा काम-क्रोधादिकोंकरके होता है काम क्रोधादिक द्वैत प्रतीतिसे होते हैं और द्वैतप्रतीति अज्ञानसे होती है ताते ज्ञानकरके अज्ञानका नाश होनेते ज्ञानवान्को पापोंका भय नहीं होता ॥

शंका-ज्ञानवान्को पापादिकोंका भय नहीं होता यह वार्ता तुमने किसते जानी ? ॥

उत्तर-यह वार्ता हमने बृहदारण्यकउपनिषद्के वाक्यते जानी है तिसका अर्थ यह है-ज्ञानवान्को पुण्यपाप कर्मरूपाग्नि नहीं तपावती सो पुण्यपाप दोप्रकारकरके तपावते हैं एक तो यह है मैं पुण्य क्यों न करता भया ? इस प्रकार पुण्य न करचा हुयाँ तपावता है और पाप किया हुया तपावता है मैं पापको क्यों करता भया इसप्रकारकरके अज्ञानी चिंताकरके सदा पडातता है ज्ञानवान्को पुण्यपाप नहीं तपावते इसविषे कारण क्या है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-ज्ञानवान् पुण्यपापको मिथ्या बुद्धिकरके त्याग देता है और आत्माको सदा चिंतन करता है इसते ज्ञानवान्को पुण्यपाप नहीं तपावते जो सच्चिदा-

नंद वस्तु सूर्यविषे स्थित है और जो सच्चिदानंद वस्तु पुरुषविषे स्थित है सो एक है इस प्रकार जानता हुया स्थित जो आत्मा पुरुष है जो सर्व अंतःकरणवृत्तियोंका प्रकाशक है तिसको सच्चिदानंद ब्रह्मरूपताकरके चिंतन करता है ज्ञानवान् देह, इंद्रियाँ मनकी प्रवृत्तिकरके उत्पन्न भये जो पुण्यपाप कर्म तिनोको आत्मरूपता करके देखता है जिसते ज्ञानवान्का यह निश्चय होता है जो द्रष्टाकरके प्रतीत होता है दृश्य सो संपूर्ण आत्मा है तिसकारणते आत्मरूपताको प्राप्त हुयेहुये पुण्य पाप पुण्यपापके अभिमानते रहित आत्मरूपज्ञानवान्को नहीं तपावते जैसे सूर्य सूर्यको नहीं तपावता और ज्ञानीको पुण्यपाप तपावते हैं जैसे-सूर्य ज्येष्ठ आषाढविषे पृथ्वीको तपावता है काहेते जो पृथ्वी सूर्यसे भिन्न है तैसे पुण्यपापकर्म देहाभिमानी अज्ञानीते भिन्न है इसते अज्ञानीको तपावते हैं ॥

शंका-यह जो तुमने कह्या ज्ञानी पुण्यपापका आत्मरूप देखता है तिसते ज्ञानीको पुण्यपाप नहीं तपावते सो अयुक्त है जिसते पुण्य पाप प्रतीत होवे तो तिनको आत्मरूप देखणाभी बने सो तो पुण्यपाप अनगिन्त हैं जिसते जीवोंके जन्मभी अनगिन्त हैं अनादिसंसारविषे और फलभोगसे विना पुण्यपापका नाश नहीं होता भावें कल्पोंके करोडों सैकडों बीतजावें तोभी ऐसे शास्त्र कथन करता है इसते जो बहुतकालके कियेहुये कर्म हैं सो पुरुषको प्रतीत नहीं होते ताते तिनोंकी आत्मरूपताकरके चिंतन नहीं बनता इसते उन कर्मोंविषे चिंताकरके ज्ञानवान्भी तपेगा ॥ ८ ॥

उत्तर-तत्त्वज्ञानकरके कारणसहित संपूर्ण कर्मोंका नाश होजाता है जैसे रस्सीके ज्ञानकरके सर्पका जो भ्रम तिसकी चिंता नहीं रहती तैसे ज्ञानवान्को कर्मोंकी चिंता नहीं रहती कर्मोंकी चिंताका कारण आत्म और अनात्माका तादात्म्याध्यासरूप आत्माको असंग जान-

णेते हृदयकी गाँठ खुलजाती है और अनात्माका अत्यंताभाव जानणेते कर्मोंका नाश होजाता है ॥ कर्म तीनप्रकारके होते हैं संचित, आगामी, प्रारब्ध तिन तीनप्रकारके कर्मोंविषे संचितकर्म पुण्यपापरूप नाश हो जाते हैं ॥ जिसते कर्मोंका कारण अज्ञान नाश होगया है और ज्ञानवान्का संशय संपूर्णज्ञानवान्के क्षीण होजाते हैं तिन संशयोंका स्वरूप श्रवण कर–आत्मा देहआदिरूप है अथवा देह आदिकोंसे भिन्न है तो विचारकरके यह जान्याजाता है कि, आत्मा देहआदिकोंसे भिन्न है जिसते जाग्रत्अवस्थाके शरीरको त्यागकरके स्वप्नशरीरको ग्रहणकरके तिसविषे अहंअभिमानको प्राप्त होता है जैसे जाग्रत्शरीर विषे अहंअभिमानता ताते दोनोंशरीरोंविषे अहंअभिमानको भिन्नभिन्न कालविषे प्राप्त होता है ताते किस शरीरसाथ आत्माका अभेद है और किसशरीरते भेद है यह विचारकरके कहो तब विचारकरणेसे यह निर्णय भया कि, आत्मा दोनों शरीरोंते भिन्न है जिसते जाग्रत्शरीरके अभाव हुयाँहुयाँ भी स्वप्नविषे आत्मा विद्यमान है और स्वप्नशरीरके अभाव हुयाँहुयाँ भी जाग्रतअवस्थाविषे आत्मा विद्यमान है ताते यह सिद्ध भया कि, आत्मा देहते भिन्न है इसीतरह आत्मा इंद्रियाँ प्राण आदिकोंते भिन्न है ऐसे निश्चय हुयाँहुयाँ भी अज्ञानीको और संशय उत्पन्न होता है आत्मा कर्ता भोक्ता है अथवा असंग निर्विकार है ॥ आत्मा असंग निर्विकार है यह निश्चय हुयांहुयां भी ज्ञानीको और संशय उत्पन्न होता है ॥ आत्मा ब्रह्मरूप है अथवा ब्रह्मते भिन्न है आत्मा ब्रह्मरूप है ऐसे निश्चय हुयाहुया भी अज्ञानीको और संशय उत्पन्न होता है आत्माके ज्ञानते मोक्ष होता है अथवा नहीं होता ॥ आत्मज्ञानसे मोक्ष होता है इस निश्चयके हुयाँहुयाँ भी अज्ञानीको और संशय उत्पन्न होताहै आत्मज्ञान कर्मउपासनासहित मोक्षका कारण है अथवा केवल मोक्षका कारण है इसते आदिलेकरके संपूर्ण संशय छेदे जाते

है जैसा जिस वस्तुका स्वरूप है तैसा तिस वस्तुके जान्या हुयाँ हुयाँ तिसवस्तुविषे फिर संशय विपर्यय नहीं होता ॥

शंका–यह जो तुम कहते हो कि, केवल ज्ञानते मोक्ष होता है सो अयुक्त है जिसते श्रुति स्मृतिरूप शास्त्र केवल कर्मोंको अथवा ज्ञान उपासना सहित कर्मोंको मोक्ष कारणता कथन करता है केवल कर्मोंको मोक्षकी कारणताके कथन करणेवाली ईशावास्यउपनिषदकी श्रुति है सो यह कहती है कि, सौवर्षपर्यंत पुरुषकी आयुर्बल है सो सौवर्ष पर्यंत कर्मोंको करता हुया जीवणेकी इच्छाको करे॥ इस प्रकार कर्मोंके करणेवाले पुरुषको कर्म लिपायमान नहीं होता ॥ अर्थ–यह जो पुरुष कर्मोंके करणेसेविना मोक्षको प्राप्त होजाता है और किसीसाधनकरके कर्मोंके लोपका अभाव नहीं होता इस श्रुतिकरके केवल कर्म मोक्षका कारण प्रतीत होता है और गीताविषे कथन कऱ्या है केवल कर्मोंकरके राजा जनकसे आदिलेकरके बहुते संसिद्धिको प्राप्त भये हैं संसिद्धि नाम मोक्षकाहै ज्ञान सहित कर्म उपासना मोक्षका कारणहै इसविषे भी ईशावास्यउपनिषद्की श्रुति प्रमाण है तिसविषे यह कथन किया है विद्याको और अविद्याको विद्याका अर्थ–ब्रह्मविद्या है और अविद्याका अर्थ–कर्मउपासना है इन दोनोंको इकट्ठा जाणता है अर्थ–यह ज्ञानकी प्राप्ति हुयाँहुयाँ भी जो पुरुष कर्म उपासनाको करता है सो पुरुष कर्म उपासना करके पापोंको और विक्षेपको तर जाताहै और ब्रह्मविद्याकरके विदेहकैवल्यको प्राप्त होता है और स्मृतिविषे यह कथन कऱ्या है जैसे अन्नके साथ मिलया हुयाँ सहित और सहितके साथ मिल्याहुयाँ अन्न सो बहुत उत्तम औषध है तैसे तप और ब्रह्मविद्या दोनों मिलेहुये परम औषध हैं तपका अर्थ–यह है मन और इंद्रियोंकी एकाग्रता रूप उपासना और वर्णाश्रमका धर्मरूप जो कर्म है ताते केवल ज्ञानको मोक्षकारणता कहणी अयुक्त है।

उत्तर-केवल ज्ञानते मोक्ष होता है ज्ञानसहित कर्मउपासनाते मोक्ष नहीं होता जैसे दीपकसे अंधकार नाश होता है दीपकसहित कर्म उपासनाते अंधकार नाश नहीं होता और श्रुतिस्मृतिशास्त्रका विरोध भी नहीं जिसते श्रुतिस्मृतिका अर्थ और है श्रुतिविषे जो कहा है कर्म लिपाय मान नहीं होते तिसका अर्थ यह है पाप कर्म लिपायमान नहीं होता ॥ तात्पर्य यह जो पुरुष सारी आयुर्बल कर्मोंको करता है तिसको नरक प्राप्त नहीं होता ॥ यह नहीं, तिसका अर्थ जो मोक्षकी प्राप्ति हो जाती है जिसते जीवके संचित कर्म बहुत हैं तिनकरके अज्ञानीको जन्मकी प्राप्ति अवश्य होवेगी और गीताविषे संसिद्धि शब्दकर ज्ञानका साधन चित्तकी शुद्धि कथन करी है ताते केवल कर्म मोक्षका कारण नहीं और ज्ञानसहित कर्म उपासनाभी मोक्षका कारण नहीं जिसते विद्याशब्दकरके उपासनाका कथन है निर्गुणब्रह्मका साक्षात्कारका कथन नहीं ताते निर्गुण ब्रह्मसाक्षात्कार कर्मोंके साथ मिलकरके मोक्षका कारण नहीं जिसते शास्त्रविषे ज्ञानसे भिन्न और साधनोंको मोक्षकारणताका निषेध किया है सो शास्त्र श्रवणकर--श्वेताश्वतरउपनिषद्की श्रुति कहती है एक आत्माके जानने करके मृत्युको उल्लंघ जाताहै अर्थ यह-जो मोक्षको प्राप्त होजाता है मोक्षकी प्राप्ति वास्ते ज्ञानसे भिन्न और कोई मार्ग नहीं तात्पर्य यह केवल कर्मोंसे भी मोक्ष नहीं होता और ज्ञानसहित कर्मोंसे भी मोक्ष नहीं होता ॥

शंका-तुमने जो कथन करी है श्रुतियाँ तिनोंविषे यह अर्थ प्रधानता करके प्रतीत होता है ब्रह्मज्ञानके प्राप्त हुयाँहुयाँ इसलोकविषे दुःखोंका अभाव होजाता है और ब्रह्मज्ञानते विना इसलोकविषे दुःख प्राप्त होते हैं पर परलोकके दुःखोंका अभाव तो ब्रह्मज्ञानकरके नहीं प्रतीत होता ताते परलोकके दुःखोंकी चिंता ज्ञानवान्को तपावेगी॥

उत्तर-परलोकके दुःखोंकी चिंता ज्ञानवान्को नहीं तपावती, पर

लोकनाम है इस शरीरको त्यागकरके और जन्मकी प्राप्तिका और और जन्मकी प्राप्ति अज्ञानकरके होती है और ज्ञानवान्को और जन्मकी प्राप्ति नहीं होती जिसते तिसका ज्ञानकरके नाश होगया है अज्ञान ऐसे श्वेताश्वतरउपनिषद्की श्रुति कथन करती है तिसका अर्थ यह है देव जो है स्वप्रकाश ब्रह्म अपना आप तिसके अपरोक्ष अनुभवको करके स्थित हुयाँ जो ज्ञानवान् है तिसकी कामक्रोधादिरूप फाँसियाँ सर्व नाश होजाती हैं कामक्रोधादि क्लेशरूप फाँसियोंके नाश होनेकरके और जन्मका कारण कर्मोंका आरंभ नहीं होता और संचितकर्म ब्रह्मज्ञान करके नाश होजाते हैं तिसते ज्ञानवान् और जन्मको प्राप्त नहीं होता ताते ज्ञानवान्को परलोकके दुःखोंकी चिंताभी नहीं होती ॥

शंका-शोकतरणआदिरूप फल श्रवण करता है और तिसका अनुभव नहीं होता जिसते ज्ञानवानोंकी इष्टद प्राप्ति और अनिष्टके दूरकरणेवास्ते प्रवृत्ति देखती है ॥

उत्तर-दृढपरोक्षज्ञानियोंकी इष्टप्राप्ति और अनिष्ट निवृत्ति वास्ते प्रवृत्ति नहीं होती ऐसे कठवल्लीउपनिषद्की श्रुति कहती है तिसका अर्थ यह है ब्रह्मचर्यआदि साधनोंसंयुक्तपुरुष सच्चिदानंदरूप परमात्म-देवको संशयविपर्ययसे रहित आत्मरूप जानकरके हर्ष शोकको इसी जन्मविषे त्याग देता है और यह जो पीछे कथन करया कि, कर्मरू-पाग्निते उत्पन्न हुई हुई चिंता ज्ञानवान्को नहीं तपावती इसविषे कुछ अधिकताको कथन करणेवाली बृहदारण्यकउपनिषद्की श्रुति है तिसके अर्थको श्रवण कर-पुण्यपापरूप कर्म अज्ञानीको दो प्रकारसे तपावता है॥ कियाहुया पापकर्म शोककरके तपावता है और न किया-हुया पाप हर्षकरके तपावता है और पुण्य न कियाहुया शोककरके तपावता है और पुण्य कियाहुया हर्षकरके तपावता है तापना चित्तके

विकारका है तांते जैसे शोकरूप चित्तका विकार ताप है तैसे हर्षरूप चित्तका विकार ताप है यह दोनोंप्रकारका पापकर्मकरके ताप और दोनोंप्रकारका पुण्य कर्मकरके ताप ज्ञानवान्को नहीं तपावता जिसते ज्ञानवान् संपूर्ण विकारोंसे रहित शुद्ध ब्रह्मरूप आपने आपको जानता है और केनउपनिषद्विषे यह कथन किया है अतिदुर्लभ मनुष्य-जन्मको पायकरके परमात्माको आत्मरूप जाने तब जन्ममरणसे रहित परमात्मरूप सत्य होजाताहै और जेकर मनुष्य शरीरको धारकरके परमात्माको आत्मरूप न जाने तब बडे कष्टोंको प्राप्त होता है अर्थ यह जो चौरासीलक्ष योनिविषे भटकता फिरता है और जेडेपुरुष ब्रह्मको आत्मरूप जानते हैं सो पुरुष मोक्षको प्राप्त होते हैं और जेडेपुरुष ब्रह्मको आत्मरूप नहीं जानते सो पुरुष दुःखोंको प्राप्त होते हैं सुखोंको नहीं प्राप्त होते और तिस ब्रह्मको जिन जिन देवता-ओंने आत्मरूपताकरके जान्या है सो सो देवता ब्रह्मरूप होजाते भये तैसे ऋषियोंविषे भी जो जो ऋषि ब्रह्मको आत्मरूपजानते भये सो सो ऋषि ब्रह्मरूप होजाते भये तैसे मनुष्योंविषेभी जो जो मनुष्य ब्रह्मको आत्मरूप जानते भये सो सो मनुष्य ब्रह्मरूप होजाते भये तिसपरमात्माको संशय विपर्यसे रहित अपरोक्ष जानकरके पुरुष मृत्युके मुखते छूटजाता है तात्पर्य यह—जो जन्मको प्राप्त होता है तो मृत्युका भोजन होता है और ज्ञानवान् वर्तमानशरीरको त्यागकर फिर जन्मको नहीं प्राप्त होता तिसते मृत्युका भोजन नहीं होता किंतु अविनाशी ब्रह्मरूप होजाता है जो मृत्युकोभी ग्रास करलेता है उसते आदिलेकरके बहुत श्रुति वे स्मृतियाँ पुराणोंके वच-नोंसहित यह कथन कऱ्या है ब्रह्मज्ञानके हुयाँहुयाँ दुःखशोक चिंता रूप अनर्थोंका अभाव होजाता है और परमानंदकी प्राप्ति होती है सो स्मृतियाँ और पुराणोंके वचनको श्रवणकर आत्मज्ञानते दुःखोंके

अभावको जेडे कहते हैं ते सुखोंकी प्राप्तिको संपूर्णभूतोंविषे सच्चिदा-नंद आत्माको और सच्चिदानंद आत्माविषे कल्पित संपूर्ण भूतोंको जो संशय विपर्ययसे रहित देखता है तिसकानाम आत्मयाजी है अर्थ–यह सो पुरुष आत्मयज्ञके करणेवाला है ऐसा जो आत्मयाजी पुरुष है सो चक्रवर्ति राजको प्राप्त होता है तात्पर्य–यह जैसे चक्रवर्तिराजाके ऊपर किसका हुकुम नहीं होता तैसे ब्रह्मवेत्ताके ऊपर किसीदेव-ताका हुकुम नहीं होता जीवकी आत्माके ज्ञानते परमशुद्धि होती है तात्पर्य–यह अज्ञानरूप मैलका ज्ञानकरकेही अभाव होता है और जिचरतीकर अज्ञान है तिचरतीकर परम शुद्धि नहीं होती ॥

शंका–ज्ञानसे ब्रह्मानंदकी प्राप्ति होती है ताते जानीता है औरभी कोई आनंद है जैसे चिट्टावस्त्र इस कहणेते औरभी लाल पीलाआदिक वस्त्र प्रतीत होते हैं जेकर और लाल पीला आदिकवस्त्र न होवे तो वस्त्रको चिट्टा कहणा नहीं बनता सो आनंद कितने प्रकारका और कैसा है ? ॥

उत्तर–आनंद तीन प्रकारका है एक ब्रह्मानंद, दूसरा विद्यानंद, तीसरा विषयानंद । विषयानंद और विद्यानन्द यह दोनों ब्रह्मानंदते उत्पन्न होते हैं इसते ब्रह्मानंद प्रधान है ताते प्रथम तीनअध्यायोंकरके ब्रह्मानंदका निरूपण करते हैं इस ब्रह्मानंदका निरूपणके आदिविषे तैत्तिरीयउपनिषद्की श्रुतिके विचार करचाहुया ब्रह्मानंदरूप प्रतीत होताहै सो तैत्तिरीयउपनिषद्के विचारको श्रवणकर–वरुणनामदेवता-का भृगुनामपुत्र होता भया सो ब्रह्मजिज्ञासाकरके वरुणके पास आवता भया और कहता भया हे पिताजी ! मुझे ब्रह्मका उपदेश करो तब वरुण तिसके ताईं ब्रह्मका लक्षण कथन करता भया हे पुत्र ! जिसते यह संपूर्णभूत उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हुये हुये जिसकरके जीवते हैं और मरे हुए जिसविषे लयको प्राप्त होते हैं तिसके जाननेकी इच्छा

कर सो ब्रह्महै ऐसे ब्रह्मके लक्षणको सुनकरके भृगु अन्नमयादिक कोशोंविषे ब्रह्मके लक्षणके अभावको निश्चयकरके अन्नमयादिक कोशोंकी अब्रह्मरूपताको निश्चयकरता भया पीछे आनंदमयकोशका अधिष्ठान आनंदमयकोशका पाँचवाँ अवयव पुच्छरूप बिंबरूपानंदको ब्रह्मरूपकरके जानता भया जिसते ब्रह्मका लक्षण जगत्की उत्पत्ति स्थिति लयकारणरूप बिंबरूप आनंदविषे बनताहै यह आनंदमयकोशके पाँच अवयवहैं तिनको श्रवण कर वांछितविषयके दर्शनते उत्पन्न भया जो सुख सो आनंदमयका शिर है और वांछितविषयके लाभते उत्पन्न भया जो आनंदमयका संज्ञापरहै और वांछितविषयके भोगनेते उत्पन्न भया जो सुख सो आनंदमयकोशका खवापर है और सामान्य सुख आनंदमयकोशका शरीरहै और ब्रह्म आनंदमय कोशका पुच्छ है तात्पर्य यह तो ब्रह्म आनंदमयकोशका अधिष्ठान है ॥

शंका-भृगु आनंदविषे ब्रह्मलक्षणको कैसे जानता भया ॥

उत्तर-आनंदतेही संपूर्णभूत उत्पन्न होते हैं अर्थ-यह स्त्री पुरुषके संयोगरूप आनंदते प्राणी उत्पन्न होते हैं और विषयभोग है कारण जिसका ऐसा जो आनंद तिसकरके प्राणी जीवते हैं और सुषुप्तिअवस्थाविषे स्वरूप आनंदविषे लीन होजाते हैं जिसते सुषुप्तिअवस्थाविषे आनंदसे भिन्न किसीपदार्थका अनुभव नहीं होता इसते सुषुप्ति अवस्था विषे आनंदविषे संपूर्णप्राणी लीन होजाते हैं यह जानता भया इसप्रकार आनंदविषे ब्रह्मके लक्षणको भृगु जानता भया इस कारणते आनंदरूप ब्रह्म है सो सुषुप्तिकालविषे सबोंको अनुभवकरके प्रतीत होता है इसते तिसविषे संशय नहीं किया चाहता इस प्रकार तैत्तिरीयउपनिषद्की श्रुतिके विचार करके ब्रह्मकी आनंदरूपता प्रतीत होती है और छांदोग्यउपनिषद्की श्रुतिके विचार करके भी ब्रह्मकी आनंदरूपता प्रतीत होतीहै तिसको श्रवणकर-छांदोग्योपनि-

षद्के सातवें अध्यायाविषे सनत्कुमारोंका और नारदका संवाद है तिसविषे ब्रह्मको भूमा कथन किया है तिस भूमाका यह लक्षण है जिसविषे स्थित हुयाहुया आपनेते भिन्न न देखता है न सुनता है न जानता है सो भूमा है ताते यह सिद्धभया जो भूमा आनंद है जिसते सुषुप्ति अवस्थाविषे स्थित हुयाहुया आपनेते भिन्न न देखता है न सुनता है न जानता है आकाशादिक भूतोंकी उत्पत्तिसे प्रथम और आकाशादिक पंचभूतोंका कार्य अंडज जरायुज आदिक भूतोंकी उत्पत्तिसे प्रथम ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयरूप त्रिपुटीके अभावते भूमा होता भया भूमाका अर्थ देशकालवस्तुके परिच्छेदसे रहित परमात्मा ज्ञाताज्ञानज्ञेयरूप त्रिपुटी जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम प्रलयावस्था विषे है नहीं यह वार्ता सर्व वेदांतों करके प्रसिद्ध है अब ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयके स्वरूपको श्रवणकर-परमात्मासे उत्पन्न भया जो बुद्धि उपाधिक जीव विज्ञानमय जिसका नाम है सो ज्ञाता है और मनविषे जो चैतन्य प्रतिबिंबभावको प्राप्त भया है और मनोमय है नाम जिसका सो ज्ञान है और शब्दस्पर्शादि पाँचोंविषे ज्ञेय है सो प्रकट है ॥ ज्ञाता ज्ञानज्ञेय तीनों कार्यरूप होनेते आपनी उत्पत्तिसे प्रथम कारणसे भिन्न न होते भये जैसे घटउत्पत्तिसे प्रथम मृत्तिकासे भिन्न नहीं ॥ ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय तीनोंके अभाव हुयाँहुयाँ द्वैतसे रहित पूर्ण आत्मा अनुभव करताहै ॥ ज्ञानवानोंने समाधि अवस्थाविषे और सर्व जीवोंने सुषुप्ति और मूर्च्छा अवस्थाविषे त्रिपुटीसे रहित आत्माका अनुभव करता है जिसते सुषुप्तिते उठकरके पुरुष यह कहता है मेरेको इतनाकाल किसी वस्तुकी कुछ खबर न रही ताते द्वैतके न देखनेवाला द्वैतसे रहित आत्मा सुषुप्तिअवस्थाविषे और मूर्च्छाअवस्थाविषे सर्वको अनुभव होता है ॥

शंका-सुषुप्ति और मूर्च्छाअवस्थाविषे द्वैतसे रहित अद्वैत आत्माका निश्चय होवो पर प्रसंगमें क्या आया ? ॥

उत्तर-प्रसंगाविषे यह आया आत्मा सुषुप्ति अवस्थाविषे ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयरूप परिच्छिन्नताके कारणते रहित पूर्ण है तैसे जगत्की उत्पत्तिसे प्रथमभी परिच्छेदका कारण जो त्रिपुटी है तिसके अभाव होनेते आत्मा पूर्ण है ॥

शंका-ब्रह्मकी पूर्णता होवे पर ब्रह्मकी आनंदरूपता कैसे सिद्ध भई ॥

उत्तर-जो भूमा है सो सुख है परिच्छिन्नवस्तुविषे सुख नहीं ऐसे अन्वयव्यतिरेककरके भूमाकी सुखरूपता सनत्कुमारोंने नारदके ताईं कथन करी है जो पीछे कथन किया है द्वैतसे रहित भूमा सो सुखरूप है जिसते अद्वितीयविषे दुःखके कारणका अभाव है और देशकाल वस्तुके परिच्छेदवाली जो परिच्छिन्नवस्तु है तिसविषे सुख नहीं ॥

प्रश्न-नारदको सनत्कुमारोंका शिष्य होनेविषे क्या कारण है ॥

उत्तर-शोकके दूरकरणेवास्ते नारद सनत्कुमारोंका शिष्य हुवा है नारदको शोक क्यों होता भया ऐसा पूछे तो श्रवण कर-नारद आत्मज्ञानसे रहित होनेसे अतिशोकको प्राप्त होता भया पुराणोंको और अनेकप्रकारके शास्त्रोंको पढकरके भी नारदको बहुत शोक प्राप्त होता भया ॥

शंका-वेदशास्त्रके ज्ञानको शोकके नाशकी कारणता प्रसिद्ध है सो नारदको अतिशोकका कारण क्यों होता भया ॥

उत्तर-आत्मज्ञानते रहितको वेदशास्त्रका पठना अतिशोकोंका कारण है जिसते अज्ञानीको वेदशास्त्रके पढनेते प्रथम तीन ताप होते हैं अध्यात्म, अधिभूत, अधिदैव और वेदशास्त्रके पढनेते चार ताप और होते हैं एक ग्रंथके पाठकापठना और दूसरा भूलजाणेका ताप तीसरा आपने अधिक पढेहुयेते मानके भंगकाताप और चौथा आपसे थोडा

पढेहुये देखकरके अभिमानरूप ताप यह चारोंताप पढेहुये बहिर्मुखोंको अधिक होते हैं जैसे घृतदुग्धआदिकपदार्थ आरोग्य पुष्टिकरणेवाले हैं पर रोगीको रोगके बधावनेवाले हैं तैसे वेदशास्त्रका पढना विवेकीको तापोंके अभावका कारण है पर बहिर्मुख अविवेकीको तापोंके बधनेका कारण है ॥

शंका–सर्व अर्थोंके जाननेवाले नारदको इसप्रकार अधिक शोक होता भया यह तुमने किसते जान्या है ॥

उत्तर–नारदके वचनते हम जानते हैं यह नारदकाही वचन है हे भगवन् ! सनत्कुमारोंके आगे वेदशास्त्रोंको पढकरकेभी आत्मज्ञानते रहित जो मैंहूं सो शोकको करता हूं मैंने शोकके पारको प्राप्त करो ॥ अर्थात् मेरेको शोकसे रहित करो ॥ इसप्रकार शोककी निवृत्तिके उपायको पूछ्याँ हुयाँ सनत्कुमार ऋषि नारदकेताईं यह कहते भये हे नारद ! सुखरूप ब्रह्मका ज्ञान शोकनिवृत्तिका उपाय है सो ब्रह्म कैसा है भूमा है ॥ अर्थ यह देशकालवस्तुके परिच्छेदसे रहित हैं ॥

शंका–यह जो तुमने कहा कि, परिच्छिन्नवस्तुविषे सुख नहीं सो अयुक्त है ॥ जिसते पुष्पमालादिक विषयोंते उत्पन्न हुये हुये सुख बहुत प्रकारके देखे हैं ॥

उत्तर–पुष्पमालासे आदिलेकरके विषयोंको दुःखके संबंधवाला होनेकरके दुःखरूपता मुनि सनत्कुमारको निश्चित है ॥ जैसे विषवाले लड्डुओंको विषरूपता है ॥ ताते अल्पवस्तुविषे सुख नहीं ॥ जिसते विषयोंते उत्पन्न हुया हुया सुख हजारों शोकोंकरके युक्त है इसते दुःखरूप है ॥ ऐसा आपने मनविषे मानकरके सनत्कुमार मुनीश्वर नादरके ताईं कहते भये ॥ अल्पवस्तुविषे सुख नहीं अल्पका अर्थ परिच्छिन्न है ॥

शंका-जेकर द्वैतविषे सुख नहीं तो मत होवे ॥ पर अद्वैतविषे भी सुख नहीं और जेकर अद्वैतविषे सुख होवे तो विषय सुखकी न्याईं प्रतीत होवे, जिसते नहीं प्रतीत होता, इसते अद्वैतविषे सुख है नहीं ॥ और जेकर कहैं अद्वैतविषे सुख प्रतीत होता है तो त्रिपुटी प्राप्तहोवेगी ॥ एक प्रतीत होने योग्य सुख, दूसरा जिसको प्रतीत होता है सुख सो पुरुष, तीसरी सुखकी प्रतीति ॥ ऐसे त्रिपुटीके हुयाँ हुयाँ अद्वैतका अभाव होवेगा ।

उत्तर-अद्वैतविषे सुख मत होवे जिसकारणते अद्वैतसुखरूप है इसते अद्वैत सुख नहीं ॥

शंका-अद्वैत सुखरूप है इसविषे प्रमाण कौन है ?

उत्तर-प्रमाणका प्रश्न तो परप्रकाशवस्तुविषे होता है और सुख रूप अद्वैत स्वप्रकाश है ॥ तिसते तिसविषे प्रमाणका प्रश्न नहीं बनता ॥

शंका-अद्वैत स्वप्रकाश है इस विषेभी क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर-अद्वैतकी स्वप्रकाशताविषे तेरा वचन प्रमाण है ॥ जिस कारणते तू प्रमाणसे विना अद्वैतको अङ्गीकारकरके तिसविषे सुख नहीं बनता यह कहता है ॥ इस कारणते अद्वैत स्वप्रकाश है ॥

शंका-मैंने अद्वैतका अंगीकार नहीं करया किंतु तेरेकरके कथन किया हुया जो अद्वैत है ॥ तिसको फेर कथनकरके तिस विषे दूषण कथन करया है ॥ इस कारणते मेरे वचनकरके अद्वैतकी सिद्धि नहीं ॥

उत्तर-जेकर तू अद्वैतको नहीं मानता तो हम तेरेसे पूछते हैं तिसका उत्तर कहो द्वैतकी उत्पत्तिसे प्रथम क्या होता भया अद्वैत होता भया अथवा द्वैत होता भया अथवा द्वैत अद्वैत दोनोंसे भिन्न कोई तीसरा पदार्थ होता भया द्वैत और अद्वैतसे भिन्नता कोई तीसरा

पदार्थ लोकविषे प्रसिद्ध नहीं देखीता और द्वैतकी उत्पत्तिसे प्रथम द्वैत नहीं बनता जिसते द्वैतकी उत्पत्तिसे प्रथम द्वैत है नहीं इसते द्वैतकी उत्पत्तिसे प्रथम अद्वैत तुमको अवश्य मानना चाहिये ॥

शंका-इसप्रकार अद्वैतकी सिद्धि युक्तिकरके होती है पर अनुभव-करके तो अद्वैतकी सिद्धि नहीं होती ॥

उत्तर-जिसयुक्तिकरके अद्वैतकी सिद्धि होतीहै सो युक्ति दृष्टांतके साहित है कि, दृष्टांतसे रहित है यह वार्ता तू कहो ॥ तीसरा प्रकार तो कोई बनता नहीं और जेकर कहैं युक्ति दृष्टांतसे रहित है तो वोह युक्ति तो बहुत सुंदर तैंने जानी है जिसविषे न तो दृष्टांत है और न अनुभव है अद्वैत सिद्धि युक्तिकरके होती है अनुभवकरके नहीं होती ऐसा कहणेकरके अनुभवका अभाव तो तैंने आप अंगीकार किया है और युक्ति दृष्टांतसेविना किसी अर्थको सिद्ध नहीं करती इसते यह जो तेरा कथन है युक्ति दृष्टांतसे रहित है सो तेरी बुद्धिकी निर्मलताको जनावता है ॥ अर्थ-यह जो कहना परम मूर्खोंका है और जेकर कहैं युक्तिदृष्टांत साहित है तो तेरेको और मेरेको निश्चित जो दृष्टांत है सो कहो ॥

शंका-जेकर तू दृष्टांत सुन्या चाहता है तो मैं अद्वैतके दृष्टांत करके सिद्ध करताहूं सो दृष्टांत श्रवणकर-जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम जो प्रलयावस्था है सो द्वैतकी प्रतीतिसे रहित होनेते सुषुप्तिकी न्याईं द्वैतसे रहित है ॥

उत्तर-इसप्रकार अद्वैतको अपनी सुषुप्तिके दृष्टांत करके तू सिद्ध करता है अथवा परपुरुषकी सुषुप्तिके दृष्टांत करके तू सिद्ध करता है जेकर कहैं आपनी सुषुप्तिके दृष्टांतकरके मैं सिद्ध करताहूं तो तेरी सुषुप्ति परपुरुषके ताईं प्रसिद्ध है नहीं ताते आपनी सुषुप्तिविषे अद्वैतकी सिद्धिकेवास्ते और दृष्टांत कहना चाहिये ॥

शंका-द्वैतकी प्रतीतिते रहित्त होनेते परपुरुषकी सुषुप्तिकी न्यांई मेरी सुषुप्ति अद्वैत है ॥

उत्तर-तेरीबुद्धिकी बडी चतुराई है जिसते तू आपनी सुषुप्तिको तो अनुभव सिद्ध मानता नहीं जिसते कहता है अद्वैत अनुभव सिद्ध नहीं और परपुरुषकी सुषुप्तिको जानता है जिसते तू कहता है कि परपुरुषकी सुषुप्ति द्वैतसे रहितहै इसते तेरीबुद्धिकी बडी चतुराई है अर्थ-यह जिसको आपनी सुषुप्ति नहीं प्रतीत होती तिसके परपुरुषकी सुषुप्ति प्रतीत होती है यह कहना परममूर्खोंका है ॥

शंका-अनुमानते परपुरुषकी सुषुप्तिकी सिद्धि होती है परपुरुष सुषुप्तिको प्राप्त हुयाहुया प्राणोंसंयुक्त हुयाँहुयाँ चेष्टाते रहित होनेते मेरी न्याई सो अनुमान यह है ॥

उत्तर-जेकर इसप्रकार तू परपुरुषकी सुषुप्तिको आपणी सुषुप्तिके दृष्टांतकरके जानता है तो तेरेको आपनी सुषुप्तिकी स्वप्रकाशता जोराजोरी निश्चय भई ॥

शंका-जोराजोरी मेरी सुषुप्तिकी स्वप्रकाशता मेरेको कैसे निश्चयभई ॥

उत्तर-ऐसे तेरी सुषुप्तिकी स्वप्रकाशता तेरेको निश्चय भई तेरी सुषुप्तिके ग्रहण करणेवाले इंद्रियाँभी नहीं जिसते इंद्रियाँ अज्ञान विषे लीन हुई हुई सुषुप्तिअवस्थाविषे होती हैं ॥ और तेरीसुषुप्तिविषे दृष्टांतभी कोई नहीं तेरेको और मेरेको निश्चित परपुरुषकी सुषुप्ति तो तेरेको प्रतीत नहीं होती इसते परपुरुषकी सुषुप्ति तो दृष्टांत नहीं बनता तोभी तिस आपनी सुषुप्तिको तू मानता है ताते जो तेरी सुषुप्ति है द्वैतसे रहित अद्वैतरूप है तिसको स्वप्रकाशता सिद्ध भई जिसते स्वप्रकाशता तिसवस्तुको कहता है जो वस्तु

ज्ञानके साधनाते विना प्रकाशे ताते तेरीसुषुप्तिको स्वप्रकाशता जोरा जोरी सिद्ध भई इस अर्थविषे यह अनुमान है स्वप्रकाश परप्रकाश विवादके विषे जो सुषुप्ति है सो स्वप्रकाश होनेको योग्य है ज्ञानके साधनासे विना प्रकाशमान होनेते सांख्यशास्त्रवालोंके मतविषे आत्माकी न्याईं और प्राभाकरमीमांसकके मतविषे ज्ञानकी न्याईं और बौद्धोंके मतविषे स्वात्मकी न्याईं इसप्रकार प्रलयकी दृष्टांतरूपताकरके कथन कीनी जो सुषुप्ति तिसकी अद्वैतरूपता और स्वप्रकाशता सिद्ध भई॥

शंका--सुषुप्तिको अद्वैतरूपता और स्वप्रकाशता होवो पर सुषुप्तिविषे सुख कैसे है यह कहो ? ॥

उत्तर--सुखके प्रतियोगी दुःखका सुषुप्तिविषे अभाव है तिसतें सुषुप्तिविषे सुख है सुखदुःखका प्रकाश और अंधकारकी न्याईं परस्पर विरोध है जैसे जिसस्थानविषे अंधकारका अभाव है तिसस्थानविषे प्रकाश होता है तैसे सुषुप्तिविषे दुःखके अभाव होनेते सुषुप्तिविषे सुख है ॥

शंका--सुषुप्तिविषे दुःख नहीं इसविषे क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर--सुषुप्तिविषे दुःख नहीं इसविषे श्रुति और अनुभव प्रमाण है श्रुतिविषे यह कहा है जिसकारणते देहाभिमानसे दुःखोंकी प्राप्ति होतीहै तिसकारणते देहाभिमानरूप पूलको लंघकरके अंधा पुरुष अनंधा होजाता है अर्थ यह अंधेको सुषुप्तिअवस्थाविषे मैं अंधाहूं यह अभिमान नहीं होता और शस्त्रोंकरके घायलहुये पुरुषको सुषुप्ति अवस्थाविषे मैं घालय हुयाँहुयाँ यहअभिमान नहीं रहताऔर तापादिकोंकरकेयुक्त पुरुषको सुषुप्तिअवस्थाविषे मैं तपा हूं यह अभिमान नहीं रहता यद्यपि यह शरीर अंधा होता है तोभी इसजीवको सुषुप्तिअवस्थाविषे मैं अंधाहूं यह अभिमान नहीं होता इसते आदिलेकरके श्रुति देहाभिमानकरके होनेवाले अंधताआदिक दोषोंको सुषुप्तिविषे निषेध

करती है और सर्व दुःखोंके अभावको सुषुप्तिविषे सभीलोक आपने अनुभव करके जानते हैं ॥

शंका-जहाँ सुखका अभाव है तहाँ सुख है यह नियम नहीं बनता जिसते लोष्टशिलाआदिकोंविषे दुःखभाव तो है पर सुख नहीं ॥

उत्तर-दृष्टांत दार्ष्टांतिकी विषमता है ताते तेरा दृष्टांतरूप वचन दार्ष्टांतके अनुसारी नहीं जिसते लोष्ट शिलाआदिकोंविषे सुखदुःखकी प्रतीति नहीं बनती और सुखदुःखके अभावकी प्रतीतिभी नहीं बनती आपनेसे भिन्नविषे सुखदुःखको मुखकी प्रसन्नता और मुखकी दीनता करके अनुमानद्वारा जानाजाता है दीनमुख होनेते यह दुःखी है और यह सुखी है प्रसन्न मुख होनेते देवदत्तकी न्याईं और लोष्टशिलाआदिकोंविषे तो सुखदुःख जानना नहीं बनता जिसते लोष्ट-शिलाआदिकोंके मुखकी दीनता और प्रसन्नता है नहीं इसते लोष्ट-शिलाआदिकोंविषे दुःखका अभाव निश्चय नहीं होता और आपने सुखदुःख तो अनुमानसे नहीं जानीते किंतु आपने अनुभवकरके जानीते हैं ताते आपने सुखदुःखकी विद्यमानता प्रत्यक्षकरके जैसे जानी है तैसे आपनेविषे सुखदुःखका अभावभी प्रत्यक्षकरके जानीता है अनुमानकरके नहीं जानीता ताते सुषुप्तिविषे दुःखका अभाव आपने अनुभवकरके जान्या है सुषुप्तिविषे सुखविरोधी दुःखके अभावते सुख है इसविषे बाधक कोई नहीं अर्थ-यह सुखकी विद्यमानताविषे विघ्न कोई नहीं ऐसा मानना चाहिये और सुषुप्तिके वास्ते कोमलशय्या और शिरहानी आदिक सुखके साधनोंको अतियत्नकरके पुरुष इकट्ठा करता है सो संपादन तब बने जेकर सुषुप्तिविषे सुख होवे और जेकर सुषुप्तिविषे सुख न होवे तो सुखके साधनोंका संपादन पुरुष कैसे करे सुषुप्तिकेवास्ते बहुत धनको खर्चकरके और शरीरके क्लेशको सहारकरके कोमलशय्या और शिरहानीकोमल इसते आदिलेकरके सुखके साधनोंको पुरुष कैसे संपादन करे जेकर सुषुप्तिविषे सुख न

होवे तो अर्थापत्ति प्रमाणकरके सुषुप्तिमें सुख सिद्ध भया ॥

शंका–यह अर्थापत्ति नहीं बनती जिसते कोमल शय्या आदिकोंका संपादन दुःखके नाशवास्ते होता है ॥

उत्तर–जिसको प्रथम दुःख है नहीं वोहभी पुरुष शय्या आदिकोंका संपादन कर्ता है इसते दुःखनिवृत्तिवास्ते शय्या आदिकोंका संपादन नहीं होता ताते रोगीपुरुष दुःखके नाशवास्ते शय्या आदिकोंका संपादन करता है यह कहना भ्रमसे है ॥

शंका–यह जो तुमने कथन किया सुषुप्तिविषे जो सुख है तिसके वास्ते शय्या आदिक संपादन पुरुष करता है इसकहनेसे सुषुप्तिकालके सुखको साधन जन्मता आई ताते सुषुप्तिका सुखविषे सुख भया ताते तिससुखको आत्मरूपतानहीं बनती ॥

उत्तर–निद्राकी प्राप्तिसे प्रथम जो सुख है शय्याविषे शयन कियाँ हुयाँ पुरुषको प्राप्त भया सो शय्याआदिकोंकरके जन्य है और निद्राके प्राप्त हुयाँहुयाँ सुख है सो शय्या आदिकोंते उत्पन्न नहीं होता जिसते सुषुप्तिअवस्थाविषे शय्याआदिकोंकी प्रतीति नहीं होती॥

शंका–सुषुप्तिविषे जेकर नित्य सुख होवे तो सुखकी न्याईं तिसका अनुभव क्यों नहीं होता ?

उत्तर–विषयसुखके अनुभवकरणेवाले प्रमाताकी सुषुप्तिकालमें सुखमें लिप्त होती है तिसते विषय सुखकी न्याईं सुषुप्तिकालके सुखकी प्रतीति नहीं होती निद्राकी प्राप्तिते प्रथमकालविषे शय्याआदिजन्य सुखके अनुभवकरणेविषे तत्पर होईहोई है बुद्धि जिसकी ऐसा जो जीव सो निद्राके प्राप्त हुयाँहुयाँ परमसुखविषे लीन होजाता है जाग्रत्‌अवस्थाविषे किया जो है अनेकप्रकारके व्यापार तिन्होंकरके थक्या हुया जीव

कोमल शय्याआदिकोंविषे शयनको कतार है तिसते सुखविरोधी जो व्यापारजन्य दुःख है तिसके निवारण हुयाँहुयाँ स्वस्थचित्त होकरके शय्याआदिविषे जन्यसुखको अनुभव करता है जीवविषे सुखका स्वरूप क्या है ऐसा पूछे तो श्रवणकर–जिस विषयकी इसको प्राप्ति नहीं होती तिसविषयके निमित्त पुरुषको दुःख प्राप्त होता है तिस दुःखके दूर करणे वासते कोमल शय्या आदिकोंविषे स्थित जो पुरुष तिसकी बुद्धि वृत्ति अंतर्मुख होती है तिस अंतर्मुख बुद्धिकी वृत्तिविषे आत्माका स्वरूप जो है आनंद सो प्रतिबिंबभावको प्राप्त होता है बुद्धिकी वृत्तिको आत्माके सन्मुख हुयाँहुयाँ जैसे मुखके सामने दर्पणविषे मुखका प्रतिबिंब पडता है यह जो अंतर्मुख वृत्तिविषे सुखरूप आत्माका प्रतिबिंब है सो विषयानंद है कोमल शय्याविषे स्थितिसमय भी विषयानंदको अनुभव करके जीव थकावटको प्राप्त होताहै जिसते तिससमय भी त्रिपुटी निवृत्त नहीं होती ॥ एक तो अनुभव करणेवाला और एक अनुभवकरणेयोग्य विषय सुख इस त्रिपुटीके देखनेते उत्पन्न भई जो थकावट तिसके दूरकरणेकेवास्ते जीव आनंदरूप ब्रह्म विषे धावन करता है तिस आनंदरूप ब्रह्मविषे प्राप्त होयकरके ब्रह्मके साथ एकताको प्राप्त हुयाँहुयाँ सुषुप्तिविषे स्थित ब्रह्मानंदरूप होजाता है जैसे आकाशते गिरी हुई जलकी बूँदें समुद्रविषे समुद्ररूप होजाती है इस अर्थविषे छांदोग्योपनिषद्की श्रुति भी प्रमाण हैतिसविषे उद्दालकमुनीश्वरने आपने पुत्र श्वेतकेतुके प्रति यह कथन किया है हे सौम्य! जीव सुषुप्तिकालविषे सत्यरूप परमात्माके साथ अभेद हो जाता है यह जो अर्थ–कथन कऱ्या तिसविषे बहुते बुलबुलसे आदिले करके श्रुतियोंने दृष्टांत कथन कीने हैं बुलबुलसे आदिलेकरके पाँचों दृष्टांतोंकरके सुषुप्त्यवस्थाविषे आनंदकी सिद्धि करी है ताते सुषुप्ति सुख कहना अयुक्त नहीं है सो नहीं दृष्टांत यह है एक बुलबुलता, दूसरा

बाज, तीसरा कुमार, चौथा चक्रवर्तीराजा, पाँचवाँ ब्रह्मज्ञानी. तिन दृष्टांतों विषे प्रथम जो बुलबुलका दृष्टांत है सो छांदोग्योपनिषद्की श्रुतिविषे कथन किया है तिस छांदोग्यकी श्रुतिके अर्थको श्रवणकर– जैसे सूत्रकरके बंधी हुई बुलबुल दशोंदिशाविषे उडती है सो आपना जो आश्रय है हाथ अथवा किली तिसते भिन्नस्थानविषे स्थितिको नहीं प्राप्त होती तो फेर भटकभटकके आपने बंधनका स्थान जो है हाथ अथवा किली तिसका आश्रय करती है तैसे हे सौम्य ! जीवकी उपाधि मन भी दशोंदिशाविषे भटकता है पर परमात्मासे विना किसी स्थानविषे विश्रामको नहीं प्राप्त होता तिसते परमात्माको आश्रय करता है जिसकारणते हे सौम्य ! मन परमात्माविषे बंधनको प्राप्त हुयाहुया है यह तिसका दार्ष्टांत है जीवकी उपाधि जो मन है सो पुण्य-पापका फल जो है सुख दुःख तिसके अनुभववास्ते जाग्रत् स्वप्नविषे तहाँतहाँ भ्रमकरके जाग्रत् स्वप्नविषे भोग देने वाले कर्मके क्षीण हुयाँ हुयाँ मन आपने कारण अज्ञान विषे लीन होजाता है और मनके लय हुयाँ हुयाँ मनरूप उपाधिसे रहित हुयाँहुयाँ जीव परमात्मा होजाता है और दूसरा दृष्टांत बाजका है सो बृहदारण्यकउपनिषद्विषे कथन किया है तिसका अर्थ यह है जैसे आकाशविषे सर्वत्र इधर उधर उडनेवाला जो बाज है सो थक्या हुयाहुया थकावटके दूरकरणेवास्ते आपनेआलनेकी अभिलाषावाला हुयाहुया परोंको इकट्ठा करके ध्यायकरके आलेनेको प्राप्त होता है तैसे जीव जो है मनउपाधिवाला चिदाभासरूप सो सभी जाग्रत्स्वप्नविषे भटकता हुया थकावटको प्राप्त होताहै तिस थकावटके दूरकरणेवास्ते सोनेके निमित्त ब्रह्मानंदकी अभिलाषावाला हुयाहुया हृदयाकाशको धावन करताहै सो कैसा सोना है जिसविषे जाग्रत्के पदार्थोंकी कामनाको नहीं करता और स्वप्नेके पदार्थोंको देखता नहीं कुमार और चक्रवर्तीराजा और ब्रह्म-

वेत्ता यह तीनों दृष्टांत बृहदारण्यकउपनिषद्विषे बालाकी और अजातशत्रुके प्रसंगविषे कथन किये हैं सो श्रवणकर—बहुतछोटा जो बालक है चारपांचमहीनेका सो गलतोरी माताके दूधको पीकरके कोमलशय्याविषे स्थित रागद्वेषादिकोंके अभावते हँसता हुयाहुया एक आनंदस्वभाववाला होता है जिसते तिसको मैं मेरा ज्ञान नहीं होता और जैसे चक्रवर्ती राजा अतिनिर्मलबुद्धिवाला संपूर्णमनुष्योंके भोगोंकरके युक्त मनुष्यको प्राप्त होनेयोग्य संपूर्णपदार्थ जिसको प्राप्त भये हैं सो रागद्वेषसे रहित आनंदरूप स्थित होता है और जैसे कृतकृत्यताको प्राप्त हुयाहुया ज्ञानी ब्रह्मानंदकी परम अब्धिरूप जीवन्मुक्तिको प्राप्त हुयाहुया परमआनंदस्वरूप हुयाहुया स्थित होता है ॥ तैसे सुषुप्तिको प्राप्त हुयाहुया जीव परम आनंदरूप होकरके स्थित होता है ॥

शंका—बालकआदिक तीनदृष्टांत क्यों किये और और दृष्टांत क्यों न किये ? ॥

उत्तर—जगत्विषे तीनोंको सुख होता है अविवेकियोंकेमध्य बहुत छोटेबालकको सुख होता है और व्यवहारी विवेकियोंविषे चक्रवर्ती राजाको सुख होताहै और ब्रह्मविवेकियोंविषे आनंदरूप अद्वितीयआत्माके साक्षात्कारवाला जीवन्मुक्त सुखरूप है ॥ इन तीनोंसे भिन्न संपूर्णजीव सदाही रागद्वेषादिकोंकरके दुःखी हैं इसते सुखकी प्राप्तिरूप सुषुप्तिविषे यह तीनों दृष्टांत कथन किये हैं इनसे भिन्न संपूर्ण जीवोंको दुःखी जान करके तिनका दृष्टांत नहीं दिया ॥ जैसे बालकआदिक आनंदविषे तत्पर होते हैं तैसे सुषुप्तिअवस्थाविषे ब्रह्मानंदविषे तत्पर हुयेहुये जीव जाग्रत्स्वप्नके पदार्थ जो हैं अंतर बाह्यरूप तिनको नहीं जानते जैसे कामीपुरुष अतिप्यारीस्त्रीके कंठकेसाथ लगाहुया गलियोंका वृत्तान्त और घरके कार्य इन्होंको नहीं जानता तैसे परमात्माके साथ अभेद हुयाहुया जीवभी नहीं जानता जाग्रत्

स्वप्नके पदार्थोंको सुषुप्तिअवस्थाविषे जीव ब्रह्मानंदरूप होकरके स्थित होता है इसविषे युक्ति बृहदारण्यकउपनिषद्की श्रुति कहती है सुषुप्तिअवस्थाविषे जीवकी ब्रह्मरूपताही शेष रहती है जिसते जीवकी जीवता उनको नहीं प्रतीत होती जीवकी जीवता क्या है परिच्छिन्ना-भिमानको करणा मैं पिताहूं मैं पुत्रहूं, मैं ब्राह्मण हूं, मैं राजा हूं, मैं दाता हूं इसते आदिलेकरके परिच्छिन्नाभिमान सुषुप्तिविषे नहीं रहता तिसते अपरिच्छिन्न ब्रह्मरूप होजाता है ॥

शंका-सुषुप्तिविषे सर्व संसारकी निवृत्ति तो नहीं होती जिसते मैं पिता हूं इसते आदिलेकरके अभिमानके अभाव हुयाँहुयाँभी मैं सुखी हूं यह अभिमान होता है सो अभिमानकरणा जीवका धर्म है ताते सुषुप्ति विषे जीवकी जीवरूपता नहीं दूर होती ॥

उत्तर-सुषुप्तिविषे सर्व संसारकी निवृत्ति होती है जिसते सुषुप्तिविषे देहाभिमान नहीं होता ॥ मैं सुखीहूं यह अभिमानतो देहाभिमान होवे तो होता है देहाभिमानते विना नहीं होता जैसे पिता पुत्ररूप-ताका अभिमान देहाभिमानसे बिना नहीं होता ताते सुषुप्तिविषे मैं सुखी हूं यह अभिमान है रूप जिसका ऐसा संसार नहीं रहता इस अर्थविषे बृहदारण्यकउपनिषद्की श्रुति प्रमाण है तिसका अर्थ यह है सुषुप्तिकाल विषे देहाभिमानके अभाव हुयां हुयां संपूर्णशोकोंको तर-जाता है जो मन विषे स्थित सो तात्पर्य यह जाग्रत्स्वप्नावस्थाविषे परि-च्छिन्नाभिमानकरके शोकोंकी नदीदेखकर तिसनदीको सुषुप्तिअवस्था विषे प्राप्त हुयांहुयां जीव तर जाता है अर्थ-यह जो किसीप्रकारका परिच्छिन्नाभिमान नहीं होता परिच्छिन्नअभिमानही सुखदुःखका कारण है तिसके अभाव हुयांहुयां जीवकी जीवता नहीं रहती जीव ब्रह्मरूप होजाता है ॥

शंका-यह जो तुमने अनेक श्रुतियाँ कथन की है तिनकरके

सुषुप्तिअवस्थाविषे सुखकी प्राप्ति साक्षात् नहीं प्रतीत होती जिसते शोकतरणादिरूप अर्थ साक्षात् प्रतीत होते हैं ॥

उत्तर-साक्षात् सुखकी प्राप्ति कथन करणेवाली कैवल्योपनिषद्की श्रुति है तिसके अर्थको सुषुप्तिकालविषे जाग्रत्स्वप्नरूप प्रपंचके लीन हुयाँहुयाँ श्रवणकर ॥ अर्थ यह-अज्ञानकेसाथ अभेदको प्राप्त हुयाँ हुयाँ जीव सुखरूप ब्रह्मको प्राप्त होता ॥

शंका-जेकर सुषुप्तिविषे जीवसुखरूपब्रह्मको प्राप्त होता है तौ जीवकी विदेहमुक्ति होनी चाहिये जिसते परिच्छिन्नाभिमानका अभाव और आनंदरूप ब्रह्मकी प्राप्तिका नाम विदेहमुक्ति है ॥

उत्तर-तमोगुण प्रधान अज्ञानकरके आवरण हुवा जीव सुखरूप ब्रह्मको प्राप्त होता है और विदेहमुक्ति तो आवरण भंगसे होती है ताते सुषुप्तिको प्राप्त हुयाहुया जीव विदेहमुक्तिको नहीं प्राप्त होता यह जो अर्थ श्रुतियाँ कथन करती है सो परोक्ष नहीं किंतु सब जीवोंके अनुभवकरके सिद्ध है जिसकारणते सुषुप्तिते उठ्या हुयाहुया पुरुष यह कथन करता है सुषुप्तिविषे इतनाकालपर्यंत मैं सुखरूप हुयाहुया सोता भया और कुछ न जानताभया सो तिसका कहना ज्ञानसे बिना नहीं होता ताते सुषुप्तिविषे सुख है और अज्ञान है यह बात मानणी ताते सुषुप्तिविषे सुख सबोंके अनुभवकरके सिद्ध भया ॥

शंका-सुषुप्तिविषे सुख और अज्ञानका कथन करणेवाला जो वचन है तिसका कारण ज्ञान स्मृतिरूप है और स्मृतिप्रमाण नहीं होती ताते स्मृतिरूप ज्ञानद्वारा सुषुप्तिविषे सुख नहीं सिद्ध होता ॥

उत्तर-स्मृतिरूप ज्ञान अप्रमाण है तिसकरके किसवस्तुकी सिद्धि नहीं होती यह वार्ता यथार्थ है पर स्मृतिका कारण जो अनुभव है सो प्रमाण है तिसकरके सुषुप्तिविषे सुख सिद्ध होता है स्मृतिका कारण अनुभव होता है जिसकारणते जिसवस्तुका अनुभव कर्या है

तिसीकी स्मृति होती है जिसका अनुभव नहीं किया तिसकी स्मृति नहीं होती ॥ इसकारणते स्मृतिका कारण अनुभव सुषुप्तिअवस्थाविषे होता है तिस अनुभवकरके सुषुप्तिअवस्थाविषे सुख सिद्ध होता है ॥

शंका-सुषुप्तिविषे अनुभव तो नहीं बनता जिसते सुषुप्तिविषे मन सहित संपूर्ण ज्ञानइंद्रियाँ लीन होजाती हैं ॥

उत्तर-सुषुप्तिविषे सुखके अनुभवका साधन नहीं होता यह कहता है अथवा अज्ञानके अनुभवका साधन नहीं होता यह कहता है सुख अनुभवका साधन नहीं रहता तो न रहो जिसते सुषुप्ति अवस्थाविषे जो सुख है सो स्वप्रकाश चैतन्यरूप है इसते उसको अनुभवके साधनोंकी अपेक्षा नहीं और सुषुप्तिकालविषे सुखके आवरण करणेवाला जो अज्ञान है सो स्वप्रकाश चैतन्यरूप सुखकरके सिद्ध होता है ॥

शंका-सुषुप्तिविषे जो सुख है तिसका स्वप्रकाशके हुयाँहुयाँभी तिसको ब्रह्मरूपता नहीं बनती जिसते सुषुप्तिविषे जो सुख है तिसका ब्रह्मरूपताविषे प्रमाण कोई नहीं ॥

उत्तर-सुषुप्तिविषे जो सुख है तिसकी ब्रह्मरूपताविषे बृहदारण्यक उपनिषद्की श्रुति प्रमाण है सो श्रुति आनंदको ब्रह्मरूप कहतीहै और अनुभवको ब्रह्मरूप कहती है इसते स्वप्रकाश सुख ब्रह्मरूप है ब्रह्मते भिन्न नहीं ॥

शंका-सुषुप्तिते उठकरके जिस पुरुषको सुखका स्मरणहोता है तिसीको तिसका अनुभव कह्या चाहिये जिसते अनुभव विना स्मरण नहीं बनता और एकपुरुषकी अनुभव करी हुई वस्तुको दूसरा पुरुष स्मरण नहीं करता सुषुप्तिसे उठ्याँ हुयाँ विज्ञानमय नाम जीवने सुख और अज्ञानका स्मरण करीता है इसते सुख और अज्ञानका अनुभवभी तिसीको कह्या चाहिये सो तो विज्ञानमय सुषुप्तिविषे रहता नहीं ताते सुख अनुभव सुषुप्तिविषे नहीं बनता ॥

उत्तर-विज्ञानमयकी उपाधि-विज्ञान, मन, इंद्रियाँ, बुद्धिरूप सुषुप्तिविषे लीन होजाती हैं तिसते विज्ञानमयको लीन कहता है और उपाधिसे विलक्षण चैतन्यरूपताकरके अनुभव करता है और उपाधि अज्ञानविषे लीन होजाती है और अज्ञान सोकरके उठे पुरुषके इस स्मरणते जानीता है॥ जो यह स्मरण करता है मैं सुषुप्तिविषे कुछ न जानता भया ऐसा जो अज्ञान है तिस अज्ञानविषे प्रमाता विज्ञान_मय और प्रमाण मनोमय दोनों लीन होजाते हैं इसते विज्ञानउपाधिक विज्ञानमय प्रमाताको सुषुप्तिअवस्थाविषे सुख और अज्ञानका अनुभव नहीं होता जिसकारणते विज्ञानमय और मनोमयकी लीनता और अवस्थाका नाम निद्रा है॥

शंका-जेकर विज्ञानमय और मनोमयकी लीनताकानाम निद्रा है तो निद्रामय विज्ञानमय और मनोमय लीन भये यह कह्या चाहिये तुम कैसे कहतेहो विज्ञानमय और मनोमय अज्ञानविषे लीन होते हैं॥

उत्तर-निद्राका नामही अज्ञान है ऐसे ज्ञानवान् कथन करते हैं ताते अज्ञानविषे लीन होते हैं॥ विज्ञानमय और मनोमय यह कहना यथार्थ है॥

शंका-जेकर सुषुप्तिअवस्थाविषे विज्ञानमय अज्ञानविषे लीन होजाता है तो सुषुप्तिकालविषे जो सुख और अज्ञान है तिसके अनुभवकालविषे अविद्यमान जो विज्ञानमय सो जाग्रत्अवस्थाविषे सुख और अज्ञानको स्मरण कैसे करेगा?॥

उत्तर-लयावस्थाविषेभी विज्ञानमयके स्वरूपका अभाव नहीं होता उपाधिमात्रका लय होता है और दूसरी उपाधिका ग्रहण होताहै ताते विलयावस्थारूप उपाधिवाला जो आनंदमयरूप है तिसकरके अनुभव होता है और विज्ञान नाम जो सघनउपाधि है तिसकरके

स्मरण कर्ता है ताते एककोही स्मरण और अनुभव उपाधि भेदकरके दोनों बनते हैं ॥ जैसे अग्निआदिकोंके संयोगकरके पन्या हुया घृत पीछे बडी पवनादिकोंके संबंधकरके सघन होजाता है तैसे जाग्रत्स्वप्न विषे भोग देनेवाले कर्मके नाश होनेते निद्रारूपताकरके लीन हुया हुया जो अंतःकरण है सो फेर भोगदेनेवाले कर्मोंके संबंधते विज्ञानमयरूपताकरके अंतःकरण जाग्रत्स्वप्नविषे सघनताको प्राप्त होजाता है इसते विज्ञानउपाधिवाला आत्माभी विज्ञानमय घन कहता है और सोई आत्मा विज्ञानरूप उपाधिकी लीनताकरके आनंदमय कहता है सुषुप्तिकी प्राप्तिते प्रथम क्षणविषे जो अंतरमुख है बुद्धिकी वृत्ति सो सुखरूप आत्माके प्रतिबिंबसहित बुद्धिकी वृत्ति आनंदके प्रतिबिंबसहित लीन होजाती है जब तब तिसकानाम आनंदमय कथन कऱ्या है तिस आनंदमयकोही जाग्रत्कालविषे स्मरण करणता है इसवास्ते सुषुप्तिकालमें सुख अनुभव होता है सो जिसप्रकार होता है श्रवण कर-सुखके प्रतिबिंबसहित जो अंतर्मुख हुईहुई बुद्धिकी वृत्ति है तिसकरके उत्पन्न भये जो सुखके संस्कार तिन संस्कारोंसहित अज्ञान है उपाधि जिसकी ऐसा जो आनंदमय है सो सुषुप्तिअवस्थाविषे आपना स्वरूप जो ब्रह्म सुख है तिसको चिदाभास सहित अज्ञानते उत्पन्न हुयाँहुयाँ जो वृत्तियाँ हैं सुखादिकोंकोविषे करणेवालीहैं सो सत्वगुणका परिणमरूप तिनों करके ब्रह्मसुखको अनुभव करता है ॥

शंका-जेकर सुषुप्तिविषे अज्ञानकी वृत्तियोंकरके सुखको अनुभव करता है तो सुषुप्तिविषे मैं सुखको अनुभव करता हूं यह अभिमानभी हुया चाहिये जैसे जाग्रत्अवस्थाविषे मैं सुखको अनुभव करता हूं यह अभिमान होता है ॥

उत्तर-सुषुप्तिअवस्थाविषे जिन अज्ञानकी वृत्तियोंकरके अनुभव करता है सो अज्ञानकी वृत्तियाँ बुद्धिकी वृत्तियोंते सूक्ष्म हैं इसते सुषुप्ति

अवस्थाविषे सुखका अभिमान नहीं होता और जाग्रत्‌अवस्थाविषे बुद्धिकी वृत्तियोंकरके सुखका अनुभव करता है सो बुद्धिकी वृत्तियाँ अज्ञानकी वृत्तियोंते स्थूल हैं ॥ इसकारणते जाग्रत्‌अवस्थाविषे सुखका अभिमान होता है ॥ ऐसा वेदांतसिद्धांतके पारगामी ब्रह्मवेत्ता कथन करते हैं ॥

शंका—सुषुप्तिअवस्थाविषे सूक्ष्म अज्ञानकी वृत्तियोंकरके ब्रह्मानंदको आनंदमय भोक्ता है इसविषे क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर—मांडूक्योपनिषद् और नृसिंहतापनीयोपनिषदोंकी श्रुतियोंविषे प्रकट कथन किया है ॥ सुषुप्तिअवस्थाविषे आनंदमय ब्रह्मानंदको भोक्ताहै सो श्रुतियोंके अर्थको श्रवणकर—सुषुप्तिहै स्थान जिसका ऐसा जो आनंदमय सुषुप्ति अवस्थाका अभिमानी सो ब्रह्मके साथ एकताको प्राप्त हुयाहुया प्रज्ञानघनताको प्राप्त हुयाहुया चैतन्यके प्रतिबिंबसहित अज्ञानकी वृत्तियोंकरके आनंदको भोगता है ॥ अब इस श्रुतिके अर्थको विस्तारसे श्रवणकर—वास्तवते यह आत्मा ब्रह्मरूप है सो जाग्रत्‌अवस्थाविषे विज्ञानमयरूप होता है मनोमय, प्राणमय, नेत्रमय, श्रोत्रमय, पृथ्वीमय, जलमय, पवनमय, आकाशमय, तेजोमय, प्रतेजोमय, काममय, प्रकाममय, क्रोधमय, अक्रोधमय, धर्ममय, अधर्ममय, तन्मय, यन्मय, एतन्मय, इदंमय, अदोमयरूप होता है और जैसे करता है और जैसे विचरता है तैसेही रूपको पुरुष प्राप्त होता है और पुण्यकर्मोंके करणेवाला पुण्यवान् होता है और पापकर्मोंके करणेवाला पापी होता है ॥ इसते आदिलेकरके श्रुतियोंने कथन किये जो रूप तिनोंकरके युक्त होता भया सो आत्मा सुषुप्ति अवस्थाविषे विज्ञानमय आदिक उपाधियोंके लय होनेकरके एकाकारताको प्राप्त होजाता है ॥ जैसे पीसे हुए दाने आटारूप एकताको प्राप्त होजाते हैं ॥ अब प्रज्ञानघन शब्दका अर्थ श्रवणकर ॥ जाग्रत् अवस्थाविषे घटपटआदिक पदार्थोंके ग्रहण

करणेवाली जो बुद्धिकी वृत्तियाँ हैं तिनोंका नाम प्रज्ञान है ॥ सो प्रज्ञानरूप बुद्धिकी वृत्तियाँ सुषुप्तिकालविषे घटादिकविषयोंके अभाव हुयाँ हुयाँ घन होजाती हैं जिसप्रकार बर्फकी बूँदें शीतल जलवाले स्थानविषे घन होजाती हैं ॥ जो यह वेदांतोंविषे कथन कऱ्या है साक्षीरूप प्रज्ञानघनता तिसको शास्त्रके संस्कारोंसे रहित लोक और शास्त्रवालोंमें नैयायिक, दुःखाभाव कथन करते हैं जिसकारणते संपूर्ण दुःखवृत्तियाँ लय होजाती हैं ॥अब चेतो मुखशब्दके अर्थको श्रवणकर–अज्ञानकी वृत्तियोंविषे प्रतिबिंबभावको प्राप्त हुया जो चैतन्य है सो सुषुप्तिकालविषे जो ब्रह्मानंदका भोगना तिसविषे मुखकी न्याईं साधन है ॥

शंका–सुषुप्तिअवस्थाविषे आनंदमय रूपताकरके जीवने जेकर ब्रह्मानंद भोग्या है तो तिस ब्रह्मानंदको त्याग करके दुःखोंके स्थान जाग्रत्को क्यों प्राप्त होता है ? ॥

उत्तर–पुण्यपापकर्मरूप फाँसीकरके बँधाहुया जीव पुण्यपापकरके प्रेऱ्या हुया ब्रह्मानंदको त्यागकरके जाग्रत् अथवा स्वप्नअवस्थाको प्राप्त होता है ॥

शंका–यह किसते तुमने जान्या ? पुण्यपापरूपकर्मकरके प्रेऱ्या हुया जीव साक्षात् किये हुये ब्रह्मानंदको त्यागकरके जाग्रत् अथवा स्वप्नविषे आवता है ॥

उत्तर–जन्मांतरोंविषे किये जो है कर्म तिनके संबंधते जीव सुषुप्तिते जागता है ऐसा कैवल्योपनिषद्विषे कर्मजन्म जाग्रतअवस्था कथन करी है सुषुप्तिअवस्थाविषे ब्रह्मानंदको जीवने अनुभव किया है इसविषे हेतु श्रवणकर–सुषुप्तिते जागेहुये पुरुषको कुछेककाल ब्रह्मानंदके संस्कार रहते हैं जिसकारणते विषयोंके संबंधसे विना सुखी कुछेककाल चुपकासा रहता है इसते जो ब्रह्मानंदके संस्कार इसको है सो जानीता है ॥

शंका-जेकर ब्रह्मानंदके संस्कारोंकरके सुषुप्तिते उठ्याहुया पुरुष तूष्णीं रहता है तो सदाही तैसे तूष्णीं क्यों नहीं रहता ॥

उत्तर-पुण्यपापरूप कर्मोंका प्रेरया हुया अनेकप्रकारके दुःखोंको चिंतन करता हुया हौले हौले ब्रह्मानंदको भूलजाता है संपूर्णलोक सुषुप्तिकालमें ब्रह्मानंद होता है ॥ इसविषे इसकारणतेभी विवाद नहीं किया चाहता जिसकारणते दिनदिनविषे निद्राकी प्राप्तिसे प्रथम और पीछे मनुष्योंकी ब्रह्मानंदविषे प्रीति होती है ॥ जेकर ब्रह्मानंदविषे प्रीति न होवे तो निद्राकेवास्ते कोमल शय्याआदिकोंको लोक क्यों संपादन करैं और निद्राके अंतविषे तथा सुषुप्तिविषे प्रतीत भया जो ब्रह्मानंद तिसके त्यागनेको असमर्थ हुयेहुये तूष्णीं लोक क्यों स्थित होवें निद्राके आदि कोमल शय्याआदिकके संपादन करणेकरके और निद्राके अंत तूष्णीं स्थित होनेकरके जानीता है सुषुप्तिविषे ब्रह्मानंद है, इसमें कोई बुद्धिमान् विवाद नहीं करता ॥

शंका-गुरुसेवा और श्रवणआदिकोंकरके प्राप्त होनेयोग्य ब्रह्मानंदको तूष्णीं स्थितिमात्रकरके प्राप्त हुयाँहुयाँ संपूर्ण आलसीलोक कृतार्थ होने चाहिये॥ ताते गुरुसेवा और श्रवणादिकोंको व्यर्थता भई॥

उत्तर-तूष्णीं स्थिति समयविषे जो सुख है सो ब्रह्मानंद है ऐसे ज्ञानके हुयाँहुयाँ कृतार्थता होती है परंतु यह ज्ञान गुरुसेवाआदिकोंसे विना नहीं होता ताते मन वाणीकेविषे सर्वज्ञ सर्वकेअंतर स्थित सर्वरूपब्रह्मको गुरुशास्त्रतेविना और उपायकरके नहीं जानता ताते गुरुसेवा आदिक अवश्य करणे योग्य हैं ॥

शंका-तुम्हारे वाक्यते तूष्णीं स्थितिकालविषे प्रतीत हुये सुखको ब्रह्मानंद जाननेवाला जो मैं हूं तिस मेरी कृतार्थता नहीं प्रतीत होती ॥

उत्तर-(हास्यसहित) इसविषे तेरे जैसा अपने आपको बुद्धिमान् माननेवाला जो पुरुष तिसकी कथा श्रवणकर-कोई तेरे जैसा बुद्धिमान् पुरुष था तिसने किसीका यह वचन श्रवण किया कि,चारोंवेदोंके जाननेवालेको यह बहुत धन मैंने देना है ॥ तब तेरे जैसा बुद्धिमान् यह कथन करता भया तेरे वचनते चारों वेदोंको मैं जानता हूं मेरेको यह धनदेदे जैसे वोह चारोंवेदोंको जाननेवाला है तैसे तू ब्रह्मानंदको जाननेवाला है ॥

शंका-वेद चार हैं ऐसे जो जानता है सो वेदोंकी गिनतीको जानता है और वेद पढना नहीं जानता ॥

उत्तर-तैसे तू भी ब्रह्मानंद इस नामको जानता हैं पर संपूर्णब्रह्मको नहीं जानता ॥

शंका-गिनतीसे भिन्न वेदोंके पाठकी न्याईं सजातीय विजातीय स्वगतभेदसे रहित आनंदरूप ब्रह्मविषे अज्ञात अंश कोई बनता नहीं ताते यह जिसने उलहना देता है संपूर्ण ब्रह्मको तू नहीं जानता सो उलांभा नहीं बनता जिसते अखंड एकरस आनंदरूप माया और मायाके कार्यसे रहित ब्रह्मविषे संपूर्ण जानना और असंपूर्ण जानना इस वार्ताका अवसर नहीं ॥

उत्तर-ब्रह्मज्ञानविषेभी संपूर्णता और असंपूर्णता बनती है तिसको श्रवणकर-यह जो तू कहता है मैं ब्रह्मको जानता हूं उस तुझको हमें पूछते हैं अखंड एकरस अद्वितीय सच्चिदानंदरूप ब्रह्म इसते आदिले करके शब्दोंको तोतेकी न्याईं पढता है अथवा तिन शब्दोंके अर्थको सजातीयादिक भेदोंसे रहितकोभी जानता है जेकरके कहैं शब्दोंको पढता हूं तो तिन शब्दोंके अर्थकोभी जान्या चाहता है ताते संपूर्ण ब्रह्मको तू नहीं जानता और जेकरके कहे तिनशब्दोंसे अर्थको मैं व्याकरण आदिकोंकरके जानता हूं तो तिसका साक्षात्कार संशय

विपर्यय रहित बाकी करणा रहता है ॥ ताते परोक्षज्ञानके हुयाँहुयाँ भी अपरोक्षज्ञानके अभावते संपूर्ण नैं भया ॥ ज्ञानकी संपूर्णता कब होती है ऐसा पूछे तो श्रवणकर—जब कृतकृत्यताकी प्राप्ति होती है तब ज्ञानकी संपूर्णता जाननी ॥ ताते जितना काल कृतकृत्यता न होवे तितना कालपर्यंत गुरुओंकी सेवा और श्रवणादिक करणे ॥ यह प्रसंग स्थित रहो ॥ जिसका निर्णय करणे लगे हैं तिसको श्रवणकर—जिसजिस तूष्णीं स्थिति आदिरूपकालविषे विषयोंके अनुभवसे विना सुख होता है तिसतिस तूष्णीं स्थिति आदिरूपकालविषे ब्रह्मानंदकी वासना जाननी ॥ जिसकारणते तिसकालविषे जो सुख है सो विषय-सुख नहीं बनता ॥ जिसते सुखविषे जन्य नहीं और सामान्य अहं-कार करके आवरण हुया होनेते सो सुख ब्रह्मानंदरूपभी नहीं ॥ इस प्रकार ब्रह्मानंद और वासनानंद दो सिद्धभये और तीसरा विषयानंद है तिस विषयानंदका स्वरूप श्रवणकर—जिसजिसकालविषे पुरुषको किसी वस्त्रभूषणादिविषेकी कामना होती है तब पुरुषका चित्त बहुत तपता है और जब तिसविषेकी प्राप्ति होती है तब चित्तमें तिस विषेका ताप दूर हो जाता है ॥ तापके दूर हुयाँ चित्तकी वृत्ति अंत-र्मुख होती है ॥ तिस वृत्तीविषे आत्मस्वरूप आनंदका प्रतिबिंब पडता है तिसकानाम विषयानंद है जिसते विषेकी प्राप्ति होनेसे चित्त-वृत्ति अंतर्मुख भई है तिसते तिसकानाम विषयानंद है ताते जगत्-विषे आनंद तीन प्रकारकाही है ॥ एक ब्रह्मानंद, दूसरा वासनानंद, तीसरा प्रतिबिंबानंद, और चौथा आनंद जगत्विषे कोई नहीं ॥ स्वप्रकाशताकरके सुषुप्तिअवस्थाविषे प्रतीत होता जो आनंद है सो ब्रह्मानंद है और सुषुप्तिते उठ्या हुयाँ तूष्णीं स्थितिसमय विषयोंके अनुभव विना प्रतीत होता जो आनंद है सो वासनानंद है और वांछितविषेके लाभते अंतर्मुख हुया जो मन तिसविषे जो

आत्मानंदका प्रतिबिंब तिसकानाम प्रतिबिंबानंद है तिस प्रतिबिंबानंदको विषयानंदभी कहता है ॥

शंका--यह जो तुम कहते हो तीन प्रकारके आनंदते भिन्न और कोई आनंद नहीं सो तुम्हारा कहना अयुक्त है ॥ जिसते पाछे तुमने और प्रकारकरके तीन प्रकारका आनंद कह्या है ॥ एक ब्रह्मानंद, दूसरा विद्यानंद और तीसरा विषयानंद और अब औरप्रकारकरके आनंदकी तीन प्रकारता कहते हो--एक ब्रह्मानंद, दूसरा वासनानंद, तीसरा प्रतिबिंबानंद, इस कारणते तुम्हारा कहना परस्पर विरुद्ध है ॥ आगे और भी विरोध है तुमको ग्रंथविषे यह कथन करणा है कि, जितनी जितनी अभ्यास योगते अहंकारकी विस्मृति होती है तितनी तितनी सूक्ष्मदृष्टिवाले पुरुषको निजानंदकी प्राप्ति होती है ऐसा अनुमानसे जानीता है ॥ इसते निजानंदभी प्रतीत होता है ॥ सो पीछे कथन किये तीन आनंदसे भिन्न है और और तुम आगे यह कथन करोगे श्रद्धा आदिकोंकरके सहित एकवारी समाधिविषे ब्रह्मानंदके अनुभवकरणेवाला जो पुरुष है सो पुरुष तूष्णींकालविषे आनंदकी वासनाकी उपेक्षा करके मुख्यानंदके विषे तत्पर हुयाहुया उसीकी भावनाको करता है ॥इस प्रकार मुख्यानंद पृथक् कथन कऱ्या है ॥ और दूसरे अध्यायविषे यह कथन किया है कि, मंदबुद्धिवाले जिज्ञासुको आत्मानंदकरके बोधन कर ऐसे आत्मानंदकरके कथन किया है ॥ और योगानंद जो पूर्व कथन किया है इसप्रकारके योगानंद कोईक प्रतीत होताहै और यह भी आगे कथन करोगे ब्रह्मानंद है नाम जिसका ऐसा जो है ग्रंथ तिसविषे तीसरा अध्याय कथन किया है सो अद्वैतानंद है ॥ इसवाक्यकरके अद्वैतानंद भिन्न प्रतीत होता है ॥ इसकारणते यह जो तुमने कथन किया है कि, तीन प्रकारकरके आनंदसे विना जगत्‌विषे और कोई आनन्द नहीं सो अयुक्त है ॥

उत्तर-विद्यानंद विषयानंदके अंतर्गत है ॥ जिसते विद्यानंद विषयानंदकी न्याईं अंतःकरणकी वृत्तिरूप है ॥यह वार्ता विद्यानंदविषे कहेंगे ॥ और निजानंद, मुख्यानंद आत्मानंद, योगानंद, अद्वैतानंद इन पाँचोंआनंदोंको ब्रह्मानंदरूपता है सो श्रवणकर-जितनीजितनी अहंकारकी विस्मृति भई है तितनी तितनी सूक्ष्मदृष्टिवाले पुरुषको निजानंदकी प्राप्तिका अनुमान करता है ॥ इस श्लोकविषे जो निजानंद कथन किया है तिस निजानंदकानाम योगानंद आगे धऱ्या है ॥ योगरूप साधनकरके जाननेते तिसकानाम योगानंद है ।। ताते योगानंद और निजानंदका भेद न हुया ॥ और तिस निजानंदकोही ब्रह्मानंद कहता है जिसते ऐसा आगे कहेंगे ।। जिसअवस्थाविषे द्वैतकी प्रतीति है नहीं और निद्रा हैनहीं तिसअवस्थाविषे जो आनंद है सो ब्रह्मानंद है यह वार्ता अर्जुनके ताईं भगवान्‌ने कही है । ताते निजानंद ब्रह्मानंदसे भिन्न नहीं ॥ ब्रह्मानंदरूप है और मुख्यानंदभी ब्रह्मानंदरूप है ॥ विषयानंदकी और वासनानंदकी उत्पत्ति स्वयंप्रकाश ब्रह्मानंदते होती है ॥ इसश्लोकविषे कार्यरूपताकरके अमुख्यानंदरूप जो है विषयानंद और वासनानंद उनके कारण ब्रह्मानंद कथन किया है ॥ तिसब्रह्मानंदकोही समाधिविषे ब्रह्मानंदके अनुभववाला पुरुष तूष्णींकालविषेभी आनंदकी वासनाकी उपेक्षाको करके मुख्यानंदकी भावनाको करता है ॥ मुख्यानंदविषे तत्पर हुयाहुया इसश्लोककरके ब्रह्मानंदकोही मुख्यानंदनामकरके कथन किया है ॥ ताते मुख्यानंदभी ब्रह्मानंदते भिन्न नहीं । और आत्मानंद और अद्वैतानंदभी ब्रह्मानंदते भिन्न नहीं किंतु आनंदरूप हैं ॥ जिसते तीसरे अध्यायके आदिविषे यह कथन करेंगे ॥ जो प्रथम योगानंद कथन किया है सो आत्मानंद है ऐसे तिस ब्रह्मानंदका नाम योगानंद धऱ्या॥ प्रथमअध्यायविषे कथन किया जो योग तिसकरके ब्रह्मानंदका साक्षात्कार भया ॥ तिसकरके

ब्रह्मानंदका योगानंदनाम धऱ्या ॥ और तिसी ब्रह्मानंदरूप योगानंदका नाम आत्मानंद धऱ्या ॥ जिसते ब्रह्मानंदकी आत्माके विवेककरके प्रकटता होती है ॥ तिसते तिसकानाम आत्मानंद है ॥ ऐसे कथन करके फिर यह शंका कीनी ॥ आत्मानंद तो सजातीय विजातिय भेद वाला है तिसको ब्रह्मानंदरूपता नहीं बनती ॥ जिसते ब्रह्मानंद सजातीय विजातीय भेदसे रहित है ॥ तिस शंकाका फिर यह उत्तर कह्या ॥ आकाशसे लेकर शरीरपर्यंत तैत्तिरीय श्रुतिविषे कथन किया जो जगत् सो जगत् आनंदते भिन्न नहीं इसते आत्मानंदको अद्वैत ब्रह्मानंदरूपता बनती है ॥ ताते आत्मानंद और अद्वैतानंद इन दोनोंको ब्रह्मानंदरूपता है ॥ तिसकारणते यह सिद्ध भया ॥ आनंद तीन प्रकारका कथन है एक ब्रह्मानंद, दूसरा वासनानंद, तीसरा प्रतिबिंबा-नंद इसते भिन्न और कोई आनंद नहीं ॥

शंका–जेकर ब्रह्मानंद और निजानंद एक हैं तो दूसरे अध्याय-विषे जो यह प्रश्न है इसप्रकार योगी वासनानंदते भिन्न और ब्रह्मानंदते भिन्न निजानंदका अनुभवकरो ॥ योगसे रहित मूढजीवका कल्याण किसप्रकार होवे इस श्लोकविषे ब्रह्मानंद और योगानंदका भेद कथन करणा न बनेगा ॥

उत्तर–एकही ब्रह्मानंदका जगत् कारणतारूप उपाधिसहितता करके और उपाधिरहितताकरके ब्रह्मानंद और निजानंद दो नाम होते हैं ॥ ताते ब्रह्मानंद और निजानंद दोनोंका भेद कथन करणा बन जाता है ॥ वास्तवसे ब्रह्मानंद और निजानंद एक है और उपाधिकरके तीनोंका भेद है ॥ जैसे–एकपुरुषविषे स्त्रीरूपउपाधिकरके गृहस्थी व्यवहार होता है और स्त्रीउपाधिसेविना ब्रह्मचारी व्यवहार होता है तो ब्रह्मचारीका गृहस्थीसे भेद कहता है सो भेद पुरुषके स्वरूपविषे नहीं किंतु उपाधिकरके है ब्रह्मानंदसे निजानंदका जैसे उपाधिकरके भेद है सो

श्रवणकर-ब्रह्मानंदके निरूपण प्रसंगविषे ब्रह्मानंदको जगत्कारणता कथन कीनी है आनंदतेही भूत उत्पन्न होते हैं और आनंद करकेही स्थितहोते हैं और आनंद विषेही तिनका लय होता है ॥ ताते ब्रह्म आनंद रूपहै जिसते ब्रह्मका लक्षण आनंदविषे आवता है ताते जगत्का कारण ब्रह्मानंद मायारूप उपाधिवाला है यह जानता है जिसते माया उपाधिते रहितको जगत्की कारणता नहीं बनती और निजानंदके निरूपणके प्रसंगविषे यह कथन किया है जितनीजितनी अभ्यास योगते अहंकारकी विस्मृति होती है तितनी तितनी सूक्ष्मदृष्टिवाले पुरुषको निजानंदकी प्राप्ति अनुमानकरके जानीती है ॥ इस श्लोक करके अज्ञानसहित अहंकारका अभाव प्रतिपादन किया है ॥ तांते निजानंद मायासे रहित है ताते यह सिद्ध भया आनंद तीनप्रकारका है तिसविषे शंका कोई नहीं बनती ॥

शंका-इसअध्यायविषे ब्रह्मानंदके विवेककी प्रतिज्ञा करी है तिसते वासनानंद और विषयानंद इन दोनोंका इसअध्यायविषे निरूपण करणा प्रसंगसे असंगत है ॥

उत्तर-विषयानंद और वासनानंद इन दोनोंका निरूपण प्रसंग विषे असंगत नहीं जिसते विषयानंद और वासनानंद ब्रह्मानंदसे उत्पन्न होते हैं इसते ब्रह्मानंदको जनावनेवाले हैं ॥ जैसे-पुत्र पिताको जनावनेवाला होता है ॥ ताते वासनानंद और विषयानंदका निरूपण करणाभी बनता है ॥ इसप्रकार आनंदकी तीनप्रकारताके हुयाँहुयाँ जो स्वप्रकाश आनंद विषयानंद और वासनानंदको उत्पन्न करता है सो ब्रह्मानंद है ॥ इसप्रकार श्रुतियोंकरके और युक्तियोंकरके और अनुभवकरके सुषुप्तिअवस्थाविषे स्वप्रकाश चैतन्यरूप ब्रह्मानंदके सिद्ध हुयाँहुयाँ और अवस्थाविषे ब्रह्मानंदके ज्ञानका उपाय कहते हैं तिसकोभी श्रवणकर-जिन श्रुतियों

करके सुषुप्तिअवस्थाविषे ब्रह्मानंदकी सिद्धि होती है ॥ सो श्रुतियां कैवल्यआदिक उपनिषदोंकी हैं और पाछे तिनका अर्थ कह्या है ॥ अब फिरभी तिनका अर्थ श्रवणकर ॥ यह तिनका अर्थ है-सुषुप्ति कालविषे अहं और इदं प्रतीतिके योग्य संपूर्णवस्तुके लय हुयाँहुयाँ अज्ञानकरके आवरण हुयाहुया जीव सुखरूप ब्रह्मको प्राप्त होता है और जिन युक्तियोंकरके सुषुप्तिअवस्थाविषे सुखकी सिद्धि होती है सो युक्तियाँ यह हैं ॥ इतनाकालमें सुखसे सोता भया यह जो सुते उठे पुरुषका कथन है सो सुषुप्तिअवस्थाविषे सुखको जनावता है ॥ ताते अर्थापत्ति प्रमाणकरके सुषुप्तिविषे सुखकी सिद्धि भई ॥ और सुषुप्तिविषे सुख अनुभवकरके स्वप्रकाश ब्रह्मानंद सिद्ध है आगे जाग्रत् अवस्थाविषे जिसप्रकार ब्रह्मानंदका निश्चय होता है सो श्रवण कर ॥ जो सुषुप्ति अवस्थाविषे आनंदमय है अंतःकरणकी विलीनतारूप उपाधिवाला सो सुषुप्तिते जब उठता है तब विज्ञानमय रूपताको प्राप्त होता है सो विज्ञानमय जाग्रत् अथवा स्वप्न अवस्थाको कर्मोंके अनुसार प्राप्त होता है ॥ जब नेत्रोंविषे स्थित होता है तब जाग्रत्अवस्थाको प्राप्त होता है ॥ और जब कंठविषे स्थित होता है तब स्वप्नावस्थाको प्राप्त होता है ॥ और जब हृदयकमलविषे स्थित होता है तब सुषुप्तिअवस्थाको प्राप्त होता है ॥ जाग्रत् अवस्थाविषे चरणसेलेकर मस्तकपर्यंत संपूर्ण देहविषे व्यापकर स्थित होता है और देहकेसाथ तदात्मताको जीव प्राप्त होजाता है ॥ जैसे लोहा तप्त हुयाहुया अग्निके साथ तदात्मताको प्राप्त होजाता है ॥ जिसते मनुष्यादि शरीरके साथ तदात्मताको प्राप्त होजाता है तिसीकारणते मैं मनुष्य हूं ऐसे निश्चयकरके स्थित होता है ॥ और शरीरकेसाथ तादात्म्याभिमानकी प्राप्तिसे अनंतर जीव तीन अवस्थाको प्राप्त होता है ॥ एक उदासीन अवस्था और एक सुखरूप अवस्था और एक दुःखरूप अवस्था ॥

सुखदुःखरूप अवस्था कर्मकरके उत्पन्न होती है ॥ जिसते सुखदुःख कर्मते उत्पन्न होते हैं ॥ और उदासीनअवस्था स्वभाव सिद्ध है ॥ कर्मोंते उत्पन्न नहीं होती ॥ सो सुखदुःख दोप्रकारके हैं ॥ एकतो बाह्य विषयोंके भोगते और एक मनोराज्यते ॥ सुखके निवृत्त हुयाँहुयाँ और दुःखकी न प्राप्ति हुयाँहुयाँ और दुःखके अभाव हुयाँहुयाँ और सुखकी न प्राप्ति हुयाँहुयाँ मध्यमें जो अवस्था है सो उदासीन अवस्था है ॥ तिस उदासीन अवस्थाविषे संपूर्ण लोक निजानंदके भानको कहते हैं जिसते मेरेको कोईभी चिंता नहीं ॥ मैं सुखसे स्थित हूं ॥ ऐसे कथन करते हैं ॥ इसते जाग्रत् अवस्थाविषेभी निजानंदका भान होता है ॥

शंका—उदासीनता अवस्थाविषे जो सुख प्रतीत होता है सो निजानंदरूप है और निजानंद ब्रह्मानंदरूप है ऐस तुमने अब कह्या और पीछे तुमने कह्या जो उदासीन अवस्थाविषे सुख प्रतीत होता है सो वासनानंद है ताते पिछले वचनका और अबके वचनका विरोध हुआ ॥

उत्तर—उदासीनता अवस्थाविषे प्रतीत होता जो सुख है सो सुख निजानंद नहीं ॥ जिसते मैं हूं यह जो अहंकार सामान्य तिसकरके आवरण हुया हैं ॥

शंका—जेकर उदासीनता अवस्थाविषे प्रतीत हुये सुखको मुख्य निजानंदता नहीं तो उसका क्या रूप है ॥

उत्तर—तिसको वासनानंदरूपता है ॥

शंका—मुख्यानंदसे भिन्न वासनानंदता कोई प्रसिद्ध नहीं ॥

उत्तर—मुख्यानंदसे भिन्न वासनानंद अनुमानकरके जानीता है जैसे जलकरके पूर्ण हुयाहुया जो घट तिसके बाहर जो शीतलता प्रतीत होती

है सो शीतलता जल नहीं ॥ जिसते जलका लक्षण द्रवता तिसविषे है नहीं ॥ किंतु वोह शीतलता जलका गुण है जिसकारणते तिस शीतलताकरके जलका अनुमान कऱ्या है सो अनुमानका स्वरूप यह है ॥ यह घट जलवाला है जिसते शीतल है ॥ जिसघटविषे जल नहीं होता तिसघटविषे शीतलताभी नहीं होती जैसे तात्काल कुलालके आँवाँसे निकसा जो घट है तिसविषे जल नहीं होता तब शीतलताभी नहीं होती ॥ अथवा ऐसे अनुमान करणा कि, घटविषे प्रतीत होती जो शीतलता है सो जलते उत्पन्न हुई है ॥ शीतलता होनेते जैसे जल विषे जो शीतलता है सो जलते उत्पन्न भई है॥ जैसे घटविषे शीतलता करके जल जानता है तैसे उदासीनता अवस्थाविषे प्रतीत होता जो है वासनानंद तिसकरके निजानंद जानीता है ॥ कठवल्लीउपनिषद् विषे जो योग कथन किया है सो प्रथम जिज्ञासु आपनी इंद्रियोंकी वृत्तियोंको मनविषे निरोधकरे और मनकी वृत्तियोंको विशेष विशेष अहंकारविषे निरोधकरे ॥ अर्थ यह—कामक्रोधआदिरूप अनेक वृत्तियोंको त्यागकरके मैं देवदत्तहूं, मैं ब्राह्मण हूं ऐसे विशेष अहंकार मात्र रूपताकरके स्थितहोवे और तिसविशेष अंहकारको त्यागकरके मैं हूं इस मान्याहंकार सहित स्थित होवे ॥ और फिर सामान्याहंकारको त्याग करके शांतरूप आत्माविषे स्थित होवै ॥ इस श्रुतिकरके कथन किया जो निर्विकल्प समाधिका अभ्यासरूप योग तिस करके जितना जितना अहंकारकी वृत्तियोंका लय होवे तितनीतितनी चित्तकी सूक्ष्मता होती है॥ और जितनी जितनी चित्तकी सूक्ष्मता होती है तितनी तितनी निजानंदकी प्रकटता होती है ॥ ऐसा अनुमानसे जानीता है सो अनुमान इस प्रकार करणा ॥ अहंकारकी संकोचता रहित जो दूसरा क्षण है सो अहंकारकी संकोचतासहित प्रथम क्षणते अधिकनिजानंदकी प्रकटतावाला है ॥ अहंकारकी

संकोचता अधिकवाला होनेते ॥ जैसे प्रथम अहंकारकी संकोचता-वाला क्षणसे जितना जितना अहंकारको संकोच होता है तितनी तितनी बुद्धिकी सूक्ष्मता होती है॥ जितनी जितनी बुद्धिकी सूक्ष्मता होती है तितनी तितनी निजानंदकी प्रकटता होती है ॥ बुद्धिकी सूक्ष्मताकी औधी क्यों तोरी है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-सर्वथा अहंकारका जो अभाव है सो बुद्धिकी सूक्ष्मता की औधी है ॥

शंका-सर्वथा अहंकारका अभाव तो सुषुप्तिअवस्थाविषे होता है ताते बुद्धिकी परमसूक्ष्मता निद्रा भई ॥

उत्तर-यह जो बुद्धिकी सूक्ष्मता है सो निद्रा नहीं जिसते अंतःकरणकी सर्व वृत्तियोंके लय हुयाँहुयाँ भी अंतःकरणके स्वरूपका लय नहीं होता अंतःकरणकी कारणरूपताकरके स्थितिकानाम सुषुप्ति है ऐसे आचार्योंने कथन किया है ताते अहंकारकी सर्वथा संकोचरूप बुद्धिकी सूक्ष्मता निर्विकल्पसमाधिरूप है निद्रारूप नहीं निर्विकल्प-समाधि विषे अंतःकरणका स्वरूपसे लय नहीं होता यह तुम किसते जानतेहो ॥ ऐसा पूछे तो श्रवणकर-निर्विकल्प समाधिअवस्थाविषे शरीर गिडता नहीं और सुषुप्तिअवस्थाविषे अहंकारके लय हुयाँहुयाँ शरीर गिडजाता है ताते शरीरके न गिडनेते जानीता है जो निर्विकल्प समाधि विषे अंतःकरणका स्वरूपका लय नहीं भया और सुषुप्तिअ-वस्थाविषे शरीरके गिरजानेते जानाजाता है ॥ जो अंतःकरणका स्वरूपसे लय होगया है इस विचारकरके यह सिद्ध भया जिसकाल-विषे द्वैतकी प्रतीति नहीं और निद्राभी नहीं तिसकालविषे जो प्रतीत होता है सो सुख ब्रह्मानंद है ॥

शंका-निद्रा और द्वैतकी प्रतीतिके न हुयाँहुयाँ प्रतीत होते सुख-को ब्रह्मानंदरूपता तुम किसते जानते हो ? ॥

उत्तर-तिसते ब्रह्मानंदरूपता हम भगवान्‌के वचनते जानते हैं

गीताके छठवें अध्यायविषे अर्जुनके ताईं भगवान्‌ने कथन किया है द्वैतकी प्रतीति और निद्राके अभाव हुयाँहुयाँ जो प्रतीत होता है सो सुख ब्रह्मानंद है ॥

शंका-गीताके छठवें अध्यायविषे किन श्लोकोंकरके भगवान् कथन करता भया है ? ॥

उत्तर-जिन श्लोकोंकरके भगवान् कथन करता भया है तिन श्लोकोंको श्रवणकर ॥ अर्थके क्रमकी अनुसारताकरके ब्रह्मानंदकी अभिलाषावाला जिज्ञासु धैर्यवाली बुद्धिकरके होलेहोले उपरामताको प्राप्त होवे ॥ उपरामताकी अवधि कहांपर्यंत है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-मनकी आत्माविषे सम्यक्स्थितिपर्यंत उपरामताकी अवधि है ॥ मनकी आत्माविषे सम्यक्स्थितिका स्वरूप यह है ॥ संपूर्ण जगत् आत्मस्वरूप है आत्मासे भिन्न कुछ नहीं ॥ ऐसी मनकी आत्माविषे स्थितिको करके किसी अनात्मवस्तुका चिंतन न करे ॥ यह योगकी परमअवधि है ॥ तिस योगकी परमअवधिके संपादनविषे प्रवृत्त हुया-हुया योगी प्रथम क्या करे ऐसा पूछे तो श्रवणकर-योगी प्रथम जिस जिस विषयकेवास्ते जिस जिस इंद्रियद्वारा मन निकस जावै स्वभाव-दोषते चंचल आत्माविषे स्थिरताको जिस जिस कालविषे न प्राप्त हुयाहुया तिस तिस कालविषे तिस तिस शब्दादिक विषयोंकी मिथ्या-रूपता आदिक दोषोंको देखकरके उन्होंविषे शोभनबुद्धिका त्यागक-रके वैराग्यभावना सहित तिस तिस इंद्रियके निरोधको करे॥इंद्रियोंके निरोधको करके इस मनको आत्माविषे स्थापन करे ॥ इसप्रकार योगके अभ्यास करणेवाले योगीका अभ्यासके प्रभावते मन आत्मा विषे अत्यंत शांतिको प्राप्त होजाता है ॥ मनके शांत हुयाँहुयाँ क्या होता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-जिस योगीका संपूर्ण विक्षेपोंते रहित होनेकरके परम शांतमन भया है और क्षीण होगये हैं मोहादि क्लेश

जिसके और नष्ट होगये हैं संपूर्ण पाप जिसके और छांदोग्योपनिषद्-विषे प्रतिपादन करी जो ब्रह्मदृष्टि सो संपूर्ण निश्चयकरके यह जगत् ब्रह्मरूप है ॥ जिसते ब्रह्मते उत्पन्न भया है और ब्रह्मविषे लयको प्राप्त होता है और ब्रह्मकरके स्थितिको प्राप्त होता है ॥ इसते आदिके वाक्यकरके संपूर्ण जगत् ब्रह्मरूप है ॥ इस निश्चयकरके युक्त जीवन्मुक्त जो योगी है तिसको उत्तम सुख प्राप्त होता है ॥ जिस सुखका नाश नहीं होता और जिसते अधिक और सुख कोई है नहीं॥ चित्त जिस कालविषे योग अभ्यासकरके संपूर्ण विषयोंते निवारण करचा हुया उपरामताको प्राप्त होजाता है ॥ और जिसकालविषे समाधिकरके शुद्ध हुयेहुये अंतःकरणकरके देह इंद्रियोंआदिकोंते परे चैतन्य ज्योतिस्वरूप आत्माके अनुभवको करता हुयाहुया आत्माविषेही तुष्टिको प्राप्त होता है ॥ विषयोंविषे तुष्टिको नहीं प्राप्त होता॥ और जिसकालविषे आत्माविषे स्थित हुयाहुया योगी अत्यंत सुखकअनुभव करता है जो उत्पत्तिविनाशादिकोंसे रहित है और बुद्धिकरके ग्रहण करता है इंद्रियोंकरके जिसका ग्रहण नहीं होता ॥ तात्पर्य यह जो विषयोंकरके उत्पन्न नहीं होता ऐसे सुखको अनुभव करता है ॥ और जिसकालविषे आत्माविषे स्थितिको प्राप्त हुयाहुया यह योगी आत्मस्वरूपते चलायमान नहीं होता और आत्मलाभको प्राप्त होयकरके और संपूर्ण ब्रह्मलोकआदिकोंके लाभको आत्मलाभते अधिक नहीं मानता ॥ इस स्मृतिके प्रमाणते आत्मलाभते परे और कोई लाभ नहीं और जिस आत्मतत्त्वविषे स्थित हुयाहुया शस्त्रोंकरके शरीरका छेदनादि रूप बडे दुःखकरकेभी प्रह्लादादिकोंकी न्याईं चलायमान नहीं होता तिसको जिज्ञासु योग जाने ॥ संपूर्ण दुःखोंके संयोगका वियोगरूप योग है ॥ योगाभ्यासविषे वैराग्यते रहित चित्तकरके दृढनिश्चयकरके संयोग करणेके योग्य है ॥ तात्पर्य यहां छः महीने मेरेको योग करते हुये हैं और ब्रह्मानंदकी प्राप्ति अद्यावधि

नहीं भई ॥ ताते योगसे मेरेको क्या लेनाहै ॥ यह जो वैराग्य तिसते रहित जो चित्त तिसकरके योग करणा ॥ योगाभ्यासकरके नष्ट होगये हैं पाप जिसके और योगविषे जो विघ्न हैं लय विक्षेप कषाय रसास्वाद तिनोंते रहित हुयाहुया योगी सदा आत्माको ब्रह्मरूप चिंतन करता हुयाहुया ब्रह्मरूप सुखको प्राप्त होता है ॥ सो ब्रह्मस्वरूप सुखविनाशते रहित है ॥ और तिस सुखते अधिक और कोई सुख हैनहीं ॥ योगाभ्यासविषे वैराग्यसे रहित होयकरके करया हुया योगाभ्यास मोक्षरूप फलके देनेवाला होता है ॥ इस अर्थको दृष्टांत सहित गौडपादाचार्यजीनेभी कथन किया है ॥ योगाभ्यासविषे लग्या हुया योगी टटीरेकी न्याई दृढचित्त होयकरके लगे सो टटीरेके दृष्टांतको श्रवणकर–एक टटीरा टटीरी सहित समुद्रके किनारे वास करता भया ॥ तिसकी टटीरी गर्भवाली होती भई तिसने आपने स्वामी टटीरेको कहा ॥ मैंने अंडे देनेहैं किसी और स्थानविषे चल वासकरिये ॥ क्योंकि हमारे अंडेको समुद्र लहरोंकरके लेजायेगा ॥ तब टटीरेने कहा कि, समुद्रका क्या सामर्थ्य है जो मेरे अंडोंको लेजाय तू स्त्रीस्वभावकरके डरती है ॥ तब टटीरी कहती भई ॥ मैं स्त्रीस्वाभावकरके तो नहीं डरती समुद्र बडा है और ये छोटे जीव हैं ऐसा सुनकरके टटीरा ब त हँसा और कह्या देखो मूर्ख स्त्री मेरे प्रतापको नहीं जानती ॥ जेकर मेरे अंडोंको समुद्र बहाय लेजाय तो मैं समुद्रका सुखाय देऊं तू समुद्रके भयसे रहित होयकरके निःशंक अंडोंको दे ॥ यह वार्ता टटीरी और टटीरेकी समुद्र सुनता हुआ और अपने मन विषे विचारा कि, इस पक्षीके अंडे बहायकरके इस पक्षीका पुरुषार्थ देखना चाहिये इसके उपरांत दो चारदिन पीछे टटीरीने अंडे दिये टटीरी टटीरेके चोगको चुगनेगया ॥ समुद्रने अंडे बहालिये ॥ टटीरी चोगचुगके जब आई तब देख्या कि, समुद्र अंडे बहाकरके लेगया है तब टटीरी बहुत शोकको प्राप्त भई ॥ और टटीरेको

बहुत दुर्वचन कहे ॥ तब टटीरा बोला तू धैर्यकर मेरे पुरुषार्थको देख मैं समुद्रको सुखावता हूं ॥ ऐसे कहकरके चोंचमें मृत्तिकाको ग्रहण करके समुद्रमें डालनेलगा ॥ और समुद्रमेंसे जितनी जलकी बूँदें कुशाके अग्रभागविषे स्थित होती थीं तितनी जलकी बूँदको समुद्रते चोंचविषे लेकर बाहर फेंकताथा ॥ इसप्रकार समुद्रके सुखावनेका आरंभ करता भया ॥ तब तिस टटीरेको और पक्षी निवारण करते भये ॥ पर टटीरा समुद्रके सुखावनेते निवृत्त न भया और पक्षियोंको कहा तुम अपने अपने स्थानोंविषे विश्राम करो मैं तुम्हारे आश्रयसे समुद्रके सुखावनेका आरंभ नहीं किया और जेकर तुम्हारी मेरे साथ मित्रता है तो तुमभी समुद्रके सुखावनेविषे उद्यम करो ॥ तब सब पक्षियोंने कह्या इसकी प्रसन्नताकेवास्ते सभी यही काम करिये ॥ इसप्रकार लक्षों करोंडो पक्षी इकट्ठे होयकरके समुद्रको सुखावने लगे ॥ तब तिसस्थानविषे विचरते विचरते नारद मुनीश्वर आन प्राप्त भये और पक्षियोंका तमासा देख्या और पूछा हे पक्षियों ! तुम क्या करते हो ? तब टटीरेने कह्या इस समुद्रको सुखावता हूं ॥ समुद्रने हमारे अंडे बहा लिये हैं ॥ तब नारदने तिस टटीरेको बहुत निवारण किया ॥ पर टटीरा निवृत्त न भया और कहा जब सूखेगा तब सुखाय दूंगा ॥ तब नारद तिसका दृढ निश्चय देखकर बहुत प्रसन्न भया ॥ और टटीरेको नारदने वर दिया कि, तेरी मनोकामना सिद्ध होवेगी ॥ अर्थ-यह तेरे अंडे समुद्रसे तैंने प्राप्त होवेंगे, यह कहके नारद वहाँसे चलादिया और गरुडको कहा तू पक्षिराज है और पक्षियोंका समुद्रकेसाथ विरोध है एकटटीरीके अंडे समुद्रने बहा लीने हैं ॥ इसते पक्षी समुद्रके सुखावने विषे यत्न करते हैं ॥ और समुद्र बडा गंभीर है और पक्षी बडे दुःखको प्राप्त हुये हैं ॥ ताते तेरेको पक्षियोंकी सहायता कीनी चाहिये ॥ ऐसे नारदका वचन सुनकरके गरुड बहुत क्रोधवान् होकरके आवता भया

और समुद्रको एक पर मारचा तिसकरके समुद्र योजनभर सूख गया और समुद्र भयभीत होकरके गरुडको कहता भया मेरा क्या अपराध है जो आपने मेरे ऊपर क्रोध किया? तब गरुडने कहा हमारी प्रजाको तू दुःख देता है जिसते टटीरेके अंडे तैंने बहालिये हैं तब समुद्र बोल्या टटीरेके अंडे मेरेसे लेवो और मेरेपर कृपा करो ॥ जैसे टटीरेने खेदसे रहित होकरके यत्न किया और समुद्रको जीतलिया तैसे जिज्ञासुभी खेदसे रहित होकरके मनके जीतनेका यत्न करे तो मनको जीतलेता है जैसे टटीरेकी नारद और गरुडने समुद्रके जीतनेविषे सहायता कीनी है तैसे जिज्ञासुकीभी गुरु और परमेश्वर मनके जीतनेविषे सहायता करते हैं ॥ केवल गीताविषेही यह अर्थ कथन नहीं किया किंतु मैत्रायणीनामक यजुर्वेदकी शाखाविषेभी यह अर्थ कथन किया है तिस शाखाविषे यह कथन किया है–शाकायननाम एक ऋषिका बृहद्रथनाम राजा शिष्य होकर तिसमुनीकी शरणको प्राप्त होता भया तिस बृहद्रथराजऋषिको समाधिके उपदेशसहित ब्रह्मसुखको कथन करता भया ॥ सो जिसप्रकार करके कथन करता भया है सो श्रवणकर ॥ जैसे दग्धकर दिया है काष्ठादि ईंधन जिसने ऐसी जो अग्नि है सो आपने कारण तेजमात्रविषे उपशमको प्राप्त होजाती है अर्थ–यह लाटां आदिरूप विशेषाकारको त्याग करके तेजोमात्ररूप होकरके अग्नि स्थित होती है तैसे चित्तभी निर्विकल्प समाधिके अभ्यास करके राजस, तामस संपूर्ण वृत्तियोंके नाश होनेते आपने कारण सत्तामात्रविषे उपशमको प्राप्त होजाता है ॥ अर्थ–यह सत्तामात्रशेष रहजाता है ॥ सत्तामात्रशेष रहणेते क्या होता है? ऐसा पूछे तो श्रवणकर–सत्यरूप आत्माकी है कामना जिसको और आपने कारण सत्तामात्रविषे जो उपशमको प्राप्त हुया है और श्रोत्रादिक इंद्रियों करके ग्रहण करणे योग्य शब्दादिक विषयोंके ज्ञानसे जो

रहित है मन तिसमनको कर्मजन्य सुखदुःखादिक स्त्रीपुत्रधनादिकों करके सहित मिथ्या प्रतीत होता है ॥ जिसते तिनोंको माया करके रचेहुये जानता है ॥

शंका-आपने चित्तके कारणविषे उपशमको प्राप्त हुयाँहुयाँ जगत् मिथ्यारूप होजाता है यह कहना अयोग्य है ॥ जिसते जगत्का चित्त उपादान नहीं ॥

उत्तर-यद्यपि स्वरूप करके जगत्का उपादान चित्त नहीं तोभी जगत्को भोगने योग्यताका कारण चित्त है ॥ यह वार्ता सर्व लोकोंके अनुभव सिद्ध है जिसते सुषुप्ति आदिकोंविषे चित्तके लय हुयाँहुयाँ भोग कोई नहीं देखता ॥ ताते संपूर्ण भोग चित्तके कल्पे हुये हैं इसते चित्त उपशम होनेते जगत् मिथ्या होजाता है ॥ जिसकारणते चित्त-रूप संसार है इसते अभ्यास वैराग्यरूप यत्नकरके चित्तको शोधन कऱ्या चाहता है ॥ अर्थ-यह रजोतमोवृत्तियोंको निवारण करके चित्तको एकाग्र कीना चाहता है ॥

शंका-आत्माके मोक्षवास्ते आत्माका शोधन कीना चाहता है चित्तका शोधना व्यर्थ है ॥

उत्तर-जीवका जिसविषे चित्त होता है तिसका रूप जीवहोजाता है ॥ जिसते धन पुत्रादिकोंकी न्यूनता करके आपनी न्यूनता मानता है और अधिकताकरके आपनी अधिकता मानता है यह जो वार्ता है सो सनातन चली आवती है ॥ और यह वार्ता गुप्त है इतने करके यह कथन किया ॥ स्वभावते आत्मा शुद्ध है तिसको चित्तके संबं-धते रागद्वेष जन्म मरणादिक प्राप्त होते हैं ॥ इसी अर्थको बृहदारण्य-कउपनिषद्विषे भी कथन किया है ॥ चित्तके ध्यान करता हुयाँ आ-त्मध्यानकरनेकी न्याईं होजाता है और चित्तके चंचल हुयाँ आत्मा चंचलकी न्याईं होजाता है ॥ वास्तवसे आत्मा शुद्ध है इसते चित्तके

शोधने करके आत्माविषे रागद्वेष जन्ममरणादिरूप संसारका अभाव होजाता है ताते चित्तका शोधना व्यर्थ नहीं ॥

शंका-अनादि जन्मोंके प्रवाहविषे संचित कियेहुये जो हैं सुख-दुःखके देनेवाले पुण्यपापरूप कर्म, तिनोंके विद्यमान हुयाँहुयाँ चित्तके शोधनकरके आत्माविषे संसारकी निवृत्ति कैसे होवेगी ? ॥

उत्तर-चित्तके शोधन करके भई जो चित्तकी निर्मलता तिस करके चित्तविषे ब्रह्मविचार उदय होता है ॥ तिस ब्रह्मविचार करके ब्रह्मज्ञान उदय होता है ॥ ब्रह्मज्ञान करके सकल कर्मोंका नाश होजाता है ॥ ताते चित्तके शोधने करके संसारका अभाव होजाता है इस अर्थ विषे श्रुतिस्मृति भी प्रमाण है ॥ ताते प्रथम श्रुतिका अर्थ श्रवणकर ॥ जैसे अतिप्रचंड अग्निविषे रख्या हुयाँ तीलीकारूं दग्ध होजाता है तैसे शुद्धचित्तवाले पुरुषके सर्व पाप दग्ध होजाते हैं ॥ अब स्मृतिके अर्थको श्रवणकर ॥ गोवधसे आदिलेकरके संपूर्ण उपपातकोंके हुयाँहुयाँ और ब्रह्महत्यासे आदिलेकरके संपूर्ण महापातकोंके हुयाँहुयाँ तिनोंके दूर करणेवास्ते पहररात्रि पहले उठकरके ब्रह्मध्यानकरे ताते चित्तके शोधने करके जन्मोंके देनेवाले पुण्यपापरूप कर्म नाश होजाते हैं ॥ पुण्यपापरूप कर्म नाश होगये तो क्या हुया ऐसा पूछे तो श्रवणकर ॥ चित्तकी निर्मलता करके क्षीण होगये हैं पुण्यपापरूपकर्म जिसके ऐसा जो पुरुष है सो आपने स्वरूप अद्वयानंद लक्षण ब्रह्मविषे स्थित होयकरके मैं अद्वयानंदरूप ब्रह्महूं इस निश्चय करके संपूर्ण दृश्यविषे सत्यता बुद्धिको त्याग करके चैतन्यमात्र रूपताकरके स्थित हुयाहुया अविनाशी ब्रह्मके सुखको प्राप्त होता है ॥ जैसे जीवका चित्त विषयोंविषे तत्पर होता है ॥ तैसे जेकर ब्रह्मविषे चित्त आसक्तहोवे तब ऐसा कौन पुरुष है जो मोक्षको न प्राप्त होवे ॥ बंधनोंते रहित हुयाँहुयाँ मन दो प्रकारका है ॥ एक शुद्ध है एक अशुद्ध है ॥ कामक्रोधादिकों करके संयुक्त अशुद्ध है

और कामक्रोधादिकोंते रहित शुद्ध है शुद्ध चित्त मोक्षका कारण है और अशुद्धचित्त जन्ममरणादिकोंका कारण है ॥ मनही मनुष्योंके बंध मोक्षका कारण है ॥ विषयासक्त चित्त बंधका कारण है ॥ और विषयोंते विरक्त चित्त मोक्षका कारण है ॥ सच्चिदानंदरूप आत्मा-विषे स्थापन कऱ्या जो चित्त है और निर्विकल्प समाधिकरके धोया गया है रजो तमोरूप मैलोंकरके जिसका ऐसा जो चित्त है तिसको समाधिविषे जो सुख प्राप्त होता है सो सुख वाणी करके कथन नहीं किया जाता ॥ जिसते समाधिका सुख संसारीलोकोंके अनुभव सिद्ध नहीं किंतु समाधिकालका जो सुख है सो आपही अंतःकरण करके जानीता है ॥

शंका-यह समाधि तो दुर्लभ है तिसते इस करके ब्रह्मानंदका निश्चय नहीं बनता ॥

उत्तर-यद्यपि बहुतकालपर्यंत समाधि दुर्लभ है तोभी क्षण दो क्षण पर्यंत तो होसक्ती है ॥ तिस करके ब्रह्मानंदका निश्चय बनजाता है ॥

शंका-कोईक पुरुष आत्माके साक्षात्कारवास्ते श्रवण, मनन, निदिध्यासनमें प्रवृत्त हुयेहुये भी आनंदके निश्चयते रहित हुयेहुये बाहर मुख प्रवृत्त हुयेहुये नजर आवते हैं ॥

उत्तर-श्रद्धाआदिकोंसे रहितोंको बाहर मुख प्रवृत्त हुयाँहुयाँ भी जो श्रद्धाआदिकोंकरके संयुक्त हैं तिनोंको आनंदका निश्चय होता है॥ जिस पुरुषको समाधिसे श्रद्धा है और व्यसन है ॥ अर्थ यह-जिस प्रकार समाधि सिद्ध होवे तिसीप्रकार समाधिको सिद्ध करूंगा ॥ ऐसा जो दृढनिश्चय है तिसका नाम व्यसन है सो पुरुष समाधिविषे ब्रह्मानंदको अवश्य निश्चय करता है ॥ क्षणमात्रकी समाधिकरके समाधिविषे ब्रह्मानंदका निश्चय हुयाँहुयाँ एकवार ब्रह्मानंदके निश्चयवाला जो पुरुषहै सो समाधिसे विना

और कालविषेभी ब्रह्मानंद है ऐसे निश्चय करता है ॥ श्रद्धाआदिकों-करके सहित एकवार क्षणिक समाधिविषे ब्रह्मानंदके निश्चयको प्राप्त भया जो पुरुष है सो तूष्णींअवस्थाविषे भी प्रतीत होती जो है ब्रह्मानंदकी वासना तिसकी उपेक्षाको करके निजानंद विषे निश्चयवाला निजानंदकी भावनाको करता है ॥ इसीप्रकार व्यवहारकालविषेभी निजानंदकी भावनाको सो पुरुष करता है जिसपुरुषने क्षणैकसमाधिविषे निजानंदको अनुभव किया है इसविषे दृष्टांत श्रवणकर ॥ जैसे दुराचारिणी स्त्री घरके कर्मोंको करती हुईभी परपुरुषके संग-सुखकी भावना करती है तैसे सर्वते परे शुद्ध निर्विकल्प निजानंदविषे विश्रांतिको प्राप्त भया जो धीर्यवान् पुरुष सो व्यवहारकालविषेभी निजानंदके स्वादको लेता रहता है धीर्यवान्का अर्थ यह है इंद्रि-योंको विषयोंके सन्मुख होयकरके पुरुषको आपनी निष्ठाते चलायमान करणेका सामर्थ्य है ऐसी जो इंद्रियाँ हैं तिनको जीतकरके निजा-नंदके अनुभवकी इच्छाकरके निजानंदके चिंतनविषेही जो वर्तता है सो धीर्यवान् कहाता है ॥ अर्थ यह–इंद्रियोंके और विषयोंके संबंध हुयाँहुयाँ जो इंद्रियोंके अधीन नहीं होता साथही इंद्रियोंको आपने अधीन करलेता है सो पुरुष धीर्यवान् कहाता है ॥ अब विश्रांतिका अर्थ श्रवणकर–जैसे भारके उठावनेवाला पुरुष दुःखका कारण जो है शिरके ऊपरभार तिसको त्याग करके सुखको प्राप्त होता है ॥ तैसे संसारके व्यवहारोंको त्याग किया हुयाँ मैं सुखको प्राप्त होऊंगा ऐसी उत्पन्न हुई जो बुद्धि सो विश्रांति कहाती है ॥ अब इसके तात्पर्यको सुण ॥ परमविश्रांतिको प्राप्त भया जो पुरुष ॥ अर्थ यह–संसारके व्यवहारोंको त्याग्या हुयाँ मैं सुखको प्राप्त होऊंगा इस दृढनिश्चयवाला जो पुरुष सो जैसे तूष्णींअवस्थाविषे वासनानंदको त्यागकरके निजानंदके स्वादको लेता है तैसे सुखदुःखके प्राप्त हुयाँ हुयाँ

भी सुखदुःखकी चिंताको त्यागकरके निजानंदके स्वादविषेही प्रीतिवाला होता है ॥

शंका-दुःख प्रतिकूल होता है तिसकरके तिसके चिंतनकी इच्छा न होवे पर सुखविषे तो अनुकूल होता है ॥ तिसकरके सभीपुरुषविषे सुखकी इच्छा करते हैं ॥ इसते विषयसुखके चिंतनकी इच्छा विवेकीको क्यों न होवे ? ॥

उत्तर-विवेकीको विषयसुखकी इच्छा नहीं होती ॥ जिसते विवेकी यह विवेक करता है विषयसुखकी इच्छा विषयोंके संपादन विषे प्रवृत्त करवावती है ॥ विषयसंपादनाविषे प्रवृत्त हुयाँहुयाँ चित्तकी बहुत बाहर मुखता होती है तिसकरके निजानंदका चिंतन नहीं होता ॥ ताते निजानंदका चिंतन त्यागके विषयसुखका चिंतन करणा तो ऐसा है ॥ जैसे कोई मूढपुरुष चिंतामणिको त्यागकरके कोलियोंको ग्रहण करलेवे ॥ इसविवेककरके विवेकीको विषयोंके चिंतनकी इच्छा नहीं होती ॥ किंतु संपूर्णविषयोंविषे विरसबुद्धि होजाती है ॥ जैसे सतीको शीघ्रशरीरके त्यागकी अत्यंत दृढइच्छाके हुयाँहुयाँ शरीरके त्यागविषे विलंबके करवानेवाला जो है भूषण वस्त्रादिकोंका पहिनना तिसविषे सतीको विरसता बुद्धि होजाती है ॥ अर्थ यह सतीकी भूषणवस्त्रोंके पहरणेविषे प्रीति नहीं होती ॥ जैसे तैसे वैराग्यादिसाधनोंवाले विवेकीपुरुषको ब्रह्मानंदके स्वादका विरोधी विषयोंके सुखविषे प्रारब्धकर्मकेविषे सुखके अनुभव करता हुयाभी प्रीति नहीं रहती ॥

शंका-ब्रह्मानंदके स्वादका विरोधीविषे सुखकी इच्छा मत होवे ॥ पर थोडे यत्नकरके प्राप्त होनेविषे जो चित्तकी बहिर्मुखताके न करवावणेवाला तिसविषे विवेकीकी इच्छा क्यों न होवे ॥

उत्तर-ब्रह्मानंदके चिंतनके अविरोधीविषे, सुखविषे और निजानं-

दविषे विवेकीकी बुद्धि शीघ्र जाती है और हटआवती है जैसे काककी दृष्टि खैंचनेसे नेत्रविषे शीघ्र जाती है और हट आवती है ज्ञानवान् जो पुरुषहै तिसकी बुद्धि विषयानंदकोभी भोगती है और ब्रह्मानंदकोभी भोगती है जैसे दोनोंदेशोंकी बोली जाननेवाला पुरुष दोनोंबोलियोंको बोलता है तैसे ज्ञानवान् दोनोंआनंदको अनुभव करता है जो उप-निषद्वाक्योंकरके जान्या है ब्रह्मानंद तिसको अनुभव करता है ॥ और प्रारब्धकरके प्राप्त हुये अन्नवस्त्रादिकोंके सुखकोभी अनुभव करता है ॥

शंका-यह जो तुमने कहा सो दुःखप्राप्तिसमयविषे भी विवेकी निजानंदको अनुभव करता है सो तुम्हारा कहना अयुक्त है जिसते दुःखकी प्राप्तिसमयविषे बुद्धिमें उद्वेग होजाता है इसते उद्वेगको प्राप्त हुई बुद्धिविषे ब्रह्मानंदका अनुभव नहीं बनता ॥

उत्तर-जैसे अज्ञानीको दुःखकी प्राप्तिविषे उद्वेग होता है तैसे ज्ञानीको दुःखकीप्राप्तिविषे उद्वेग नहीं होता॥जिसते ज्ञानी ब्रह्मानंदको अपना स्वरूप जानता है और दुःखको प्रारब्धकर्मका फल जानता है इसते ज्ञानवान्को दुःखके अनुभव समयविषेभी ब्रह्मानंदका अनु-भव होता है जैसे लंकलंक पर्यंत गंगाजीके प्रवाह जेठकेमहीनेविषे स्थित हुया जो पुरुष है तिसको शीतलताका सुख और तप्तका दुःख दोनोंका इकट्ठा अनुभव होता है तैसे विवेकीको दुःखप्राप्तिसमयविषेभी ब्रह्मानंदका अनुभव होता है इतने करके यह सिद्ध भया ज्ञानवान्को जाग्रत् अवस्थाविषे सुखानुभवकालविषे और दुःखानुभव कालविषे और तूष्णींदशाविषे सदाही ब्रह्मानंद भासता है जैसे जाग्रत् अवस्था-विषे ज्ञानीको ब्रह्मानंद भासता है तैसे जाग्रत्के संस्कारोंते उत्पन्न भया जो स्वप्न तिसविषेभी ज्ञानीको ब्रह्मानंद भासता है ॥

शंका-ज्ञानवान्के स्वप्नको ब्रह्मानंदके अनुभवकी वासना करके

उत्पन्न हुयाहुया जेकर मानोंगे तो ज्ञानवान्‌को स्वप्नेविषे ब्रह्मानंदकी प्रतीति होनी चाहिये और विषयसुखकी और दुःखकी प्रतीति न होनी चाहिये ॥

उत्तर—केवल ब्रह्मानंदके अनुभवकी वासनाकरके स्वप्न नहीं होता किंतु अविद्याकी वासनाकरकेही होता है जिसते जितनाकाल अंतःकरण है तितनाकाल अविद्याकी वासना रहती हैं ॥ इसते अविद्याकी वासनाकरके स्वप्नेको उत्पन्न होनेते अज्ञानीकी न्याईं ज्ञानवान् स्वप्नेविषे, सुखविषे और दुःखको अनुभव करता है और अज्ञानीका स्वप्न केवल अविद्याकी वासनाकरके उत्पन्न होता है ॥ और ब्रह्मानंदकी वासनाकरके उत्पन्न नहीं होता ॥ इसते अज्ञानीको स्वप्नेविषे ब्रह्मानंद नहीं भासता ॥ इतने ग्रंथकरके कथन किया जो अर्थ तिसको थोडेकरके श्रवणकर ॥ यह जो पंचअध्यायरूप ब्रह्मानंदनाम ग्रंथ है सो ब्रह्मानंदको प्रकटताके करवावणेवाला है ॥ तिसके प्रथमाध्यायविषे यह कथन किया ॥ सुषुप्ति अवस्थाविषे भी ब्रह्मानंद प्रतीत होता है और सुषुप्तिते उठ्याहुयाँ तूष्णीं अवस्थाविषेभी ब्रह्मानंद प्रतीत होता है और समाधि अवस्थाविषेभी ब्रह्मानंद प्रतीत होता है ॥ और शरीरस्थितिका कारण जो अन्नजलवस्त्रादिक तिनके अनुभवकालविषेभी ब्रह्मानंदका अनुभव होता है ॥ और दुःख प्राप्तिकालविषेभी ब्रह्मानंदका अनुभव होता है ॥ और स्वप्नेविषेभी ब्रह्मानंदका अनुभव होता है ॥ इसविषे अंतर्मुख योगी ज्ञानवान्‌का अनुभवरूप प्रत्यक्ष प्रमाण कथन किया ॥ जो स्वप्रकाश चैतन्यरूप ब्रह्मानंदके ग्रहण करणेवाला है और श्रुतियाँभी प्रमाण कथन करती हैं और स्मृतियाँभी प्रमाण कथन करती हैं और अनुमान प्रमाणभी कथन किया और अर्थापत्तिभी प्रमाण कथन कीनी ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां
एकादशं ब्रह्मानन्देयोगानन्द—प्रकरणं समाप्तम् ॥ ११ ॥

अथ ब्रह्मानन्देआत्मानन्द प्रकरणम् १२.

ओंसद्गुरुप्रसाद ॥ ॥ अब आत्मानंदनाम दूसरे आनंदका आरंभ करते हैं ॥ सो आदिसे पंचदशीक बारहवाँ प्रकरण है ॥ प्रथमाध्यायविषे विवेकीको योगकरके निजानंदके अनुभवका प्रकार वर्णन किया ॥ मूढजिज्ञासुको आत्मानंद है नाम जिसका ऐसा जो त्वंपदार्थका विवेक तिसद्वारा ब्रह्मानंदके अनुभवके प्रकारके दिखलावणेवास्ते ॥ प्रथम शिष्यके प्रश्नको दिखलावते हैं ॥

प्रश्न—पीछे कथन किया जो प्रकार तिसकरके योगी वासनानंदते भिन्न और ब्रह्मानंदते भिन्न निजानंदका अनुभव करो ॥ पर मूर्ख योग विषे समर्थते रहित निजानंदके अनुभवको कैसे प्राप्त होवे ? यह कृपाकरके कहो ॥

उत्तर—अतिमूर्खको ब्रह्मविद्याका अधिकार नहीं ॥ अर्थ यह-अति मूर्खको निजानंदका अनुभव नहीं होता ताते अतिमूर्ख अनादि संसारविषे अनंत पिछले जन्मोंविषे किये जो हैं पुण्यपापरूप कर्म तिनोंके प्रभावकरके अनेकप्रकारके शरीरोंको धारकरके वारंवार जन्मा और मरा ॥ उसकी कुछ गति कहनेवास्ते हमारा क्या प्रयोजन है

प्रश्न—आप जैसे आचार्योंकी संपूर्ण जीवोंपर कृपा होती है ॥ ताते आपने अतिमूर्खकीभी कोई एक गति कहना चाहिये ॥ ताते आपकी कृपाही मूर्खकी गति कहनेविषे प्रयोजन है ॥ जिसते आप शरणको प्राप्त हुये शिष्योंके उद्धारकरणेकी इच्छाके संयुक्तहो ताते शिष्यका उद्धारकरणाही आपका प्रयोजन है ॥

उत्तर—जेकर अतिमूर्खकी गति कहनी ऐसा चाहते हैं तो विषयोंविषे रागवाले मूढकी गति पूछता है कि विषयोंते विरक्त जिज्ञासु मूढकी गति पूछता है ॥ जेकर दोनोंकी गति पूछतेहो तो श्रवणकर ॥

विषयोंविषे रागी मूढको पूछना तेरा राग किसकिस विषे है ॥ ब्रह्मलोकादिकोंविषे है कि स्वर्गादिकोंविषे है ॥ जेकर मूढ कहै कि, मेरा राग ब्रह्मलोकादिविषे है ॥ तो तिसको ब्रह्मलोककी प्राप्तिका कारण उपासनाका उपदेश करणा ॥अर्थ यह ब्रह्मलोककी कामनावाला उपासनाकोकरे उपासनाकरके तिसको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होवेगी और जेकर उसका स्वर्गादिकोंविषे राग होवे तो उसको आपने वर्णाश्रमके कर्म करणेयोग्य हैं ॥ और जेकर मूढ आत्माजिज्ञासुवाला होवे तो तिसको गुरु आत्मानंदके विवेकका उपदेशकरे ॥ इसप्रकार किसने किसमूढ बुद्धिवाले जिज्ञासुको आत्मानन्दका उपदेश किया है ऐसा पूछे तो श्रवणकर ॥ याज्ञवल्क्यनाममुनीश्वरने मैत्रेयीनाम अपनी स्त्रीको आत्मानंदके विवेकका उपदेश किया है ॥ अरे मैत्रेयी ! भर्ताकेवास्ते स्त्रीके भर्ता पियारा नहीं होता ॥ किंतु आपने वास्ते स्त्रीको भर्ता पियारा होता है ॥ इसते आदिलेकरके वचनोंको कथन करता हुया हुया याज्ञवल्क्य मैत्रेयीको उपदेशकरता है ॥ भर्ता १ स्त्री २ पुत्र ३ धन ४ पशु ५ ब्राह्मण ६ क्षत्री ७ लोक ८ देवता ९ वेद १० भूत ११ सर्व १२ ये आत्माके वास्ते पियारे हैं और स्वरूपकरके पियारे नहीं ॥ अब इन्होंके तात्पर्यको श्रवणकर ॥ भिन्न भिन्नकरके जिसकालविषे स्त्रीकी भर्ताविषे इच्छा होती है तब स्त्री भर्ताविषे प्रेमकरती करती है ॥ और जब तिसस्त्रीका भर्ता क्षुधादिकोंकरके युक्त होता है तब स्त्री भर्ताविषे प्रेम नहीं करती ॥ ताते स्त्रीका प्रेम भर्ताकेसाथ आपने वास्ते भया ॥भर्तावास्ते न भया जेकर भर्तावास्ते स्त्रीका प्रेम होता तो भर्ताविषे क्षुधाआदिकोंकरके युक्त भर्ताविषेभी प्रेम होता ॥ ताते स्त्रीका भर्ताविषे प्रेम आपने वास्ते है भर्तावास्ते नहीं ॥ और भर्ता जो स्त्रीविषे प्रेम करता है सो स्त्रीकेवास्ते नहीं करता किंतु आपनेवास्ते करताहै ॥

शंका–जिसकालमें स्त्रीकी इच्छाकरके प्रवृत्ति होती है अथवा जिसकालमें पुरुषकी इच्छा करके प्रवृत्ति होती है, तिसप्रवृत्तिविषे आपनेवास्ते प्रीति होवो पर जहाँ इकट्ठी दोनोंकी इच्छाकरके प्रवृत्ति होई है तिस प्रवृत्तिविषे प्रीतिको आत्मार्थता नहीं ॥ अर्थ यह तिस समय स्त्रीकी प्रीति भर्ताविषे भर्ताकेवास्ते है और भर्ताकी स्त्रीविषे प्रीति स्त्रीके वास्ते है ताते तुम कैसे कहते हो भर्ताविषे स्त्रीकी प्रीति भर्ताकेवास्ते नहीं अपनेवास्ते भर्ताविषे प्रीति है और भर्ताकी स्त्रीविषे प्रीति है और स्त्रीके वास्ते नहीं आपने वास्ते है ॥

उत्तर–जब इकट्ठी दोनोंकी इच्छाकरके प्रवृत्ति होती है तिसविषेभी अपनी अपनी कामनाके पूर्णताकी इच्छाकरकेही होती है ताते अपने अपनेवास्ते दोनोंकी प्रवृत्ति है, भर्ताके वास्ते स्त्रीकी प्रवृत्ति नहीं और स्त्रीकेवास्ते भर्ताकी प्रवृत्ति नहीं और पुत्रविषे पिताकी जो प्रीति है सो पुत्रके वास्ते नहीं अपने वास्ते है ॥ जिसते पिता पुत्रके मुखको जब चूमने लगता है तब डाढीके बालोंको चूमनेकरके बालक रोता है और तिसका पिता वारंवार तिसका मुख चूमता है सो बालककी प्रसन्नताके वास्ते नहीं जिसते बालक तो दुःखको प्राप्त हुया रुदन करता है किंतु अपनी प्रसन्नताके वास्ते करता है ताते पिताकी प्रीति पुत्रविषे पुत्रवास्ते न भई अपने वास्ते है ॥ भर्ता स्त्रीपुत्ररूप चेतनोंविषे करीती जो प्रीति है तिसविषे परके अर्थ यह प्रीति है कि, अपने अर्थ यह प्रीति है ? इस संशयके हुयाँहुयाँभी परधनआदिकोंविषे जो प्रीतिहै सो प्रीति धनके वास्ते नहीं बनती जिसते धनआदिक अचेतन हैं तिनको यह इच्छा नहीं जो हमारेसाथ कोई प्रीति करे ताते धन विषे प्रीति अपनेवास्ते है ॥ हीरेमोतीआदिरूप धनको यह इच्छा नहीं जो हमारेको अचेतन होनेते थाम्हके रक्खे पर बडे यत्नकरके पुरुष

तिसको थाम्हथाम्ह रखता है सो हीरेमोतीआदिकोंविषे थाम्हना रूप प्रीति हीरेमोतीके वास्ते है यह तो शंकाही नहीं बनती ताते तिनविषे प्रीति अपनेवास्ते है और खेतीकरणेवालेकी जमींदारोंकी बैलकेमध्य जो प्रीति होती है सो बैलआदिकोंकेवास्ते नहीं अपने- वास्ते है जिसते बैलकी हलवाहने विषे प्रीति नहींभी होती जोराजोरी तिसको हलकें आगे जोड देते हैं ताते हलवाहने वालेकी प्रीति बैलके विषे बैलके वास्ते नहीं अपनेवास्ते है और मैं ब्राह्मणहूं इसते मैं पूजाके लायकहूं इस अभिमानवाला ब्राह्मणतानिमित्तकरके प्राप्त भई जो पूजा तिसकरके प्रसन्नताको होता है ॥ ब्राह्मणता जाती नहीं प्रसन्न- ताको प्राप्त होती जिसते जाती जड है ताते ब्राह्मणता जातीविषे पुरुषकी प्रीति आपनेवास्ते है जातीवास्ते नहीं ॥ मैं क्षत्रीहूं तिसकरके राज्यको कर्ता हूं यह जो राजकरके प्रसन्नता है सो पुरुषको होती है क्षत्रीजातीको नहीं होती ॥ ताते क्षत्रीजातिविषे पुरुषकी प्रीति आपने वास्ते है जातीवास्ते नहीं ॥ और स्वर्गलोक और ब्रह्मलोक मेरेको प्राप्त होवे ॥ ऐसी जो स्वर्गलोक ब्रह्म लोकविषे प्रीति है सो स्वर्गलोक ब्रह्मलोकके ऊपर उपकारकेवास्ते नहीं अपने सुखकेवास्ते है ॥ शिवाविष्णुसे आदिलेकरके देवताओंका पूजन रूप जो प्रीति है सो शिवविष्णुके ऊपर उपकारके वास्ते नहीं ॥ अपने पापोंके दूरकरणे वास्ते है ॥ शिवविष्णुआदिक देवताओंके पाप दूरकरणेवास्ते नहीं ॥ जिसते वोह स्वभावते पापरहित हैं ॥ ताते शिवविष्णुआदिक देवताओं विषे जो प्रीति है सो आपनेवास्ते है तिनके वास्ते नहीं ॥ और ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामदेव, अथर्वणवेदोंको जो पुरुष पढते हैं सो उनवा- स्ते नहीं पढते किंतु आपनी दुर्ब्राह्मणताके निवारण वास्ते पढते है ॥ जेकर ऐसे वेदोंको न पढेंगे तो उनको दुर्ब्राह्मणता प्राप्त होजा- वेगी ॥ सो दुर्ब्राह्मणताकी प्राप्ति वेदोंविषे नहीं होती मनुष्योंविषे

होती है ॥ इसते मनुष्य दुर्ब्राह्मणताके निवारणवास्ते वेदोंको पढते हैं ॥ ताते वेदोंविषे जो पुरुषोंकी प्रीति है सो अपनेवास्ते है वेदोंके-वास्ते नहीं ॥ और पृथिवीआदिक पंचभूतोंविषे जो जीवोंकी प्रीति होती है सो पृथिवीआदिक पंचभूतोंकेवास्ते नहीं अपनेवास्ते है ॥ पृथिवीविषे जो प्रीति होती है सो पृथिवी स्थान देती है ॥ और जलविषे जो प्रीति होती है सो तृषा निवारण और स्नानादिकोंवास्ते होती है ॥ और अग्निविषे प्रीति भोजनकरणेवास्ते होती है ॥ और पवनविषे प्रीति वस्त्रके सुखावनेआदिकोंवास्ते होती है॥और आकाश अवकाशको देता है तिसवास्ते आकाशमें प्रीति होती है ॥ ताते पृथिवी आदिक पंचभूतोंविषे जो प्रीति है सो आपने वास्ते है पृथिवी आदिक पंचभूतोंकेवास्ते नहीं ॥ और नौकरसे आदिलेकर संपूर्ण लोक स्वामी आदिकोंविषे जो प्रीति करते हैं सो आपनेवास्ते करते हैं स्वामी आदिकोंकेवास्ते नहीं करते ॥ इसी प्रकार स्वामी आदिक नौकरआदिकोंविषे जो प्रीति करते हैं सो आपने वास्ते करते हैं नौकरआदिकोंवास्ते नहीं करते ॥ स्वामी जो नौकरको बख्शकरके धन देता है सो नौकरवास्ते नहीं देता अपनी अच्छी सेवावास्ते देता है ॥ और नौकरने जो प्रीतिकरके सेवा की है सो स्वामीवास्ते नहीं कीनी अपने वास्ते कीनी है ॥

शंका-श्रुतिविषे इसप्रकार बहुत दृष्टांत किसवास्ते कथन कीने हैं ? ॥

उत्तर-भोजन आदि अपनी इच्छाकरके जो व्यवहारकरते हैं तिन संपूर्णोंविषे प्रीति अपनेवास्ते होती है ॥ भोजन आदिकोंवास्ते नहीं होती इसी प्रकार जिसजिसविषे जीवकी प्रीति होती है सो अपने वास्ते होती है ॥ ऐसे सर्व व्यवहारोंकेविषे चिंतन करणेकेवास्ते बहुत

दृष्टांत कथन किये हैं ॥ तिन संपूर्णोंका तात्पर्य यह है ॥ सर्व पदार्थोंको स्त्रीपुत्रादिकोंको अपनी शेषता जानकरके अपने आपको अतिशय करके पियारा जानकरके अपने विषे बुद्धिको लगावे ॥ पुत्रादिकोंविषे बुद्धिको न लगावे ॥ अर्थ यह-पुत्रादिक सबकेविषे प्रीतिको त्यागकरके जो अपना आप परमपियारा है सो अपने आपविषे प्रीतिको करे ॥

शंका-आत्माकी शेषताकरके सर्वको पियारा होनेते आत्मा परम पियारा है यह जो तुमने कथन किया है सो नहीं बनता जिसते विकल्पकरके निर्णयकरणे लगे तो प्रीतिकास्वरूप निर्णय नहीं हो सक्ता सो जैसे नहीं होसक्ता तिसको श्रवणकर-हम पूछते हैं जो आत्माविषे प्रीति है तिसका स्वरूप क्या है ? राग है अथवा श्रद्धा है अथवा भक्ति है अथवा इच्छा है ? इन चारोंपक्षोंविषे प्रीति सर्वविषे नहीं बनती जेकर कहै प्रीति राग है तो स्त्रीआदिकोंविषे प्रीति बनेगी यज्ञादिकर्मोंविषे प्रीति न बनेगी और जेकर कहै प्रीति श्रद्धा है तो यज्ञादिकर्मोंविषे प्रीति बनेगी स्त्रीआदिकोंविषे प्रीति न बनेगी ॥ जिसते स्त्रीआदिकोंविषे किसीकी श्रद्धा नहीं होती ॥ और जेकर भक्तिको प्रीति कहेगा तो गुरुदेवतादिकोंविषे प्रीति बनेगी स्त्रीआदिकोंविषे प्रीति न बनेगी ॥ जिसते स्त्रीआदिकोंविषे भक्ति किसीकी नहीं होती और जेकर इच्छाको प्रीति कहेगा तो अप्राप्तवस्तुविषे प्रीति बनेगी और किसीपदार्थविषे प्रीति न बनेगी ॥ जिसते इच्छा अप्राप्तवस्तुविषेही होती है प्राप्तवस्तुविषे इच्छा नहीं होती इसते प्रीतिका निर्णय कुछ न भया ताते यह जो कहता है और और प्रीतिको त्यागकरके आत्माविषे प्रीतिको करो सो अयुक्त है ॥

उत्तर-प्रीतिविषे तेरेकरके कथन किये जो चार प्रकार हैं सो जेकर

नहीं बनते तो सुखमात्रकेविषे करणेवाली जो सात्त्विकी वृत्ति है तिसको प्रीति जान ॥ सो सात्त्विकी वृत्ति इच्छारूप नहीं जिसते इच्छा अप्राप्तसुखादिकोंविषे होती है और प्रीति तो प्राप्तवस्तुविषेभी होती है और जिसवस्तुका नाश होगया है तिसवस्तुविषेभी होती है ॥ ताते इच्छाते भिन्न है ॥

शंका-जैसे सुखका साधन होनेते अन्नवस्त्रादिकोंविषे प्रीति है ऐसे आत्माविषेभी प्रीति देखीजाती है ॥ ते आत्माभी सुखका साधन होवो ॥ इसअर्थविषे यह अनुमान है कि, आत्मा पियारा होनेते अन्नजलकी न्याईं सुखका साधन है ॥

उत्तर-अन्नजलादिकोंकी न्याईं आत्मा सुखका साधन नहीं जिसते अन्नजलादिक भोगने योग्य है ॥ और आत्मा भोगने योग्य नहीं ॥ किंतु भोक्ता है ॥ जेकर आत्माभी अन्नजलकी न्याईं सुखका साधन होवे तो जैसे अन्नजलका भोक्ता आत्मा है तैसे आत्माका भोक्ता कोई और चाहिये जिसते सुखका साधन आत्मा होवे ॥

शंका-आत्माही आत्माका भोक्ता होवे ॥

उत्तर-एकको एककालविषे भोग्यरूपता और भोक्तारूपता नहीं बनती ॥ ताते आत्मा आत्माका भोक्ता नहीं ॥

शंका-जेकर आत्मा अन्नवस्त्रादिकोंकी न्याईं सुखका साधन नहीं तो सुखकी न्याईं भोक्ताका शेष होवो ॥

उत्तर-आत्मा भोक्ताका शेष नहीं बनता ॥ जिसते भोक्ताके शेष सुखविषे प्रीतिमात्र होती है पर परमप्रीति नहीं होती ॥ आत्माविषे तो परमप्रीति है ॥ इसते आत्मा सुखकी न्याईं भोक्ताका शेष नहीं ॥ तिसविषे युक्तिको श्रवणकर ॥ विषयोंते उत्पन्न भया जो सुख है तिसविषे प्रीति कभी उत्पन्न होती है कभी दूर होजाती है एक सुखविषेही

प्रीति नियमकरके सदा नहीं रहती ॥ जिसते पुरुष एकविषे सुखको त्यागकरके और दूसरेविषे सुखविषे प्रीति करता है ॥ और आत्माविषे जो विद्यमान प्रीति है सो आत्माको त्यागकरके और किसीविषे नहीं जाती इसते आत्माविषे परमप्रीति है ॥ विषयसुख ग्रहणकरणेके योग्यभी है और त्यागकरणेके योग्यभी है इसते विषयसुखविषे प्रीति एकरस नहीं रहती ॥ इसते विषयोंविषे परमप्रीति नहीं॥ और आत्मातो न ग्रहणकरणे योग्य है न त्यागकरणे योग्य है ॥ अपरिच्छिन्न होनेते जो परिछिन्नपदार्थ होता है सोई ग्रहणकरणे योग्य होता है और त्यागकरण योग्य होता है ताते आत्माविषे प्रीति सदा एकरस है ॥ अर्थ यह—आत्माविषे प्रीति कभी दूर नहीं होती इसते आत्माविषे परमप्रीति है ॥

शंका—जेकर आत्मा ग्रहण त्यागके योग्य नहीं तो गलियोंके तृणकी न्याई उपेक्षा योग्य होवेगा ॥

उत्तर—जैसे आत्माको ग्रहण त्याग योग्यता नहीं तैसे आत्माको उपेक्षा योग्यताभी नहीं ॥ जिसते ग्रहण त्याग उपेक्षा योग्य अपनेते भिन्न अनात्मपदार्थ होता है और आत्मा तो अपना आप है ॥ तिसाविषे ग्रहण त्यागकी न्याई उपेक्षाभी उपेक्षा करणेवालेका स्वरूप होनेते नहीं बनती ॥

शंका—यह जो तुमने कह्या कि, आत्मा त्यागने योग्य नहीं सो तुम्हारा कहना अयुक्त है ॥ जिसते रोग और क्रोधादिकोंकरके युक्त पुरुषोंको मरणेकी इच्छा द्वेषते देखीजाती है ताते आत्माविषे द्वेषके देखनेते जहरीले सर्प आदिकोंकी न्याई आत्मा त्यागने योग्य है ॥

उत्तर—रोगक्रोधादिकोंकरके युक्तपुरुषोंका देहविषे द्वेष होता है ताते देहका त्याग करदेते हैं सो त्यागने योग्य देह आत्मा नहीं देहके त्यागनेवाला जो आत्मा है सो देहसे भिन्न है ताते जो

द्वेष है सो देहके त्याग करणेवालेविषे नहीं ॥ त्यागनेलायक अनात्म-वस्तु देहविषे द्वेषके हुयाँ हुयाँ भी मेरे सिद्धांतकी हानि होती ॥ अर्थ यह-आत्माका त्याग नहीं होता यह मेरा कथन अयुक्त नहीं किंतु यथार्थ है ॥ इसप्रकार इतने ग्रंथविषे मैत्रेयीयाज्ञवल्क्यका संवादरूप श्रुतिके विचारकरके आत्माविषे परमप्रेम है यह वर्णन किया ॥ अब युक्तिकरके भी आत्माविषे परमप्रेम वर्णन करते हैं तिसको श्रवणकर ॥ सुख और सुखके साधन संपूर्ण स्त्रीपुत्रादिक आत्माकेवास्ते पियारे हैं ॥ ताते जिसके वास्ते यह संपूर्ण पियारे हैं सो आत्मा परम पियारा है ॥ जैसे किसी पुरुषको पुत्रके वास्ते पुत्रका मित्र पियारा होता है तिसकी पुत्रविषे परमप्रीति होती है ॥ और पुत्रद्वारा पुत्रके मित्रविषे थोडी प्रीति होती है तैसे आत्माके वास्ते स्त्रीपुत्रादिकोंविषे जो प्रीति है सो थोडी प्रीति है और आत्माविषे परम प्रीति है ॥ इस प्रकार श्रुतियोंकरके कथनकीनी जो है आत्माविषे परम प्रीति सो सर्व लोकोंके अनुभव सिद्धहै ॥ जिसतें सभीलोक कहते हैं मेरा अभाव कभी न होवे सर्वदा मैं होऊं इसप्रकारकी प्रार्थना सब प्राणियोंकी देखी है इसते आत्माविषे परमप्रीति सबलोकोंके अनुभवकरके प्रत्यक्ष सिद्ध है ॥ इसप्रकार प्रत्यक्ष अनुभव और युक्त और श्रुति इन तीन प्रमाणोंकरके आत्माविषे परमप्रेमके सिद्ध हुयाँहुयाँ भी श्रुत्यादिकोंके तात्पर्यको न जाननेवाले कोईएक जो मूर्ख हैं तिनोंने आत्माको पुत्र स्त्रीआदिकोंका शेष कथन किया है, सो तिनोंके कथनको श्रवणकर ॥

शंका-श्रुति यह कथन करती है कि, आत्माही पुत्रनामकरके होता भया ॥ ताते पुत्रको मुख्य आत्मता है सो पुत्रकी मुख्य आत्मता ऐतरेयउपनिषद् आदिकोंविषे प्रकट कथन करी है ॥ किसवाक्यकरके ऐतरेयउपनिषद्विषे पुत्रको मुख्य आत्मा कथन किया है ?

ऐसा पूछे तो श्रवणकर ॥ पिताका एक पुत्ररूप आत्मा है और एक पितारूप आत्मा है ॥ जब पितारूप आतमा मृत्युको प्राप्त होजाता है तब पुण्यकर्मोंके करणेवास्ते पिताके स्थानविषे पुत्ररूप आत्मा स्थित होता है ॥ ताते पुत्रको मुख्य आत्मता सिद्ध भई ॥ जिसते पुत्रको मुख्य आत्मता श्रुति यह कहती है कि, पुत्रसे रहितका लोक है नहीं ॥ आपने स्थित हुयाँहुयाँ भी पुत्रके अभावकरके स्वर्गके अभावको पुराणादिकोंविषे कथन किया है ॥ इसीते बुद्धिमान् शास्त्रके अर्थके जाननेवाले पुत्रको परलोकका साधन कहते हैं ॥ जो पुत्र इन तीन-मंत्रोंकरके पिताकरके शिक्षाको प्राप्त हुयाँ है सो तीन मंत्र यह हैं ॥ तू ब्रह्महै १ तू यज्ञ है २ तू लोक है ३ और जितना संसारका सुख है तिसका कारण पुत्र है ॥ ऐसा बृहदारण्यकउपानिषद्विषे कथन किया है ॥ तिसका अर्थ यह है ॥ सो यह मनुष्यलोक पुत्रकरकेही जीत्या-जाता है और किसीकर्मकरके जीत्या नहीं जाता ॥ तात्पर्य यह मनु-ष्यलोकका सुख पुत्रकरके प्राप्त होता है ॥ यज्ञ, दान, व्रत, जप, तप-करके मनुष्यलोकका सुख नहीं प्राप्त होता ॥ पुत्रसे रहित पुरुषको सुखके साधन धनादिक भी दुःखका कारण होजाता है ॥ जिसते धनादिकोंको देखकरके पडाहाउके लैंदा है ॥ इसधनको अब कौन सँभारेगा मेरे मोह्या हुयाँ यह जो कथन किया है तिनमंत्रोंकरके शि-क्षाको प्राप्त हुयाँहुयाँ पिताकरके जो पुत्र है सो पिताके परलोकका साधन होता है ॥ तिसविषे यह प्रश्न है ॥ किस समय पितापु-त्रको मंत्रोंका उपदेश करे तिसका उत्तर श्रवणकर ॥ मरण समय पितापुत्रको उपदेश करे ॥ तू ब्रह्म है इसका तात्पर्य यह है ॥ हेपुत्र ! मैं अब मरणे लगा हूं पीछे घरमें बडा तू है ताते कुटुंब-पालनादिरूप बडाइयोंके काम तैंने करणे ॥ आपने शरीरमात्रके पालनपोषणविषे तत्पर नहीं होना ॥ और तू यज्ञ है ॥ इसका तात्पर्य

यह है ॥ जैसे यज्ञादिककर्म मैं करताहूं तैसेही यज्ञादिकर्म मेरी गद्दीतें बैठकरके तैंने करणे यज्ञादिकर्मोंका त्याग नहीं करणा और तू लोक है इसका तात्पर्य यह है कि, मेरेको स्वर्गविषे सुखकेवास्ते तू गयाजायकरके पिण्ड करवावणे और श्राद्धादिक करणे इसतें आदिलेकरके श्रुतियाँआत्माको स्त्रीपुत्रादिकोंको शेष कथन करती हैं ॥ अर्थ यह पुत्रस्त्रीआदिक मुख्य हैं आत्मा तिनकेवास्ते है ॥यह अर्थ केवल श्रुतियोंकरकेही सिद्ध नहीं किंतु सर्वलोकोंके अनुभवकरके भी सिद्ध है॥ सभीलोक पुत्रको प्रधान मानते हैं ॥ जिसते आपने मोह्या हुयाँभी जिसतरह पुत्रादिक धनादिकोंकरके सुखीजीवें तैसेही यत्न करते हैं तिसते पुत्रादि मुख्य हैं इसप्रकार श्रुतियोंकरके परलोकोंके अनुभवकरके वादीने जो दिखलाई है सो पुत्रादिकोंकी मुख्यता तिसको सिद्धांती अंगीकारकरके उत्तर कहता है ॥

उत्तर-जो तैंने कह्या है सो यथार्थ है ॥

शंका-जेकर मेरा कहना यथार्थ है तो तुम आत्माकी मुख्यता क्यों कहते हो ? ॥

उत्तर-किसी एकका पुत्रकी मुख्यता करके आत्मा किसीका शेष नहीं होजाता ॥ जिसते आत्मा तीनप्रकारका है गौणात्मा १ मिथ्यात्मा२ मुख्यात्मा ३ ताते जिसजिस व्यवहारविषे जिसआत्मकी मुख्यता है तिसतिस व्यवहारविषे तिसीकी मुख्यता है और दोनोंकी मुख्यता नहीं किंतु बाकीके दोनोंको तिसकी शेषता है ॥ तीनप्रकारके आत्माओंकेमध्य पुत्रादिकोंको गौणात्मता है तिसविषे दृष्टांत श्रवणकर जैसे किसीने कहा देवदत्त शेर है ॥ इसस्थानविषे जो देवदत्त और शेरकी एकता है सो गौण है जिसते शेर और देवदत्तका भेद प्रत्यक्ष नजर आवता है ॥ तैसे पुत्रादिकोंकी भी जो आत्मता है सो गौण है॥ जिसते पुत्रादिकोंका और अपना भेद प्रत्यक्ष है ॥ और

तिनसे पंचकोशरूप शरीर मिथ्यात्मा है तिसविषे दृष्टांत श्रवण कर जैसे कोईपुरुष भ्रमकरके स्थाणुको चोर कहता है सो स्थाणुको चोररूपता मिथ्या है तैसे पंचकोशरूप तिन शरीरोंको अज्ञानी भ्रमकरके आत्मा जानता है मैं मनुष्यहूं मैं काणाहूं मैं विक्षेपको प्राप्त भया हूं मैं समाधिविषे स्थितहूं सो इसप्रकारकरके तिनशरीरोंकी आत्मता मिथ्या है जिसते तिन शरीरोंका और साक्षीरूप आत्माका भेद है पर प्रतीत नहीं होता इसते तिन शरीरोंकी मिथ्यात्मता है जैसे चोर और स्थाणु भेद है पर प्रतीत नहीं होता इसते स्थाणुको चोररूपता मिथ्या है और मुख्यात्मा साक्षी है जिसते साक्षीका आत्माते भेद नहीं प्रतीत होताहै जैसे पुत्रादिकोंका अपनेसे भेद प्रतीत होता है और साक्षीका आत्माते वास्तव भेद हैभी नहीं जैसे साक्षीका देहआदिकोंते भेद है जिसते साक्षी किसीका प्रतियोगी नहीं जैसे पुत्रादिकोंका और शरीरादिकोंका पुरुष प्रतियोगी होताहै और साक्षीका वास्तव प्रतियोगी कोई नहीं जिसते देहादि संपूर्ण कल्पित हैं ॥

शंका-साक्षीके भेदके अभाव होनेते साक्षीको गौणात्मता और मिथ्यात्मता मत होवे पर मुख्यात्मता साक्षीको किसते है ॥

उत्तर-साक्षीको देहपुत्रादिकसंपूर्णोंते अंतर प्रतीत होनेते साक्षीकी मुख्यात्मता है इस अर्थविषे यह अनुमान है सर्वके अंतर होनेते साक्षी मुख्यात्मा है जो मुख्यात्मा नहीं होता सो सर्वके अंतर भी नहीं होता जैसे अहंकारादिक मुख्यात्मा नहीं सर्वके अंतरभी नहीं ॥

शंका-आत्मा तीनप्रकारका होवे पर मैंने जो कथन करी पुत्रादिकोंकी प्रधानता तिसका क्या निर्णय भया ? ॥

उत्तर-आत्माके तीन प्रकार हुयाँहुयाँ जिस व्यवहारविषे जिसके

आत्मरूपता बनती है तिसव्यवहारविषे तिसआत्माको प्रधानता है तातें जिस व्यवहारविषे पुत्रको आत्मता है तिसव्यवहारविषे पुत्रको प्रधानता है और जिसव्यवहारविषे पुत्रको आत्मता नहीं तिसव्यवहारविषे पुत्रको प्रधानता भी नहीं और जिसव्यवहारविषे स्थूलशरीरादिकोंकी आत्मता बनतीहै तिसव्यवहारविषे स्थूलशरीरादिकोंकी प्रधानताहै सर्वव्यवहारोंविषे स्थूलशरीरकी प्रधानता नहीं और जिसंव्यवहारविषे साक्षीको आत्मता है तिसव्यवहारविषे साक्षीकी प्रधानता है और पुत्रादिकोंको शेषता है ॥ किसव्यवहारविषे पुत्रकी प्रधानता है और किसव्यवहारविषे देहादिकोंकी मुख्यता है और किसव्यवहारविषे साक्षीकी मुख्यता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर मरणसमयमें मातापिताआदिकोंके घरविषे जो पदार्थ है तिनोंकी चोर आदिकोंते रक्षाकरणेरूप व्यवहारविषे गौणात्मा पुत्रादिप्रधान है ॥ जिसते तिनके मऱ्यापीछे जीवनेकी इच्छावालाहै पुत्रादिक अमुख्यात्मा साक्षी प्रधान नहीं घरके पदार्थोंकी रक्षाकरणेरूप व्यवहारविषे तिसको निर्विकार होनेते और मिथ्यात्मा शरीरादिकभी मरणेवाले पुरुषके घरके पदार्थोंकी रक्षाकरणेविषे समर्थ नहीं जिसते शरीर मरणके सन्मुख हुयाँहुयाँ है ताते मातापिताके पदार्थोंकी रक्षाकरणेविषे पुत्रकी प्रधानता है ॥ विद्यमान हुयाँहुयाँ भी साक्षीके आत्मा साक्षीरूप अंगीकार नहीं करणा ॥ घरके पदार्थोंकी रक्षारूप व्यवहारविषे गौणात्मा पुत्रादिकोंकी आत्माकरके ग्रहण करणा इसविषे दृष्टांत श्रवणकर जैसे किसीने यह कथन किया यह वेदपढनेवाला बालक अग्नि है ॥ इसवाक्यविषे अग्नि शब्दका अर्थ रूपताकरके चूल्हेविषे विद्यमान जो मुख्याग्नि है सो ग्रहण नहीं करती जिसते मुख्याग्निको वेदपढनेका सामर्थ्यनहीं किंतु वेदपढनेविषे समर्थ बालक ग्रहण करता है अग्निशब्दका अर्थ रूपता करके इतनेकरके जिसव्यवहारविषे गौणात्मा पुत्रादिकोंकी प्रधानता है सो कथन करी अब मिथ्यात्मा स्थूलशरीरादिकोंकी जिस व्यवहार

विषे प्रधानता है तिसको श्रवणकर मैं कृश होगयाहूं ॥ इसते अन्न दुग्धघृतादिकोंका भोजनकरके मोटा होवूंगा इसते आदिलेकरके जो लोकप्रसिद्ध जीवोंका व्यवहार है तिसविषे अन्नभक्षणविषे समर्थ शरीरको आत्मरूपताकरके ग्रहण करता है ताते इसशरीरकी पुष्टीकरणे व्यवहारविषे पुत्रकी प्रधानता नहीं जिसते आपने मोटेहोनेवास्ते पुत्रको दुग्ध नहीं पिलावता और पुष्टीकाकारण औषधियाँ पुत्रको नहीं खिलावता तब यह व्यवहार पुरुष कर्ता है अब तपको करके मैं स्वर्गको प्राप्त होवूंगा तिस व्यवहारविषे करता जो है विज्ञानमय बुद्धि उपाधिवाला जीव तिसीको आत्मरूपता है शरीरको और पुत्रादिकोंको आत्मता नहीं जिसते देहके भोगोंको त्यागकरके और पुत्रादिकोंकेसाथ मोहको त्यागकरके कर्ता जो है जीव तिसको स्वर्गप्राप्तिका साधन कृच्छ्रचांद्रायणादिरूप तपको गंगाजीके किनारे बैठके करता है इस व्यवहारविषे विज्ञानमय कोशरूपबुद्धिकी प्रधानता है पुत्र शरीरादिकोंकी प्रधानता नहीं और जिसव्यवहारविषे साक्षीरूप आत्माकी प्रधानता है जब पुरुष यह निश्चय करता है सो श्रवणकर शमदमआदिक साधनोंको सिद्धकरके और श्रवण, मनन निदिध्यासनको करके मोक्षको प्राप्त होवूंगा तब गुरुने उपदेश किया जो महावाक्य तिसके अर्थ विचारकरके उत्पन्न भया जो अपरोक्षज्ञान तिसकरके यह निश्चयकरता है मैं करता भोक्ता नहीं सच्चिदानंद ब्रह्म मैं हूं इसप्रकार चैतन्यरूप साक्षी आत्माको जानता है इसव्यवहारविषे आत्माकरके साक्षी चैतन्यरूप आत्माका ग्रहण करणा बनता है और गौणात्मा पुत्रादिकोंका और मिथ्यात्मा शरीरादिकोंका आत्मशब्दकरके ग्रहण नहीं बनता ताते इसव्यवहारविषे पुत्रादिकोंकी मुख्यता नहीं तीन प्रकारका जो आत्मा है तिन आत्माओंको जिस व्यवहारविषे जिस आत्माकी योग्यता है तिसीका ग्रहण करता है दूसरेको ग्रहण नहीं

होता ॥ जैसे ब्राह्मण बृहस्पतिसवनाम यज्ञको करे इसशास्त्रकरके कथन किये हुये बृहस्पतिसवयज्ञविषे ब्राह्मणकाही अधिकार है ॥ क्षत्री और वैश्यका अधिकार नहीं और राजसूययज्ञविषे क्षत्रीकाही अधिकार है ब्राह्मण और वैश्यका अधिकार नहीं और वैश्य-स्तोमयज्ञविषे वैश्यका अधिकार है ब्राह्मण और क्षत्रीका अधिकार नहीं ॥ तैसे गौण, मिथ्या, मुख्यभेदकरके तीन जो आत्मा हैं उनका जैसा जिसका आपने लायक व्यवहारविषे ग्रहण करणा बनता है तिस व्यवहारविषे तिसकी प्रधानता है ताते इतने करके जो सिद्धभया सो श्रवणकर-जिसजिस व्यवहारविषे जो जो आत्मा ग्रहण करणे योग्य है तिसतिस व्यवहारविषे तिसतिसव्यवहारकी कारणताके योग्य प्रधानात्माविषे परमप्रीति होती है और तिसआत्माका शेषरूप आत्माते भिन्न जो अनात्मवस्तु है तिसविषे परमप्रीति नहीं होती प्रीति होती है और जो वस्तु नतो आत्मा है न आत्माका शेष है तिसवस्तुविषे न प्रीति होती है न परम प्रीति होती है ॥ आत्मा और आत्माके शेषते भिन्नवस्तु दोप्रकारकी होती है एक उपेक्षाके योग्य जैसे रा॰ ाविषे पडेहुये तृणादिक ॥ और दूसरी द्वेषके योग्य होती है ॥ जैसे सिंहसर्पादि ॥ ऐसे हुयाँहुयाँ वस्तु चारप्रकारकी सिद्ध भई ॥ आत्मा १ आत्माकाशेष २ उपेक्ष्य ३ और द्वेष्य ४ इन चारोंविषे आकारका नियम नहीं जैसा जैसा जिसका कार्य देखना तैसा तैसा तिसको जानना ॥ जो उपकारकरणेवाला होवे सो शेष होता है ॥ और वोह प्रिय होता है ॥ और जो विरोधकरणेवाला है सो द्वेष्य होता है और वोह अप्रिय होता है और जो न उपकार-करणेवाला होवे न विरोधकरणेवाला होवे सो उपेक्ष्य होता है ॥ और यह नियम नहीं अमुकका द्वेष्य है अमुकका उपेक्ष्य है और अमुकका शेष है जिसते प्रसिद्ध द्वेष्य शेरविषेभी द्वेषका अभाव

देखता है ॥ सिंहविषे कब द्वेष होता है और कब द्वेषका अभाव होता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर–जब बनविषे शेर आपने खाने-केवास्ते सन्मुख आवता है तब शेर द्वेष्य होता है ॥ अर्थ यह–जो पुरुष चाहता है मैं इस शेरको मारदूंगा और जब वही शेर पाससे लंघजाता है तब शेर उपेक्ष्य होता है ॥ अर्थ यह–पुरुष कहता है शेर जाता है तो जाय इसके मारणेविषे क्या प्रयोजन है ॥ और जब वही शेर पिंजरेविषे पायकर कोई इसको ल्यायदेवे तब इसका खेलावना हुयाहुया इसको प्रिय होता है ॥

शंका–एकपदार्थको शेष, द्वेष्य उपेक्ष्य तीनस्वभाववाला अंगीकार किया हुयाँ व्यवहारकी व्यवस्था न सिद्ध होवेगी ॥

उत्तर–आकारोंविषे प्रिय, द्वेष्य, उपेक्ष्य नियमके अभाव हुयाँहुयाँ भी जिसविषे द्वेष्यका लक्षण आवे सो द्वेष्य है और जिसविषे उपेक्ष्यका लक्षण आवे सो उपेक्ष्य है और जिसविषे प्रियका लक्षण आवे सो प्रिय है सो लक्षण यह है जो सुखदेनेवाला होवे सो प्रिय है और जो दुःखदेनेवाला होवे सो द्वेष्य है और जो सुखदुःखदोनोंको देने-वाला न होवे सो उपेक्ष्य है ॥ ताते यह सिद्ध भया कि, आत्मा अतिश-यकरके पियारा है और जो आत्माके सुख देनेवाला है तिसकानाम शेष है सो पियारा है और जो दुःखदेनेवाला है सो द्वेष्य है और जो सुखदुःखके नहीं देनेवाला सो उपेक्ष्य है इसतरह चारप्रकारके-पदार्थको निश्चयकरके यह संपूर्णलोक है और पाँचवाँपदार्थ जगत् विषे कोई नहीं ॥ यह याज्ञवल्क्यका मत है ॥ अर्थ यह याज्ञवल्क्य और मैत्रेयीके संवादविषेही नहीं कथन किया किंतु बृहदारण्यक उपनिषद्के पुरुषविध ब्राह्मणविषे भी कथन किया है सो श्रवणकर ॥ सो यह आपना आप पुत्रतेभी पियारा है और धनतेभी पियारा है और संपूर्णशरीर इंद्रियों प्राणादिकोंतेभी पियारा है ॥ जिसते

संपूर्णते अत्यंत अंतर आत्मा है इसप्रकारके श्रुतिविषे कथन होवो पर प्रसंगमें क्या सिद्ध भया ? ऐसा पूछे तो श्रवणकर-श्रुतियोंके अर्थके विचारते उत्पन्न भई जो तत्त्ववेत्ताकी दृष्टि है उसकरके साक्षी मुख्य-आत्मा है ॥ पुत्रादिक और शरीरादिक मुख्यआत्मा नहीं ॥ जिसवि-चार दृष्टिकरके साक्षीको मुख्यात्मता है तिसविचारका स्वरूप क्याहै?॥ ऐसा पूछे तो श्रवणकर ॥ अन्नमयआदि पंचकोशोंको तैत्तरीयउप-निषद्विषे कथन करचा जो प्रकार तिसकरके आत्माते भिन्नकरके पंचकोशोंके अंतर स्थित आत्माका जो अनुभव सो विचार है ॥ पंचकोशोंते अंतरस्थित आत्माके अनुभवका प्रकार श्रवण कर ॥ जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति इन तीनोंके उत्पत्तिविनाशको जो प्रका-शता है सो स्वप्रकाश चैतन्यरूप आत्मा साक्षी है ॥ और आत्मासे भिन्न प्राणोंसे लेकरके धनपर्यंत संपूर्णपदार्थ क्रमकरके आत्माके निकटवर्ती होते हैं ॥ इसीकारणते तिन संपूर्णविषे प्रीति अधिक अधिक होती हैं ॥ अर्थ यह-जो जो पदार्थ जितना जितना आत्माके नजीक हैं तितनी तितनी तिसविषे प्रीति अधिक होती है ॥ और जितना जितना जो जो पदार्थ आत्माते दूर है तितनी तितनी तिस-विषे प्रीति थोडी होती है सो जैसे है तैसे श्रवणकर ॥ धनते पुत्र पियारा होता है ॥ जिसते पुत्रके दुःख दूरकरणेवास्ते धनको देदेता है ॥ और आपने शरीरकी रक्षावास्ते पुत्रादिकोंको भी देदेता है ॥ और जब कोई राजा इसके अपराधकरके यह कहे भावें तो इसको सोटियांकी मार करो ॥ और भावें इसके नेत्रनिकास लेवो ॥ तब पुरुष नेत्रोंकी रक्षावास्ते शरीरके दुःखको संहार लेता है और जब कोईराजा ऐसा कहे भावें इसके नेत्र निकासलेवो भावें इसको फाँसी देवो तब प्राणोंकी रक्षावास्ते नेत्र निकासदेनेको सहार लेता है और आपने सुखकेवास्ते अतिरोगी

जीव प्राणोंकोभी त्यागदेता है ताते धनसे लेकरके अगले अगलेविषे प्रीतिकी अधिकता सर्वलोकोंके अनुभव सिद्ध है और आत्माविषे परमप्रीति ज्ञानवानोंके अनुभव सिद्ध है ॥ इसप्रकार आत्माविषे परमप्रेमको प्रमाण सिद्ध हुयाँहुयाँ भी ज्ञानी अज्ञानीका विवाद दूरकरणेवास्ते ज्ञानी और अज्ञानीका विवाद श्रुतिने दिखलाया है सो श्रवणकर ॥ ज्ञानी और अज्ञानीका किसीसमय बहुत विवाद हुया॥ ज्ञानी कहै संपूर्णदृश्यते परमापियारा साक्षरूप आत्मा है और अज्ञानी कहै परम पियारे पुत्रादिक हैं तिनके भोगनेवाला साक्षीरूप आत्मा-है ॥ इसविवादको करतेहुये दोनों निर्णयवास्ते श्रुतिकेपास गये ॥ तब श्रुतिने यह निर्णय किया ॥ साक्षरूप आत्मा परम पियारा है ॥ श्रुतिकरके झूठा हुया जो अज्ञानी है आत्माते भिन्न पुत्रआदिकोंको पियारा कहने वाला सो दोप्रकारका है ॥ एक शिष्य है एक प्रतिवादी है शिष्यको ज्ञानवान्‌ने उत्तर कह्या सो तो शिष्यको बोधका कारण होता भया और प्रदिवादीको शापरूप होता भया ॥ सो वोह कौन वचन है जो प्रविवादीका शापरूप होता भया और शिष्यको बोधका कारण होता भया ऐसा पूछे तो श्रवणकर ॥ ज्ञानवान्‌ने यह वचन कह्या ॥ हे प्रतिवादी! शिष्यको जो कहता है साक्षीते भिन्न पुत्रादिकोंको परम पियारा सो पुत्रआदिक नाशको प्राप्त होके तुझको रुवावेंगे ॥

शंका-यह एकवचनही प्रतिवादी और शिष्य दोनोंको शापरूप और बोधका कारण कैसे होता भया ? ॥

उत्तर-शिष्यको बोधरूप इसकरके होता भया ॥ जिसते शिष्यने पुत्रआदिकोंको अनेकदोषोंवाला विवेककरके जान्या ॥ इसते पुत्रआदिक परम पियारे हैं यह भ्रम तिसका नाश होगया है सो जिसप्रकार शिष्यने पुत्रको दोषोंवाला विचारकरके जान्या है सो

विचार श्रवणकर (विचार शिष्यका) जिसके घर पुत्र नहीं जन्मता तिसको बड़ा दुःख होता है ॥ स्त्री और पुरुषको पुत्रकी उम्मेद हुयाँहुयाँ जो पाच महीनेका गर्भ गिरजावे तौ भी बहुत दुःख होता है और पुत्रके जन्मकालविषे माताको बडा दुःख होता है ॥ कितनी स्त्रियाँ पुत्रजन्म कालविषे मृत्युको प्राप्त होजाती हैं स्त्रीके बचरह्या हुयाँ भी जब ज्योतिषीते पूछें इसबालकके कैसे ग्रहहैं तो जेकर ज्योतिषी कह्या बालकके ग्रह क्रूर है तब तिसवचनको सुनकर मातापिताको बडा दुःख होताहै और बालकके शरीरविषे रोगोंकरके मातापिताको बहुत दुःखहोताहै और बालककी मूर्खताकरके मातापिताको बहुत दुःख होता है और यज्ञोपवीतसे अनंतर जेकर बालक विद्या नहीं पढता तब मातापिताको बहुत दुःख होता है और विद्या पढयाहुयाँभी जेकर तिसका विवाह होवे तो मातापिताको बहुत दुःख होता है ॥ और विवाह हुयाँभी जवानी अवस्थाविषे तिसकी परस्त्रीके साथ जेकर प्रीति होवे तब मातापिताको बहुत दुःखहोता है और अपनी स्त्रीके साथ प्रीतिके हुयाँहुयाँ जेकर कुटुंबीपुरुष निर्धन होवे तब मातापिताको बहुत दुःख होता है और धनी हुयाँहुयाँभी जेकर आज्ञानुसार न होवे तब मातापिताको बहुत दुःख होता है और आज्ञानुसार हुयाँहुयाँभी जेकर जवान मरजावे तब मातापिताको बहुत दुःख होता है ॥ इसप्रकार पुत्रसे जो दुःख होते हैं तिनका अंत नहीं आवता जैसे पुत्र विषे दुःख है तैसे धन स्त्री आदिकोंविषेभी जानने ॥ इसप्रकार विचार करके पुत्रआदिकोंविषे भिन्न भिन्न दोषोंको जानकरके पुत्रआदिकों विषे प्रीतिको त्यागकरके साक्षीरूप आत्माको परमपियारा निश्चय करके साक्षीरूप आत्माकोही दिनरात्रि चिंतन करता है ॥ इसप्रकार आत्माते भिन्न पियारा जो तू जानताहै सो तैंने आपने नाशकरके रुवावेगा ॥ यह जो ज्ञानवान्‌का वचन है सो

शिष्यको विचारकरके बोधका कारण होता भया और यहीवचन जिसप्रकार प्रतिवादीको शापरूप होता भया सो प्रकार श्रवण कर॥ प्रतिवादीने कहा ज्ञानवान् जो कहता है साक्षीरूप आत्मा परमपियारा है तिसका मैं खंडन करूंगा ऐसा जो ज्ञानवान्केसाथ द्वेष तिसते अथवा मैं जो कथन करता हूं पुत्र आदिक परमपियारे हैं इस आपने वचनको कभी न त्यागूंगा इस हठते पुत्रआदिक परमापियारे हैं इसपक्षको जो नहीं त्यागता तिसप्रतिवादीको अनेकजन्मोंविषे पियारे पुत्री स्त्रीआदिकोंका वियोग होता है ॥ अर्थ-यह जो जिसजिस जन्मको प्राप्त होता है तिसतिस जन्म विषे पियारे पुत्रआदिकोंके मरणे करके रोता रहता है॥ यह पियारा दोष तैंने रुवावेगा ॥ इसवाक्यके कहणेवाले ज्ञानीने प्रतिवादीके तांई कथन किया है सो शाप ज्ञानवान्का दियाहुआ अज्ञानियोंकी अज्ञानता कभी नहीं दूर होती ॥ इसीते ब्रह्मवेत्ताके साथ द्वेषकरणे वाले अज्ञानी अज्ञानताते पुत्रआदिकोंके मरणेकरके रोतेरहते हैं आत्माते भिन्न पुत्रादिकोंको परम पियारा जानने रूप पापकरके अज्ञानियोंको नरककी प्राप्ति होती है ॥

शंका-ज्ञानवान्ने कथन किया जो एकवचन पियारा तैंने रुवावेगा तिसवचनको शिष्यके तांई उपदेश रूपता और प्रतिवादीके तांई शापरूपता और विरुद्धरूपता कैसे होगई ॥

उत्तर-ज्ञानवान् ईश्वररूप है तिसते ज्ञानवान्के तात्पर्यके अनुसार वचनको विरुद्धरूपता होगई जैसे बिल्लीके दांत चूहेकी मौतका कारण होजाते हैं और बिल्लीके पुत्रोंकी पालनाका कारण होजातेहैं जिसते ब्रह्मवेत्ताने आपनी ब्रह्मरूपताका अनुभव किया है तिसते ब्रह्मवेत्ता ईश्वररूप है इसकारणते ईश्वररूप ब्रह्मवेत्ताने शिष्यकेतांई जो वचन ज्ञानकी प्राप्तिवास्ते कथन कियाहै सो वचन शिष्यको ज्ञानकी प्राप्तिका कारण होता है और वोही वचन प्रतिवादीके तांई शापके अभिप्रायकर-

के जो कथन किया है सो वचन प्रतिवादीको दुःखोंका कारण शापरूपहो जाता भया ॥ ताते साक्षी आत्माको परमपियारा जानकरके तिसीविषे चित्तकी एकाग्रताको करे जो पुरुष आत्माको पियाराजानकरके तिसीविषे चित्तकी एकाग्रताको करता है तिसका पियारा कभी नाश नहीं होता ॥ अनात्मा पुत्रादिकोंकी प्रियताके जाननेवाला जो प्रतिवादीहै तिसते भिन्न जो ज्ञानवान्का शिष्य आत्माको परमपियारा है ॥ अर्थ–यह निरतिशय सुखरूप चिंतनकरता है ॥ तिस ज्ञानवान्के शिष्यका परमपियारा जो आत्मा है सो कदाचित्भी नाशको नहीं प्राप्त होता ॥ सदा आनंदरूप हुयाहुया प्रकाशता है और अज्ञानीने परमपियारा जो मान्या है पुत्रआदिक सो नाशको प्राप्त होजाता है ॥ इतनेकरके आत्माविषे परमप्रेम सिद्ध भया ॥ तिसकरके आत्माको परमानंद रूप जानना इस अर्थविषे यह अनुमान है आत्मा परम प्रेमकाविषे होनेते परमानंदरूपहै ॥ जो परमानंदरूप नहीं सो परमप्रेमकाविषेभी नहीं जैसे घटआदिक परमानंदरूप नहीं तो परमप्रेमकाविषे भी नहीं ॥

शंका–आत्माविषे परमप्रेम होवो पर तिसकरके आत्माकी परमानंदरूपता नहीं बनती ॥

उत्तर–जितनी जितनी जिसविषे प्रीति अधिक होती है तितना तितना तिसविषे सुख अधिक होताहै ॥ जिसकारणते चक्रवर्तीराजासे लेकरके हिरण्यगर्भपर्यंत पदोंविषे जिसजिस पदविषे प्रीति अधिक है तिसतिसपदविषे सुखभी अधिक है ॥ यह तैत्तरीयउपनिषद् और बृहदारण्यउपनिषद्विषे कथन किया है ॥ इसकारणते आत्माविषे प्रीतिकी निरतिशयताके हुयाँहुयाँ आत्माविषे आनंद निरतिशय है ऐसा जानीता है ॥ निरतिशयकी अर्थ तोलमापसे रहता ॥

शंका–आत्माकी परमानंदरूपता नहीं बनती जेकर आत्मा परमानंदरूप होवे तो संपूर्ण अंतःकरणकी वृत्तियोंविषे आनंदकी

प्रतीति होवे ॥ जैसे आत्माके स्वरूप चैतन्यकी प्रतीति होती है ॥

उत्तर-चैतन्य और आनंद दोनों आत्माका स्वरूप है पर चैतन्यकी संपूर्ण अंतःकरणकी वृत्तियोंविषे प्रतीति होती है आनंदकी नहीं होती इसविषे दृष्टांत श्रवणकर-जैसे दीपक उष्ण और प्रकाशरूप है पर घरविषे प्रकाश पसरजाता है ॥ उष्णता नहीं पसरता तैसे आत्माकी चेतनता सर्ववृत्तिविषे प्रतीत होती है आनंद नहीं प्रतीत होता ॥

शंका-चैतन्य और आनंदके अभेद हुयाँहुयाँ चैतन्यकी प्रकटताका कारण अंतःकारण वृत्तिविषे आनंदकीभी प्रकटता होनी चाहिये ॥

उत्तर-चैतन्य और आनंदके अभेद हुयाँहुयाँ भी चैतन्यकी प्रकटताकरके आनंदकी प्रकटता नहीं होती ॥ जैसे एकपुष्पविषे स्थित जो है गंध, रूप, रस, स्पर्श तिनका अभेद है पर एकघ्राणादिक इंद्रियकरके गंधादि एकगुणही ग्रहण करता है ॥ घ्राणइंद्रियकरके रूपरसआदिकोंका ग्रहण नहीं होता तैसे चैतन्य और आनंदके अभेहुयाँहुयाँ भी संपूर्ण चित्तवृत्तियोंविषे चैतन्यकी प्रतीत होती है, आनंदकी नहीं होती ॥

शंका-चैतन्यका और आनंदका भेद नहीं ॥ गंध, रूप, रस, स्पर्शका भेद है ताते दृष्टांत दार्ष्टांतकी तुलयता नहीं ॥

उत्तर-चैतन्य और आनंदका जो अभेदहै सो साक्षीरूप आत्माविषे है अथवा आत्माकी उपाधिरूप वृत्तियोंविषे है ॥ जेकर कहैं साक्षीरूप आत्माविषे चैतन्य और आनंदका अभेद है तो दृष्टांत दार्ष्टांतकी तुल्यता है ॥ गंधादिक चैतन्य और आनंदकी न्याई एक पुष्पविषे स्थित हुयेहुये भेदसे रहित हैं जिसते रूपादिकोंको त्यागके गंध नहीं ल्याय सक्ती और गंधादिकोंको त्यागके रूपको नहीं ला

सत्ता ॥ और जेकर कहै आत्माकी उपाधिरूप वृत्तियोंविषे चैतन्य और आनंदका अभेद है सो तो नहीं जैसे गंधादिकोंके ग्रहणकरणेवाली घ्राणादिक इंद्रियोंके भेदकरके गंधादिकोंका भेद है ॥ तैसे चैतन्य और आनंदके ग्रहणकरणेवाली राजसी, सात्विकी, वृत्तियोंके भेदते चैतन्य और आनंदभी भेद है ॥ अर्थ यह- सात्विकी वृत्तिकरके आनंदकी प्रतीति होती है और राजसी तामसी वृत्तिकरके आनंदकी प्रतीति नहीं होती चैतन्यकी प्रतीति होती है ॥ जैसे घ्राणकरके गंधकी प्रतीति होती है रूपकी प्रतीति नहीं होती ताते उपाधिरूप वृत्तियोंकरके चैतन्य और आनंदका भेद है जैसे घ्राणादिकोंके भेदकरके गंधादिकोंका भेद है ॥

शंका-जेकर वृत्तियोंविषे चैतन्य और आनंदका भेद है तो अभेद किसविषे है ? ॥

उत्तर-पुण्यरूप कर्मोंते उदय हुई जो सात्विकी वृत्ति तिसविषे चैतन्य और आनंदकी एकता प्रतीत होती है ॥ जिसते सात्विकी वृत्ति निर्मल है ॥

शंका-जेकर सात्त्विकीवृत्तिविषे चैतन्य और आनंदका अभेद है तो भेद किसविषे है ? ॥

उत्तर-राजसी वृत्तिविषे चैतन्य और आनंदका भेद है राजसी वृत्तिको मल न होनेते राजसी वृत्तिविषे विद्यमानभी सुख नहीं प्रतीत होता ॥ रजोगुणकरके सुख आच्छादित जाता है जैसे इमलीविषे विद्यमान खटाई लूनकरके आच्छादन की जातीहै और थोडीसी खटाई प्रतीत होती है ॥ तैसे राजसी वृत्तिविषे आनंद आच्छादित किया जाता है ॥

शंका-गूढतात्पर्यवालेने कथन किया जो प्रकार तिसकरके आत्माकी परमानंदरूपता होवो परमप्रेमका विषय होनेते आत्माको

और मिथ्याआत्मा गौणात्मारूप जो है ज्ञेय उपेक्ष्य द्वेष्य इन्होंते भिन्नकरके विवेकी आत्माको जाने तो भी यह विवेक अपरोक्षज्ञानद्वारा मोक्षका कारण जो है योग्य तिसका न कथन करणेते मोक्षका साधन नहीं ॥

उत्तर-गुह्यतापत्पर्यंसे जो योगकरके होता है सोई विवेककरके होता है ॥ जैसे योग अपरोक्षज्ञानद्वारा मोक्षका कारण है तैसे विवेकभी अपरोक्षज्ञानद्वारा मोक्षका कारण है ॥

शंका-प्रकट अभिप्रायसे ज्ञानसिद्धिकेवास्ते योग कह्या है ॥

उत्तर-प्रकट अभिप्रायसे विवेककरके भी ज्ञानकी सिद्धिहोती है. जैसे अपरोक्षज्ञानका साधनरूपताकरके प्रथम अध्यायविषे योगकथन करचा है तैसे इस अध्यायविषे गौणात्मा मिथ्याआत्माके विवेकद्वारा कथन किया पंचकोशोंके विवेककरके ज्ञानकी उत्पात्ति होती है ॥

शंका-योग करके और विवेक करके ज्ञानकी उत्पत्ति होती है इसविषे क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर-इसविषे गीतावचन प्रमाण है तिसका अर्थ-यह है आत्मा अनात्माके विवेककरणेवाले जिसमोक्षरूपस्थानको प्राप्त होते हैं तिसी मोक्षरूपस्थानको योगवाले भी प्राप्त होते हैं ॥ इसवचन करके भगवान्‌ने योगियोंको और विवेकियोंको अपरोक्षज्ञानद्वारा मोक्ष रूप फल एक कथन किया है ॥

शंका-विवेकका और योगका जेकर फल एक है तो शास्त्रोंविषे एकताही कथन किया चाहिये दोनोंका कथन नहीं चाहिये ॥

उत्तर-मोक्षके अधिकारी अनेक प्रकारके हैं ॥ किसीसे योग नहीं होसक्ता और विवेक होय सक्ता है और किसीसे विवेक नहीं होय सक्ता योग होय सक्ता है ॥ ऐसे विचार करके परमेश्वरने शास्त्रविषे योग और विवेक दोनों कथन किये हैं ॥

शंका–योग बहुतयत्नते सिद्ध होता है और विवेक सुखसे सिद्ध होता है इसते विवेकसे योगकी कुछ अधिकता कही चाहिये ॥

उत्तर–योगकी विवेकसे कुछ अधिकता तो है नहीं जिसते अपरोक्षज्ञानकी उत्पत्ति दोनों करके होती है और रागद्वेषकी निवृत्ति भी दोनोंको (योगी और विवेकीको) एक जैसी होती है ॥ जिस विवेकीने आत्माको अतिशय करके पियारा जाना है तिसका विषयों विषे राग नहीं होता ॥ जिसते विषयोंविषे रागका कारण विषयोंविषे अनुकूलता बुद्धि विवेकीको नहीं रहती ताते विवेकीका विषयोंविषे राग नहीं होता और विवेकीका किसीविषे द्वेष भी नहीं होता जिसते द्वेषका कारण विवेकीकी प्रतिकूलता बुद्धि किसीविषे नहीं रहती ॥

शंका–विवेकीका व्यवहार कालविषे और देहके उपद्रव करणवालों विषे द्वेष देखीता है ॥

उत्तर–व्यवहारदशाविषे देहके उपद्रव करणेवालोंविषे योगीकाभी द्वेष देखीता है ताते विवेकीकी और योगीकी तुल्यता है योगीकी विवेकीसे कुछ अधिकता नहीं ॥

शंका–उपद्रवके करणेवाले जहरीले सर्प आदिकोंविषे द्वेषके करणेवालेको द्वेषकालविषे हम योगी नहीं मानते ॥

उत्तर–तो देहके उपद्रव करणेवाले जहरीले सर्प आदिकोंविषे द्वेषके करणेवालेको द्वेषके करणेकालविषे हम विवेकी नहीं मानते ॥

उत्तर–विवेकीको द्वैतकी प्रतीति होती है और योगीको नहीं होती ताते योगीकी विवेकीते अधिकता है ॥

उत्तर–व्यवहार कालविषे द्वैतकीप्रतीति योगीकोभी होती है ताते योगीकी विवेकीसे अधिकता कुछ नहीं ॥

शंका–समाधिकालविषे योगीको द्वैतप्रतीति नहीं होती इसते योगीकी विवेकीते अधिकता है ॥

उत्तर–जैसे योगीको समाधिकालविषे द्वैतकी प्रतीति नहीं होती तैसे विवेकीकोभी श्रुतियों और युक्तियोंकरके जगत्की मिथ्यारूपता और आत्माकी असंग निर्विकार ब्रह्मरूपताके विवेककालविषे द्वैतकी प्रतीति नहीं होती इसवार्ताको अद्वैतानंदनाम तीसरेअध्यायाविषे हम कहेंगे इसते योगीकी विवेकीते अधिकता नहीं सर्वप्रकारोंकरके योगी और विवेकीकी तुल्यता है ॥

शंका–जो पुरुष सदा निजानंदका अनुभव करता है और द्वैतकी प्रतीतिते रहित है तिसका नाम तो योगी है तुम्हीं तिसका नाम विवेकी कैसे कहते हो ॥

उत्तर–ऐसेपुरुषकानाम योगी रखके तू जो प्रसन्न होता है तो योगीही सही ब्रह्मानंदनाम प्रकरणके इस दूसरे अध्यायाविषे थोडी बुद्धिवाले जिज्ञासुओंको आत्मसाक्षात्कारवास्ते आत्मानंदका विवेक कीना है ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां द्वादशं ब्रह्मानन्दे आत्मानन्द–प्रकरणं समाप्तम् ॥ १२ ॥

ब्रह्मानन्दे अद्वैतानन्दप्रकरणम् १३.

ॐसद्गुरुप्रसाद॥अथ अद्वैतानंदनाम प्रकरणका आरंभ करते हैं सो ब्रह्मानंदका तीसरा अध्याय है आदिसे पंचदशीका तेरहवाँ प्रकरण है ॥

शंका–प्रथम अध्यायविषे तुमने आनंद तीनप्रकारका कह्या है ॥

ब्रह्मानंद १ विद्यानंद २ और विषयानंद ३ द्वितीयाध्यायविषे आत्मानंदका निरूपण किया है ताते आत्मानंद तीन आनंदोंते भिन्न होनेते तीन प्रकारका आनंद न सिद्धभया ॥

उत्तर-आत्मानंदब्रह्मानन्दरूपहै जैसे ब्रह्मानंदका योगानंद नाम है योगकरके तिसका अनुभवकरणेते और निरुपाधि होयकरके ब्रह्मानंदका नाम निजानंद है तैसे गौणआत्मा मिथ्याआत्माके विवेककरके ब्रह्मानंदके अनुभवकरणेते ब्रह्मानंदका नाम आत्मानंद है ताते प्रथमअध्यायविषे योगानंद कथन किया है सो आत्मानंद जानना ॥

शंका-आत्मानंदको योगानंदरूपता नहीं बनती जिसते योगानंद अद्वितीय है और आत्मानंद सद्वितीय है कैसे आत्मानंद सद्वितीय है ऐसा पूछे तो श्रवणकर-आत्मानंदके सजातीय गौणात्मा पुत्रस्त्रीआदिक हैं और मिथ्या आत्मा देहआदिक हैं और आत्मानंदके विजातीय अनात्मरूप आकाशादिक हैं ताते सद्वितीयात्मानंदको अद्वितीय योगानंदरूपता नहीं बनती ॥

उत्तर-आत्मानंद अद्वितीय ब्रह्मरूप है जिसते सजातीय गौणात्मा पुत्रादिक और मिथ्या आत्मा देहादिक और विजातीय अनात्मरूप आकाशादिक आत्मानंदते भिन्न सत्य नहीं ऐसे तैत्तिरीयउपनिषद्की श्रुति कथन करती है तिसके अर्थको श्रवणकर-जो ब्रह्मवेत्ताओंकरके प्राप्त होने योग्य है सच्चिदानंद रूप आत्मा तिसते आकाश उत्पन्न होता भया, आकाशते पवन उत्पन्न होता भया, पवनते तेज उत्पन्न होता भया, तेजते जल उत्पन्न होता भया, जलते पृथिवीउत्पन्न होती भई, पृथिवीते औषधियाँ उत्पन्न होती भई, औषधियोंते अन्न उत्पन्न होता भया अन्नते शरीर उत्पन्न होता भया ॥ इसप्रकार कथन किया जो है जगत् सो आपने कारण आत्मानंदते भिन्न नहीं इसते आत्मानंदको अद्वितीय ब्रह्मरूपता है ॥

शंका-तैत्तिरीयोपनिषद्की श्रुतिविषे आत्माको जगत्कारणता कही है और आनंदको जगत्कारणता नहीं कही ॥

उत्तर-और स्थानोंविषे तैत्तिरीयउपनिषद्विषे आनंदको जगत्कारणता कथन करी हैं ॥ आनंदते जगत् उत्पन्न होता है और आनंदकरकेही जीवता है और आनंदविषेही लय होजाता है ताते जगत् आत्मानंदते भिन्न नहीं इस अर्थविषे यह अनुमान है आनंदका कार्य होनेते जगत् आत्मानंदते भिन्न नहीं जो जिसका कार्य है सो तिसते भिन्न नहीं जैसे मृत्तिकाका कार्य घटादिक मृत्तिकाते भिन्न नहीं ॥

शंका-जो जिसते उत्पन्न भया है सो तिसते भिन्न नहीं यह नियम नहीं बनता जिसते कुम्हारते उत्पन्न हुयाहुया घट कुम्हारते भिन्न है ॥

उत्तर-कारण दो प्रकारका होता है एक निमित्तकारण, दूसरा उपादान कारण जैसे-घटका कुम्हार निमित्तकारण है और मृत्तिका उपादान कारण है निमित्तकारणते कार्यका भेद होता है उपादानकारणते कार्यका भेद नहीं होता आत्मानंद जगत्का उपादान कारण है ताते आत्मानंदते जगत् भिन्न नहीं जैसे घटमृत्तिकासे भिन्न नहीं और निमित्तकारणते कार्यका भेद होवो जैसे कुम्हारते घटका भेद होता है और आनंदरूप आत्माते जगत्का भेद नहीं जिसते आनंदरूप आत्मा जगत्का निमित्तकारण नहीं ॥

शंका-दृष्टांतविषे कुलाल घटका उपादान कारण क्यों नहीं ? ॥

उत्तर-कार्यकी स्थितिका और कार्यके लयका जो आधार होता है सो उपादान कारण कहाता है घटकी स्थिति और लय कुम्हारविषे नहीं देखते ताते घटकी स्थिति और लयका आधाररूप घटकी उपादानकारणता कुम्हारको नहीं घटकी स्थिति लय मृत्तिका

विषे प्रत्यक्षकरके देखाते हैं ताते घटका उपादान कारण मृत्तिका है कुम्हार नहीं ॥

शंका-घटका मृत्तिका उपादान कारण होवो पर प्रसंगमें क्या आया ?॥

उत्तर-प्रसंगविषे यह आया जैसे मृत्तिका घटकी स्थितिलयका आधार होनेते उपादान कारण है ॥ तैसे आत्मानंद जगत्‌की स्थितिलयका आधार होनेते जगत्‌का उपादान कारण है ऐसे तैत्तिरीयउपनिषद्‌की श्रुतिने कथन किया है आनंदकरके भूतास्थित होते हैं और आनंदविषे इस वाक्यकरके लय होते हैं ताते आत्मानंद जगत्‌का उपादान कारण है उपादानकारण तीनप्रकारका होता है विवर्त्ती १ परिणामी २ आरंभक ३ इन तीनोंके बीच परिणामी और आरंभक यह दोनों साकारवस्तुविषे बनते हैं और निराकारवस्तु परिणामी उपादान और आरंभक उपादान नहीं होती-जिसते आरंभवादी ऐसा कथन करते हैं ॥ उपादानकारण भिन्न होता है कार्य्यते और कार्य्य उपादानकारणते भिन्न होता है जैसे-वस्त्रते तंतु भिन्न है और तंतुओंते वस्त्र भिन्न है जेकर तंतुओंते वस्त्रका भेद न होवे तो तंतुओंते वस्त्रकी उत्पत्ति न होवे जैसे वस्त्रते वस्त्रकी उत्पत्ति नहीं होती ताते तंतुओंते वस्त्रकी उत्पत्ति होनेते तंतु वस्त्र भिन्न भिन्न है विरुद्धपरिमाणते तंतुओंका परिणाम होता है हजारों गजोंका और वस्त्रका परिमाण होता है पाँच सात गजका और तंतु और कार्य्यको करता है और वस्त्र और कार्य्यको करताहै ताते तंतु और वस्त्र भिन्न भिन्न हैं अब परिणामके स्वरूपको श्रवणकर एक वस्तुकी प्रथमअवस्थाको त्यागकरके दूसरीअवस्थाकी प्राप्तिका नाम परिणाम है जैसे-दुग्ध दहीरूप होजाता है और जैसे मृत्तिका घटरूप होजाती है और जैसे सुवर्ण कुंडलरूप होजाता है अब विवर्तका लक्षण श्रवण कर एक

वस्तुकी प्रथमावस्थाको न त्यागकरके और अवस्थाकी प्रतीतिका नाम विवर्त है जैसे रस्सी आपनी रस्सीरूपताको न त्यागकरके सर्परूप होकरके प्रतीति होती है ॥

शंका-विवर्तको प्राप्त हुई जो रस्सी है सो साकार देखीजाती है ॥ तातें निराकारका विवर्त नहीं बनता जैसे निराकारका परिणाम और आरंभ नहीं बनता ॥

उत्तर-निरवयवका विवर्त तो बनता है जिससे निराकार आकाशविषे नीलरूप और मूंधे कटाहाकारताका भ्रम दीखता है तातें जैसे निराकार आकाशविषे भ्रम दीखता है तैसे निराकार आनंदरूप आत्माविषे जगत्‌रूप विवर्त अंगीकार करणा, विवर्तका अर्थ भ्रम ॥

शंका-अद्वयानंदरूप आत्माविषे जगत् भ्रमकी कल्पनाके कारणके अभाव होनेतें जगत् भ्रम नहीं बनता ॥

उत्तर-अद्वयानंद आत्माविषे जगत् भ्रमकी कल्पनाका कारण मायाशक्ति है जैसे इंद्रजालकी रचनाकरणेवाले मदारीकी मणिमंत्रादिरूप मायाशक्ति गंधर्वनगरादिकोंकी कल्पनाका कारण है ॥

शंका-आनंदरूप आत्मासे भिन्न मायाशक्तिके अंगीकार कियाँ हुयाँ आत्माकी अद्वैतरूपता न रहेगी ॥

उत्तर-अनिर्वचनीय होनेतें माया मिथ्या है तातें मायाशक्तिकरके आत्माविषे द्वैतकी प्राप्ति नहीं होती जैसे मृगतृष्णाकी नदीकरके कल्लरी भूमिविषे कीचड नहीं होता जिसतें मायाशक्ति परमात्मासे भिन्नकरके और अभिन्नकरके नहीं कही जाती इसतें मायाशक्ति अनिर्वचनीय है जैसे अग्निआदिकोंकी शक्ति अग्निआदिकोंसे भिन्न और अभिन्नकरके कही नहीं जाती अग्निविषे छालेआदिकोंके उत्पन्न करणेकी जो शक्ति है सो अग्निके स्वरूपतें भिन्न नहीं जिसतें

अग्निके स्वरूपते भिन्नकरके प्रतीत नहीं होती और अग्निकी शक्ति–अग्निके स्वरूपते अभिन्न भी नहीं ॥ जिसते मणिमंत्र आदिकोंकरके शक्तिका कार्य्य छालेआदिकोंका प्रतिबंध दीखता है ताते अग्नित स्वरूपते अग्निकी शक्ति भिन्न माननी ॥

शंका–प्रतिबंधका देखना और अग्निकी शक्तिका अग्निते भेद मत होवे भेदके अभाव माननेविषे दोष कोई नहीं ॥

उत्तर–अग्निकी शक्तिका अग्निते भेद अवश्य मानना जिसते अग्निका स्वरूप प्रत्यक्ष है और अग्निकी शक्ति प्रत्यक्ष नहीं और अग्निका प्रतिबिंब नहीं और अग्निकी शक्तिका प्रतिबंध होता ताते अग्निके स्वरूपते जेकर अग्निकी शक्तिको भिन्न न मानेगा तो तेरे मतविषे प्रतिबंध किसका होवेगा ? ॥

शंका–इंद्रियोंकरके न प्रतीत होनेवाली शक्तिका प्रतिबंध तुम कैसे जानते हो ? ॥

उत्तर–इंद्रियोंकरके न प्रतीत होनेवाली शक्ती कार्य्यकरके जानी जाती है जिसते कारणके विद्यमान हुयाँहुयाँ भी कार्य्यकी न उत्पत्तिके हुयाँहुयाँ प्रतिबंधकी कलपना होती है जैसे अग्निके जाग्याँ हुयाँ भी छालाआदिक कार्य्य न होवे तो शक्तिका प्रतिबंध मंत्र-आदिकों करके कलपीता है इसप्रकार लोकप्रसिद्ध अग्निआदिकोंकी शक्तिके स्वरूपको प्रमाण करके कथन किया। अब मायाविषे प्रमाणको श्रवणकर–श्वेताश्वतरउपनिषद्‌विषे यह कथन किया है मुनीश्वरोंका जगत्‌कारणके निर्णयविषे बहुत विवाद होता भया तब तिनोंको श्वेताश्वतरमुनीश्वर कहता भया सभी मुनीश्वर तुम ध्यानयोगविषे स्थित होकर जगत्‌के कारणको देखो तब मुनीश्वर ध्यानयोगविषे स्थित होजाते भये तिस करके स्वप्रकाश आत्माकी आपने गुणोंकरके छिपी हुई शक्तिके जगत्‌का कारण देखते भये काल स्वभाव आदि कारणवादोंविषे दोषके देखणेवाले जो मुनीश्वर हैं सो जगत्‌के कारणकी

जिज्ञासाकरके ध्यानयोगविषे स्थित हुयेहुये अधिकारी स्वप्रकाश चैतन्यरूप प्रत्यगात्माते अभिन्न ब्रह्मकी आपने कार्य स्थूलसूक्ष्मशरीरों करके आच्छादित हुई जगत्का कारण साक्षात् करते भये यह वाक्य मायाशक्तिविषे प्रमाण है। और भी श्वेताश्वतरउपनिषद्का वाक्य शक्तिविषे प्रमाण है तिसको श्रवणकर—ब्रह्मकी सर्वशक्तियोंते श्रेष्ठ शक्ति जगत्का कारण रूप अनेक प्रकारकी श्रवण करती है क्रिया-शक्ति, ज्ञानशक्ति, इच्छाशक्ति, केवल मायाशक्ति, श्रुतियोंकरकेही सिद्ध नहीं किंतु स्मृतिकरके भी सिद्ध है जैसे—अनेक प्रकारकी मायाशक्तिको श्रुतिने कथन करचा है तैसे वसिष्ठजीनेभी उत्पत्ति-प्रकरणविषे अनेकप्रकारकी मायाशक्तिको कथन करचा है सो शक्तिके कथन करणेवाले वसिष्ठजीके वाक्योंको श्रवणकर॥ हे रामजी! ब्रह्म सर्वशक्ति है और नित्य है और पूर्ण है और सबते परे है और अद्वितीय है तात्पर्य यह—वास्तवते ब्रह्मनित्य है, पूर्ण है, अद्वितीय है और कार्य प्रपंच रूप उपाधिदृष्टिकरके देखिये तो ब्रह्म सर्वशक्ति है सो परब्रह्म जिस जिसकालविषे जिस जिस शक्ति-करके विवर्तको प्राप्त होता है तिस तिस कालविषे सो सो शक्ति प्रकट होती है जैसे—सीपी जब रूपे रूपता विवर्तको प्राप्त होती है तब रूपेकी प्रतीति होती है और जब सीपी कलीरू-पताकरके विवर्तको प्राप्त होती है तब कलिकी प्रतीति होती है और जब सीपी अभ्रकआदि रूपताकरके विवर्तको प्राप्त होती है तब अभ्रकआदिक प्रतीत होते हैं हेरामजी! ब्रह्मकी चेतनता शक्ति देवता मनुष्य पशुआदिक शरीरोंविषे प्रतीत होती है और स्पंद शक्ति चलनेका कारणरूप पवनविषे प्रतीत होती है और दृढताशक्ति पत्थरोंविषे प्रतीत होती है॥ और द्रवताशक्ति जलोंविषे प्रतीत होती है॥ और दाहशक्ति अग्निविषे प्रतीत होती है और शून्यशक्ति आकाशविषे प्रतीति होती है और विनाशशक्ति विनाशी

पदार्थोंविषे है हे रामजी ! जैसे सूक्ष्मसर्पके अंडेविषे बडासर्प रहता है तैसे सूक्ष्मपरमात्माविषे स्थूलजगत् रहता है और जैसे एक रूप बीजविषे फल पत्र लता पुष्प शाखाके समूलवाला वृक्ष रहता है किसीएकदेशविषे किसीएककालविषे कोईक शक्तियाँ परमात्माते उदय होती हैं तिन शक्तियोंकी एकबार प्रकटता नहीं होती जैसे किसी देशविषे किसीकालविषे पृथिवीते जो उत्पन्न होते हैं और किसीदेशविषे किसीकालविषे पृथिवीते चावल उत्पन्न होते हैं किसीदेशविषे किसीकालविषे केसरआदिक उत्पन्न होते हैं हे रामजी ! जगत् कल्पनामात्ररूप है वास्तव नहीं, मनने जगत्कल्प्या है ताते जगत्की कल्पनाके कारण मनका स्वरूप श्रवणकर-हे रामजी ! आत्मा सर्वव्यापक है और सदा एकरसताकरके प्रकाशमान है और देशकालवस्तुके परिच्छेदते रहित है सो आत्मा जिसकालविषे स्वपरका ज्ञानरूप मननशक्तिको धारता है कैसी मननशक्ति है जो मायाका परिणामरूप है तिसकालविषे तिसकानाम मन कहता है हे रामजी ! आत्माविषे जगत्की कल्पनाके प्रकारको श्रवणकर प्रथम आत्मा मननशक्तिरूप विवर्त करके मनरूप होता है मनकी कल्पनासे उपरांत बंध मोक्षकी कल्पना होती है तिसते अनंतर भुवन है नाम जिसका ऐसी प्रपंचकी कल्पना होती है यह पर्वत है, यह नगर है, यह नदियाँ हैं, यह समुद्र है, यह बन है, मनुष्य देवता पशु पक्षी आदिकी कल्पना होती है ॥ इस प्रकार करके जगत्की स्थिति स्थिरताको प्राप्त होगई है अर्थ यह-मिथ्याजगत् सत्यरूप होकरके प्रतीत होने लगगया है जैसे बालजनके ताईं धात्रीने कथन कीनी कथा तिसकथाका अर्थ मूर्खबालकको अविद्यमानभी विद्यमानहोकरके प्रतीत होता भया ॥ अर्थ यह मिथ्याभी सत्य होकरके प्रतीत होता भया सो जैसे धात्रीने कथा मूढबालके ताईं कथन कीनी है सो श्रवणकर बालकका चित्त

परचावने वास्ते बालकताईं बालककी खिलावने वाली जो धात्री है सो बालकको कहती भई हे पुत्र! एक बडी सुंदर शुभ कथा तू श्रवण कर किसीएक देशविषे एक राजाके तीन पुत्र होते भये सो बहुतसुंदर होते भये सो कैसे तीन पुत्र हैं हे महाबाहो! दो तो जन्मे नहीं और एक गर्भविषेभी स्थित नहीं भया ऐसे तीनोंराजाके पुत्र धर्मकरके युक्त अत्यंत असत्य नगरविषे वसते भये सो तिनराजाके पुत्र पापसे रहित अंतःकरणवाले आपने शून्यनगरसे निकसकरके शिकार खेलनेवास्ते बनको जाते भये जातेजाते रस्तेविषे फलोंवाले तीनवृक्ष आकाशविषे देखते भये हे पुत्र! आपने भविष्यत्नगरविषे सो राजाके तीनपुत्र आजपर्यंत शिकारको खेलते हुये स्थित हैं हे रामजी! इसप्रकार बालकके ताईं शुभकथा धात्रीने कथन कीनी सो मूर्खबालक विचारसे रहित बुद्धिकरके सत्यरूपताकरके निश्चय करता भया हे रामजी! इसीप्रकार संसार रचनासे विचार रहित है चित्त जिनोंका तिनपुरुषोंको बालकके कथाकी न्याईं सत्यरूपताकरके स्थितिको प्राप्त हो गई है इसते आदिलेकरके अनेकों कथाओंकरके मायाशक्तिको विस्तारकरके वसिष्ठजी कथन करते भये हैं सो शक्ति निरूपण करते हैं यह माया शक्ति आपना कार्य्य जो जगत् तिसते विपरीत स्वभाववाली है और आपने अधिष्ठानब्रह्मतेभी विपरीत स्वभाववाली है जैसे अग्निकी शक्ति आपने कार्य्यते और आपने आश्रयते विपरीत स्वभाव वाली है अग्निकी शक्तिका कार्य्य छाले आदिक हैं और शक्तिका आश्रय अंगार है सो छाले और अंगार दोनों प्रत्यक्ष हैं और शक्ति प्रत्यक्ष नहीं छाले रूप कार्यद्वारा शक्तिका अनुमान करीता है इसते शक्ति कार्यते और आश्रयते विपरीतस्वभाववाली है जैसे अग्निकी शक्ति कार्यते और आश्रयते विपरीत स्वभाववाली है तैसे मृत्तिकाकी शक्तिभी कार्यते और आश्रयते विपरीत स्वभाववाली

हैं मृत्तिकाकी शक्तिका कार्य घट स्थूल है और गोलाकार तिसका मध्य है और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधवाली मृत्तिकाशक्तिका आश्रय है और शक्तिविषे न स्थूलताआदिक कार्यका धर्म है और न शब्दआदिक आश्रयका धर्म हैं तिसते शक्ति, कार्यते और आश्रयते विपरीत स्वभाववाली है जिसते कार्यते और आश्रयते शक्ति विपरीत स्वभाववाली है इसतिं शक्ति अचिंत्य है ॥

शंका—जेकर शक्ति अचिंत्य है तो अचिंत्यताही शक्तिका स्वरूप सिद्ध भया ॥

उत्तर—शक्ति चिंतनकरणे योग्य नहीं अधिष्ठानसे भेद करकेभी तिसका चिंतन नहीं होसक्ता और अभेदकरके तिसका चिंतन नहीं हो सक्ता और अचिंत्यताकरकेभी तिसका चिंतन नहीं होसक्ता ताते शक्ति अनिर्वचनीय है अधिष्ठानसे भेदकरके इसते शक्तिका चिंतन नहीं होसक्ता जिसते अधिष्ठानसे वखरी नहीं प्रतीत होती और अधिष्ठानकेसाथ अभेदकरके इसते चिंतन नहीं होसक्ती जिसते अधिष्ठान प्रत्यक्ष देखीता है अग्निआदिरूप शक्ति प्रत्यक्ष नहीं देखीजाती और अचिंत्य इसवास्ते नहीं जिसते कार्यद्वारा तिसका चिंतन कियाजाता है ताते शक्ति अनिर्वचनीय है ॥

शंका—कारणके स्वरूपते भिन्न जेकर शक्ति है तो कारणके स्वरूपकी न्याई शक्ति क्यों नहीं प्रतीत होती ? ॥

उत्तर—मृत्तिकाकी शक्ति घटादिरूपकार्यकी उत्पत्तिसे प्रथम छिपी हुई मृत्तिकाविषे रहती है इसते घटकारण मृत्तिकाकी न्याई प्रतीत नहीं होती ॥

शंका—जेकर शक्ति प्रथम छिपीहुई रहती है तो पीछेभी तिसकी प्रकटता न होनी चाहिये ॥

उत्तर-प्रथम दुग्धाविषे अप्रकट घृतका मंथनकरके प्रकटता जैसे होती है तैसे कुलालके व्यापारकरके मृत्तिकाकी शक्ति प्रकटताको प्राप्त होती है मृत्तिकाकी शक्ति प्रकटता घट करके होती है मृत्तिकाकी शक्ति यदि घटरूपताको प्राप्त होजाती है तब जानीता है कि, इसमृत्तिकाविषे घटके उत्पन्नकरणेकी शक्ति है ॥

शंका-कारणसे भिन्नशक्तिका कार्य जेकर है तो कार्य कारणका भेद क्यों नहीं प्रतीत होता ? ॥

उत्तर-भेद प्रतीतिके कारण विचारके अभावते भेदकी प्रतीति नहीं होती जैसे गृहविषे पदार्थोंकी प्रतीतिके कारणकी एकके अभावते गृहके पदार्थ प्रतीत नहीं होते ॥ अविवेकी पुरुष स्थूल गोल आदिरूप कार्य्यको और शब्द स्पर्शआदि गुणोंवाली कारणरूप मृत्तिकाको अविचारसे इकट्ठा करके घट यह कथन करते हैं ताते घट यह व्यवहार अविचारसे होता है जिसते कुलाल व्यापारसे पूर्व विद्यमान मृत्तिका अघटरूप है तिसको घटरूपकरके जानते हैं इसते घट व्यवहारका कारण अविचार है ॥

शंका-जेकर अघटरूप मृत्तिकाको घटरूपता अविचारकरके है तो घटरूपता किसको है ?

उत्तर-कुलालव्यापारते अनंतर होनेवाला जो स्थूल गोलाकार रूप है सो घट है जिसते स्थूल गोलाकारकी उत्पत्तिसे अनंतर घट यह व्यवहार होता है ॥

शंका-वास्तव घटको अनिर्वचनीय शक्तिकी कार्यता नहीं बनती ॥

उत्तर-घटभी वास्तव नहीं किंतु अनिर्वचनीय है जिसते घट जो है सो मृत्तिकाते भिन्नकरके नहीं देखनेमें आवता ताते घट-

मृत्तिकासे भिन्न नहीं और मृत्तिकासे अभिन्नभी घट नहीं जिसते पिंडरूप मृत्तिकाविषे घटकी प्रतीति नहीं होती ॥ इसते घट अनिर्वचनीय है जैसे शक्ति अनिर्वचनीय है ॥ ताते अनिर्वचनीय शक्तिका कार्य्य अनिर्वचनीय घट बनता है ॥

शंका-घट और शक्ति इन दोनोंको अनिर्वचनीयताके हुयाँहुयाँ यह शक्ति है यह कार्य्य है ऐसा व्यवहार भेद किसकारणते होता है ?॥

उत्तर-जितनाकालपर्यंत स्थूल गोलाकाररूप प्रकट नहीं भया तितनाकाल तिसकानाम शक्ति है और यदि स्थूल गोलाकाररूप प्रकट होता है तब तिसकानाम घट कहाता है ॥ ताते यह सिद्ध भया कि, शक्ति और कार्य इस भेदव्यवहारका कारण स्थूल गोलाकाररूपकी अप्रकटता और प्रकटता है ॥

शंका-प्रथम अप्रकट मायाशक्ति पीछे प्रकट होती है ऐसा प्रसिद्ध मायाका रूप प्रतीत नहीं होता ॥

उत्तर-ऐसा प्रसिद्धमायाकारूप प्रतीत होता है तिसविषे दृष्टांत श्रवणकर-जैसे इंद्रजालके रचनेवाले मदारीकी माया मणिमंत्रआदिकोंके संबंधसे प्रथम प्रकट नहीं प्रतीत होती, पीछे गंधर्वसेनादिरूपताकरके प्रकट प्रतीत होती है ॥ शक्तिकार्य घटादिकोंकी मिथ्यारूपता और शक्तिका आश्रय मृत्तिका आदिकोंकी सत्यरूपता छांदोग्यउपनिषद्की श्रुतिनेभी कथन कीनी है तिसश्रुतिके अर्थको श्रवण कर मायाका कार्य होने करके घटादिक मिथ्या है और घटादिकोंका अधिष्ठानरूप मृत्तिका सत्य है मृत्तिका कार्य घटादिक वाणीकरके उच्चारण करचा जो नाम है तितनामात्र है नामही घटादिक पदार्थ है घटादिकोंका नामसे भिन्नवास्तवरूप नहीं किंतु घटादिकोंका आधार मृत्तिका सत्य है शक्ति और शक्तिका कार्य मिथ्या है और तिन दोनोंका आधार मृत्तिका सत्य है इसविषे कारण श्रवणकर-कार्य और

शक्ति और तिनका आधार मृत्तिका इन शक्ति और कार्य इन दोनोंका काल भेद करके पर्याय है अर्थ यह-एकही वस्तु किसी कालविषे शक्ति नाम करके कथन करी है और किसी कालविषे कार्य नाम करके कथन करी है और तीसरी मृत्तिकाशक्ति और कार्य दोनोंका आधार है सो शक्ति कालविषे भी विद्यमान है और कार्यकालविषे शक्ति नहीं होती तिसते शक्ति और कार्य दोनों मिथ्या हैं कभी एक होनेते कभी एक न होनेते मृत्तिका शक्तिका और कार्यका आधार रूप सत्य है तिन कालोंविषे विद्यमान होनेते व्यक्त है नाम जिसका ऐसा जो घटादिकार्य सो स्वरूपके असत्य हुआहुआही प्रतीत होता है और घटादिकार्य उत्पत्तिविनाशवाला प्रतीत होताहै और घटादि कार्य वाणी करके उत्पन्न भये नाममात्र करके व्यवहारके योग्य होता है पुरुषों करके घटादिकोंके कार्य नाश हुयाँहुयाँ भी घटते अभिन्न जो नाम है सो मनुष्योंके मुखविषे रहता है तिसते क्या भया ऐसा पूछे तो श्रवणकर वाणी करके व्यवहारके योग्य जो नाम तिसकरके व्यवहारके योग्य होनेते घटादि कार्य नामते भिन्न नहीं तात्पर्य यह घटादिकार्य घटादिशब्दरूप है घटादि शब्दकरके व्यवहारके होनेते घटशब्दकी न्याईं जैसे घटशब्द घटशब्दकरके व्यवहारके योग्य होता है सो घट शब्द घटशब्दरूप है अर्थ यह-जैसे घटशब्द घटशब्दते भिन्न नहीं तैसे घटभी घटशब्दते भिन्न नहीं और यह जो सिद्ध कीने हैं तिन करके तिन अनुमान कार्यकी मिथ्या रूपताके जनावनेवाले सिद्ध होते हैं तिनोंको श्रवणकर घटादि रूप कार्यका जो स्थूल गोलाकार रूप है सो कुछ भी सत्य नहीं वास्तव रूपते रहित होनेते जो सत्य होता है सो वास्तवरूपते रहित नहीं होता। जैसे-मृत्तिका जो सत्य है सो वास्तवरूपते रहित नहीं यह एक अनुमान भया दूसरा अनुमान यह है घटादिरूप कार्य सत्य नहीं मृत्तिकाके विद्यमान

हुयाँहुयाँ भी नाशवाला होनेते जो सत्य होता है सो मृत्तिकाके विद्यमान हुयाँहुयाँ नाश नहीं होता जैसे मृत्तिका मृत्तिकाके विद्यमान हुयाँहुयाँ नाश नहीं होती यह दूसरा अनुमान है घटादि मिथ्या है, नाममात्र होनेते जो मिथ्या नहीं होता सो नाममात्र भी नहीं होता जैसे मृत्तिका यह तीसरा अनुमान है इसप्रकार कार्यकी असत्यताको सिद्ध करके अब कार्यके अधिष्ठान रूप मृत्तिकाकी सत्यताको सिद्ध करते हैं तिसको श्रवणकर कार्यकी स्थितिकालविषे और कार्यकी उत्पत्तिते प्रथम कालविषे और कार्यके नाशते उत्तरकालविषे एकाकार और सत्यत्व अर्थ यह-वास्तव रूपवाली और कार्यके नाश हुयाँहुयाँ न नाश होनेवाली ऐसी जो मृत्तिका वस्तु है सो सत्य है इस अर्थविषे यह अनुमान है-मृत्तिका वस्तु सत्य है, वास्तव होनेते आत्माकी न्याईं मृत्तिका सत्य है तिन कालोंविषे-एकरूपताकरके विद्यमान होनेते आत्माकी न्याईं मृत्तिका सत्य है कार्यके नाश हुयाँभी नाश रहित होनेते आत्माकी न्याईं ॥

शंका-घटादिरूप कार्यमात्रको असत्य हुयाँहुयाँ इसकी अधिष्ठान मृत्तिकाके ज्ञानते निवृत्ति होनी चाहिये जैसे-असत्यरूपेकी अधिष्ठान सीपीके ज्ञानते निवृत्ति होती है व्यक्त घट विकार इन नामों करके कथन करा जो वस्तु तिसको कारणसे भिन्नकरके असत्य मान्या हुयाँ मृत्तिकारूप कारणके ज्ञानकरके तिसकी निवृत्ति क्यों नहीं होती ॥

उत्तर-तिसकी निवृत्ति होता है जिसते तेरी घटादिकोंविषे सत्य बुद्धि नहीं रही ॥

शंका-कल्पितरूपेकी स्वरूपते निवृत्ति होती है अधिष्ठान सीपीके ज्ञानसे ऐसा तो नहीं होता जो तिसका स्वरूप नजर आवता रहे और तिसकी सत्ता निवृत्त होजावे ॥

उत्तर-भ्रम दोप्रकारका होता है एक निरुपाधिक, दूसरा सोपा-

धिक । जो निरुपाधिक भ्रम होता है तिसकी अधिष्ठान ज्ञानते स्वरूपकरके निवृत्ति होजाती है जैसे सीपीविषे रूपेका भ्रम निरुपाधिक है तिसकी अधिष्ठान सीपीके ज्ञानसे स्वरूपते निवृत्ति होजाती है और जो सोपाधिक भ्रम होता है तिसकी अधिष्ठान ज्ञानते स्वरूपकरके निवृत्ति नहीं होती तिसकी सत्तामात्र निवृत्त होतीहै जैसे बल्लौरके साथ लाल काले आदिक पदार्थोंका संबंध हुयाँहुयाँ बल्लौर लालको लालकाला भ्रमकरके प्रतीत होता है और जब बल्लौरको चिटाजान्या तब बल्लौरमें लालकालेकी सत्ता निवृत्त होजाती है पर लालकालेकी प्रतीति दूर नहीं होती जितना काल लालकालेआदिक पदार्थोंका संबंध है ताते जैसे बल्लौरविषे लालकाला भ्रम सोपाधिक है तैसे मृत्तिकाविषे घटभ्रमभी सोपाधिक है जिसते मृत्तिकाके ज्ञानते घटके स्वरूपकी निवृत्ति नहीं होती घटकी निवृत्ति सत्ता होती है जलविषे उलटा होकरके प्रतीत होता जो पुरुष है सो वास्तवसे उलटा नहीं जिसते किसीभी विवेकी पुरुषको अथवा अविवेकीको उलटे होकरके जलविषे प्रतीत होते पुरुषविषे सत्यबुद्धि नहीं होती जैसे जलके किनारे बैठे पुरुषविषे सत्यबुद्धि होती है और जलविषे उलटा नजर आवना निवृत्त नहीं होता ॥

शंका-कल्पितपदार्थकी असत्यता ज्ञानमात्रते पुरुषार्थकी सिद्धता नहीं होती ॥

उत्तर-अद्वैतमतविषे आत्मानंदते भिन्न संपूर्णपदार्थोंकी मिथ्यारूपताके निश्चय हुयाँहुयाँ अद्वैतानंदकी प्रकटतारूप पुरुषार्थकी सिद्धि होती है ॥

शंका-घट मृत्तिकाका विवर्त है इसबातके निश्चय हुयाँहुयाँ मृत्तिकाके ज्ञानते घटविषे सत्यबुद्धि निवृत्त होवो पर घटको मृत्तिकाकी विवर्तरूपता अबपर्यंत निश्चय नहीं भई ॥

उत्तर-घटमृत्तिकाका विवर्त है जिसते मृत्तिका मृत्तिकारूपको न त्यागके घटरूप होकरके प्रतीत होती है ॥

शंका-घटविषे मृत्तिकारूपके त्याग न हुयाँहुयाँभी घट मृत्तिकाका परिणाम क्यों न होवे ? ॥

उत्तर-घट जेकर मृत्तिकाका परिणाम होवे तब मृत्तिका आपने प्रथमरूपको त्यागकरके घटरूपको प्राप्त होवे जिसकारणते जहाँ परिणाम होता है तहाँ प्रथमरूपको त्यागकरके और रूपकी प्राप्ति होती है जैसे दुग्ध आपनी दुग्धरूपताको त्यागकरके दहीरूपताको प्राप्त होता है और मृत्तिका तो आपनी मृत्तिका रूपताको न त्यागकरके घटरूपको प्राप्त होता है ताते घट मृत्तिकाका परिणाम नहीं किंतु विवर्त है ॥

शंका-विवर्तविषे प्रथमरूपके त्यागका अभाव कहाँ देख्या है ?॥

उत्तर-मृत्तिकाका विवर्त जो घट और स्वर्णका विवर्त जो कुंडल तिनोंविषे कारणरूप मृत्तिका और स्वर्णकी निवृत्ति नहीं होती ॥

शंका-घट मृत्तिकाका विवर्त नहीं बनता जिसते घटके नाश हुयाँ हुयाँ फिर मृत्तिका नहीं देखी किंतु कपाल देखते हैं ॥

उत्तर-कपालोंके नाश हुयाँहुयाँ फिर मृत्तिका देखी है और स्वर्ण विषे तो यह शंका नहीं बनती जिसते कुंडलके भुन्या हुयाँहुयाँ सुवर्ण अति प्रकट प्रतीत होता है ॥

शंका-परिणामविषे दुग्ध, मृत्तिका, सुवर्ण तीन दृष्टांत तुमने कथन किये तिनमें मृत्तिका और सुवर्ण इन दोनोंको विवर्तविषे दृष्टांत मानोगे तो तिसीप्रकार दुग्धको भी विवर्तविषे दृष्टांत मानना चाहिये ॥

उत्तर-दुग्धआदिक परिणामविषे दृष्टांत है विवर्तविषे दृष्टांत नहीं

जिसते दुग्धआदिक दही आदिकोंके रूपको प्राप्त हुयाहुयाँ फिर दुग्धआदिकोंके रूपको नहीं प्राप्त होते ॥

शंका–जेकर दुग्ध विवर्तविषे दृष्टांत नहीं बनता तो तिसीप्रकार प्रथमावस्थाते और अवस्थाको प्राप्त हुयाँ हुयां मृत्तिका और सुवर्ण विवर्तविषे दृष्टांत न होने चाहिये ॥

उत्तर–दुग्धआदिकोंको परिणामवाला होनेकरके मृत्तिका और सुवर्णादिकोंको विवर्तविषे दृष्टांतता निवृत्त नहीं होती तात्पर्य यह दुग्ध पूर्वावस्थाको त्यागकरके और अवस्थाको प्राप्त होता है इसते दुग्धका परिणाम है विवर्त नहीं मृत्तिका और सुवर्ण पूर्वावस्थाको त्याग नहीं करते और और अवस्थाको प्राप्त होते हैं इसकरके तिन दोनोंको विवर्तविषे दृष्टांतता बनती है और परिणामविषेभी दृष्टांतता बनती है ॥

शंका–जैसे मृत्तिका और सुवर्णका परिणाम विवर्त मानते हो तैसे मृत्तिका और सुवर्णको आरंभकता क्यों नहीं मानते ? ॥

उत्तर–मृत्तिका और सुवर्णको आरंभकता इसवास्ते नहीं मानते जिसते आरंभवादविषे कार्यरूपघट कुंडलादिकोंविषे तोलकी द्विगुणता कार्याकारताकरके और कारणाकारताकरके प्राप्त होती है अर्थ यह एक तोले सुवर्णका दोतोले कुंडल होना चाहिये और सेरमृत्तिकाका घट दोसेर होना चाहिये जिसकारणते आरंभवादियोंने कार्यके रूप-रसआदिक गुण भिन्नमाने हैं और कारणके भिन्न माने हैं तोलभी एक गुण है ताते एककार्यका तोल एककारणका तोल इसप्रकार एक तोले सुवर्णका दोतोले कुंडल चाहिये और सेरमृत्तिकाका दोसेर घटचाहिये ऐसे तो जगत्‌विषे नहीं देख्या ताते मृत्तिका और सुवर्णका आरंभ-विषे दृष्टांत नहीं बनता मृत्तिका और सुवर्ण और लोहा इन तीनों दृष्टांतोंको विवर्त विषे अरुणका पुत्र उद्दालकमुनि छांदोग्योपनिषद्‌विषे

कथन करता भया है इसते संपूर्णकार्योंको मिथ्या जानना जिसकारणते मृत्तिका आदिक बहुतै पदार्थोंविषे कार्यको मिथ्या देख्या है इसते भूतभौतिक रूप संपूर्णपदार्थोंविषे कार्यकी मिथ्यारूपताको जिज्ञासु निश्चयकरे ॥

शंका–कार्यकी मिथ्यारूपताका निश्चय करणा किसवास्ते कथन किया है ? ॥

उत्तर–कारणज्ञानते कार्यज्ञानकी सिद्धिकेवास्ते कार्यकी मिथ्यारूपताका निश्चय करणा उद्दालकमुनि कहता भया है मृत्तिकाआदिकोंके कारण ज्ञानते कार्य घटादिकोंका ज्ञान उद्दालकमुनि कहता भया हे सौम्य ! हेपुत्र ! जैसे एकमृत्तिकाके पिंडके जानने करके संपूर्ण मृत्तिकाके कार्य इसते आदि वाक्यकरके जानेजाते हैं ॥

शंका–मृत्तिका सुवर्णरूप कारणके ज्ञानते भिन्नमिथ्यारूप घट कुंडल आदिकोंका ज्ञान नहीं बनता ॥

उत्तर–कार्यविषे सत्यअंशभी है और मिथ्याअंशभी है कारणके ज्ञानते कार्यविषे जो सत्य अंश है तिसका ज्ञान होता है लोकोंकी दृष्टिकरके मृत्तिका सहित जो स्थूल गोलाकाररूप है तिसको कार्यता है तिसविषे मृत्तिका अधिष्ठान है सो सत्य है और स्थूलगोलाकारता मिथ्या है ॥

शंका–ऐसेही होवो पर इतनेकरके कारणज्ञानते कार्यज्ञान नहीं होता इस शंकाका उत्तर तो कुछ न भया ॥

उत्तर–कारण ज्ञानते कार्यविषे जो मिथ्या अंश है तिसके ज्ञानके अभाव हुयाँहुयाँभी कार्यविषे जो सत्य अंश है मृत्तिकारूप तिसका ज्ञान होता है ॥

शंका–कार्यविषे जो सत्य अंश है तिसकी न्याईं कार्यविषे जो मिथ्याअंश है सोभी जानने योग्य है ॥

उत्तर–कार्यविषे जो मिथ्या अंश है सो जानने योग्य नहीं जिस कारणते मिथ्याअंशके जाननेते प्रयोजन कोई नहीं सिद्ध होता कार्य विषे जो सत्य अंश है तिसके जाननेते जाननेवाले पुरुषका प्रयोजन सिद्ध होता है और मिथ्याभूत अंशके ज्ञानते प्रयोजन नहीं सिद्ध होता ताते कार्यविषे मिथ्या अंश जानने योग्य नहीं ॥

शंका–कारणज्ञानते कार्यज्ञान होता है यह कथन श्रोताकी बुद्धि विषे चमत्कारका कारण होवेगा इस तात्पर्यकरके तुमने कह्या है सो तो नहीं बनता जिसते कारण मृत्तिकाआदिकोंके ज्ञानते कार्यविषे मृत्तिकाआदिरूप सत्यअंशका ज्ञान होता है ऐसे कथन कियाहुयाँ मृत्तिकाके ज्ञानसे मृत्तिकाका ज्ञान होता है यह कथन भया ऐसे हुयाँहुयाँ शब्दते चमत्कार भया, अर्थते चमत्कार न भया ॥

उत्तर–कार्यविषे जो जो सत्य अंश है सो कारणरूप है इसविवेक-वालोंको विस्मयके न हुयाँहुयाँभी इस विवेकते रहित पुरुषोंको विस्मय होता है घटादिरूप कार्योंविषे विद्यमान वास्तव अंश कारण स्वरूप है कारणस्वरूपते भिन्न स्थूलगोलाकारता घटका रूप मिथ्या है ऐसे जितने पुरुष जानते हैं तिनको आश्चर्य मत होवो पर इस ज्ञानते रहित जो पुरुष है तिनोंको उत्पन्न भया जो विस्मय सो उसको कोईभी दूर नहीं करसक्ता विस्मय और चमत्कार इन दोनोंशब्दोंका अर्थ आश्चर्य है आरंभिया है आरंभके कथनकरणेवाला सो आश्च-र्यको प्राप्त होता है आरंभका अर्थ यह है समवायिकारण और अस-मवायिकारण और निमित्तकारण इनोंते भिन्न कार्यकी उत्पत्ति समवा यिकारण नाम उपादान कारणका है जैसे वस्त्रका तंतु उपादानकारण है और समवायिकारणोंका परस्पर संयोग है जैसे तंतुवोंका ताणा पोटारूपकरके सो असमवायिकारण है और जुलाहा तुरी वेमाआदिक वस्त्रके निमित्तकारण है ॥ वेमानाम तिसका है जिसविषे सूत्रकी

नली रखके विगाराकी है और परिणामी जो है परिणामके कथन करणेवाला सोभी कारणज्ञानते कार्यज्ञानको श्रवणकरके विस्मयको प्राप्त होताहै परिणामका अर्थ यह है प्रथमरूपको त्यागकरके और रूपकीप्राप्ति जैसे दुग्धविषे मधुररूपको त्यागकरके किंचित् तुरशावेरूपकी प्राप्ति और इस आरंभपरिणामरूप प्रक्रिया दोनोंके न जाननेवाले हल वाहनेवाले और हटीयोंवाले राजाकी नौकरीकरणेवाले और स्त्रियोंबालकआदिक संपूर्ण जीव एककारणके ज्ञानते अनेकों कार्योंके ज्ञानको सुणकरके आश्चर्यको प्राप्त होते हैं ॥

शंका- छांदोग्यउपनिषद्की श्रुत्तिके यथाश्रुत्ति अर्थको त्याग करके इसप्रकारकी व्याख्या करणेविषे क्या कारण है ? ॥

उत्तर-श्रुतिका यथाश्रुति अर्थविषे तात्पर्यका अभाव इस प्रकारके व्याख्यानकरणे विषे कारण है सो श्रवण कर-यथाश्रुत श्रुतिका अर्थ यह है एक कारणके ज्ञानके अनेक कार्योंका ज्ञान होता है तिसविषे श्रुतिका तात्पर्य नहीं जिसते श्रुति अद्वैतज्ञानाविषे शिष्यकी बुद्धि स्थिरकरणेवास्ते प्रवृत्त भई और कार्योंकी अनेकताके जनावने वास्ते श्रुति प्रवृत्त नहीं भई ताते श्रुतिका यह तात्पर्य है अनेककार्यों-विषे एककारण अंश सत्य है और कार्य अंश मिथ्या है जैसे घटरूप कार्यविषे कारणरूप मृत्तिकाअंश सत्य है और कार्यरूप स्थूल गोलाकारताअंश मिथ्या है इस उपदेशते शिष्यकी अद्वैतविषे बुद्धि स्थिरताको प्राप्त होजाती है एकवस्तुके ज्ञानकरके सर्वदा ज्ञानहोता है ॥ इस अर्थविषे दृष्टांतको दिखलावनेवाली छांदोग्य श्रुतिके वचनके अर्थको श्रवणकर (दृष्टांत)-श्रुतिका यह अर्थ है-हे सौम्य ! हे पुत्र जैसे एकमृत्तिकाके पिण्डके जाननेकरके संपूर्णमृत्तिकाके कार्यजानेजाते हैं अब दृष्टांतके दार्ष्टांत दिखलावनेवाले श्रुतिवचनके अर्थको श्रवण कर श्रुतिवचनका अर्थ यह है उद्दालककापुत्र श्वेतकेतु गुरुके पास

विद्यापढके जब अपने घरमें आया तब पिताको थोडा पढ्या हुया जान करके पिताके चरणोंपर शिर धरकरके नमस्कार न करता भया और वाणीकरकेभी नमस्कार न करता भया तब तिसका पिता ब्रह्मवेत्ता उद्दालकमुनि पुत्रको मूर्ख जानकरके तिसका अनादर न करता भया किंतु तिसके आगे यह प्रश्न करता भया हे पुत्र ! जिस एकके सुणनेकरके जो नहीं सुण्या सोभी सुण्या जाता है और जिस एकके मनन किया जो नहीं मनन किया सोभी सब मनन किया जाता है और जिसएकके जाननेकरके जो नहीं जान्या सोभी सब जान्या जाता है ऐसाभी उपदेशते आपने गुरुते पूछ्या भया है कि नहीं जैसे घटशरावआदिकोंका उपादान एक मृत्तिकाके पिंडके जाननेते संपूर्ण मृत्तिकाके कार्य घटादिक जान लेते हैं तैसे सर्वजगत्‌के उपादान कारण एकब्रह्मके जाननेते ब्रह्मका कार्य संपूर्ण जगत् जान्या जाता है यह निश्चयकर ॥

शंका–ब्रह्म और जगत्‌के स्वरूपके न जान्या हुयाँहुयाँ ब्रह्मज्ञानतें जगत्‌का ज्ञान होता है यह नहीं जानसकता ताते ब्रह्म और जगत्‌का स्वरूप कथन करो ॥

उत्तर–सच्चिदानंद ब्रह्म है, नामरूप जगत् है ॥

शंका–ब्रह्म सच्चिदानंद है इसविषे क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर–नृसिंहतापनीउपनिषद्‌ते आदिलेकरके उपनिषदोंकी श्रुतियाँ इसविषे प्रमाण हैं अथर्वणवेदवेत्ता पुरुषोंने नृसिंहतापनी उपनिषद्‌के उत्तरखंडविषे यह संपूर्ण जगत् ब्रह्मरूप है और ब्रह्म सच्चिदानंद मात्र है इसते आदिले वाक्योंविषे ब्रह्मकी सच्चिदानंदरूपता कथन करी है और सामवेदकी छान्दोग्यउपनिषद्‌विषे अरुणमुनीश्वरके पुत्र उद्दालकमुनीश्वरने ब्रह्मकी सत्यरूपता कथन करी है यह जगत् उत्पत्तिसे पूर्व सत्यरूप होता भया हे सौम्य ! इस वचन करके और ऋग्वेद

वेत्ता पुरुषोंने ऐतरेयउपनिषद्विषे ब्रह्म चैतन्यरूप कथन किया है ॥ चैतन्य जगत्का आधार है चैतन्यब्रह्मरूप है छांदोग्यउपनिषद्विषे सनत्कुमार नारदका गुरु नारदके ताई भूमानामकरके कथन किया जो ब्रह्म तिसकी आनंदरूपताको कर्ता भया है हे नारद! भूमा जानने योग्य है परिच्छिन्न वस्तु जानने योग्य नहीं ऐसा आरंभ करके जो भूमा है सो सुखरूप है और परिच्छिन्नवस्तुविषे सुख नहीं इसते आदिलेकरके वाक्योंकरके और तैत्तिरीयउपनिषद्विषे आनंद ब्रह्म है ऐसा जान इसते आदिलेकरके वाक्योंकरके ब्रह्मकी आनंदरूपता कथन करी है जैसे ब्रह्मकी सच्चिदानंद रूपताविषे श्रुतियाँ प्रमाण हैं तैसे जगत्नामरूप है इसविषेभी श्रुतियाँ प्रमाण हैं परमात्मा संपूर्ण-रूपोंको चिंतनकरके और तिनोंके नामोंका उच्चारण करता हुयाँहुयाँ परमात्मा स्थित है यह जो जीव है मेरा आत्मा इस करके संघातविषे प्रवेश करके नामरूपको प्रकट करूंगा इन दोनों वचनोंकरके रचने योग्य जगत्विषे नामरूप श्रुतिने दिखलाये हैं बृहदारण्यकश्रुतिविषेभी जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम यह जगत् अव्याकृत होता भया ॥ तिसको नामरूपकरके प्रकट कर्ता भया अमुकका यह नाम है यह रूप है इस वाक्य करके उत्पन्न कियेहुये जगत्को नामरूपको नामरूप स्वरूप कथन कीना है जगत्की उत्पत्तिसे प्रथम यह जगत् अप्रकट नामरूपवाला होता भया सृष्टिसमयविषे तिसको परमेश्वर नामरूप-करके प्रकट करता भया अव्याकृतका अर्थ ब्रह्मविषे स्थित अचिंत्य शक्तिमाया है निर्विकार ब्रह्मविषेस्थित जो माया है सो अनेक प्रकारके विकारोंको प्राप्त होती है ब्रह्मविषे माया रहती है इसविषे क्या प्रमाण है ऐसा पूछे तो श्रवण कर श्वेताश्वतर उपनिषद्की श्रुति प्रमाण है ॥ तिसका अर्थ यह है–माया जगत्का उपादान जान और तिस मायाका आश्रय होनेकरके मायावाले परमात्माको मायाका प्रेरक महेश्वर जान

माया और महेश्वर परस्पर विलक्षण स्वभाववाले हैं अर्थ यह-माया विकारी है और मिथ्या है, परमात्मा निर्विकार है और सत्य है माया उपहित ब्रह्मका प्रथम कार्य आकाश है आकाशविषे परमात्माकी सत्ता चेतनता आनंद प्राप्त होता है और आकाशका अवकाश आपना रूप है सो मिथ्या है और आकाशविषे जो सत्ता चेतनता आनंद है सो वास्तव है। आकाश रूपका जो अवकाश है सो मिथ्या क्यों है ऐसा पूछे तो श्रवण कर-आकाशकी उत्पत्तिसे प्रथम अवकाश न होता भया और आकाशके नाशते पीछेभी अवकाश न होवेगा जो आदिअंतविषे नहीं होता सो मध्यभी नहीं होता इस अर्थविषे गीताका वचनभी प्रमाण है दूसरे अध्यायविषे भगवान्‌ने कथनकिया है हे अर्जुन ! इन भूतोंका आदिविषेभी आकार कुछ नहीं और अंतविषेभी आकार कुछ नहीं मध्यविषे आकारवाले नजर आवते हैं ताते मिथ्या हैं इनकी चिंता नहीं कीना चाहिये ॥

शंका-आकाशविषे सत्ताचेतनता आनंद है इसविषे क्या प्रमाण है ? ॥

उत्तर-इसविषे अनुभव प्रमाण है जैसे घटादिकोंविषे मृत्तिका सदा स्थित है तैसे आकाशविषे सत्ताचेतनता आनंद सदा स्थित है ॥

शंका-आकाशको छोडकरके सत्ताचेतनता आनंद जेकर कहीं स्थित प्रतीत होवे तब यह जान्या जावे जो परमात्माकी सत्ताचेनता आनंद आकाशविषे स्थित है सो तो सत्ताचेतनता आनंदआकाश आदिकोंते विना नहीं प्रतीत होते ॥

उत्तर-आकाश आदिकोंसे विना आपने स्वरूपविषे सत्ता-चेतनता आनंदका अनुभव होता है अवकाशरूप आकाशकी विस्मृतिके हुयाँहुयाँ तैंने क्या प्रतीत होता है जो प्रतीत होता है सो कहो ? ॥

शंका-शून्यप्रतीत होता है ॥

उत्तर-तिसकानाम तू शून्यहा धर पर आकाशाभावका आश्रय रूपताकरके कुछेक प्रतीत होता है यह तैंने अवश्य अंगीकार किया चाहिये ॥

शंका-ऐसेही होवे पर प्रसंगविषे क्या आया ॥

उत्तर-आकाशाभावका अधिष्ठानरूप जो प्रतीत भया है सो सत्य है यह तैंने अंगीकार किया चाहिये जिसते अभावका अधिष्ठान सत्य होता है यह वार्ता सभीलोकोंमें प्रसिद्ध है ताते अवकाशका अभाव जिस आत्माविषे है सो आत्मा तेरा स्वरूप सत्य है यह निश्चय भया और उदासीन होनेते सुखरूप है ॥

शंका-उदासीननाम अनुकूलता और प्रतिकूलताते रहितका है ताते तिसको सुखरूपता नहीं बनती जिसते अनुकूलतावालेको सुख कहता है ॥

उत्तर-अनुकूलता और प्रतिकूलताते रहित जो सुख है सो निज सुख है अनुकूलतावाली अनात्मवस्तुविषे हर्षबुद्धि होती है और प्रतिकूलतावाली अनात्मवस्तुविषे दुःखबुद्धि होती है और अनुकूलता और प्रातिकूलताते रहित वस्तुविषे निजानंद होता है आत्मवस्तु न अनुकूल है न प्रतिकूल है ताते आत्माविषे जो आनंद है सो निजानंद कहता है ॥

शंका-जैसे निजानंद है तैसे निजदुःखभी क्यों न होवे ? ॥

उत्तर-दुःखविषे निजरूपताकी सिद्धि नहीं होती जिसते निज नाम आपने आपका है और आपने आपविषे सबोंकी परमप्रीति है ताते निजदुःख नहीं बनता ॥

शंका-निजानंदको सदा आनंदरूप होनेते सदा हर्षही होना चाहिये शोक न होना चाहिये ॥

उत्तर-निजानंदकी नित्यता हुयाँहुयाँभी निजानंदके ग्रहणकरणेवाले मनको क्षणैक होनेकरके मनकी वृत्तिरूप हर्षशोककोभी क्षणैकता है निजानंदकी एकरस स्थिरताके हुयाँहुयाँभी हर्षशोकका क्षण क्षणविषे उत्पत्ति विनाश होता है मनको क्षणैक होनेते मनकी वृत्तिरूप हर्षशोक क्षणैक है इसप्रकार निजआत्माविषे आनंदकी सिद्धि भई सो आत्माका आनंद आकाशविषे प्राप्त होता है सत्ता और भावना आकाशविषे तू भी मानता है इसते उसविषे युक्ति कहनेका कुछ प्रयोजन नहीं जैसे आकाशविषे सत्ताचेतनता आनंद है, तैसे पवनसे आदिलेकरके शरीरपर्यंत संपूर्णपदार्थोंविषे सत्ताचेतनता आनंद है सो सत्ताचेतनता पवनादिकोंविषे आनंद आत्माका है अब पवनादिकोंके धर्मोंको श्रवणकर चलना और स्पर्श पवनका रूप है दाह और प्रकाश अग्निका रूप है द्रवता जलका रूप है काठिनता पृथिवीका रूप है औषाधियाँ और अन्न और शरीर इनोंविषेभी आपोअपनारूप जैसा योग्य है तैसा मनकरके जान लेना अनेक प्रकारकरके पदार्थोंविषे नामरूपके भेद हुयाँहुयाँभी सच्चिदानंद सर्व पदार्थोंविषे एकरस स्थित है इसविषे किसीका विवाद नहीं जिसते जैसी घटकी सत्ता है तैसी और और पदार्थोंकी सत्ता है ॥ और जैसा घटका भान है तैसे और पदार्थोंका भान है और जैसा घटविषे आनंद है तैसा और२ पदार्थोंविषेभी आनंद है ॥

शंका-जेकर पदार्थोंविषे नामरूप भिन्नाभिन्न है तो प्रतीत होते जो नामरूप हैं इनोंकी क्या गति है ? ॥

उत्तर-नामरूप कल्पित हैं, यह इनकी गति है जिसते जन्म-

नाशवाले हैं ताते बुद्धिकरके नामरूपको ऐसे देखा, जैसे समुद्रविषे बुद्बुदे आदिक होते हैं इस सच्चिदानंदरूप पूर्ण ब्रह्मके अनुभव कियाँ हुयाँ आप पुरुषनामरूपके अनादरको हौले हौले करदेताहै ब्रह्मज्ञानकी दृढता द्वैतके अनादरसे उत्पन्न होती है ताते श्रवणादिकोंकी न्याईं द्वैतका अनादर भी जिज्ञासुको कीना चाहता है जितनाजितना द्वैतका अनादर होता है तितना तितना ब्रह्मका अनुभव होता है और जितनाजितना ब्रह्मका अनुभव होता है तितनातितना नामरूपका त्याग होता है नामरूपके त्यागके अभ्यासकरके और ब्रह्मअनुभवके अभ्यासकरके ब्रह्मविद्याकी दृढताके हुयाँहुयाँ पुरुष जीवन्मुक्त होता है जीवन्मुक्तको शरीरविषे अभिमान नहीं होता जैसे प्रारब्ध है तैसे शरीर हो। अब ब्रह्मअभ्यासको श्रवणकर ब्रह्मका चिंतन करणा और ब्रह्मका कथन करणा और परस्पर ब्रह्मका बोधन करणा इसका नाम एकपरता है, तिसको ज्ञानवान् ब्रह्मअभ्यास कहते हैं, तिस करके द्वैतकी निवृत्ति होजाती है ॥

शंका–अनादिकालते लेकरके प्रतीत होता जो द्वैत है, तिसकी कदाचित् होनेवाला जो ब्रह्मअभ्यास तिसकरके निवृत्ति कैसे होवेगी?॥

उत्तर–बहुतकाल और निरंतर और सत्कार इन तीनोंकरके सेवन किया जो ब्रह्माभ्यास तिसकरके अनेककालभी द्वैतवासना निवृत्त होजाती है ॥

शंका–एकरूप ब्रह्मको अनेकप्रकारके जगत्की कारणता नहीं बनती ॥

उत्तर–मायासहित ब्रह्मको अनेकप्रकारके जगत्की कारणता बनजाती है जैसे मृत्तिकाकी शक्ति मिथ्यारूप घटादिक अनेक

पदर्थोंको उत्पन्न करदेती है तैसे ब्रह्मकी मायाशक्ति मिथ्यारूप अनेक प्रकारके जगत्को रचती है ॥

शंका-मृत्तिकाकी शक्ति सत्य है इसते वोह अनेक घटआदिकोंका कारण है और ब्रह्मकी शक्ति माया तो मिथ्या है ताते दृष्टांत दार्ष्टांतते विषम है ॥

उत्तर-जेकर यह दृष्टांत विषम है तो और दृष्टांतको श्रवण कर जैसे जीवकी निद्रा मिथ्यारूप अनेकप्रकारके स्वप्न जगत्को रचलेती है जैसे जीवविषे निद्रा शक्ति जो पदार्थ नहीं बनसक्ता तिसकोभी स्वप्नेविषे बनाय देती है तैसे ब्रह्मविषे जो यह मायाशक्ति है सो जगत्की उत्पत्तिस्थितिनाशका कारण है निद्राशक्ति जो बात न बनसके तिसको कैसे बनावती है ऐसा पूछे तो श्रवण कर स्वप्नेविषे पुरुष आकाशविषे आपना उडना देखता है और आपने शिरको काट्या हुया देखता है दो घडियोंविषे अनेकवर्षोंको देखता है और मोहेहुये पुत्रआदिकोंको देखता है यह युक्त है युक्त नहीं यह व्यवस्था स्वप्न विषे नहीं होती जिसजिस वस्तुको जैसे जैसे देखता है तैसे तैसे सो सो वस्तु युक्त है ऐसी महिमा जेकर निद्राशक्तिकी देखाती है जो न बने तिसकोभी बनाय देना तो मायाशक्तिकी महिमा मनकरके चिंतन करी नहीं जाती ॥ ताते मायाशक्ति जो न बने तिसको बनाय देती है इसविषे तेरेको आश्चर्य क्या है यत्नसे रहित निर्विकार ब्रह्मविषे माया अनेकप्रकारके विकारोंको कल्पती है जैसे निर्विकार सोयाहुया जो पुरुष प्रयत्नसे रहित है तिसविषे निद्रा अनेक प्रकारके स्वप्न प्रपंचको रचदेती है मायाने ब्रह्मविषे रचे जो पदार्थ हैं तिनोंको श्रवणकर आकाश, पवन, अग्नि, जल, पृथिवी, ब्रह्मांड चौदहों लोक प्राणी शिलासे आदिलेकरके विकारब्रह्मविषे मायाने रचे हैं ॥

शंका-जेकर संपूर्ण मायाकेही विकार है तो किसीको चेतनरूपता किसीको जडरूपता किस कारणते है ? ॥

उत्तर-जिसविषे चैतन्यका प्रतिबिंब पडता है सो चेतनरूप कहता है और जिसविषे चैतन्यका प्रतिबिंब नहीं पडता सो जड कहता है किसविषे चैतन्यका प्रतिबिंब नहीं पडता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर प्राणियोंके अंतःकरणविषे चैतन्यका प्रतिबिंब पडता है ॥

शंका-चेतन जड यह भेद चैतन्यरूप ब्रह्मकरके किया हुया क्यों न होवे ? ॥

उत्तर-ब्रह्मको सर्वोका उपादान कारण होनेकरके सभी पदार्थों विषे एक जैसा विद्यमान होनेते ब्रह्मकरके किया हुया जडचेतन भेद नहीं जिसते सच्चिदानंद लक्षण ब्रह्मजडोंविषे और चेतनोंविषे समान है और नामरूप भिन्न भिन्न हैं ब्रह्मविषे नामरूप कल्पित है जैसे वस्त्रविषे हाथी घोडा आदिकोंकी मूर्ते कल्पित होती हैं ब्रह्म सर्वकल्पनाका अधिष्ठान होनेते सर्वगत है सो ब्रह्म कैसे जानीता है ऐसा पूछे तो श्रवण कर कल्पितनाम रूपके त्याग कियाँहुयाँ नामरूपकी कल्पनाका अधिष्ठान सच्चिदानंद ब्रह्म जानीता है प्रतीत होनेते जो नामरूप है सो सत्य नहीं जैसे जलविषे उलटे आपने शरीरके देख्या हुयाँ भी तिसकी बुद्धिमानोंने उपेक्षा करी है और जलके किनारे स्थित जो अपना देह है तिसविषेही सत्यबुद्धि करी है और जैसे हजारों प्रकारके मनोराज्यके हुयाँहुयाँ भी तिसकी बुद्धिमानोंने उपेक्षा करी है अर्थ यह-तिसविषे सत्य बुद्धि नहीं करीती जैसे जिज्ञासुने नामरूपकी उपेक्षा कीनी चाहिये जैसे क्षणक्षणविषे मनोराज्य और और होते हैं तैसे जगत्‌के पदार्थोंका व्यवहारभी और२ पडा होता है जो जो बीतगया है सो सो फिर नहीं आवता जवानी अवस्थाविषे बाल्याअवस्था नहीं नजर आवती और जवानी बुढापे-

विषे नहीं नजर आवती और मऱ्या हुया पिता फिर नहीं जीवता और बीतगया जो दिन है फिर कभी नहीं आवता ताते जैसे मनोराज्य है तैसा जगत् है जैसे क्षणक्षणविषे मनोराज्य नाशको प्राप्त होता है तैसे क्षणक्षणविषे सर्वपदार्थ नाशको प्राप्त होते हैं ताते मनोराज्यका और जगत्का भेद नहीं इसते जगत्के भासमान हुयाँहुयाँ भी जिज्ञासु जगत्विषे सत्यबुद्धिका त्यागकरे ॥

शंका-नामरूपके त्याग कियाँ हुयाँ क्या लाभ होता है ? ॥

उत्तर-नामरूपके त्याग कियाँ हुयाँ ब्रह्मविषे बुद्धिस्थिरताको प्राप्त होती है ब्रह्मकी आत्मारूपताके चिंतनविषे विघ्नकोई नहीं रहता ॥

शंका-नामरूपके त्याग किया हुयाँ ज्ञानवान्का व्यवहार कैसे होवेगा ? ॥

उत्तर--जैसे नट कृत्रिमअवस्थाको करके संपूर्ण व्यवहार करता है अर्थ यह-नट राजाका स्वांग धरता है ॥ तिसको हृदयाविषे यह दृढनिश्चय होता है मैं राजा नहीं पर वाणीकरके राजाओंके लायक व्यवहार करता है इसको फाँसी दे देवो यह खूनी है इसको अमुक मुलंकका हमने शिरोपाय दिया है इसते आदिलेकरके तैसे ज्ञानवान्भी नामरूपको हृदयविषे मिथ्याजानकरके व्यवहारको किया करता है ॥

शंका--ज्ञानीका व्यवहार जेकर मानोंगे तो रागद्वेषरूप विकारोंकी प्राप्ति ज्ञानीको कैसे होवेगी ॥

उत्तर-बुद्धिके व्यवहारकरयाँ हुयाँ भी बुद्धिका साक्षी आत्मा निर्विकार है सो मेरा स्वरूप है यह ज्ञानवान्का निश्चय होता है ताते ज्ञानवान्को रागद्वेषरूप विकारकी प्राप्ति नहीं होती जैसे बडेवेगकरके वेगकी जो नदी है तिसके नीचे स्थित जो बडी भारी

शिला है सो चलायमान नहीं होती तैसे नामरूपके अन्यथा भावको प्राप्त हुयाँ भी कूटस्थ ब्रह्म अनन्य भावको नहीं प्राप्त होता ॥

शंका–अखंडब्रह्मविषे ब्रह्मसे भिन्नस्वभाववाले जगत्‌की प्रतीति कैसे होती है ? ॥

उत्तर–जैसे छिद्रसे रहित दर्पणविषे बडे विस्तारसहित जगत् प्रतीत होता है तैसे सत्य चैतन्य घनरूप ब्रह्मविषे अनेकप्रकारके विस्तारोंसहित आकाशरूप विस्तारवाला यह जगत् प्रतीत होताहै ॥

शंका–अदृश्यब्रह्मविषे कैसे जगत्‌की प्रतीति होती है ? ॥

उत्तर–सच्चिदानंदकी प्रथम प्रतीति होती है पीछे जगत्‌की प्रतीति होती है जैसे दर्पणको देखनेसे विना दर्पणविषे प्रतीबिंब नहीं प्रतीत होता तैसे सच्चिदानंदके ज्ञानसे विना नामरूपका ज्ञान नहीं होता ॥

शंका–नामरूपको भी भासमान होनेते निर्विषय ब्रह्मकी प्रतीति कैसे होती है ? ॥

उत्तर–सच्चिदानंदरूप ब्रह्मविषे [नामरूप कल्पित है तिसविषे सच्चिदानंदमात्रको प्रथम ग्रहण करके तितने मात्रकरकेही बुद्धिको रोकलेय और नामरूपविषे बुद्धिको न लगावे ऐसे किया हुयाँहुयाँ जगत्‌से रहित् सच्चिदानंदलक्षण ब्रह्मकी प्रतीति होती है इस अद्वैतानंदविषे जन चिरपर्यंत विश्रामको करे ब्रह्मानंदनाम प्रकरणविषे तीसरा अध्याय कथन किया तिसकानाम अद्वैतानंद है जिस कारणते इसविषे जगत्‌की मिथ्यारूपताके विचारकरके अद्वैतब्रह्म जानीता है ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां त्रयोदशं ब्रह्मानन्देअद्वैतानन्द–प्रकरणं समाप्तम् ॥ १३ ॥

अथ ब्रह्मानन्दे विद्यानन्द-प्रकरणम् १४.

ॐ सद्गुरुप्रसाद॥ अब विद्यानंद नाम चौथे आनंदका आरंभ करते हैं सो आदिसे पंचदशीका चौदहवाँ प्रकरण है योगकरके और आत्मविवेक करके और द्वैतके मिथ्यारूपताके विचार करके ब्रह्मानंदके अनुभवकरणेवाले पुरुषको प्राप्त होता जो विद्यानंद है तिसका अब निरूपण करते हैं विद्यानंद विषयानंदकी न्याईं बुद्धिकी वृत्तिरूप है सो विद्यानंद चार प्रकारका है-दुःखाभाव १ सर्वकामावाप्ति २ कृतकृत्योहं ३ प्राप्तप्राप्योहं ४ इसतरह चार प्रकारका कथन किया है दुःखाभाव दोप्रकारका है-दुःखको दोप्रकारका होनेते एक इस लोकविषे होनेवाला दुःख, दूसरा परलोकविषे होनेवाला दुःख लोकके दुःखके अभावको बृहदारण्यउपनिषद्की श्रुति कथन करती भई है तिसके अर्थको श्रवणकर जेकर अनेकजन्मोंके पुण्यके प्रभावकरके यह जीव आत्माको असंगकूटस्थ मैं हूं ऐसे जाने तो किसकी इच्छाकरता हुया हुया और किसकी कामनाकेवास्ते शरीरके तापोंकरके तापको प्राप्त होवे अर्थ यह जो तापको फिर नहीं प्राप्त होता आत्मा दोप्रकारका है जीवात्मा और परमात्मा अब जीवात्माका स्वरूप श्रवणकर स्थूलसूक्ष्मकारण इन तीनोंशरीरोंकेसाथ तादात्म्य भ्रमके हुयाँहुयाँ चैतन्य भोक्ता होता है सो भोक्ता जीव कथन करता हैं अब परमात्माके स्वरूपको श्रवण कर परमात्मा सच्चिदानंदरूप है सो नामरूपकी कल्पनाका अधिष्ठान होनेकरके नामरूपकेसाथ तादात्म्यको प्राप्त होकरके भोग्यरूप होजाता है और जब तिन शरीरोंते चैतन्यका विवेक करता है तब चैतन्यके बीचसे भोक्तारूपता दूर होजाती है और जब चैतन्यका नामरूपते विवेक करता है तब चैतन्यके बीचसे भोग्यरूपता दूरहोजातीहै जितनाकालपर्यंत विवेक नहीं

उत्पन्न होता तितनाकालपर्यंत भोक्ता और भोग्य इन दोनोंको सत्य मानकरके भोक्ताकेवास्ते भोगोंकी इच्छा करता हुयाहुया शरीरोंके तापोंकरके तापोंको प्राप्त होता है, वास्तवते आत्माविषे ताप कोई नहीं, तीनों शरीरोंविषे ताप है किसशरीरविषे कौनताप है ऐसा पूछे तो प्रथम स्थूल शरीरविषे तापोंको श्रवणकर कफ वात पित्त इन तीनों धातुओंके बद्ध गाढा हुयाँहुयाँ उत्पन्न होते जो अनेकप्रकारके रोग हैं सो स्थूल शरीरके ताप हैं अब सूक्ष्मशरीरके तापोंको श्रवण कर कामक्रोधादिक सूक्ष्मशरीरके ताप हैं सूक्ष्मशरीरके तापोंका और स्थूलशरीरके तापोंका बीजकारण शरीरविषे ताप है अद्वैतानंद नाम तीसरे अध्यायविषे कथन किया जो प्रकार तिसकरके मायाके कार्यनामरूपते भिन्न सच्चिदानंदरूप परमात्माके जान्याहुया संपूर्ण प्रपंच मिथ्या होजाताहै ऐसे जाननेवाला विवेकी किसभोगकी इच्छा करे और आत्मानंदनाम दूसरे अध्यायविषे कथन किया जो प्रकार तिसकरके जीव आत्माके स्वरूपको असंग कूटस्थ चैतन्यरूपके निश्चय किया हुयाँ कामनाकरणेवाले भोक्ताका अभाव निश्चय होता है ताते तापोंका अभाव होजाता है अब परलोकविषे होनेवाले तापोंको श्रवणकर पुण्यपाप इन दोनोंकी चिंता परलोकका दुःख है सो ज्ञानवान्को नहीं तपावती यह वार्ता प्रथमाध्यायविषे कहआये हैं ॥

शंका-ज्ञानवान्को आपने प्रारब्धकर्मकी चिंता मत होवे पर आगामिकर्मकी चिंता तो होती है ॥

उत्तर-जैसे कमलपत्रविषे जलका स्पर्श नहीं होता तैसे ज्ञानकी प्राप्तिसे अनंतर ज्ञानवान्विषे आगामि कर्मोंका स्पर्श नहीं होता ताते ज्ञानवान्को आगामिकर्मोंकी चिंता नहीं होती और ज्ञानवान्को संचितकर्मोंकी भी चिंता नहीं होती जिसते श्रुति ऐसे कथन करती है जैसे तीलिदारु अग्निविषे रख्याहुया दग्ध होजाता है तैसे ज्ञानवान्के

संपूर्ण संचित कर्म क्षणमात्रमें दग्ध होजाते हैं इस अर्थविषे गीतावचनभी प्रमाण है जैसे प्रचंडअग्नि लकडियोंको भस्म करदेती है तैसे हे अर्जुन! ज्ञानरूप अग्नि संपूर्णकर्मोंको भस्म करदेती है जिसपुरुषका आत्मा अहंकारकेसाथ तादात्म्याध्यासको नहीं प्राप्त हुया और जिसकी बुद्धि संशयविपर्ययको नहीं प्राप्त होती सो पुरुष इन संपूर्णलोकोंको मारदेवे तोभी पापको नहीं प्राप्त होता जिसते तिसको यह निश्चय होता है मैं किसीको नहीं मारया इसी अर्थविषे कौशीतकी, उपनिषद्की श्रुति प्रमाण है तिसका यह अर्थ है-ज्ञानवान्को माताके मारणेकरके, पिताके मारणेकरके, स्वर्णके चुरावणेकरके वेदवेत्ताब्राह्मणके मारणेकरके, अथवा गर्भहत्याके करणेकरके, पाप प्राप्त नहीं होता जिसते ज्ञानवान्को शरीरादिकोंविषे अहंबुद्धि नहीं होती शरीरादिकोंविषे ज्ञानवान्को अहंबुद्धि होती नहीं यह कैसे जान्या ऐसा पूछे तो श्रवण कर जिसते पापकरणेकी इच्छावाले ज्ञानवान्का मुख कुम्हलावता नहीं कोईभी पापज्ञानवान्के मोक्षको नहीं नाशकरता इतनेकरके दुःखाभावरूप विद्यानंद कथन किया अब सर्वकामाप्तिरूप विद्यानंदको श्रवणकर जैसे ज्ञानवान्को दुःखाभाव होता है तैसे ज्ञानवान्को सर्वकामाप्ति होती है ऐसा श्रुतिने कथन किया है ज्ञानवान्को सर्वकामाप्तिविषे ऐतरेयश्रुति प्रमाण है तिसके अर्थको श्रवणकर ज्ञानवान् संपूर्ण कामनाको प्राप्त होकरके जन्ममरणसे रहित होता भया और छांदोग्यउपनिषद्की श्रुतिविषे यह कथन किया है ज्ञानवान् हँसता हुआ भोजन करता हुआ और जातिके संबंधिके साथ क्रीडा करता हुआ और स्त्रियोंके साथ रमण करता हुआ और हाथी घोडे पीनसआदिकोंकी असवारियोंकरके रमण करताहुआ जिनोंके समीपवर्ति शरीरको अहंरूपकरके स्मरण नहीं करता और प्रारब्ध कर्मकरके प्राण इसको जिवावता है तैत्तिरीयउप-

निषद्की श्रुतिभी इसविषे प्रमाण है ज्ञानवान् संपूर्णकामनाओंको इकट्ठाही प्राप्त होजाता है ॥

शंका-ज्ञानवान्को कर्मोंके फलका भोग अंगीकार करया हुयाँ ज्ञानवान्को जन्मभी होवेगा ॥

उत्तर-ज्ञानवान्को कर्मोंकरके जन्मकी प्राप्ति नहीं होती, जिसते ज्ञान करके संचितकर्मोंका नाश होगया है तिसते ज्ञानवान् अज्ञानीकी न्याई जन्मको नहीं प्राप्त होता,ताते ज्ञानवान् इकट्ठाही संपूर्णभोगोंको प्राप्त होता है चक्रवर्तीसे लेकरके हिरण्यगर्भपर्यंत संपूर्णभोगोंको ज्ञानवान् इकट्ठा प्राप्त होता है यह वार्ता तैत्तिरीयउपनिषद्विषे और बृहदारण्यकोपनिषद्विषे कथन करी है सो श्रवण कर यौवन अवस्थावाला और सुंदररूपवाला और संपूर्ण विद्यावाला और संपूर्ण रोगोंते रहित दृढ चित्तवाला-हाथी, घोडा, रथ, पियादा इस चार प्रकारकी सेनावाला धन करके और अन्नकरके पूर्ण संपूर्णपृथिवीका राजा संपूर्ण मनुष्योंके भोगोंकरके संयुक्त तृप्तिको प्राप्त हुआ हुआ चक्रवर्तीराजा जिस आनंदको प्राप्त होता है तिसआनंदको ब्रह्मवेत्ता भोक्ता है चक्रवर्तीराजासे आदिलेकरके हिरण्यगर्भपर्यंत जीवोंविषे स्थित जो आनंद है तिसका ज्ञानवान् कैसे भोक्ता है ऐसा पूछे तो श्रवणकर ज्ञानवानने जान्या जो है आत्मरूपता करके ब्रह्म तिस ब्रह्मका संपूर्ण आनंदोंको लेश होनेते ज्ञानवान्को संपूर्ण आनंदोंकी प्राप्ति बनती है ॥

शंका-चक्रवर्ती और ब्रह्मवेत्ता इन दोनोंकेविषे प्राप्ति सम नहीं इसते चक्रवर्ती और ज्ञानवान् इन दोनोंका आनंदसम कैसे कहतेहो॥

उत्तर-ज्ञानवान् और चक्रवर्तीको मनुष्योंके भोगोंविषे इच्छा नहीं होती इस समताते आनंदकी समता दोनोंको है परंतु इतना

भेद है कि, चक्रवर्तीराजाको भोगोंकी प्राप्तिते भोगोंकी इच्छा नहीं होती और ज्ञानवान्‌को विवेकते भोगोंकी इच्छा नहीं होती ज्ञानवान् वेदवेत्ता होता है तिसकरके वेदोंकरके और शास्त्रोंकरके भोगोंके दोषोंको देखता है राजा बृहद्रथ मैत्रायणी उपनिषद्‌विषे विषयोंके दोषोंको कथा बाधकरके कथन करता भया है अनेकप्रकारके देहके दोषोंको कथन करता भया अनेकप्रकारके चित्तके दोषोंको कथन करता भया और अनेकप्रकारके भोगोंके दोषोंको कथन करता भया तिनदोषोंको विवेकवाले पुरुषको भोगोंकी कामना नहीं होती जैसे वेदवेत्ता ब्राह्मणको कुत्ते करके वमनकीनी हुई क्षीरविषे कामना नहीं होती तैसे विवेकीको भोगोंकी कामना नहीं होती चक्रवर्ती राजा और ज्ञानवान् इन दोनोंको मनुष्योंके भोगोंविषे कामना नहीं होती इस वार्ताके सम हुयाँहुयाँ भी ज्ञानवान्‌की चक्रवर्ती राजाते कुछेक अधिकता है सो श्रवण कर चक्रवर्तीराजाको अनेक प्रकारकी राज-सामग्री संचनेविषे दुःख है और भावी तिसके नाशते अतिभय होता है यह दो दोष चक्रवर्तीराजाके सुखविषे होते हैं और ज्ञानवान्‌के सुखविषे नहीं होते ताते ज्ञानवान्‌का सुख जो है सो चक्रवर्ती राजाके सुखते अधिक है और एक चक्रवर्तीराजाते ज्ञानवान्‌की अधिकता है तिसको भी श्रवण कर चक्रवर्तीराजाको गंधार्वानंदकी इच्छा होती है और ज्ञानवान्‌को गंधर्वानंदकी इच्छा नहीं होती ताते ज्ञानवान्‌का आनंद चक्रवर्तीराजाके आनंदते अधिक है गंधर्वानंद दो प्रकारका है जिसते गंधर्व दो प्रकारके हैं एक मनुष्यगंधर्व है दूसरा देवगंधर्व है मनुष्यगंधर्व किसको कहते हैं और देवगंधर्व किसको कहते हैं ऐसा पूछे तो श्रवणकर इसकल्पविषे प्रथम जो मनुष्य होवे पीछे पुराणोंके फलवशते गंधर्वरूपताको प्राप्त होवे सो मनुष्य गंधर्व है और जो पूर्वकल्पविषे कीने जो पुण्य हैं उनके प्रभावते

कल्पके आदिविषेही गंधर्वरूपताको प्राप्त होवे सो देवगंधर्व है अग्निष्वात्ताते आदिलेकरके लोकविषे पितर हैं सो पितरलोकविषे चिरकालपर्य्यंत वासकरते हैं और देवताओंका आनंद तीन प्रकारका है जिसते देवता तीन प्रकारके हैं एक आजानजदेवता हैं. दूसरे कर्मदेवता हैं तीसरे देवते हैं ॥ कल्पके आदिविषे जो देवता भये हैं सो आजानज देवता हैं और इसकल्पविषे अश्वमेधआदि यज्ञरूपकर्मोंको करके महत्पदको प्राप्त होकरके आजानजदेवताओंकरके जो पूजनेयोग्य है सो कर्मदेव है और यम और अग्निसे आदिलेकरके देवता हैं इंद्र और बृहस्पति प्रसिद्ध हैं और श्रुतिविषे जो प्रजापति शब्द है तिसका अर्थ विराट् है और ब्रह्माशब्दका अर्थ हिरण्यगर्भ ॥ चक्रवर्ती १ मनुष्यगंधर्वः २ देवगंधर्वः ३ पितरः ४ आजानजदेवता ५ कर्मदेवता ६ देवता७ इंद्रः ८ बृहस्पतिः ९ प्रजापतिः १० ब्रह्मा ११ इन ग्यारहोंके आनंदते ब्रह्मवेत्ताका आनंद अधिक है जिसते इन ग्यारहोंको अगलेअगले आनंदकी कामना होती है प्रथमप्रथमके आनंदसे अगलेअगलेका आनंद सौसौ गुणाअधिक है और ब्रह्मवेत्ताका जो आनंद है सो मन वाणीते परे है ताते चक्रवर्तीते आदिलेकरके हिरण्यगर्भ पर्य्यंतोंके आनंदते आत्मानंद परेहै चक्रवर्तीते आदिलेकरके हिरण्यगर्भ पर्य्यंतोंके जो आनंद हैं सो संपूर्ण ज्ञानवान्‌विषे वर्तते हैं जिसते ज्ञानवान्‌को तिन आनंदोंविषे इच्छा हैनहीं इसकानाम सर्वकामाप्ति है अथवा जैसे आपने शरीरविषे आनंदोंका बुद्धिकी वृत्तिका साक्षी चैतन्यरूपताकरके भोगोंको मैं अनुभव करता हूं तैसे सर्वशरीरोंविषे आनंदाकार बुद्धिकी वृत्तिका साक्षी चैतन्यरूपताकरके मैं भोगोंका अनुभव कतरा हूं यह निश्चय ज्ञानवान्‌का होता है ॥ इसकरके ज्ञानवान्‌को सर्वकामाप्ति होती है ॥

शंका–कथन किया जो प्रकार तिसकरके अज्ञानीकोभी सर्व

आनंदोंकी प्राप्ति है जिसते अज्ञानीभी साक्षी चैतन्यरूपताकरके सर्वदेहों विषे आनंदके अनुभवको करता है ॥

उत्तर–अज्ञानीको सर्वआनंद प्राप्त नहीं होते जिसते सर्व शरीरोंविषे सर्वबुद्धियोंका साक्षी मैं हूं यह ज्ञान अज्ञानीको नहीं होता॥ इसी कारणते तैत्तिरीयउपनिषद्‌विषे यह कथन किया है जो पुरुष यह जानता है कि, सर्वशरीरोंविषे सर्व बुद्धियोंका साक्षी चिदात्मा मैं हूं सो संपूर्णकामनाको प्राप्त होता है ॥ अथवा ज्ञानवान् अपनी सर्वात्मताको सदा सामकरके गायन करता है ॥ तिस सामका अर्थ यह है मैंही अन्नहूं और मैंही सर्वशरीरोंविषे स्थित होकरके अन्नको भोक्ताहूं इसका नाम सर्वकामाप्ति है ॥ इतने ग्रंथकरके दुःखाभाव और सर्वकामाप्ति यह दोप्रकारका विद्यानंद निरूपण किया ॥ तीसरा कृतकृत्यतारूप विद्यानंद है और चौथा प्राप्तप्राप्यतारूप विद्यानंद है सो दोनों तृप्तिदीपविषे भलीप्रकारकरके हमने कथन किये हैं ताते तृप्तिदीपके जो श्लोक हैं सोई ईहाँ ब्रह्मानंदके अनुभवके फलके मननवास्ते विचारलेना ताते उन श्लोकोंको श्रवणकर ॥ इस लोकके सुखोंके समूहकी सिद्धिके वास्ते और परलोकके सुखोंके समूहकी सिद्धिकेवास्ते और मोक्षकी सिद्धिके वास्ते अनेकप्रकारके कार्य करणेयोग्य–खेती, वणिज, यज्ञ, दान, व्रत, श्रवण, मनन, निदिध्यासनरूप अज्ञान कालविषे होते भये सो संपूर्ण अब ज्ञानकी प्राप्ति हुयाँ किये गये ॥ अर्थ यह–इस लोकके और परलोकके सुखोंकेवास्ते कर्तव्य तितनाकाल देह जितनाकाल तिनोंकी कामना है ॥ अब ज्ञानके प्राप्त हुयाँहुयाँ कामना सर्व नष्ट होगई है जिसते जगद्विषे सत्यबुद्धि नहीं रही और मोक्षकेवास्ते श्रवण आदिकोंकी कर्तव्यता तितना काल है जितना काल आपको बंधनोंवाला जानीता है ॥ अब ज्ञानके प्राप्त भया बंधन नहीं प्रतीत होता ताते ज्ञानवान्‌को मोक्षवास्ते भी कर्तव्य हैनहीं तिसते इस कृतकृत्य-

ताको प्रतियोगियोंके चिंतनसहित चिंतन करता हुयाँ ज्ञानवान् इसप्रकारके सदा तृप्तिको प्राप्त होता है ॥ अज्ञानी जो दुःखी है सो पुत्रादिकोंकी इच्छाकरके जन्ममरणको प्राप्त होवे ॥ परमानंद जो पूर्ण मैंहूं सो किसकी इच्छाकरके जन्ममरणको प्राप्त होऊं और परलोकके जानेकी इच्छावाला यज्ञादिकर्मोंको करके सर्वलोकोंका आत्मा जो मैंहूं सो किसकारणते किसप्रकार किसकर्मको करूं और जो आपनेको क्रियावाला मानता है सो वेदों और शास्त्रोंके उपदेशको करो और पढावो और मेरा तो उपदेश करणेमें और पढावनेमें अधिकार नहीं जिसते मैं क्रियाते रहित हूं ॥ सोना और भोजनकरणा स्नान और शौच इन दोनोंमें इच्छा करता हूं और इनोंको करता हूं सोनेआदिकोंको शरीरविषे देखनेवाले जीव जेकर सोने आदिकोंको मेरेविषे कल्पते हैं तो उनकी कल्पनाकरके मेरेको हानि लाभ कछु नहीं जैसे वृत्तियोंके समूहविष बाँदरोंने अग्निकल्पलीनी तो तिसकल्पी हुई अग्निकरके रात्रियाँ दग्ध नहीं होजाती तैसे निरंतर जीवोंकरके मेरेविषे कल्पेहुये जो संसारके धर्म हैं तिनोंकरके मैं संसारी नहीं हो जाता ॥ और जो तत्त्वके नहीं जाननेवाले सो श्रवणकोकरे–परतत्त्वके जाननेवाला मैं श्रवणको किसकारणते करूं ॥ संशय युक्त पुरुष मनन करे और संशयोंते रहित मैं मननको किसवास्ते करूं और विपर्य्ययको प्राप्त हुयाँहुयाँ है जो सो निदिध्यासनको करे ॥ और विपर्य्ययके अभाव हुयाँहुयाँ फिर ध्यानकरणे योग्य नहीं ॥ देहविषे आत्मबुद्धिरूप विपर्य्ययको मैं कदाचित्भी नहीं प्राप्त होता मैं मनुष्यही हूं इसते आदिलेकरके व्यवहारविपर्य्ययते विना अनादि कालकी अभ्यासको प्राप्त हुईहुई जो वासना है तिसकरके बनजाता है ॥ तिस व्यवहारका प्रारब्धके नाश हुयाँहुयाँ नाश होता है॥ जितनाकालपर्य्यंत प्रारब्धका नाश नहीं होता तितनाकालपर्य्यंत मैं मनुष्यहूं ॥ इसते आदिलेकरके

व्यवहारका नाश नहीं होता हजारों ध्यानों करके भी एकध्यानकी क्या कहना है॥ व्यवहारकी विरलता जिसको वांछित है सो तूं ध्यान कोकर॥और मैं तो व्यवहारको विरोधी नहीं देखता ताते मैं ध्यान किसकारणते करूं॥और मेरेको जिसकारणते विक्षेप हैनहीं तिसकारणते मेरेको समाधिभी है नहीं॥ विक्षेप अथवा समाधि विकारीमनविषे होती है॥नित्यानुभवरूप जो मैं हूं उस मुझते अनुभव भिन्न नहीं जो करणेयोग्य है सो मैं करलिया और जो प्राप्त होने योग्य सो मेरेको प्राप्त होगया यह निश्चय है॥ अकर्ता अलेप जो मैंहूं उसका प्रारब्धकर्मकरके व्यवहार भावें लोकोंके अनुसार होवे, भावें शास्त्रके अनुसार होवे, भावें लोकशास्त्रते विरुद्ध होवे,अथवा कृतकृत्य जो मैं हूं सो लोकोंके कल्याणकी कामनाकरके शास्त्रकथित मार्गकरके वर्तों तिसविषे मेरी क्या हानि है॥ देवताओंका पूजन, स्नान, शौच,भोजनआदिकोंविषे शरीर वर्तो और वाणी जो है सो ओंकारका जप करो॥ भावें उपनिषदोंको पढे और बुद्धि विष्णुका ध्यानकरो भावें ब्रह्मानंदविषे लीन होवो मैं साक्षिरूपहूं न कुछ करता हूं न करवावताहूं कृतकृत्यताकरके तृप्त हुयाहुया और प्राप्त प्राप्यताकरके तृप्त हुयाहुया ज्ञानवान् अपने मनकरके सदा ऐसे मानता है ‘धन्योहं’ ‘धन्योहं’ नित्यही मैं अपनेस्वरूपको यत्नसे विनाअनुभव करताहूं॥ धन्यहूंमैं जिसते ब्रह्मानंद मेरेको स्पष्ट भासता है धन्यहूं मैं धन्यहूं मैं जिसते संसारदुःखको मैं अज्ञ नहींदेखता धन्यहूं मैं धन्यहूं मैं जिसते मेरा अज्ञान कहाँ भागगया है धन्यहूं मैं धन्यहूं मैं जिसते मेरेको करणेयोग्य कुछ नहीं रहा॥ धन्यहूं मैं धन्यहूं मैं जिसते प्राप्तहोने योग्य सब कुछ मेरेको प्राप्त होगया है॥ धन्यहूं मैं धन्यहूं मैं जिसते मेरी तृप्तिका कोई जगत् विषे दृष्टांत हैनहीं॥ धन्यहूं मैं धन्यहूं मैं धन्यहूं मैं धन्यहूं धन्यहूं वारंवार धन्यहूं मैं बडा पुण्यवान् हैं बडा पुण्यवान् हैं जो फल प्राप्त होता

सो अच्छीतरह प्राप्त भया है मेरेको इसपुण्यकी प्राप्तिते हमभी आश्चर्यरूप हैं, हमभी आश्चर्यरूप हैं शास्त्र आश्चर्यरूप शास्त्रआश्चर्यरूप हैं, गुरु आश्चर्यरूप हैं, गुरु आश्चर्यरूप हैं ज्ञान आश्चर्यरूप हैं ज्ञान आश्चर्यरूप है ज्ञानते प्राप्तभया जो सुख सो आश्चर्यरूप है, आश्चर्य रूप है ब्रह्मानंदनाम प्रकरणाविषे चतुर्थाध्याय कथन किया तिसका नाम विद्यानंद है विद्यानंदकी उत्पत्तिपर्यंत अभ्यास करणा ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां
चतुर्दशं ब्रह्मानन्देविद्यानन्द-प्रकरणं समाप्तम् ॥ १४ ॥

अथ ब्रह्मानन्देविषयानन्दप्रकरणम् १५.

ॐसद्गुरुप्रसाद॥अब ब्रह्मानंदविषे विषयानंदनाम पञ्चदश प्रकरण निरूपण करते हैं सो पंचदशीका आदिसे लेकरके पंचदश प्रकरण हैं विषयानंद ब्रह्मानंका अंश है ॥

शंका-विषयानंद निरूपणकरणा मोक्षशास्त्रविषे अयुक्त है जिसते विषयानंद सर्वलोकोंविषे प्रसिद्ध है ॥

उत्तर-विषयानंदको लोकप्रसिद्ध हुयाँहुयाँ भी ब्रह्मानंदका एक अंश होनेकरके ब्रह्मानंद ज्ञानविषे सहायक है ताते मोक्षशास्त्रविषे विषयानंदका निरूपण करणा चाहता है ब्रह्मानंदकी प्राप्ति विषयानंद द्वारा है जैसे राजाके मिलापविषे मंत्रीके मिलाप द्वारा है ? ॥

शंका-विषयानंद ब्रह्मानंदका एकदेशहै इसविषे क्या प्रमाण है ॥

उत्तर-विषयानंद ब्रह्मानंदका एकदेश है इसविषे तैत्तिरीयोपनिषद्की श्रुति प्रमाण है ताते तिसके अर्थको श्रवणकर-आत्माका स्वरूप जो परमानंद है अखंड एकरसरूप तिसके लेशको ग्रहणकरके

और ब्रह्मासे आदिलेकरके संपूर्ण भूत जीवते हैं विषयानंद ब्रह्मानंदका लेश है इसअर्थके दिखलावनेवास्ते विषयानंदका उपाधिरूप जो अंतः-करणकी वृत्तियाँ हैं तिनोंके भेदको गुरुशिष्यके ताईं कथन करते हैं मनकी वृत्तियाँ तीन प्रकारकी हैं-शांत १ घोर २ मूढ ३ शांतवृत्ति-याँ सत्वगुणका कार्य है और घोरवृत्तियां रजोगुणका कार्य है और मूढ वृत्तियाँ तमोगुणका कार्य है वैराग्य, क्षमा, उदारता इसते आदि लेकरके शांतवृत्तियाँ हैं ॥ तृष्णा, स्नेह, राग, लोभ, इसतेआदिले-करके घोरवृत्तियाँ हैं मोह, भय इसते आदिलेकरके मूढवृत्तियाँ हैं इन तीनप्रकारोंकी वृत्तियोंविषे ब्रह्मकी चैतन्यस्वभावता प्रतिबिंबको प्राप्त होती है और शांतवृत्तियोंविषे ब्रह्मकी सत्ताचेतनता आनंद तीनों प्रतिबिंबभावको प्राप्त होते हैं इसविषे श्रुति प्रमाण है-जैसाजैसा वृत्ति-कारूप होता है तैसे तैसे ब्रह्मप्रतिबिंबभावको प्राप्तहोता है अर्थ यह-राजसी, तामसी, वृत्तियोंविषे ब्रह्मका चैतन्यस्वभाव प्रतिबिंबभावको प्राप्त होता है और शांतवृत्तियोंविषे आनंदभी प्रतिबिंबभावको प्राप्त होता है और व्यासजीनेभी सूत्रविषे यह कथन किया है आत्माको सूर्यादिकोंकी उपमा है अर्थ यह-जैसे जलके कंपनेकरके सूर्यकंपता प्रतीत होती है और जलके स्थिरहोनेते सूर्य स्थिर प्रतीत होता है तैसे वृत्तियोंके सात्विकहोनेकरके आत्मा सात्विक प्रतीत होता है और वृत्तियोंकी मलिनताते आत्मा मलीन प्रतीत होता है एकही संपूर्ण भूतोंका आत्मा एकरूप करके भूतभूतविषे स्थित हुयाँहुयाँ बहुत रूपोंकरके प्रतीत होता है जैसे जलविषे चंद्रमा तात्पर्य यह शुद्धजल विषे प्रतिबिंबको प्राप्त हुयाँ चंद्रमा स्पष्ट प्रतीत होता है और मलिन जलविषे प्रतिबिंबको प्राप्त हुयाँहुयाँ चंद्रमा स्पष्ट नहीं प्रतीत होता तैसे सात्विक वृत्तियोंविषे प्रतिबिंबभावको प्राप्त हुयाँहुयाँ ब्रह्म स्पष्ट प्रतीत होता है और रजोतमोरूपमलिनवृत्तियोंविषे प्रतिबिंबभावको

प्राप्त हुआहुआ ब्रह्म स्पष्ट नहीं प्रतीत होता घोरमूढवृत्तियोंविषे ब्रह्मकी आनंदरूपता नहीं प्रतीति होती और घोरमूढवृत्तियोंविषे काष्ठ पाषाण आदिकोंकी अपेक्षाकरके कुछेक निर्मलता है तिसते घोरमूढ वृत्तियोंविषे ब्रह्मकी चैतन्यरूपता प्रतिबिंबभावको प्राप्त होती है ॥

शंका-चंद्रमाके प्रतिबिंबकी उपाधि जो जल है तिसको, दोप्रकारका होनेते अंशकी प्रतीति बनजाती है और ब्रह्मके प्रतिबिंबकी उपाधि जो अंतःकरण है तिसको एकरूप होनेते तिसविषे ब्रह्मके एकअंशका भान यह वार्ता अयुक्त है ॥

उत्तर-जेकर इस दृष्टांतविषे तेरा मन नहीं तोषको प्राप्त होता तो और दृष्टांत श्रवणकर जैसे निर्मलजलविषे अग्निकी उष्णता प्राप्त होती है और प्रकाश नहीं प्राप्त होता तैसे घोरमूढवृत्तियोंविषे ब्रह्मकी चैतन्यता प्रतीत होती है और आनंद नहीं प्रतीत होता और शांत वृत्तियोंविषे ब्रह्मकी चैतन्यरूपता और आनंद दोनों प्रतीत होते हैं इस विषे दृष्टांत श्रवणकर जैसे काष्ठविषे अग्निकी उष्णता और प्रकाश दोनों प्रकट होते हैं तैसे शांतवृत्तियोंविषे सुख और चैतन्य दोनों प्रकट होते हैं ॥

शंका-घोरमूढवृत्तियोंविषे चैतन्यकी प्रकटता होती है और शांतवृत्तियोंविषे सुख और चैतन्य दोनोंकी प्रकटता होती है यह व्यवस्था तुमने कैसे कीनी है ? ॥

उत्तर-वस्तुके स्वभावका आश्रयकरके ऐसी यह व्यवस्था कीनी है सो व्यवस्था अग्निकी उष्णता और प्रकाशविषे और ब्रह्मकी चेतनता और सुखविषे समान है अर्थ यह--अग्निकी उष्णताका स्वभाव यही है जो जलविषे प्राप्त होता और प्रकाशविषे यह स्वभाव है जो जलविषे न प्राप्त होता और जलविषे यह स्वभाव है जो अग्निकी

उष्णताको ग्रहणकरणा और प्रकाशको न ग्रहणकरणा और काष्ठका यही स्वभाव है जो अग्निकी उष्णता और प्रकाश दोनोंको ग्रहणकरणा तैसे घोरमूढवृत्तियोंका यही स्वभाव है जो ब्रह्मकी चेतनताको ग्रहणकरणा और आनंदको न ग्रहणकरणा और शांतवृत्तियोंका यही स्वभावहै जो ब्रह्मकी चेतनता और आनंद दोनोंको ग्रहणकरणा इस वार्ताके निश्चयका कारण अनुभव है अर्थ यह–अनुभवकरके जलविषे अग्निकी उष्णताही प्रतीत होती है प्रकाश नहीं प्रतीत होता और काष्ठविषे अनुभवकरके अग्निकी उष्णता और प्रकाश दोनों प्रतीत होते हैं घोर वृत्तियाँ और मूढवृत्तियोंविषे ब्रह्मकी चैतन्यरूपताका अनुभव होता है और आनंदका अनुभव नहीं होता और शांतवृत्तियांविषे ब्रह्मकी चैतन्यरूपता और सुख दोनोंका अनुभव होताहैशांतवृत्तियोंविषे भीकिसी एक वृत्तिविषे सुख अधिक देखीता है और रजोगुणका कार्य्य गृहक्षेत्र-आदिरूपविषयोंविषे कामनारूप वृत्ति जब होती है तब तिसवृत्तिविषे सुख नहीं होता, जिसते कामना घोररूप है कामनाके हुयाँहुयाँ सुख विरोधि दुःख होता है और सुखको कामनारूप वृत्तिविषे अनुभव नहीं करता और कामनारूप वृत्तिविषे सुख रहता भी नहीं और दुःख तिसविषे रहता है और सुखकी न सिद्धिके हुयाँहुयाँ दुःख बंधजाता है और सुखके प्रतिबद्ध हुयाँहुयाँ क्रोधहोता है अथवा द्वेषसुखका प्रतिबंधक है और उस प्रतिबंधके दूर करणेविषे जेकर समर्थ न होवे जब मनविषे चिंता होती है तब सुख नहींहोता चिंताको तमोगुणका कार्य्य होनेते क्रोध द्वेष चिंता इनोंके हुयाँहुयाँ बडा दुःख होता है सुखकी शंका भी नहीं होती और जिस पदार्थकी पुरुषको कामना होती है तिसपदार्थके लाभ हुयाँहुयाँ हर्षरूपवृत्ति उदय होती है सो हर्षरूपवृत्ति शान्त वृत्ति है॥ तिसविषे महत्सुख होता है और तिसपदार्थके भोगनेंते महत्से महत्सुख होता है॥ और जिसपदार्थकी कामना है तिसकी उम्मेदवारी

विषे थोडा सुख होता है और तिसपदार्थविषे चित्तको वैराग्य हुयाँहुयाँ अत्यंत महत्सुख होता है सो विद्यानंदविषे कथन किया है इसप्रकार कामनाकी निवृत्तिके भेदकरके चारप्रकारका सुख होता है और क्षमारूप शांतिवृत्तिविषे सुख है क्रोधके निवारणते और लोभकेनिवारणते उदारतारूप शांतवृत्तिविषे सुखहै ताते जो जो सुख होताहै काम निवारणते क्रोधनिवारणते लोभनिवारणते सो सो सुख ब्रह्मरूप है जिसते वृत्तियोंविषे ब्रह्मका प्रतिबिंब पडता है प्रतिबिंबरूप होताहै ताते वृत्तियोंविषे ब्रह्मका प्रतिबिंबरूप जो सुख हैं सो ब्रह्मरूप है अंतर्मुख वृत्तियोंविषे ब्रह्मसुखका प्रतिबिंब होता है इसमें विघ्न कोई नहीं अन्न सभी पदार्थोंविषे ब्रह्मस्वरूपके अनुभव करावनेवास्ते गुरुशिष्यको ब्रह्मस्वरूप याद करावते हैं सत्ता चैतन्य सुख यह तीन ब्रह्मके स्वभाव हैं मृत्तिका शिलादिकोंविषे ब्रह्मकी सत्ता प्रतीत होती है चैतन्य और आनंद यह दोनों नहीं प्रतीत होते और घोर मूढ अंतःकरणोंका वृत्तियोंविषे सत्ता चैतन्य यह दोनों प्रतीत होते हैं और शांतरूप अंतःकरणकी वृत्तियोंविषे सत्ताचेतनता आनंद यह तीनों प्रतीत होते हैं इस प्रकारकरके प्रपंचसहित ब्रह्मका कथन भया और प्रपंचसे रहित ब्रह्मज्ञानकरके और योगकरके जानीता है सो ज्ञान योगपीछे कथन किये हैं ब्रह्मानंदके प्रथमाध्यायविषे योग कथन किया है और दूसरे और तीसरे अध्यायविषे ज्ञान कथन किया है ॥

शंका–ब्रह्म जेकर सच्चिदानंदरूप है तो मायाका क्या रूप है ? ॥

उत्तर–असत्ता जडता और दुःख यह तीनों मायाकारूपहै मायाकी असत्ता नरशृंग आदिकोंविषे रहती है और मायाकी जडता काष्ठशिलादिकोंविषे रहती है और मायाकी दुःखरूपता घोर मूढवृत्तियोंविषे प्रतीत होती है इसप्रकार सभीपदार्थोंविषे माया विस्तारको प्राप्त होरही है शांतआदिरूप वृत्तियोंविषे ब्रह्मसहित प्रपंचके प्रतीत होता है

इसविषे क्या कारण है ऐसा पूछे तो श्रवणकर शांतआदिरूप वृत्ति-योंविषे जडबुद्धिके साथ एकताको प्राप्त होनेते ब्रह्म प्रपंचसहित कथन करीता है ताते वृत्तियोंविषे ब्रह्मकी प्रपंचसहितताके कारण बुद्धिके साथ एकता है ॥

शंका-यह प्रपंचसहित ब्रह्मका कथन किसवास्ते किया है ? ॥

उत्तर-ब्रह्मके ध्यानवास्ते प्रपंचसहित ब्रह्मको कथन किया है ऐसे सिद्धांतके हुयाँहुयाँ पुरुष तीनप्रकारके ब्रह्मके ध्यान करणेकी इच्छा करे नरशृंगआदिकोंकी उपेक्षाको करके बाकीके पदार्थोंको यथा-योग्य ध्यान करे शिलाआदिकोंविषे नाम और रूप दोनोंको त्याग करके सत्तामात्र ब्रह्मका चिंतन करे और घोर मूढवृत्तियोंविषे दुःखको त्यागकरके सच्चिद्रूपब्रह्मका चिंतन करे और शांतवृत्तियोंविषे सच्चि-दानंद तिनकाही चिंतन करे सो इस तीन प्रकारके ध्यानमें सत्ता-मात्रका जो काष्ठशिलाआदिकोंविषे ध्यान है सो कनिष्ठध्यान है और घोर मूढ वृत्तियोंविषे जो सत्ताचेतन दोनोंका ध्यान है सो मध्यम ध्यान है और शांतवृत्तियोंविषे जो सच्चिदानंद तिनोंका ध्यान है सो उत्तम ध्यान है इस प्रकार तीन ध्यान कथन किये जिस पुरुषका निर्गुणब्रह्मके ध्यानविषे सामर्थ्य नहीं तिसको आपने अधिकारके अनु-सार शिलाआदिकोंके साथ मिलेहुये सत्यरूपआदिक ब्रह्मके ध्यानका अधिकार है मंदबुद्धिवाला जो पुरुष है तिसको व्यवहारविषे शिला आदिकोंयुक्त ब्रह्मका ध्यान उत्तम है इस अर्थके कहनेवास्ते इसग्रंथ-विषे विषयानंदका कथन किया है इसप्रकार वृत्तिसहित तीन प्रकारका ब्रह्म ध्यान कथन किया अब वृत्तिसे रहित ब्रह्मध्यानको श्रवण कर उदासीन अवस्थाविषे बुद्धिकी वृत्तियोंकी शिथिलता होनेते वासनानंदका जो चिंतन है सो उत्तमसे उत्तम ध्यान है इस प्रकार करके चारप्रकारका ध्यान कथन किया बुद्धिकी वृत्तियोंकी शिथि-

लताके हुयाँहुयाँ वासनानंदका जो चिन्तन है सो वास्तवसे ध्यान नहीं किंतु सो ज्ञान और योगकरके उत्पन्न भई ब्रह्मविद्या है ॥

प्रश्न–यह ब्रह्मविद्या किसप्रकार उत्पन्न होती है सो कहो ॥

उत्तर–ध्यानकरके एकाग्रताको प्राप्त हुये चित्तविषे विद्या उत्पन्न होती है और उत्पन्न हुई स्थिरताको प्राप्त होती है विद्याविषे सच्चिदानन्द यह तीन अखंड एकरसरूपताको प्राप्त होकरके प्रतीत होते हैं भिन्नभिन्न होकरके नहीं प्रतीत होते भेदप्रतीतिका कारण उपाधियोंके अभाव होनेते भेद प्रतीतिका कारण कौन उपाधियाँ हैं ऐसा पूछे तो श्रवणकर शांतवृत्तियाँ घोरवृत्तियाँ और मूढवृत्तियाँ और शिलाआदिक यह भेदका कारण उपाधियाँ हैं ॥

शंका–इन उपाधियोंका अभाव किस साधनकरके होताहै ? ॥

उत्तर–योगकरके और विवेककरके भेदका कारण उपाधियोंका अभाव होता है उपाधियोंके अभाव हुयाँहुयाँ उपाधियोंसे रहित स्वयंप्रकाश ब्रह्मतत्त्व भासता है तिस स्वयंप्रकाश अद्वैतब्रह्मविषे त्रिपुटी है नहीं, इसते तिसको भूमानंद कहीता है ब्रह्मानंदनाम ग्रंथविषे पाँचवें अध्यायमें कथन किया है तिसका नाम विषयानंद है इस विषयानंद द्वारा अंतर शुद्ध ब्रह्मानंदविषे प्रवेश करणा अर्थ यह–जो शुद्धपरमानंदरूप ब्रह्मको जानना यह जो पंचदशीका ब्रह्मानंदनाम ग्रंथ है तिसकरके विष्णुभगवान् और शिवजी सदाही प्रसन्न होवे और प्रसन्न हुयेहुये आपनेविषे स्थित जो संपूर्ण शुद्धचित्तवाले प्राणी हैं तिनोंको जन्ममरणसे रहितकरे ॥

दोहा–नमोनमोपरमातमा, अद्वयरूपअपार ॥
या सज्ञानते जानिये, सकलो जगत असार ॥ १ ॥
श्रीमद्गंगारामगुरु, पादपद्मपरताप ॥

ग्रंथसकलपूरणभयो, मिटेविघ्नकरपाप ॥ २ ॥
पंचदशीभाषाभई, फतेचंद्रके हेत ॥
तेहि विचारकरि जानिये, वेद कहत यह नेत ॥ ३ ॥
फतेचंद्रकी प्रार्थना, पंचदशीअतिसार ॥
वृद्धअवस्थाआगई, क्योंकरकरौंविचार ॥
भाषाद्वयताकीप्रकट, ताकाकरोविचार ॥
जो तामैं संशयरहै, पुछकरदियोनिवार ॥ ५ ॥
फतेचंद्रतबबोलियो, भाषाद्वयअतिगूढ ॥
वार्तापंचदशीकरो, पंडितहोइपढमूढ ॥ ६ ॥
श्रीमद्गंगारामके, शिष्यआत्मस्वरूप ॥
तानेयहभाषाकरी, पंचदशीअनुरूप ॥ ७ ॥
वार्तापंचदशीभई, गुरुआज्ञाअनुसार ॥
ब्रह्मबोधतिसवरमिले, पढै जो करैविचार ॥ ८ ॥

इति श्रीविद्यारण्यमहामुनिविरचितपञ्चदश्यामात्मस्वरूपकृतभाषायां ब्रह्मानन्देविषयानन्द-प्रकरणं समाप्तम् ॥ १५ ॥

पञ्चदशी-भाषासमाप्ता.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस,
कल्याण-मुंबई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस,
खेतवाडी-मुंबई.